श्री म दर्शन - 5

प्रथम अध्याय

भिन्न-भिन्न प्रकृति, भिन्न-भिन्न पथ

(1)

मार्टन स्कूल, 50 नम्बर अमहर्स्ट स्ट्रीट, कलकत्ता। खूब गर्मी पड़ रही है। ज्येष्ठ मास। सन्ध्या हुई। आलोक आते ही (दीपक जलते ही) श्री म हाथताली देकर ''हरिबोल, हरिबोल'' बोलते-बोलते ध्यान-मग्न हो गए। गर्मी में कष्ट होते हुए भी दीर्घकाल ध्यान करते हैं। श्री म के गुरुदेव भगवान श्रीरामकृष्ण कहते हैं, ''सन्ध्या के समय सर्व कर्म छोड़कर ईश्वर-चिन्तन करना चाहिए।'' श्री म सर्वदा यही नियम अक्षर-अक्षर पालन करते हैं।

श्री म द्वितल के बैठने के कक्ष में फर्श पर बैठे हैं। शरीर उतना चंगा (अच्छा) नहीं है। निकट ही शुकलाल, डॉक्टर, विनय, सुखेन्दु, छोटे जितेन और जगबन्धु बैठे हैं। भक्तगण गान गाते हैं, श्री म की इच्छा से।

गान : रामकृष्ण चरण सरोजे मज रे मन-मधुप मोर।
कण्टके आवृत विषय-केतकी थेकोना-थेकोना ताहे विभोर॥

[अर्थ— हे मेरे मनरूपी भौंरे, तुम रामकृष्ण के चरण-कमलों में मग्न हो जाओ। विषय-पुष्प काँटों से घिरा है, इसमें विभोर होना ना, होना ना।]

गान : मजलो आमार मन-भ्रमरा श्यामापद नील कमले।
विषय मधु तुच्छ होलो कामादि कुसुम सकले॥

[अर्थ— श्यामा के नीलकमल जैसे चरणों में, काली के श्रीचरणों

में मेरा मन-भ्रमरा रम गया। संसार की कामना, वासना आदि
पुष्पों का विषय रूपी मधु अब तुच्छ प्रतीत हो रहा है।]

इतने में जोगेन, हरेन्द्र मास्टर, डॉक्टर के भाई के पुत्र विश्वनाथ, सुधीर, शंकर आदि आ उपस्थित हुए। अब कथामृत-पाठ होने लगा— चतुर्थ भाग, षोडश खण्ड, प्रथम परिच्छेद।

श्री म *(भक्तों के प्रति, क्षीणकण्ठे)*— ठाकुर बोले थे, भोग-वासना रहने से योग होता नहीं। योग माने भगवान में मन रखना। साधारणत: लोगों का मन रहता है लिंग-गुह्य-नाभि में। उनकी कृपा से ऊपर उठ सकता है मन। चेष्टा चाहिए, तत्पश्चात् कृपा। कहते हैं, ब्रह्मज्ञान भक्तिपथ से भी होता है। गोपियों को भक्तिपथ से हुआ था। ऋषियों को ज्ञानपथ से।

''जिसका जैसा संस्कार, वैसा ही होगा। संस्कार का गतिरोध नहीं किया जा सकता। जिनका सत्त्वगुण प्रधान है, जैसे वास्तविक ब्राह्मण, उनका चट् करके हो जाता है। देह में ऋषियों का रक्त है। जिनका मन विषय में आसक्त नहीं, वे ही ब्राह्मण। गीता के मत से ब्राह्मण के आठ गुण हैं— शम, दम, तप, शौच, आर्जव, ज्ञान, विज्ञान और आस्तिक्य। ये गुण जिसके भीतर होते हैं, वह भी ब्राह्मण, चाहे जहाँ भी जन्म हो। जिनका मन संसार-भोग में आसक्त, वे ही क्षुद्र। इस शरीर में देर से ईश्वर-लाभ होता है, किन्तु होगा सभी को ही। जिनके पूर्व पुरुषगण ईश्वर का चिन्तन अनेक ही करते रहे हैं, उस वंश में जन्मने से उनका रक्त शरीर में रहता है और फिर जो जन दीर्घकाल तक अन्य प्रकार का सब करते हैं— व्यवसाय, वाणिज्य आदि, उनका रक्त देह में रहने से देरी हो जाती है। सत्यपालन करना कठिन होता है और फिर यह भी देखा जाता है कि चने का बीज किसी प्रकार विष्ठा पर पड़ा, उससे चना हुआ। उसके द्वारा ठाकुर-पूजा होती है। जहाँ पर भी क्यों न रहें संस्कार, भले रहने से जाग्रत हो उठेंगे— यह भी है। प्रकृति में जो है, वही होगा। इस कारण जिनकी प्रकृति भली नहीं है, उनका क्या होता नहीं? उनकी (भगवान की) इच्छा से उनका भी होता है। आमड़ा गाछ पर, वे बम्बई आम लगा सकते हैं। तो फिर लगाते क्यों नहीं? उसका उत्तर है, इतने बम्बई आम हैं कि लगाने का प्रयोजन नहीं होता। किन्तु वे सब कर सकते हैं।''

(शची के प्रति)— ''प्रकृति जन्य ही चाहे विचार करो, एक को ज्ञान, वैराग्य की बातें कही गयीं, वह पालन कर सका नहीं और एक ने वही बातें सुनकर पकड़ लीं। जिसका जैसा संस्कार— जन्म, कर्म, शिक्षा।''

श्री म *(हरेन्द्र के प्रति)*— किसी का सम्भवत: माँ, बाप कोई नहीं, अनाथ। उसे कहने पर— ईश्वर सत्य, सब अनित्य— वह पकड़ेगा कैसे? भीतर में शायद संसार-भोग की इच्छा होती है। और फिर कोई बाल्यकाल से हविष्य खाता है, ब्रह्मचर्य-पालन करता है। भोग की इच्छा रहने पर उस ओर मन जाता नहीं। जिसका पूर्वजन्म में भोग शेष हो गया है, किंवा सामान्य बाकी है, उसका ही ईश्वर में मन जाता है। जो श्रद्धावान होता है उसका self respect (ठीक आत्मसम्मान) उत्पन्न होता है— 'मैं ईश्वर का, संसार का नहीं'— यही ज्ञान। तब फिर भय नहीं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— भाव महाराज आए थे। बोले, ''उनकी कथा कहिए।'' आहा, कितना कष्ट करके वहीं आश्रम किया है, जामताड़ा में! जभी मैंने उनसे कही, वामन भगवान की त्रिपाद भूमि-प्रार्थना की कथा :

> बलि राजा से बोले, ''महाराज, देह तो सर्वदा रहेगी नहीं, जभी उनका नाम करूँ, यह स्थिर किया है। उसी के लिए त्रिपाद भूमि चाहिए। हमारा ब्राह्मण-शरीर। तपस्या और ईश्वर-भजन हमारा प्रधान कर्त्तव्य— ईश्वर-लाभ के लिए। जभी देह-रक्षा के लिए क्षुद्र कुटीर आवश्यक। देह विनश्वर, तथापि जितने दिन देह में ईश्वर-दर्शन नहीं होता, उतने दिन उसकी रक्षा करना उचित। देह में ईश्वर का वास है और उसकी रक्षा करने के लिए वस्त्र, आहार और वास-स्थान आवश्यक। यहाँ पर किसी की भी देह चिरकाल रहती नहीं, रह सकती नहीं। यदि ईश्वर-भजन उद्देश्य हो तब ही देह-रक्षा की चेष्टा विशेष करनी उचित। त्रिपाद भूमि होने से ही होगा। ऐसे एक कुटीर बनाकर तपस्या करूँगा।''

आहा, कैसी बात— देह रहेगी नहीं, जितने दिन है, उनका नाम करना उचित। वामनदेव ने किया भी था वैसा ही। राम अवतार में विश्वामित्र के साथ राम जा रहे हैं और जिज्ञासा करते हैं, ''यह आश्रम किसका है?'' विश्वामित्र

बोले— यहाँ पर भगवान वामनदेव ने तपस्या की थी। बलि की छलना के पश्चात् तपस्या की थी— सत्य कह कर ली थी कि ना जगह। जभी देह जितने दिन रहती है, उनका नाम करना।

ललित बैनर्जी वकालत करते हैं। अनेक दिन श्री म के दर्शन हुए नहीं। जभी आज व्याकुल होकर आए हैं— शरीर का ज्वर एक सौ एक डिग्री।

श्री म *(ललित के प्रति)*— आह, इतना ज्वर लेकर क्यों आए? जब तक सोना गलाना न हो जाए तब तक इसकी सयत्न रक्षा करनी चाहिए। ठाकुर कहते, सोना गलाना अर्थात् ईश्वर-दर्शन। दोनों ओर ही विपद् है। अधिक यत्न करो तो देह सवार हो जाएगी और फिर यत्न न करो तो गिर जाएगी। जभी मध्य पंथा— golden mean.

''ठाकुर कहते थे, 'माँ, तार द्वारा इस शरीर को बाँध दो, जिससे तुम्हारा नाम कर सकूँ'।

''इसी देह में आत्मा का निवास है, जभी यत्न करना चाहिए। इसी आत्मा के दर्शन के उपरान्त यदि शरीर रहता है तो प्रारब्ध के लिए अथवा लोक-शिक्षा के लिए भगवान रख देते हैं।''

हठात् श्री म का कथास्रोत बन्द हो गया— कान में मन संयोग किया। भक्तगण सुनते हैं पास के कमरे से अरुण हारमोनियम से गाना गा रहा है। अरुण श्री म का पौत्र, पन्द्रेक वर्ष वयस, गन्धर्व कण्ठ!

गान : विकल्प विहीन समाधि मगन,
ब्रह्मे चिर लीन आसन तोमार।

4-6-1923

(2)

मार्टन इन्स्टिच्यूशन का ऑफिस-कमरा। श्री म और एकजन शिक्षक आमने-सामने कुर्सियों पर बैठे हैं। अब साढ़े नौ। कथावार्ता होती है।

श्री म *(शिक्षक के प्रति)*— आप किस गाड़ी से मिहिजाम गए थे, कितनी बार गए?

शिक्षक— आपकी जाने की इच्छा है क्या?

श्री म— ना, कुछ भी स्थिर नहीं। फिर दोबारा चला गया था, कहीं भी कुछ नहीं, फस् करके हो गया। तीर्थस्थान पर किन्तु खूब भला। वहाँ पर भी भला, तो भी तीर्थस्थान पर सब समय उद्दीपन होता है— तैयार वस्तु है। किन्तु वहाँ पर बनाकर ले जानी पड़ती है सब। जैसे आप लोग कोई पूजा करता है, कोई पुष्प चयन करता है, कोई पाठ करता है, कोई जप-ध्यान करता है। यह सब न हों तो उद्दीपन होता नहीं— ये सब चाहिएँ। तीर्थस्थान पर स्वयं कुछ करना नहीं पड़ता। यह सब ही तैयार मिलता है। विशेष ठाकुर रहते हैं— तीर्थ के अधिष्ठात्री देवता। और कितने सब भक्त देश-देशान्तर से व्याकुल हुए भागे आते हैं, इनके दर्शन के लिए। पुरी में खूब भला। आहार की भी चिन्ता नहीं। सब ही प्रसाद मिलता है। आप पुरी में क्या खाते थे?

शिक्षक— महाप्रसाद। प्रात: बाल्य भोग की प्रसादी मिठाई, दोपहर को सत्र-भोग का प्रसाद, रात्रि में भी वही। पण्डे सब लाकर दे जाते। केवल दूध और केले बाजार से खरीद कर लाने पड़ते। केले प्रचुर मिलते हैं। वीरभूम के एक वृद्ध ब्राह्मण भक्त के संग बन्धुत्व हुआ था। वयस साठ होगी, वानप्रस्थी। एक आश्रम में रहते हैं— कुछ देते हैं वहाँ पर। वे सब प्रसाद खाने के लिए देते हैं। सारा दिन दर्शन, सत्संग और पाठादि करते हैं। मुझको 'स्कन्दपुराण' से पुरुषोत्तम-क्षेत्र-माहात्म्य समस्त सुनाया।

श्री म— मैं भी वैसा ही चाहता हूँ। कोई सुविधा कर दे वैसी। कुछ दे दिया गया और तैयार प्रसाद मिल गया। वैसा सब खाने का हँगामा रहने से बड़ा झंझट है। वैसा न होना ही अच्छा। थोड़ा-थोड़ा प्रसाद खाओ, और दर्शन

करो, चिन्तन करो। जगन्नाथ-दर्शन, और भी कितने दर्शन हैं! कितने भले-भले साधु, और फिर चैतन्यदेव के लीला-स्थल-समूह। और समुद्र-दर्शन भी होगा— ''सरसामस्मि सागर:''। (गीता 10:24) चारों तरफ ही उद्दीपन की वस्तुएँ। वहाँ पर 'अग्नि' सदा जलती है, 'हवा' करने से ही हुआ।

द्वितीय श्रेणी के एक छात्र ने गृह में प्रवेश किया।

श्री म *(छात्र के प्रति)*— सुनो, सुनो। मन देकर पढ़ना-लिखना करो। क्या कहते हो? मन से पढ़ना उचित कि नहीं?

''मनोयोग द्वारा पढ़ना-लिखना करूँगा,'' यह बात कह कर लड़का चला गया।

श्री म *(शिक्षक के प्रति)*— इस लड़के का बाप खूब धनी है। उस दिन आया था। गाड़ी है। किन्तु लड़के उनकी कोई भी बात सुनते नहीं। यहाँ पर आए तब मुझसे बोले, ''महाशय, उन्हें कहिए मत।'' कहने से शायद वे धमकावें— ''वही (शिकायत) लगाने गए थे'', यह कहें। कुछ कहते ही लड़के प्रतिवाद करते हैं, ''तुम क्या जानो यह सब।''

''*(सहास्य)* आहा, यह लोग तो perfect gentleman (सच्चा भद्रलोग)। विलायत में कोर्ट में मुकदमा होता है। वकील कहता है, ''यह व्यक्ति gentleman (भद्रलोग)। इन्होंने यह काम नहीं किया, ना ही कर सकते हैं।'' जज ने पूछा, ''किसको आप gentleman (भद्र लोग) कहते हैं?'' वकील ने उत्तर दिया, ''जिसका गाड़ीघोड़ा है।'' *(दोनों का उच्च हास्य)*!

''पिता ने मुझ से कहा, ''सोचता हूँ हरिद्वार जाऊँ। मेरे अनेक परिचित लोग हैं मारवाड़ी। वे कहते हैं, जाओ ना, हम सब ठीक कर देते हैं।'' मैंने भी कहा, जाइए ना। ऐसी सुविधा, और ऐसा स्थान! उन्हें छोड़ेंगे क्यों? कुण्डली के भीतर न रहकर बाहर होकर इन्हें देखिए ना! देखने की तो मनाही नहीं। ऐसे स्थान पर सुविधा हो गई है ठहरने की, जाइए ना। एक बार जाकर देखकर आइए ना। फिर काम भी क्या, भगवान को पुकारने के

लिए जाना। वहाँ पर हिमालय, गंगा, सत्संग सब हैं। जाइए ना, कुछ दिन रहकर देखकर आइए।

''मैंने तो कहा था, वैसा क्या फिर होता है? ऐसे माया के फँदे में पड़े हैं। इसी माया में पड़कर ही तो ऐसा सब करता है। लड़के की माया छोड़ नहीं सकता। गाने में है—

बिल केटे घुर्णी पाते, मीन प्रवेश करे ताते।
यातायातेर पथ आछे, तबुओ मीन पालाते ना रे॥
गुटीपोकाय गुटी करे पालालेओ पालाते पारे।
महामायाय बद्ध गुटी आपनार जाले आपनि मरे॥

[अर्थ— चहबच्चे में मछली पकड़ने के लिए बाँस काटकर जाल बनाता है, उसमें मछली प्रवेश करती है। यातायात का पथ है, तो भी मछली भागती नहीं रे। रेशम का कीड़ा घर बनाता है, चाहे तो बाहर भाग सकता है। किन्तु महामाया से 'गुटी' बद्ध है, अपने जाल में आप मरता है।]

श्री म *(शिक्षक के प्रति)*— ये सज्जन इसी प्रकार अपने रचित जाल में आप ही गिर गए हैं। इन से जब बातें हो रही थीं, तब शु–बाबू की बात याद आ रही थी। वे भी ऐसे ही माया में पड़े हैं। किसी को मुख की बात कह नहीं सकते। इतने जन हैं, कोई बात सुनता नहीं। लड़के अबाध्य (हठी)। माया से ऐसा सब वे करवाते हैं।

''चण्डी में ऐसी ही एक गल्प है: एकजन (समाधि) संसार से विरक्त होकर वन में तपस्या करने गया। वहाँ पर जाकर स्त्री–पुत्र की बातें सोचता है। ये किन्तु इसको देख भी नहीं सकते। तब भी वह उनकी बातें दिन–रात सोचता है। तब ऐसे समय एक साधु के संग मिलाप हुआ। साधु बोले, ईश्वर–चिन्तन करो— ये सब चिन्ताएँ छोड़ दो। वह कर नहीं सकता। बोला, महाशय! मेरा हृदय–मन उनकी चिन्ता से पूर्ण है। ईश्वर स्थान नहीं पाते वहाँ पर। सोचता हूँ, वे कैसे हैं, सम्पत्ति की रक्षा तो कर रहे हैं! वे साधु बोले, यह माया का खेल है। तुम उनकी शरण लो, तब जाएगा। तत्पश्चात् साधु के उपदेश से तपस्या करके देवी का दर्शन–लाभ किया। तब फिर सब चिन्ता अनिष्ट नहीं कर सकी। देवी ने वर माँगने के लिए कहा। भक्त ने उत्तर

दिया, तुम्हें ही चाहता हूँ और कुछ चाहता नहीं।

'आर भुलाले भूलबो ना मा, देखेछि तोमार राँगा चरण।'

[फिर भुलाने से भी भूलूँगा नहीं माँ, तुम्हारे लाल चरण देख लिए हैं।]

''फिर यह तो ठाकुर के गाने में है। महामाया का ऐसा काण्ड! सब गोल-माल कर देती है। जभी ठाकुर प्रार्थना करने को कहते, ''भुलाओ ना माँ, अपनी भुवनमोहिनी माया में भुलाओ ना।'' उनका दर्शन मिल जाने पर अन्य सब काज भूल जाते हैं। घड़ी का पैण्डुलम्— इस ओर जितना जाएगा, छोड़ने पर अन्य ओर भी उतनी ही दूर जाएगा।''

•

अब सन्ध्या सात। श्री म भक्तों के संग द्वितल के पश्चिम के कक्ष में बैठे हैं। छोटे नलिनी भागवत-पाठ कर रहे हैं— 'जय-विजय का उपाख्यान।' श्री म उठकर चले गए। बरामदे में एक भक्त के संग अकेले कुछ बातें करने लगे। भक्त के संग तत्पश्चात् हावड़ा स्टेशन के लिए रवाना हो गए। श्री म के दौहित्र गोपेन वैद्यनाथ जा रहे हैं। पुत्र प्रभासबाबू वहाँ पर हैं।

रात्रि अब साढ़े नौ। श्री म दोतल के बरामदे में हाई बेंच पर ठेस देकर बैठे हैं। सम्मुख एक बिल्ली का बच्चा। उसको लक्ष्य करके भक्त से कहते हैं,

''देखिए, कहीं कुछ नहीं था, बीच से वह आ हाजिर। कैसे आ गया, यही सोचता हूँ। साथ ही साथ अपनी रक्षा भी करके चलता है। भगवान ने इसके लिए पूर्व से ही सब जुटा कर रखा हुआ था, आहार आदि। उनका व्यापार समझने की क्षमता है किसमें? सब वे करते हैं। यही देखिए ना, जापान के Premier (प्रधानमन्त्री) के घर के सब जन मर गए, केवल वे बच रहे। आँगन में खड़े-खड़े केबिनेट की मीटिंग की थी पहले दिन। अगले दिन सब नष्ट हो गया, tidal wave (समुद्र-ज्वार) आकर सब ले गई बहाकर। दुःख भोग करने के लिए रह गए अकेले। यह सब देखकर भी क्या हम लोगों को चैतन्य होता है? मनुष्य का जीवन यही पचास-साठ वर्ष है। इसको हम

बहुत कुछ सोचते हैं। किन्तु अनन्त के संग तुलना में कुछ भी नहीं।

''अनन्त जीवन की बात कितने लोग चिन्तन करते हैं? इन्हीं कुछ सालों की बात ही चिन्तन करते हैं। ऐसी विपद् देखकर भी चैतन्य होता नहीं। अनन्त जीवन-लाभ की चेष्टा करने पर हमें क्षुद्र जीवन का सुख-दु:ख उतना अभिभूत कर नहीं सकता। अनन्त जीवन अर्थात् ईश्वर। इतनी विपद् में भी क्या प्रिमीयर को चैतन्य हुआ? यतीमखाना गिर गया। कुछ दिन लोगों ने खूब हल्ला किया। तत्पश्चात् सब भूल गए। जापान में जो हो गया है, इसके सामने वह क्या है? यह भी भूल जाएँगे लोग। ऐसी महामाया की माया है। यह जो हुआ recorded history of the world (पृथ्वी के इतिहास में) ऐसी घटना की बात दिखाई नहीं देती। लोगों के चैतन्य के लिए ईश्वर बीच-बीच में ऐसा करते हैं। दो-चार जन को चैतन्य होता है। अन्य सब लोग भूल जाते हैं। ठाकुर ने जो कहा था— मृत्यु के स्तूप पर बैठना, इस घटना से वही दिखाते हैं। मनुष्य सब मृत्यु की छाप कपाल में लिए घूमते हैं। अपनी ही छाप देख नहीं सकते। अन्य की देखकर भी भूल जाते हैं। पाँच लाख मृत्यु एक संग में— यह देखकर भी चैतन्य होता है किसी को?''

3-9-1923

(3)

श्री म द्वितल के कक्ष में बैठे हैं। विद्यापीठ के अध्यक्ष ब्रह्मचारी विद्याचैतन्य आए हैं। श्री म के संग ये विद्यापीठ के सम्बन्ध में विविध विषय परामर्श करते हैं। आज शनिवार, जभी है बहु भक्त-समागम। अब रात्रि, साढ़े आठ। कथावार्ता होती है।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— खूब निर्जन स्थान वैद्यनाथ और फिर ठाकुर हैं, और साधु लोग सब हैं। सब साधु खूब serious (कठोर), सब साधु और सब ओर समान। आहा, वे सब स्थान हैं उद्दीपन की जगह। उस बार मिहिजाम* को अड्डा किया गया था, अब की बार इनके यहाँ किया जाएगा।

* श्री म दर्शन प्रथम भाग द्रष्टव्य

(भक्तों में किसी-किसी को दिखाकर) ये सब संग में थे। उनकी कृपा कितनी है, देखते क्यों नहीं! इन साधुओं को भेज देते हैं, इसलिए कि हम लोगों को चैतन्य होगा इन्हें देखकर। वे सर्वदा भुला देते हैं। फिर कृपा करके साधुओं को भी भेज देते हैं। बन्धन और मुक्ति दोनों ही हैं। साधुओं को देखकर मन में होता है— ये लोग, 'ईश्वर सत्य संसार मिथ्या', यह जानकर संसार छोड़कर उनको लिए हुए हैं। क्या life (जीवन) है इनका, जैसे सैनिक युद्धक्षेत्र में! चौबीस घण्टे उनका चिन्तन करते हैं। देह की ओर लक्ष्य नहीं। किस प्रकार उनका लाभ हो, वही चेष्टा। कभी सेवा करते हैं, कभी व्रत-उपवास, कभी मन्दिर में जाते हैं, कभी जप-ध्यान— जो जैसा कहता है वैसा ही करते हैं। संसार के लोग अर्थ के लिए करते हैं। ये लोग उनको पाने के लिए यह सब करते हैं। तभी तो इन्हें देखकर इतना उद्दीपन— जैसे म्यान से निकली तलवारें सब। 'उठ-पड़-लग' गए हैं— मन्त्र की साधना अथवा शरीर-पतन।

•

मोहन वेदान्त सोसाइटी के स्वामी अभेदानन्द जी के लैक्चर-नोट पढ़ कर सुनाते हैं। आज थी प्रश्नोत्तर-क्लास।

प्रश्न— सत्त्व, रज, तम— ये सब क्या वस्तु है? स्वामीजी कहते हैं, material elements (भौतिक पदार्थ)। गीता में हैं 'गुण'— समझ में नहीं आ सके।

स्वामी अभेदानन्द— गुण और matter (जड़वस्तु), पृथक् नहीं। Substance वा solid (जड़ वा कठिन घन) ठोस नामक कोई वस्तु नहीं है। एक्सरे द्वारा देखने से देखा जाएगा, तुम्हारा हाथ नाम से कुछ नहीं है— bones और dewy matter (अस्थि और शिशिरवत् पदार्थ) दिखाई देता है और चारों दिक् (ओर) घूमते हैं इलैक्ट्रोन (electron), एक लाख छियासी हजार मील एक सैकेण्ड में। इसी वेग से सूर्य का प्रकाश नौ मिनट में पृथ्वी पर पहुँचता है। अनुवीक्षण द्वारा देखने पर देखा जाएगा इलैक्ट्रोन सब घूमते हैं 'atom' परमाणु

के चारों ओर। इलैक्ट्रोन को एक हजार भाग में विभाग किया। और फिर उसका वजन निकाला है उन्होंने।

''सत्त्व, रज और तम— ये तीन गुण हैं vibrations of electrons (परमाणु की विशेष तरंगें)। इस गृह में एक पैण्डुलम को यदि सात सौ बिलियन बार और भी अधिक वेग से चला सको तब होगा violet colour (बैंगनी रंग)। चार सौ होने पर होगा red (लाल)। वैज्ञानिकों ने देखा है— ऊपर का रंग (वायलेट), 'रेड' नीचे का। एक को सत्त्व और एक को तम कह सकते हो और बीच के पाँच सौ से छः सौ (रंगों वाले) को रज कहा जाता है। तुम करते हो क्या? इलैक्ट्रोनवाद का जिसने आविष्कार किया है, उसकी वयस है मात्र अठारह वर्ष, नाम जे०जे० टामसन। गत युद्ध में शरीर गया। बचा रहता तो और भी कितना कुछ करता! टोमस एडिसन ने निकाले ग्रामोफोन और इलैक्ट्रिक बल्ब। ग्रामोफोन अर्थात् स्वर की फोटो। मैं उनकी लाइब्रेरी में गया। बैठकर जब problem solve (समस्या का समाधान) करते हैं, तब आहार-निद्रा भूल जाते हैं। पीछे से एकजन खाना दे जाता है प्रातः, दोपहर और रात्रि को। इच्छा हो तो खाएँगे, नहीं तो पड़ा रहता है। देखा, दो बार का आहार टेबिल पर पड़ा हुआ है। होश नहीं— ध्यानस्थ हुए हैं। बीच-बीच में आँख खोल पेन्सिल से कुछ लिखते हैं। अब वे ऐसे एक delicate (सूक्ष्म) यन्त्र का विकास कर रहे हैं जिसके द्वारा 'स्पिरिट' को लाकर बातें की जाएँगीं।

''आजकल फिर thoughts (विचारों) की फोटो होती है। तुम शायद तब मन-मन में सोच रहे हो 'गोलक'। तुम्हारे मस्तिष्क पर एक प्लेट रख देंगे, उस पर वही दाग हो जाएँगे।

''एक बार सानफ्रांसिस्को से गाड़ी से जा रहा था। यात्रियों की लिस्ट में मेरा नाम देखकर एक वृद्ध मेरे संग आलाप करने आ गए। वे भी उसी गाड़ी में जा रहे थे— mineralogist (खनिज पदार्थ-विशारद)। वृद्ध व्यक्ति, आवक्ष दाढ़ी। मुझसे कहने लगे, तुम्हारे देश में कपिल के साथ ही एक greatest scientist (श्रेष्ठ वैज्ञानिकों में

अन्यतम) का अन्तर्धान हुआ है। कपिल के प्रकृति तत्त्व— सत्त्व, रज, तम— गुण-विभाग कैसे गम्भीर, कैसे सुन्दर! मैं तो सुनकर अवाक्! इस सम्बन्ध में एक पुस्तक लिखने का मैंने अनुरोध किया। पीछे लिखकर भेजी थी। मेरे पास है उसका manuscript (पाण्डुलिपि)। इसके विक्रय से प्राप्त धन भारत की सेवा में दान किया। Diagram (चित्र) बनाकर सब समझाया है। वे तब जापान सरकार के निमन्त्रण पर उस देश में जा रहे थे। खान कहाँ है— किसकी खान है, दो हजार फीट नीचे रहने पर भी बोल सकते थे।

''T.N.T. Explosive Force (टी०एन०टी० नामक विस्फोटक आग्नेय अस्त्र) गत युद्ध में प्रयुक्त हुआ था। इतने-से के साथ शहर उड़ जाता है। आजकल वैज्ञानिक लोग व्यस्त हैं कि किस प्रकार atom (परमाणु) की explosive force (प्रदाह शक्ति) का आविष्कार किया जाए। पहले atom (परमाणु) पर्यन्त था। अब कितना आगे बढ़ गए हैं— ये अपने 'रिडल ऑफ दि यूनिवर्स' (ब्रह्माण्ड की पहेली) ग्रंथ में कहते हैं— सबका शेष अद्वैत है।

''Invention (आविष्कार) कब होता है?— सोचते-सोचते consciousness (अन्तर्दृष्टि) जब खुल जाती है। बाहर की ओर जब तक नहीं होती तब तक पागलवत् हो जाता है। मन का द्वार खुल जाता है और फिर बन्द हो जाता है। फाँक (झरीत) द्वारा जो ray (किरण)-सी आती है उसे लेकर ही इतनी आलोचना— इसका नाम है invention (उद्भावन)।

''तुम अपने आप सोचो। दूसरे की टीका पढ़कर देश अध:पतन में गया है। ब्रह्म, माया— ये सब वेदान्त के उच्च तत्त्व साईंस बिना पढ़े भली प्रकार समझ नहीं सकता। ये सब पढ़ो, चिन्तन करो, विचार करो। ब्रह्म और माया परमहंसदेव ने एक सहज दृष्टान्त द्वारा समझाया था। ब्रह्म— जैसे साँप कुण्डली मारे बैठा हुआ है। माया— जैसे साँप चलता है। वे साईंस जानते नहीं थे किन्तु अनुभूति थी। जभी इतना

सुगम करके बोलते थे। ऐसा सुगम करके और कोई बोल नहीं सका।

•

(4)

प्रश्न— मुक्ति के पश्चात् मनुष्य-जन्म होता है क्या?

स्वामी अभेदानन्द— परमहंसदेव कहते हैं, दो श्रेणी के लोग हैं। एक क्लास (श्रेणी) के लोग साधन-भजन करके इतने ऊँचे पर उठ जाते हैं कि फिर नीचे की बात, जगत की बात सब भूल जाते हैं। और एक क्लास के लोग हैं— वे उसी प्रकार ऊँचे पर भी उठते हैं और फिर नीचे भी आ सकते हैं लोकशिक्षा के लिए। उन्हें जगत का कल्याण करने की आकांक्षा रहती है। कोई भी कारण नहीं इसका— ईश्वरेच्छा। इन्हें कहते हैं ईश्वरकोटि। बौद्ध मत में भी दो ही क्लास बुद्ध हैं— प्रत्यक् बुद्ध और अवतारी बुद्ध। प्रथम क्लास सोचती है, अपना होने से ही हुआ। द्वितीय क्लास जगत के कल्याण के लिए रहती है, ये नीचे लौट आते हैं। ये हैं उदार।

"ठाकुर एक parable (गल्प) कहते। एक जगह खूब जंगल था। वह एक ऊँची प्राचीर (दीवार) से घिरा हुआ था। चढ़ने योग्य नहीं। सब लोगों ने जमा होकर निश्चय किया, एकजन के कन्धे पर और एकजन आरोहण करके इसके ऊपर चढ़ेंगे। वही किया गया। जो व्यक्ति प्रथम प्राचीर के ऊपर चढ़ा था, वह आनन्द में हँसते-हँसते दूसरी ओर गिर गया। तत्पश्चात् और भी दो-एक जनों ने वैसा ही किया। फिर और एकजन चढ़ा। उस ओर देखकर खूब आनन्द प्रकाश करने लगा। कितनी हँसी, किन्तु पहले लोगों की भाँति उस ओर न गिर कर इस ओर उतर कर आ गया और सबको पुकार कर बोला, "आनन्द पाना चाहो तो ऊपर उठो।" ये अवतार, ईश्वरकोटि, इनकी शक्ति अधिक। नित्यमुक्त, नित्यसिद्ध, ईश्वरकोटि-गण जगत के कल्याण के लिए मनुष्य-जन्म ग्रहण करते हैं।

प्रश्न— मनुष्य-जन्म क्यों होता है?

उत्तर— संस्कार के लिए, कर्मफल-भोग के लिए। पाप, पुण्य समान होने से मनुष्य होता है। और फिर इसी जन्म में ही मुक्ति होती है। अन्य शरीरों में वह होती नहीं। इस शरीर में पूर्व कर्मफलों का भोग होता है और फिर नूतन कर्म अर्जन भी होते हैं। अन्य शरीर में केवल भोग मात्र ही होता है, अर्जन नहीं होता। मनुष्यों के मध्य में भी कोई-कोई आते हैं— ईश्वर की लीला-सहायता के लिए। वह उपलब्धि होती है जब धाई छूना होता है— ईश्वर-दर्शन होता है। जिन्होंने धाई छू ली है उनके मन में हिंसा, द्वेष, जय-पराजय, लाभालाभ— ये सब द्वन्द्व नहीं रहते। समदर्शी हो जाता है, एक भाव है— ईश्वर। तब निज को यन्त्र, ईश्वर को यन्त्री देख पाता है।

''मनुष्य जब उनको भूल जाता है तब कभी-कभी उसको खूब विपद में डाल देते हैं। इससे अपनी ओर खींच लेते हैं। बाहर से देखने में विपद, किन्तु अन्त भला। जापान की कथा जो कही, यह भी उनका काज। पाँच लाख लोग एकदम नष्ट हो गए tidal wave (समुद्र की बाढ़) से। यह देखकर इनमें जो चिन्तनशील हैं, वे ईश्वर की ओर मन देंगे। बहुत बढ़ गया था जापान। अंग्रेज़ों के संग मिलकर चलता था और इसीलिए दिन पर दिन materialist (जड़वादी) हो गया था। अपनी सभ्यता, संस्कृति छोड़ता जा रहा था। जभी ईश्वर ने यह काण्ड करके इनका मोड़ फिरा दिया है। Worldly view (जागतिक दृष्टि) में खूब अनिष्ट हुआ है। युद्ध (प्रथम विश्वयुद्ध) में फ्रांस की जो क्षति हुई थी, कुछ मिनटों में ही टोकियो में भी वही हो गया। अन्य भाव में देखने से, कौन किस को मारता है? आत्मा का जन्म नहीं, मरण भी नहीं।

''तुम निज को निज भूले हुए हो। तम में आच्छन्न हुए हो। तम को झाड़कर दूर फेंक दो— राजसिक हो जाओ। बंगाल देश तो धँसता जा रहा है। चेष्टा करो, उठेगा। बंगाल ही जगत का मुख उज्ज्वल करेगा। इस युग का धर्म है, कर्मयोग। कर्म करो मन ईश्वर में

रखकर। कर्म बिना किए रज नहीं आएगा। इसीलिए आलसी हुए जाते हैं सब। दास-भाव ने तुम्हारे मन को घेर रखा है। दास का क्या सुख? वैसा भाव छोड़ो। Ambition (उच्चाकांक्षा) लाने की चेष्टा करो। A young man must have an ambition (प्रत्येक युवक में उच्चाकांक्षा रहना उचित है)। सुनाम, सुयश, धनदौलत— इन सब की आकांक्षा ही है उच्चाकांक्षा ambition, ये सब भोग करके जब देखेगा कि इनमें सुख नहीं है, भोग का शेष नहीं है, तृप्ति नहीं है, तब शान्ति की चेष्टा होगी। तब aspiration (ईश्वर के लिए व्याकुलता) आएगी। उनको प्राप्त करने की चेष्टा आएगी। अनेकों में फिर बालकपन से ही aspiration (ईश्वर के लिए व्याकुलता) आती है। समझना होगा उन्होंने पूर्वजन्म में अनेक तपस्या की थी। ईश्वर-लाभ की चेष्टा करके आया है। कैसा दुर्भाग्य! हमारे देश में दोपहर को तो काट देते हैं, घुर्रराटे लेकर, सोकर। दिन को रात बना लिया है। वरन् फुटबाल खेलो, वह ही भला। तम से रज में उठो। फिर सत्त्व में जाओगे।''

प्रश्न— Ambition (उच्चाकांक्षा) रहने पर कर्म निष्काम होगा कैसे? सुख-शान्ति-लाभ की वासना से यदि ईश्वर को पुकारा जाए तो वह क्या सकाम नहीं है?

उत्तर— Ambition (उच्चाकांक्षा) भी रहेगी, और फिर फल भी ईश्वर में अर्पण करोगे। अर्जुन से यही बात श्रीकृष्ण ने कही थी— खाओ, पीओ, जो कुछ करो सब कर्मफल मुझ में अर्पण करो। युद्ध करो, जो कुछ करो, राज्य-लाभ के लिए नहीं— मेरा कार्य है, ऐसा विचार करके करो। दौड़-भाग करके ट्राम भी पकड़नी होगी, चाकरी भी रखनी होगी। जब ये सब शेष हो जाए तब रात्रि में सोने के पूर्व एक बार कहो, ''ठाकुर, जो कुछ किया है उसका फल नहीं चाहता, सब तुम्हारा है।'' प्रथम मौखिक बोलना चाहिए, पीछे आन्तरिक होता है।

''शान्ति सब ही चाहते हैं। जो कार्य करने से शान्ति-लाभ हो, वही करो। विषय की दी हुई शान्ति नष्ट हो जाती है। यह समझ आ

जाने पर फिर ही शान्ति की खान ईश्वर में मन जाएगा। वह शान्ति कभी भी नष्ट होती नहीं। जन्म-जन्म संग-संग रहती है। इसी की प्राप्ति ही तो है मनुष्य-जीवन का उद्देश्य। सबको ही इसका लाभ करना होगा एक दिन। पुण्य काज द्वारा स्वर्ग-लाभ होता है, किन्तु उससे पतन— तब फिर और अशान्ति। चिरशान्ति, चिरसुख-लाभ— ईश्वर-लाभ की वासना कामना के मध्य में नहीं है, वही ठाकुर कहते। जैसे मिश्री मिठाइयों के मध्य में नहीं है। इससे अम्लशूल हटता है, अन्य मिठाई से बढ़ता है।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— लोकशिक्षा जो देंगे उन्हें इतना सब जानना चाहिए। देखो कितना जानना पड़ा है, तभी तो उस देश (पाश्चात्य) में कार्य होगा। बिना जाने किस प्रकार उनकी भाषा में, उनके भाव में बातें बोलते? किन्तु अन्त में वही ईश्वर-लाभ जीवन का उद्देश्य कहते हैं। जो जिस भाव में समझता है, उसी भाव में समझाना होगा उसको— नहीं तो काज नहीं होगा। केवल अपने लिए ही हो तो 'राम-राम' करने से हो जाता है। भिन्न-भिन्न प्रकृति का भिन्न-भिन्न पथ। कल भागवत पढ़ा था, जय-विजय की बात। सनकादि ऋषिगण भगवान का स्तव करते हैं। ''तुम्हारे न रहने से ब्राह्मण का ब्राह्मणत्व कहाँ?'' ब्रह्म को जो जानता है वह ब्राह्मण। वे जान गए थे जभी यथार्थ ब्राह्मण। यही ब्राह्मण होना ही जीवन का उद्देश्य है। सब को ही यही होना होगा आगे और पीछे।

''विचार की ओर से देखने से भी समझ में आता है, भगवान-लाभ ही मनुष्य जीवन का उद्देश्य है। नचिकेता ने तभी कहा था यम से, ''मुझको आत्मज्ञान दो''। अन्य वस्तु लेने के लिए यम ने प्रस्ताव किया। बोले, ''वह सब तो रहेगा जो नहीं, आप सब नष्ट कर देंगे''।

''इस अविनश्वर वस्तु-लाभ के लिए नश्वर वस्तु का प्रयोजन। जितने के न होने से बिल्कुल चलता ही नहीं, उतना ही लो। अधिक होने से ही अटक जाएगा। यह ही यदि किसी के मन में रहे तब तो वह व्यक्ति अर्ध जीवन-मुक्त है। संसार में उसको किसी वस्तु का अभाव बोध नहीं होगा। यह अभाव-बोध अनन्त दुःख का कारण है। यह ही तो जन्म-मरण-चक्र में

डाल देता है। देह-धारण के लिए जितना प्रयोजन हो, उतना ही लेना।

''ठाकुर ने एकजन भक्त से कहा था, 'अधिक उपार्जन कर सकते हो यदि ईश्वर-सेवा, साधु-भक्त की सेवा के लिए हो।' पाण्डवों ने राज्य-सेवा भी की, संग-संग ईश्वर-सेवा भी की, और फिर अन्त में ईश्वर-लाभ किया। निष्काम भाव में सब किया था कि ना, जभी। निष्काम माने सब श्रीकृष्ण के शरणागत होकर, उनका आदेश लेकर पालन किया था, जभी बद्ध न होकर मुक्त हुए इतना कर्म करने पर भी। ईश्वर की ओर अग्रसर होने का एक चिह्न है— अभावबोध कम होगा।''

●

कलकत्ता, 4 सितम्बर, 1923 ईसवी;
22वाँ भाद्र, 1330 (बंगला) साल, शनिवार।

द्वितीय अध्याय

''मेरा चिन्तन करेगा जो, मेरा ऐश्वर्य लाभ करेगा सो''

(1)

आज प्रातः मॉर्टन स्कूल में 'सत्प्रसंग सभा' थी। श्रीकृष्ण-आलोचना हुई। शिक्षक और छात्रों, अनेकों ने ही श्रीकृष्ण की बहुमुखी प्रतिभा की आलोचना की। श्री म भी वहाँ पर उपस्थित थे। उन्होंने एक युवक शिक्षक को 'परित्राणाय साधूनाम्'— श्रीकृष्ण के चरित्र के इसी दिक् के विषय में बोलने के लिए कहा। शिक्षक बोले,
साधु-भक्तों का उद्धार अवतार का प्रधान काज है। तीन उद्देश्य थे उनके आगमन के— प्रथम साधुओं का परित्राण, द्वितीय दुष्टों का विनाश और तृतीय धर्म-संस्थापन। इन तीनों कार्यों के मध्य प्रथम और तृतीय का धर्म-संस्थापन कार्य से घनिष्ट सम्बन्ध है। साधुओं के द्वारा ही धर्म-संस्थापन करवाते हैं। अवतार आकर एक क्लास सृष्टि करते हैं, वे उनकी वाणी प्रचार करेंगे। श्रीरामकृष्ण इनकी मधुमक्खी के संग तुलना करते हैं। 'मधु' अर्थात् ईश्वरीय रस के अतिरिक्त, ये विषय-रस ग्रहण नहीं करेंगे। उनके आने से व्यासादि ऋषिगण स्वच्छन्द रूप से धर्म अर्थात् उनका भाव जगत में प्रचार कर सकेंगे। वे पहले ही उनको जान गए थे साधन-भजन करके। तभी उनका आदेश लेकर प्रचार किया। साधकों को श्रीकृष्ण कहते हैं, शरीर धारण करने पर सब को कार्य करना होगा। आलसी का धर्म नहीं होता। इन सब कार्यों का फल मुझ में अर्पण करो। साधन-भजन यह भी काम; संसारियों का दान, व्रत, जीविका-अर्जन, यह भी काम। सब का फल उन्हें दे देना। अर्जुन को लक्ष्य करके यही बात

ही कही थी और बोले थे, 'पहले मेरा चिन्तन, तत्पश्चात् युद्ध अर्थात् अन्य कार्य'। पहले अन्य सब, तत्पश्चात् मेरा चिन्तन नहीं— जिनके हृदय में यह भाव दृढ़ हुआ है, वे ही साधु। घर में रहने पर भी साधु। घर में रहकर भी वे सर्वकार्य में उनका भजन करते हैं। साधु भक्त समझ गए हैं ईश्वर-दर्शन जीवन का उद्देश्य है, इसीलिए उनके शरणागत होकर वे रहते हैं जहाँ पर ही वे रखें। साधु भक्तों की मुक्ति का उपाय श्रीकृष्ण ने बोला है— "मामेकं शरणं व्रज"— एकमात्र मेरे शरणापन्न हो जाओ। ठाकुर ने भी कहा है, "मेरा चिन्तन करने से ही होगा। मेरा चिन्तन जो करेगा, सो मेरा ऐश्वर्य लाभ करेगा जैसे पिता का ऐश्वर्य-लाभ पुत्र करता है।" ज्ञान-भक्ति-लाभ ही मुक्ति। यह ही साधुओं का परित्राण।"

आज 10 सितम्बर, 1923 ईसवी, 24वाँ भाद्रपद, 1330 (बंगला) साल, सोमवार। अब प्रात: साढ़े आठ। श्री म स्टूल पर बैठे हैं— तीन तल के प्रभास बाबू के कक्ष में। राजमिस्त्रीगण कार्य करते हैं, वह देखते हैं। एक भक्त ने गृह में प्रवेश किया। ये वेदान्त सोसाइटी में धर्मकथा सुनने जाते हैं। उनसे श्री म कहते हैं, "आपको वहाँ जाने के लिए कहता हूँ कि आपका उपकार होगा। मुझे ठाकुर ने ऐसा कर दिया था। सात-आठ घण्टे सुनता हूँ, उनकी बातें। उनको watch (पर्यवेक्षण) करता हूँ, रात्रि में घर जाकर लिखता हूँ, सब मन में रहता। एक के पश्चात् एक आती जातीं लिखने के समय सब बातें। एक दिन में सब नहीं होता, क्रमश: मन में आतीं— ऐसा दाग लगा देते। फिर पाँच वर्ष लिखा, कोई जानता नहीं। ये पाँच वर्ष ही उनकी लीला-प्रकाश का समय था। काली महाराज (स्वामी अभेदानन्द) अन्तिम वर्ष उनके पास आए थे। एक वर्ष क्या कम? एक दिन देख लेने पर रक्षा नहीं, फिर एक बरस रहना! इससे क्या आप मन में benefitted (उपकृत) नहीं समझते?"

भक्त— उपकार हो रहा है, किन्तु किसी-किसी विषय में गोलमाल भी होता जा रहा है।

श्री म— सब क्या फिर मिलता है? सब की धात (प्रकृति) कोई एक नहीं होती। विभिन्न प्रकृति। ठाकुर बताते, "चीनी, बालू मिले रहते हैं, चींटी बनकर केवल चीनी लेगा।" सब तो फिर चीनी नहीं हैं, हो भी नहीं सकते।

किन्तु उनकी, ठाकुर की वाणी, सब चीनी, मिश्री और कितना कुछ! उनकी एक बात भी फेंकने वाली नहीं है। सामान्य एक बात भी कितनी गम्भीर, अर्थपूर्ण है। समाधि के पश्चात् बोले थे, ''छाता-टा आन तो (छतरी ला दो तो)।'' इसका भी अर्थ है। समाधिवान् पुरुष— मुहुर्मुहुः समाधि, किन्तु इस ओर भी कितना होश! यही तो आदर्श जीवन। इस ओर जैसा, उस ओर भी वैसा— अप्रमत्त, गम्भीर मनोयोग। अवतारादि का होता है पूर्ण, अन्यों का अल्प-सा होता है। श्रीकृष्ण का देखो, युद्ध का पुंखानुपुंख परामर्श देते हैं, सब चालें बतला देते हैं, और फिर इसके बीच ही समाधिस्थ— गीता कहते हैं। इसी दिक् को ही तो लक्ष्य करके स्वामीजी (विवेकानन्द) ने कहा है, ''In the midst of intense activity, intense calmness'' (महाकर्म-प्रवाह के भीतर होते हुए भी समाधिस्थ)। ये दोनों दिक् जिनकी हैं, वे ही हैं आदर्श; जैसे श्रीकृष्ण, ठाकुर। भक्तलोग वह छाता बाहर छोड़ आए थे। घर में आते ही ठाकुर की समाधि। तत्पश्चात् नीचे उतर आने पर वही बात बोले थे। और बोले थे, ''यहाँ की धोती ठीक रहती नहीं (अर्थात् समाधिस्थ)। किन्तु इनकी भूल होती नहीं। छाता फेंक कर आ गए?'' उनके निकट प्रार्थना करनी चाहिए, ''तुम सुमति दो जिससे पथ से विचलित न होऊँ।'' सुमति, कुमति सब ही उनकी। आप ने तो निर्जने, गोपने तपस्या की है, कुछ समझा है तो? उनके संग मिला कर लेवें। सब क्या लेना चाहिए, ले सकते हैं? सब खाने से हजम होगा क्यों? जभी गोलमाल होता है। जितना अनुकूल हो, लेना चाहिए। मन का भला-मन्दा— यह सब तो है ही। मिष्टि बोलने से भला, थोड़ा कड़ा बोलने से मन्दा। यह उठना-गिरना मन का धर्म। इस ओर इतना लक्ष्य देते नहीं। संसार में भिन्न-भिन्न प्रकृति के लोग हैं। सब के संग सब का मेल होता नहीं है। किन्तु सब को ही हो सकता है, रहना पड़े एक स्थान पर। जभी ठाकुर कहते, कुछ लोगों के संग मुख की खातिर रखनी चाहिए। कहना चाहिए, भले हो महाशय, आइए बैठिए। और किसी के संग अन्तर का भाव, आदान-प्रदान चलता है। यही जो लड़कों को, शची आदि को जाने के लिए कहता हूँ।— बहुत सुविधा हो सकती है पढ़ने की।

भक्त— जी हाँ, philosophy (दर्शन) पढ़ने में खूब सहायक होगा।

श्री म— केवल क्या वही? युवकों की West (पश्चिम) में जाने की इच्छा होती है। क्या प्रयोजन विलायत, अमेरिका जाने का? इतने बड़े एकजन authority (अधिकारी) पच्चीस वर्ष रहे हैं उस देश में। उनके पास से सुन लेने से ही हुआ— कितनी अभिज्ञता। कथाप्रसंग में उस देश की बातें, भ्रमण-वृत्तान्त सुनने से ही हो गया। समय कहाँ इतना सब एकजन को करने का। सामान्य जीवन कुछेक बरसों का है। जभी best mind (श्रेष्ठ मनीषी) के पास से सुन लेना चाहिए। हम भी ऐसा ही करते हैं। यही ठाकुर का उपदेश है। आप इन दो बातों के ऊपर ही लक्ष्य रखें, प्रथम उनकी personal reference (निजी जीवन की घटना) और द्वितीय, ठाकुर की reference (बातें)। ये दो ही स्मरण रहने से, और सब स्मरण करके ला सकेंगे। तत्पश्चात् आकर लिख लेने से ही हुआ। ठाकुर की बातें सुनने जाना, इसीलिए तो यहाँ पर, वहाँ पर जाया जाता है। और ये हैं ठाकुर की सन्तान। एकजन महापुरुष को watch करना, मनोयोग देकर देखना, खूब भला। मान-अभिमान छोड़कर उनके पास जाना चाहिए।

•

(2)

अब वेला ग्यारह। श्री म अन्तेवासी को बाल्टी देकर बोले, ''नीचे बेयरा है, उससे कहिए, इस बाल्टी में डालकर जल ऊपर देने के लिए। स्नान करना होगा।''

अन्तेवासी निज ही जल लेकर चारतल पर चढ़ गए। श्री म अन्तेवासी से बोले,

''मिस्त्री लोग काज करते हैं। घर में अनेक दामी वस्तुएँ हैं। आप को तो अब अन्य काज नहीं है। थोड़ा बैठते तो स्नान-टान करके आता।'' वे स्नान करने गए। अल्प क्षण परे लौट आए। स्नान हुआ नहीं, हाथ में नाग महाशय की जीवनी। बोले,

''इसको इस स्टूल पर बैठकर पढ़िए। और छोटे अमूल्य बाबू के पत्र का जवाब लिखना होगा। मठ में जन्माष्टमी के दिन रात्रिवास, नन्दोत्सव,

काँकुड़गाछी, योगोद्यान में उत्सव-दर्शन— यह सब विवरण देखकर लिखिएगा। अर्थात् जिससे पत्र-पाठ से भगवान में उद्दीपन हो, ऐसा करके लिखना चाहिए।''

श्री म स्नान करके आए हैं। एक भक्त से बोले, आपका तो स्नान हो गया है। मैं फिर तब आँख बन्द करूँ (ध्यान करूँ)। ध्यानान्ते भक्त विदा लेते हैं। उनके हाथ में तीन अदद कपड़े दिए, सिटी कॉलिज के कोने पर डाईंग और क्लीनिंग में देने के लिए। और बोले,
''संग में बेयरे को ले जाएँ जिससे वह रसीद दिखाकर ले आ सकेगा। तीन अदद के तीन आने से अधिक हों तो दीजिए नहीं। और रसीद लाएँ। और इस (लाल पाड़ धोती) के अधिक मैली के लिए अधिक माँगे तो दीजिए मत।''

•

रात्रि साढ़े आठ। मॉर्टन स्कूल के द्वितल के पश्चिम के घर में नैश (रात्रि)-सभा बैठी है। श्री म चेयर पर पूर्वास्य। निकट शुकलाल, छोटे जितेन, मणि, जोगेन और आसाम के अक्षय डॉक्टर हैं। वकील ललित बैनर्जी और मोहन वेदान्त सोसाइटी से होकर लौटे हैं। थोड़ी देर में और भी कई जन नूतन भक्त आ गए। तत्पश्चात् छोटे नलिनी ब्राह्मसमाज से होकर आए। सुधीर पहले वेदान्त सोसाइटी, फिर ब्राह्मसमाज में गए थे। वे भी आ गए। अन्त में शची और और शान्ति वेदान्त सोसाइटी से होकर आ गए। एक भक्त गाते हैं—

गान : रामकृष्ण, रामकृष्ण बोलो रे आमार मन।
ऐश्वर्य-विहीन-मूरति जित कामिनी-काँचन॥

श्री म *(अक्षय डॉक्टर के प्रति)*— आप दक्षिणेश्वर कब गए थे?

अक्षय डॉक्टर— जी, गया नहीं बहुत दिन से। जाना-जाना करता हूँ, हो रहा नहीं।

श्री म— जाइए एक दिन। ऐसा सुन्दर बाग घूम-घूम कर देखें।

अक्षय डॉक्टर— एक दिन जाकर सारा दिन रहकर भली प्रकार देखकर आऊँगा। आरती देखकर लौटूँगा, यही वासना है।

श्री म— वही सुन्दर। किन्तु कल या परसों तब एक बार देख आइए झट करके, फिर चाहे भली प्रकार देखें।

भक्तों को बेलुड़ मठ और दक्षिणेश्वर भेजने के लिए श्री म कितने ही भाव, भाषा और उपाय अवलम्बन करते रहते हैं। वे निश्चय जानते हैं, अध्यात्म-जीवन जो चाहते हैं उनको उन सब स्थानों पर न जाने से स्फुरण होना सम्भव नहीं। जभी भेजने के लिए इतना करते हैं। यह जैसे समझा कर ही हो, किंवा जोर करके धक्का मार कर ही हो, अमृत-सागर में फेंक देने की चेष्टा है। अब युक्ति के पश्चात् डॉक्टर के हृदय पर आक्रमण किया।

श्री म *(डॉक्टर के प्रति)*— जाइए एक बार, हमारा बड़ा उपकार होगा। आकर सब बताना। इससे हमारा भी जाना हो जाएगा। Old man (वृद्ध) कि ना, इच्छा होने पर भी जाना नहीं होता। आप तो young man (युवक) हैं, जो इच्छा हो कर सकते हैं। हमारा बड़ा उपकार होगा, जाइए। आरती देखने से तो फिर last steamer (अन्तिम जहाज) नहीं मिलेगा।

अक्षय डॉक्टर— जी जाऊँगा, आपका आदेश है। जाना ही होगा। मेरा भाई बाली में है। सब बन्दोबस्त कर देगा।

श्री म— वह तो ठीक, ठीक। दो-एक दिन के मध्य ही एक बार जाइए। जाते समय मठ-दर्शन होगा स्टीमर से।

अक्षय डॉक्टर— निश्चय जाऊँगा। वीरेन बोस कब आते हैं यहाँ पर?

श्री म— रविवार को दक्षिणेश्वर जाते हैं। वहाँ से प्रत्यावर्तन करते हुए बीच-बीच में यहाँ पर आते हैं।

अक्षय डॉक्टर— मुझ से कहा था वीरेनबाबू ने, एटोर्नी का कार्य भला नहीं लगता, छोड़ देंगे।

श्री म— वह लगेगा नहीं। ईश्वर में मन पड़ा है। किरण बाबू ने दक्षिणेश्वर का चार्ज लिया है। अर्थात् अब हमारा ही हो गया। मठ ने recommend (सिफारिश) की। जज को तो फिर local knowledge (स्थानीय ज्ञान) नहीं। तभी रेफर किया था एकजन को। पाँच जनों के बीच से किरणबाबू ही

हुए। भक्त लोग हैं और अनेक काज हैं, तब भी लिए हैं, ठाकुर का काज जान कर। ठीक हुआ? देख आइए।

•

(3)

श्री म *(मोहन के प्रति)*— क्या-क्या बातें हुईं ठाकुर की वेदान्त सोसाइटी में, सुनाइए।

मोहन— आज का विषय था "वेदान्त क्या है?" श्रोता एक सौ के ऊपर। अभेदानन्द जी बोले,

"द्वैत, विशिष्टाद्वैत और अद्वैत— ये तीनों मत ही हैं वेदान्त के अन्तर्गत। अद्वैत हुआ highest culmination and gradual development of the other two (अद्वैत अन्तिम बात— क्रमोन्नति का अन्तिम शिखर)। मन के क्रमविकास में द्वैत विशिष्टाद्वैत में पहुँचा देता है, वहाँ पर से उच्चतम शिखर अद्वैत में। अद्वैतवादी ज्ञानमार्गी। वे निराकार ब्रह्म की उपासना करते हैं, 'नेति-नेति' करके अग्रसर होते हैं। बड़ा सख्त पथ। इस मत में 'तुम प्रभु, मैं दास', 'तुम पूर्ण, मैं अंश', ये सब नहीं हैं। तुम ही मैं— त्वमेवाहम्, सोऽहं, शिवोऽहं, यही चिन्तन करता है अद्वैतवादी। इसका प्रचलन बंगाल में नहीं है— पश्चिम और दक्षिण में है। बंगाल वैष्णवों और शाक्तों का देश। यहाँ पर द्वैतवाद, इसका प्रभाव अधिक है।

"अद्वैतवादी कहते हैं, 'ब्रह्म सत्य जगत मिथ्या'। ब्रह्म कैसा? जैसे महाजलराशि, कूलकिनारा नहीं। और जीव, जगत जैसे उसमें बुलबुले उठते हैं। दस बुलबुले उठे, दो चार एकत्र हुए, बड़े हुए। और फिर फूट गए। और फिर जल में मिल गए। जब तक उपाधि रहती है तब तक यह ज्ञान नहीं होता। मैं अमुक का लड़का, अमुक स्थान पर घर, अमुक जाति— ये सब उपाधि। ये सब जाने पर तब वही ज्ञान होता है। अभ्यास करना चाहिए "अहं ब्रह्मास्मि",

''शिवोऽहं''— ये सब मन्त्र, ये सब महावाक्य। अरे भाई, विचार करके देखो ना, तू किसका लड़का है। अज्ञान में लोग सोचते हैं— यह मेरा पुत्र है, यह बड़ा होकर मुझे खिलाएगा। कैसी मूर्खता! तेरा पुत्र कैसे? तू क्या पुत्र को प्राण दे सकता है? तू कल— यन्त्र मात्र है। यन्त्री वे। In a process (एक उपाय से) कल में लड़का उत्पन्न हो गया। तू कहता है, मेरा लड़का। आत्मा किसी का लड़का नहीं।

''हमारे देश का अध:पतन हुआ है। वर्णाश्रम धर्म-प्रतिष्ठा करो। वर्ण भी नहीं, आश्रम भी नहीं। एक वर्ण, एक आश्रम हो गया है अब— दास वर्ण और गृहस्थ आश्रम। सब अंग्रेज़ों के गुलाम। और गृहस्थ आश्रम माने पशु की भाँति भोग-विलास में रत रहना। उच्च चिन्ता, ईश्वर की चिन्ता नहीं। हिन्दू सभा हुई बनारस में। वहाँ पर विवाह का विषय लेकर सब व्यस्त— कितनी वयस में विवाह होगा। यही क्या हिन्दू धर्म, ऋषियों का धर्म? आत्मज्ञान तो धर्म का मूल— वहाँ पर खाली नीचे की ही बात लेकर सब व्यस्त। यही तो धर्म! संन्यास आश्रम चतुर्थ आश्रम— त्याग का आश्रम। इसमें से जाकर सब को पहले मरना पड़ता था। वानप्रस्थ से संन्यास। अब क्या होता है? इसका नाम सुनने से रुष्ट हो जाता है। एक आश्रम ने चार आश्रमों को ग्रास कर रखा है। देखो ना, परमहंसदेव के वहाँ हम आते, इस कारण हमारे बाप-माँ कितना मन्द बोलते। तुम यहाँ पर आते हो, इसलिए बाप-माँ शायद रुष्ट होंगे। मुझे शायद पागल कहेंगे।

''इस देश के नेता कौन हैं? वे ही ना, जो दूसरे के सिर पर हाथ फेर कर खाते हैं। जो कमा कर खाते हैं, उन्हें कर रखा है छोटा लोग— समाजहीन। पौरोहित्य हो गया है hereditary (वंशगत), किन्तु उस देश में, पाश्चात्य में वह नहीं है। Clergyman (पुरोहित) के लड़के सब clergyman (पुरोहित) नहीं होते। पाँच लड़के शायद पाँच प्रकार का काज करते हैं। इस देश में वैसा नहीं है। जन्म द्वारा हो गया है जाति विचार। पहले था गुण और कर्म द्वारा। बी० बैनर्जी की जूते की दुकान थी। वे कौन? वही ना, अमुक के पुरोहित। तुम

जो बाप-धन से वैश्य हो गए हो, व्यवसाय कर्म करने से पुरोहित रहे कैसे? West (पश्चिम) में भी चार वर्ण हैं— clergy, warrior, merchants and servers (पुरोहित, सैनिक, वणिक् और सहकारी)। जब ऋषि लोग थे समाज के नेता, तब वर्णाश्रम था। वे थे सम्पूर्ण नि:स्वार्थ परायण। सबका कल्याण करना थी उनकी एकमात्र कामना और चेष्टा। अब हुए हैं स्वार्थपर लोग समाज के नेता। संन्यासी को करो नेता— जो सबका मंगल चाहता है। और फिर वह प्रतिदान में कुछ नहीं चाहता। वर्तमान युग के युगावतार हैं परमहंसदेव, उनको करो नेता। उनके आदेश में चलना उचित। देश, समाज और व्यक्ति सबका कल्याण होगा— सभी उठेंगे।

''परमहंसदेव कहते हैं, 'पक्का मैं' और 'कच्चा मैं'। मैं अमुक का लड़का, अमुक जात इत्यादि है 'कच्चा मैं'। मैं ईश्वर का लड़का, 'मैं ईश्वर'— सोऽहम्; यह भाव 'पक्का मैं'। परमहंसदेव कहते, ''अद्वैत ज्ञान आँचल में बाँधकर जहाँ इच्छा, वहाँ जा।'' गृहस्थ होना चाहो, वही होओ किन्तु ईश्वर के संग सम्बन्ध करके होओ। तभी ठीक रह सकोगे, नहीं तो माया में डुबा देगा। परमहंसदेव और फिर कहते, ''जो है भाण्ड में, वही है ब्रह्माण्ड में'' (यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे)। इसी शरीर के भीतर वे हैं, वे ही ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं।

''तुम परमहंसदेव को पकड़ो। उनको आदर्श करो। ईश्वर के संग में एक सम्बन्ध करके संसार में रहो— द्वैत, अद्वैत जो हो। अन्त में एक जगह पर जाओगे— ईश्वर में। ये सब रास्ते का झगड़ा छोड़ दो। ऐसा करने से तुम भी उठोगे, देश भी उठेगा।''

(4)

प्रश्न— क्या मैं कह सकता हूँ— 'सोऽहम्, शिवोऽहम्'?

उत्तर— खूब कह सकते हो। बचपन से शिक्षा करना अच्छा 'तत्त्वमसि'— तुम वही आत्मा हो।

प्रश्न— प्रार्थना की आवश्यकता क्या है ?

उत्तर— द्वैतवादियों के लिए है खूब आवश्यक essential, ज्ञानमार्गियों को दरकार नहीं। वे किसे करेंगे प्रार्थना ? वे 'नेति नेति' विचार करते हैं। विचार करते हैं— 'सोऽहं', मैं निज ही परमात्मा— ब्रह्म। जभी उनके लिए आवश्यक नहीं, भक्तिमार्गियों को अत्यन्त दरकार।

"परमहंसदेव कहते, शुद्धाभक्ति और शुद्धज्ञान एक। अन्त में दोनों ही एक स्थान में मिलित होते हैं— ईश्वर में। प्रार्थना भी फिर दो प्रकार की है— सकाम और निष्काम। चण्डी में सकाम प्रार्थना की बात है—

'रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि।
भार्यां मनोरमां देहि मनोवृत्त्यनुसारिणीम्।"*

यह खराब नहीं है। किन्तु इससे शाश्वत शान्ति-सुख-लाभ होगा नहीं। जभी निष्काम प्रार्थना करनी चाहिए— जैसे "अपने पादपद्मों में शुद्धाभक्ति दो, ज्ञान दो, विश्वास दो।" इससे चिरशान्ति, सुख-लाभ होगा। प्रार्थना करने से देखोगे मन क्षण भर के लिए ही सही, अन्य वस्तु में चढ़ जाता है। इसी प्रकार करते-करते जब मन-मुख एक होगा, तब मन जो चाहेगा वही पाएगा।"

प्रश्न— प्रार्थना द्वारा कर्मफल कम किया जाता है क्या ?

उत्तर— हाँ, किया जाता है। तब भी avoid (परित्याग) नहीं किया जाता। मोड़ फिरा दिया जाता है। कर्मफल भोग करना, यह भी एक law— natural law (प्राकृतिक नियम) है। यह सबको ही करना होगा। तो भी मोड़ फिराने से तुम्हारे मन को वह affect (अभिभूत) नहीं कर सकेगा। हरि महाराज (स्वामी तुरीयानन्द) को देखा, बड़ा operation (ऑप्रेशन) पीठ में, किन्तु ख्याल नहीं। अन्त पर्यन्त मन योग में है। ठाकुर को भी देखा था— रोग में काठ हो गए हैं। हम

---

* रूप दो, जय दो, यश दो, शत्रुओं को नष्ट करो। मनोनुकूल मनोरमा भार्या दो।
— अर्गलास्तोत्रम्

सब पास बैठे हैं। खाते हैं— मुख से बाहर निकल रहा है, निगल नहीं सकते। कैसा कष्ट! भक्त बोले, "आहा, कैसा कष्ट होता है खाने में?"

"भक्तों को, सब को दिखाकर बोले, "क्या कहते हो— मैं तो इन सब, इतने मुखों से खाता हूँ।" ऐसे एकजन दूर्वा (घास) के ऊपर से जा रहा था— झट ठाकुर चीत्कार कर उठे, "उह! उह!! छाती में लगता है जो।" यह सब होता है ठीक-ठीक अद्वैत ज्ञान से।

"प्रार्थना संचित कर्म अथवा संस्कार बदल सकती है। किन्तु प्रारब्ध भोग तो करना ही होगा— तब भी निर्लिप्त भाव में, ज्ञानाग्नि भीतर जला दी जा सके तो सब भस्म हो जाता है— कर्म रहता नहीं।

"कर्मफल फिर transfer (अन्य में संचारित) भी होता है। ठाकुर और यीशु (क्राइस्ट) ने लिए थे दूसरों के कर्मफल। Mental healer (मैण्टल हीलर)— मानसिक चिन्ता द्वारा दूसरे का रोग आराम करता है, किन्तु प्रतिरोध न जानने से अपने शरीर पर आता है।"

प्रश्न— प्रार्थना से पाप पुण्य कम होते हैं क्या?

उत्तर— हिन्दू पाप-पुण्य नामक कुछ नहीं मानते। ब्राह्मसमाज में 'पापी-पापी' करते, और दो-एक स्तवों में पाप, पापी ये सब बातें हैं। परमहंसदेव सुनकर बोले, "पापी-पापी बोलते-बोलते पापी हो जाता है और शिव-शिव बोलते-बोलते शिव हो जाता है।" ईसाइयों के मत में आदम निषिद्ध वृक्ष का फल खाकर पतित हो गया— पापी हो गया। जभी तुम उसकी सन्तान अनन्तकाल तक भोग करते हो। उनका पुण्य का देवता पृथक्, पाप का पृथक्। हमारा वह सब कुछ नहीं। पाप किया है, पुण्य करो— ईश्वर का आश्रय लो। प्रतिरोध हो जाएगा। हिन्दू लोग अनन्त नरक नहीं मानते।

प्रश्न— स्व-स्वरूप को अपने-आप जाना जाता है क्या?

उत्तर— ना। एकजन के निकट उपदेश लेना चाहिए। जो उपदेश देंगे, वे तुम्हारी प्रकृति जानेंगे। ध्यान, जप, कर्म, ज्ञान, भक्ति— कौन-सी

तुम्हारे पक्ष में उपयुक्त है, वे बोल देंगे। अपने-आप सिद्ध नहीं हुआ जाता— सब ही सोचते हैं, मैं बड़ा। एकजन के पास से जानकर विश्वास करके धैर्य के साथ कार्य करते रहो, निश्चय कृतकार्य होंगे।

श्री म— देखा, कैसे सब स्मरण है— जैसे गुँथ गया है। अब ये सब लिखकर रखने से ही हुआ। जो कहा है वह दोनों बातें ही स्मरण रखें, अन्य सब अपने आप से स्मरण आ जाएँगी। ठाकुर की वाणी— मन्त्र। वह सबको ही माननी होगी। किन्तु भाष्य भिन्न-भिन्न होता है। जभी तो उनको पकड़े रहने से वे सबको ले जाएँगे ठीक रास्ते पर।

दुर्गापद मित्र 'न्यू जापान' और 'माड्रन थाट' लाए हैं। श्री म दृष्टिपात करते हैं। अब रात्रि प्राय: दस।

●●

(5)

श्री म मार्टन के द्वितल के पश्चिम के कक्ष में बैठे हैं। बड़े जितेन, छोटे जितेन, विनय, जोगेन, छोटे नलिनी, शची, सुधीर, मणि, जगबन्धु आदि भी हैं। अब रात्रि साढ़े आठ। श्री म में एक आनन्दमय भाव का प्रकाश हुआ है। आनन्द में गाने पर गाना गाते हैं और दो-चार बातें कहते हैं। गाने में कहते हैं, मृत्यु है सम्मुख दण्डायमान। जीव, प्रस्तुत हो जाओ— इस शत्रु को जय करने के लिए। श्री भगवान के नाम से यह शत्रु वशीभूत हो सकता है, अन्य पथ नहीं। गाने में बोलते हैं, संसार दु:ख पूर्ण, दु:ख दूर करने का उपाय है— आनन्दमय भगवान की शरण-ग्रहण।

गान : जीव साज समरे, रणवेशे काल प्रवेशे तोर घरे।
भक्ति रथे चड़ि, लये ज्ञान तूण,
रसना धनु के दिए प्रेमगुण
ब्रह्ममयीर नाम ब्रह्म अस्त्र ताहे सन्धान करे।

[अर्थ— हे जीव, समर के लिए सजो, रणवेश में काल ने तेरे घर में प्रवेश कर लिया है। भक्ति के रथ पर चढ़कर, ज्ञान-तरकश

लेकर रसना रूपी धनुष को प्रेम की डोरी लगाकर, ब्रह्ममयी के नाम रूपी ब्रह्मास्त्र को उस पर सन्धान करो।]

डॉक्टर बक्शी, अमृत, मनोरंजन और वीरेन ने गृह में प्रवेश किया। श्री म ने गाया—

गान : कखनो कि रंगे थाको मा श्यामा सुधातरंगिणी।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— यही गाना ही गाया करते— इस पद के लिए ही 'साधकेर वांछा पूर्ण करो नाना रूपधारिणी।'' और भक्तों को बताने के लिए कि संसार है उनकी लीला भूमि— यहाँ है उनके नाना भावों का सम्मिलन क्षेत्र। कभी रुद्र मूर्ति, असुर निधन करती हो— संग-संग सौम्यमूर्ति धारण करके भक्तों का पालन करती हो। कभी-कभी त्रिताप ज्वाला से दग्ध करती हो, कभी-कभी फिर भक्त के हृदय में आनन्द से नृत्य करती हो। उनका जगत लीला का चित्र! पहले वाला गाना गाते, भक्तलोग जब शोक-ताप में जर्जरित हो जाते। सावधान कर देते, जिससे ईश्वर में शरण लें।

प्रत्येक गाना ही सम्पूर्ण गा रहे हैं—

गान : आर भुलाले भुलाबो ना माँ,
देखेछि तोमार रांगा चरण।
[और भुलाने से भूलूँगा नहीं, तुम्हारे लाल चरण जो देख लिए हैं।]

गान : आमि अभय पद सार करेछि, भये हेलबो दूलबो ना मा।
[मैंने अभय-पद को सार कर लिया है, अब भय में हिलूँगा, डुलूँगा नहीं माँ।]

गान : आमि ओई खेदे खेद करि।
तुमि माता थाकते आमार जागा घरे चुरि॥

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ये दोनों ही रामप्रसाद के गाने हैं। प्रथम में भरोसा, द्वितीय में भय दिखाते हैं। भगवान का आश्रय लेने पर विपद जाती है। किन्तु

सम्भावना रहती है शरीर रहने से। यावत् (जब तक) अहंभाव का लेशमात्र भी रहेगा तावत् (तब तक) वही भय। जभी कहते हैं, ''अभय पद को सार किया है, भय में हिलूँगा-डुलूँगा नहीं माँ।'' आश्रय लेने पर दृढ़ता आती है किन्तु यह भी स्थायी नहीं। वे उसको भी बदल देते हैं। जभी कहते हैं, ''तुम्हारे, माता के, रहते मेरे जाग्रत घर में चोरी?'' ठाकुर का हाथ टूट जाने पर यही गाना ही गाया था। शरीर जाने के पूर्व बोले थे, ''सब ताँर 'अण्डरे' ''। ठाकुर की रहने की इच्छा थी भक्तों के कल्याणजन्य। किन्तु कहने लगे, ''माँ ले जा रही हैं। मैं सब दिए दे रहा हूँ।'' सब ही को अर्थात् सबको ज्ञान हो जाने पर जगत-लीला चलेगी नहीं माँ की, जभी लिए जा रही हैं। क्या समझेगा मनुष्य यह लीला? अवतार ये बातें कहते हैं मनुष्य-भाव में, भक्त-भाव में। अवतार अर्थात् ब्रह्मशक्ति का मनुष्य रूप में आगमन। दुर्बोध्य यह सब! 'उनमें आश्रय लेने पर दुःख तब नहीं होगा' यह बात हो नहीं सकती। शरीर रहने पर दुःख है। तब भी उनके आश्रय में रहना। ईश्वर ही एक रूप में माँ, एक रूप में ठाकुर और फिर बहुरूप में जीव, जगत हैं। ठाकुर बताते थे, ''दो-एक परिवार देखकर ही माँ से कहा था, माँ! मोड़ फिरा दो। तभी हुआ।'' हमारी इतनी hammering (हथौड़ों से पिटाई) होती है, तब भी कुछ होता नहीं।

श्री म पुन: आवेग से भरकर गाते हैं। गाने में प्रार्थना करते हैं।

गान : कबे तब दरशने हे प्रेममय हरि।
उथलिबे प्रेमसिन्धु चिदानन्द लहरी॥
[अर्थ— हे प्रेममय हरि, आपके दर्शन से प्रेमसिन्धु में कब चिदानन्द लहरें उथलेंगी?]

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— यही काम्य भक्तों का। बाह्यज्ञान भूल हो जाता है। उनमें मन समाधिस्थ। चिदानन्द-सागर में मग्न। तब दुःख नहीं— पूर्ण आनन्द, शान्ति। ऐसे एक दिन एक भक्त को लेकर माँ के मन्दिर में गए और नाचते-नाचते गाने के सुर में ठाकुर बोले, ''विपदनाशिनी गो विपदनाशिनी।'' *(बड़े जितेन के प्रति)* सबसे बड़ी विपद हुई देहबुद्धि। Sense world

(बाह्यजगत) ही तो विषय। माँ ने जितने दिन देहबुद्धि रखी है, उतने दिन उनकी प्रार्थना करनी चाहिए— 'विपद नाश करो माँ'। आत्मा निर्लिप्त। जब देह में मन रखा है, तब तुम देखो। Sense world (बाह्यजगत) से मन उठने पर क्या अवस्था होती है। वह यही—

गान : नाहि सूर्य नाहि ज्योतिः नाहि शशांक सुन्दर।
भासे व्योमे छायासम छवि विश्व चराचर॥

श्री म— यह अवस्था शेष अवस्था। यही तो स्वामीजी का गाना। ठाकुर ने ऐसा कर दिया था। जभी बोलते हैं, "से धारा ओ बद्ध होलो। शून्ये शून्य मिलाइलो।" (वह धारा भी बन्द हो गई, शून्य में शून्य मिल गया।) देहबुद्धि नाश हो गई है (the lower ego disappeared). तब क्या अवस्था होती है, मुख से बोला नहीं जाता, तभी अवाङ्मनसगोचरम्। जिसका होता है, वह समझता है। मुख से बोला नहीं जाता। यह उनकी कृपा बिना नहीं होता। 'नी' कहते इस अवस्था में। भक्तों की उन्होंने कृपा करके यह कर दी है। जब तक यह न प्राप्त हो उतने दिन इसी भाव में रहो— भक्ति-भक्त भाव में—

गान : शिवसुन्दर चरणे ओ मन मग्न होये रओ रे।
भज रे आनन्दमये सब यन्त्रणा एड़ाओ रे।
शिवपद सुधा ह्रदे डुबे मन जुड़ाओ रे॥

[अर्थ— ओ मन, शिव के सुन्दर चरणों में मग्न रहो, उनके आनन्दमय नाम का भजन करो और सब दुःख दूर कराओ। शिवपद के अमृत-सागर में मन को डुबाकर चिरशान्ति पाओ।]

श्री म दीर्घकाल मौन हुए रहे, मन अन्तर्मुख। शिवपद सुधाह्रदे (शिवपद-सुधासागर में) लगता है मन डूबा हुआ है। और फिर मधुर कण्ठ से भगवत-महिमा कीर्तन करने लगे।

श्री म *(डॉक्टर के प्रति)*— यह गाना जिसका है, उसी शिव का प्रसाद आज हमने पाया है। शान्तानन्द ने भेजा है। साधु कोई-कोई अमरनाथ गए थे— काश्मीर में। एक साहब का विवरण पढ़ा था। स्मरण हो रहा है यही साहब

नौका करके मानसरोवर में भीतर गए थे, लगता है। अमरनाथ भी गए थे। लोगों ने मना किया था जाने के लिए। कहा था, उस ओर डाकू हैं। हूण लोग लूटमार करते हैं, मानसरोवर के पथ में। अमरनाथ जाने के लिए भी बन्धुओं ने मना किया था। *(हास्य)* कहा था, वहाँ पर राक्षस रहते हैं। साहब ने माना नहीं, दोनों जगहों पर ही गया था। उन्होंने कहा था, वहाँ पर जाने से सब समय उद्दीपन होता है— अन्य भावना नहीं रहती। उसी अमरनाथ का प्रसाद एकदम टाटका (ताजा)। वहाँ पर अकेले शिव हैं— प्रकृति बिना। प्रकृति में सृष्टि-वृष्टि होती है। अकेले शिव की पूजा होती है वहाँ पर। 'मैं' को जब तक रखा है, तब तक सब है— ये सब तीर्थादि। तब तक 'कुछ भी नहीं'— नहीं कहा जा सकता। फिर भी विवेक होने पर एक बार में काट कर फेंका जा सकता है। जैसे बेर का वृक्ष— हजार पत्ते, सब एक बार में काटकर फेंक देते हैं।

अमृत *(श्री म के प्रति)*— चित्तशुद्धि माने क्या?

श्री म— मन को रूप, रसादि से उठा देने का नाम ही है चित्तशुद्धि। इनसे उठा लेने से ही शुद्ध और इनमें रखना अशुद्ध। शुद्धचित्त में ही ठीक योग होता है। ठाकुर कहते, तब एक 'भागवती तनु' होता है। उसके नाक, मुख, आँख सब हैं। उनकी कृपा से तपस्या द्वारा वह होता है। उससे फिर इसी शरीर की भाँति रूप, रसादि भोग होते हैं। स्थूल भोग नहीं— चिन्मय भोग सब! जब तक वह नहीं होता, उसके लिए ही तब तक भक्तलोग प्रतिमा-दर्शन करते हैं, उनका प्रसाद आस्वादन करते हैं। सुगन्धि पुष्प सूँघते रहते हैं। उनका नाम जपते हैं और प्रतिमा का पाद-स्पर्श करते रहते हैं। यह ही बाह्य— यही करते-करते चित्तशुद्धि होने पर, तब 'भागवती तनु' में चिन्मय भोग होता है इस प्रकार। यह सब अच्छा है। भोग करोगे तो उनको लेकर करो— उनको ही भोग करो। ये सब relative (व्यावहारिक), Absolute (नित्य सत्य) वे। एकदम डूब जाना, एक हो जाना— सब जल महासागर। वही तो होता नहीं। तो फिर क्या किया जाए? दास बनकर रहो— उसी भाव में।

"ये (ईश्वर) कैसे! जैसे coin (मुद्रा) के दो दिक्, एक दिक् ब्रह्म अन्य दिक् यह सब जितना भी काण्ड। वे नामरूप के अतीत होते हुए भी व्याकुल होकर पुकारने से भक्त की इच्छानुकूल रूप धारण करके दर्शन देते

हैं। और फिर मनुष्य होकर भी आते हैं— जैसे ठाकुर आए हैं। मनुष्यवत् सब व्यवहार— 'बुँर् रूर् बुर रूर्' करते हैं। मिहिजाम* में देखा है बकरियों के चरवाहे इसी प्रकार पुकारते हैं उनकी भाषा में।

''मुनिगण आत्माराम हैं, उनके बन्धन नहीं। तब भी वे नाना रूप रख देते हैं जैसे नारदादि, जगत के कल्याण के लिए। संसार में 'थोड़ बड़ि खाड़ा, खाड़ा बड़ी थोड' (दाल-रोटी, रोटी-दाल) विषय-भोग है। परमानन्द-भोग मुनिजन करते हैं। अन्य जीवों को भी सिखाते हैं, यही करना। तब ही शान्ति में रहेंगे।''

श्री म *(सकल के प्रति)*— कैसा सुन्दर विधान! भोग करने की इच्छा होती है, ठीक है। तो उनके नाम में निवेदन करके उनका प्रसाद पाओ। जिससे बन्धन होता, वह मुक्ति का उपाय हो गया। निवेदन का अर्थ ही है पूजा करना। इन्हीं पैरों से उनके स्थान पर जाओ तीर्थ में, आँखों से देखो साधु, भक्त, देवता। अन्धा जो है वह भी सूँघ सकता है, स्पर्श कर सकता है। सब इन्द्रियाँ उनकी सेवा में लगानी चाहिएँ। जितनी से भी हो, वही भला। ठाकुर की ऐसी हो गई थी अवस्था— सब माँ को देकर निज लेते। नूतन कपड़ा, माँ को पहले पहनाएँगे। पीछे स्वयं पहनेंगे। आरसि (दर्पण) था एक ठाकुर का। मसाले के बटुए में रखते और बीच-बीच में आरसि में हृदय के मध्य जो हैं, उन्हीं माँ को देखते। ऐसा होने से सर्वदा योग में रहा जाता है, इसके भीतर रहते हुए भी।

श्री म *(युवक के प्रति)*— सूर्य क्या करता है? सब नक्षत्र लेकर— शनि, मंगल, बुध— अन्य एक constellation (नक्षत्र-पुँज) की दिशा में भागता है। देहबुद्धि जब जाने वाली नहीं, तब क्या किया जाए— इन्द्रियाँ आदि सब उनकी दिशा में जाएँ। अहंकार तो जाने वाला नहीं, तो उसी भाव में रहे। और फिर बेल, गूदा, छिलका, बीज सब मिलाकर जैसे बेल, वैसे ही जीव, जगत सब मिलाकर वे। ठाकुर कहते हैं मैं मछली का झोल, झाल, अम्बल— सब बनाकर खाता हूँ। ईश्वर का नाना भाव से सम्भोग करते हैं। कभी द्वैत,विशिष्टाद्वैत, कभी एकदम अद्वैत। उच्च अधिकारी होने से सब भावों में

* श्री म दर्शन, प्रथम भाग 'मिहिजाम खण्ड'।

सम्भोग करते हैं, नचेत् एक को ही लेकर रहे। उससे ही काज हो जाता है, किन्तु 'एकघेये' (एक सुरा)। ठाकुर के अनन्त भाव।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— धाई छूने पर खेल होता नहीं। इसीलिए 'मैं' रख देते हैं। वे खेल चाहते हैं कि ना! धाई खेलना (छुअन-छुआई) चलाते हैं। यह हुई अन्तिम अवस्था। (क्षणकाल मौन रहकर) आप सोचकर देखिए तो उनकी कैसी अवस्था! जापान में— महाश्मशान हो गया है, लाख-लाख लोगों का प्राण गया।

मोहन— कल के भूमिकम्प से लोगों को चैतन्य होगा।

श्री म— कितने दिन रहता है चैतन्य— यतीमखाने की बात भूल गए हैं। जापान की बात भूल जाएँगे। फिर वह भूमिकम्प क्या करेगा? सास ने कहा था, ''नाचो कूदो बहुरानी, मुझे हाथ की अटकल है।''* सब श्मशान-वैराग्य— कुछ दिन पश्चात् फिर जो है, वही हो जाता है। काही से जल ढक जाता है। ऐसा महामाया का खेल। 'चण्डी' पढ़ रहा था आज। माँ कहती हैं, मुझको पुकारो, तभी चैतन्य रहेगा। अवतार— ठाकुर आकर भी वही बोले— मेरा चिन्तन करने से ही होगा। सुने कौन! अवतार कैसा— जैसे रेल का गार्ड, मुक्त पुरुष। अन्य गाड़ी में ताला बन्द, किन्तु गार्ड की गाड़ी खुली हुई— इच्छानुसार बाहर होता है और फिर भीतर जाता है और फिर चलन्त गाड़ी पर से भी उतर पड़ता है। ठाकुर को पकड़ लो, और भय नहीं। प्रतिज्ञा करके बोले, ''जो मेरा चिन्तन करेगा वह मेरा ऐश्वर्य-लाभ करेगा— जैसे पिता का ऐश्वर्य पुत्र लाभ करता है।''

अब अमरनाथ का विवरण-पाठ और प्रसाद-वितरण हुआ। श्री म बोले, ''यही देखिए टाटका (ताजा) प्रसाद, दर्शन कीजिए, आस्वादन कीजिए।''

अमरनाथ का विल्वपत्र और क्षीरभवानी का सिन्दूर भक्तगण ग्रहण करते हैं। ठनठने की माँ काली का प्रसाद भी मनोरञ्जन सबको देते हैं। प्रसाद

---

* सास अपनी बहू को एक छोटे बर्तन से नाप कर चावल आदि दिया करती थी जो थोड़ा पड़ता था। एक दिन वह बर्तन टूट गया। बहू नाचने-कूदने लगी। तब सास ने कहा था, ''मेरे हाथ में अटकल है।''

की एक कणिका लिफाफे के ऊपर गिर गई थी, श्री म ने जूता छोड़, खड़े होकर हाथ में लेकर उसे मुख में दिया और बोलने लगे, ''माँ, विपद्नाशिनी गो विपद्नाशिनी''।

●●

श्री म मध्याह्न भोजन करने बैठे हैं। सेवक तेज ठाकुरबाड़ी से आहार लेकर आया है। एक-एक भोज्य-द्रव्य श्री म देखते हैं। भात और कई तरकारियाँ और दूध। संग में 'चिंगड़ि माछ भाजा' भी लाया है। श्री म ने प्रथम ही सब निवेदन कर दिया, तत्पश्चात् 'माछ भाजा' हाथ में लेकर एक बिड़ाल-शिशु को खिलाते हैं। श्री म के निर्देशवत् भृत्य ने यह मछली बाजार से खरीद कर लाकर तली है— इसी 'अतिथि' के लिए। देखने से लगता है जैसे अपने इष्टदेव को सप्रेम और सश्रद्ध वे भोजन कराते हैं। भगवान इसी बिड़ाल-शिशु रूप में कई दिन से श्री म के 'अतिथि' हैं, क्या तभी यह सेवा?

अब सन्ध्या साढ़े सात। द्वितल के गृह में छोटे जितेन और जोगेन्द्र बैठे हैं। अन्तेवासी के प्रवेश करने पर जितेन कहने लगे, ''वे (श्री म) ठाकुरबाड़ी में आरती करने गए हैं। तुम्हारे लिए बोल गए हैं, पार्वतीबाबू के घर जाने को। तुम उनसे कहोगे, वे आ नहीं सके, कमर में दर्द है। तुम्हें प्रसाद पाने को कहने पर बैठकर प्रसाद पाने के लिए कह गए हैं।'' आज पार्वती मित्र की बाड़ी में श्री श्री नागमहाशय का जन्मतिथि-उत्सव है। स्वामी सारदानन्दजी भी साधुभक्तों के संग आए थे। गत कल मध्याह्न में श्री म टहलते-टहलते मित्र-भवन में गए थे। आज सारा दिन उत्सव रहा। पूजा, कीर्तन, भोग, आरती और प्रसाद-वितरण चला। घर के लोग सब उपवासी हैं किन्तु साधु और भक्तगणों को निज हाथ से परितोषपूर्वक भोजन करवाया। श्री म की धर्मपत्नी 'गिन्नी माँ' ने भी उत्सव में योगदान किया है। श्री श्री माँ की अन्यतमा सेविका और परमहंसदेव की कृपा प्राप्ता। श्री म के दौहित्र रमेश अपनी माँ और दीदी-माँ (नानी) को लेकर आए

हैं। अब उन्होंने प्रत्यागमन किया। श्री म ने इन लोगों को पूर्वाह्न में भेज दिया था।

एक भक्त के साथ पार्वतीबाबू की बातें होती हैं। पार्वतीबाबू कहते हैं, ''मेरे भगवान ये (नाग महाशय) हैं। इनकी कृपा से ही सब है। मैं निर्बुद्धि, किन्तु उन्होंने कृपा करके सद्बुद्धि दी है। उनका अपार स्नेह सर्वदा अनुभव करता हूँ। उनकी पूजा और चिन्तन लेकर रहता हूँ। अन्य कहीं पर भी बहुत अधिक जाता नहीं। उनकी सेवा की बात क्या बताऊँगा?— रास्ते पर जन जाते हैं। उन्हें बुलाकर हुक्का सजाकर पिलाते हैं। इस ओर तो दीनता और सेवा की मूर्ति। किन्तु अन्याय के समय सिंहतुल्य। नारायणगंज के अंग्रेज़ साहेब ग्राम में पक्षी–शिकार करने आए। निरपराध जीवों को मारते सुनकर नाग महाशय गए, हाथ जोड़कर उस कार्य से निवृत्त होने का अनुरोध किया। साहेब को ग्राह्य नहीं होता देखकर सिंह विक्रम से उसके हाथ से बन्दूक छीन ली। यही क्षीण देह, किन्तु आज कैसे महाशक्ति का आविर्भाव!''

द्वितल पर श्री श्री ठाकुर और नाग महाशय की प्रतिमूर्ति विविध गन्ध पुष्पों से अति मनोरम भाव में सज्जित हैं। खिचड़ी, विविध भाजा, आलु का दम, दही, सन्देश, रसगुल्ले, फल, आदि विविध द्रव्य निवेदित हुए हैं। मित्रगृहिणी अपने हाथ से अन्तेवासी को भोजन कराती हैं। मित्र महाशय भी सम्मुख बैठे हैं। भोजनान्ते श्री म के लिए किञ्चित् प्रसाद लेकर अन्तेवासी ने विदा ली।

श्री म ने मॉर्टन स्कूल के द्वितल गृह में बैठकर सब संवाद सुन लिया। अब सीढ़ी के सम्मुख खड़े हैं। एक भक्त के साथ गृहस्थ जीवन की बातें होती हैं।

श्री म— लोग क्या लिए हैं? पेट और पेट, सन्तान उत्पादन और सन्तान–पालन, यही काज। किन्तु जो ईश्वरभक्त हैं, उनका चिन्तन इससे भी ऊपर है कि किसी प्रकार उनका दर्शन होना चाहिए। वे खूब स्वाधीन, कहीं भी कुछ नहीं पर जैसे ही विवाह कर लिया, बाल–बच्चे हो गए त्योंहि saddled (गद्दीवान) हो गए— हिलना ही नहीं। किन्तु अवतार की बात सुनने से

गोरखधन्धे के बाहर निकल सकता है। घर को ही यदि आश्रम बना ले सके तो फिर यहाँ पर रहते हुए ही हो सकता है। ये लोग अच्छा करते हैं— मित्र महाशय। सर्वदा पूजा-अर्चना लेकर रहते हैं। लड़कों तक ने वही रंग पकड़ा है। किन्तु साधुसंग चाहिए संग-संग, नहीं तो उद्देश्य अन्त तक ठीक नहीं रहता।

अगले दिन सन्ध्या को विद्यापीठ के अध्यक्ष स्वामी सद्भावानन्द जी आए। विद्यापीठ का दानपात्र एकजन एटोर्नि को दिखाना है। श्री म नीचे चौंतरे पर बैठे हुए बोले,

''वीरेन बाबू के पास जाकर कहें हमने तुम्हें इस विषय में आलाप करने के लिए भेजा है। ये खूब sympathetic (सहानुभूतिसम्पन्न) हैं। इन्होंने दक्षिणेश्वर के विषय को बहुत अग्रसर कर दिया है।''

एकजन भक्त की बातें होती हैं। साधु बोले, वे जो पकड़ते हैं शेष किए बिना छोड़ते नहीं। श्री म सुनकर बोले, हाँ, अनेक बड़े-बड़े काम किए हैं। इसके बिना कैसे हो, किन्तु संग-संग वाक्यबाण भी चलते हैं। *(सबका हास्य)*।

जे०एन० गुप्त की बातें होने लगीं। ये कमिश्नर हैं। श्री म बोले,

''उन्होंने ठाकुर को देखा था। ढाका में रहते समय एकजन के संग बातें हुई थीं। बोले, तीन दिन दर्शन हुए थे। त्रिगुणातीत मेरा सहपाठी है। आज कहाँ ये सब स्वामी विवेकान्द आदि और कहाँ मैं।'' गुजिया— किसी के भीतर उड़द का पूर है, किसी में नारियल का, किसी में दूध का पूर। किन्तु बाहर से देखने में सब एक हैं।

अब ऊपर द्वितल पर आए। भक्तगण से गृह परिपूर्ण। सब प्रतीक्षा में हैं। गृह प्रवेश करके ही जिज्ञासा की, ''क्या-क्या पाठ हुआ इतनी देर?'' मणि बोले, उद्धव-संवाद— उनका वृन्दावन आगमन।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— आहा, best portion (श्रेष्ठ अंश) पढ़ा गया। गोस्वामियों के आने पर ठाकुर 'उद्धव-संवाद-पाठ' करने के लिए कहा करते थे।

''पागल हुई लड़की का गाना आज सुना सिटी कॉलिज के निकट।

खूब भक्तिमती, वैसी सब बातें कहने लगी— गम्भीर ज्ञानपूर्ण। वामाक्षेपा सर्वदा माँ-माँ करते। लोग कहते क्षेपा (पागल)। लड़की बोली, ''मन्त्र लेते ही हुआ?'' हाथ नचाकर अल्प सब करके खाने बैठ जाता हूँ : इससे नहीं होगा। भक्तिवारि सिंचन करके अंकुरित करना होगा उसी ब्रह्मबीज को। ''कैसी सुन्दर कथा! भक्ति कब होगी? जब काम-क्रोधादि रिपु दमन होंगे।'' यह बात भी बोली। ''त्रैलंग स्वामी बैठे हैं। एकजन ने पाँच सेर रबड़ी दी। उन्होंने खा डाली। और फिर एकजन ने दो सेर मिर्चें दीं, वे भी खा लीं। निरुद्वेग रहे।''— यह बात कहते ही लड़की बोली, ''आहा, साधु को क्या मिर्च दी जाती है भाई?'' साधु के प्रति यथेष्ट भक्ति है। एकजन से पूछती है, ''बाबा, आप ब्राह्मण हैं?'' हाँ, कहते ही झट प्रणाम किया। एक स्त्री से रिपोर्ट मिली, मार्ग में से प्रसादी फूलों की माला जमा करके लड़की सिर पर धारण करती है। वे कहते हैं, कैसा जन है— शुचि-अशुचि नहीं? मैं सुनकर बोला, ''वे क्या कहते हैं— वे शुचि-अशुचि के पार हैं।'' शुचि-अशुचि रे लये दिव्य घरे कबे शुबि—

यही कहकर रामप्रसाद का सम्पूर्ण गाना ही गाया :

गान : आय मन बेड़ाते जाबि।
काली कल्पतरु मूले रे मन चारि फल कुड़ाये पाबि॥
प्रवृत्ति निवृत्ति जाया निवृत्तिरे संगे लबि।
विवेक नामे तार बेटा रे तत्त्व कथा ताय शुधाबि॥
शुचि अशुचि रे लये दिव्य घरे कबे शुबि।
जखन दुई सतीने पीरित होबे तखन श्यामा माके पाबि॥
इत्यादि।

[अर्थ— आ मन, घूमने चलें। काली रूपी कल्पतरु के नीचे तुझे चारों फल एक साथ मिलेंगे। प्रवृत्ति, निवृत्ति दो पत्नियाँ हैं, तुम निवृत्ति को ही साथ लेना। 'विवेक' नाम का उसका बेटा है, तत्त्व कथा उसे समझाना। शुचि-अशुचि को साथ लेकर दिव्य घर में कब सोओगे? जब दोनों 'जाया' परस्पर प्रेम करेंगी, तब श्यामा माँ को पाओगे।]

गान　　: श्यामा मा कि कल करेछे, काली माँ कि कल करेछे।
चौदह पाया कलेर भितरि कत रंग देखातेछे॥ इत्यादि।

[अर्थ— श्यामा माँ ने क्या 'कल' बनाई है! काली माँ ने क्या 'कल' बनाई है! अढ़ाई हाथ की इस 'कल' में कितने रंग दिखाती है!!]

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— उस लड़की का फिर वही ज्ञान है। कब तक शुचि-अशुचि मानना? जब तक देह में ज्ञान है। उसके मन को उन्होंने ऊपर उठाकर रख दिया है। वे ही पकड़े हुए हैं इसको। एकजन फष्टिनष्टि (छेड़खानी) कर रहा था उस लड़की के संग। दुकानदार भक्त लोग। उसकी दुकान के सामने खड़े हुए हो रहा था। वह कान से सब सुन रहा था। झट एक टुकड़ा आग उस व्यक्ति के शरीर के ऊपर फेंक दी। झट पागल लड़की बोल उठी, ''आहा, मनुष्य के शरीर पर क्या आग दी जाती है भाई?'' जो फष्टिनष्टि कर रहा था, उसको दौड़कर पकड़ने गए सब। वह लड़की क्या फष्टिनष्टि को समझती है? एक बार बोलती है मन-मन में, ''बेश माँ, बेश माँ (सुन्दर माँ, सुन्दर माँ)''। माँ के संग बातें करती। और फिर (अस्फुट स्वर में) एक observation (समालोचना) की— ''छि:, लाज नहीं माँ तुम्हें! कैसी स्त्री तू है! पति की छाती पर तेरा पाँव!'' कहते ही खिल-खिल करके हँसने लगी। घर के लोग यह सब क्या समझेंगे, जभी पागल कहते हैं।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— ठाकुर ने केशवसेन से कहा था, ''तुम घर में हो— उसी एक chink (दरार) द्वारा आलोक पाते हो। जो निकल गए हैं घर के बाहर, वे flood of light (आलोक की बाढ़) में खड़े हैं। बराहनगर मठ में पढ़ा जाता था योगोपनिषद्। उसमें है, 'गृही और त्यागी में अन्तर क्या है'। सरसों और सुमेरु पर्वत अथवा गोष्पद में जल और सागर में जैसे अन्तर, वैसा। *(भक्तों के प्रति)* अति सामान्य, क्या कहते हो? *(सबका हास्य)*।

''एक भक्त दक्षिणेश्वर में एक मास रहे ठाकुर के पास। उसे ठाकुर ने कहा एक दिन, ''देखो, जब भीतर त्याग हो जाता है तब बाहर से अपने आप छूट जाता है।'' एक मास रहने के पश्चात् बोले थे। प्रथम बोले नहीं— भय पाएगा, हो सकता है, बन्द हो जाएगा। किन्तु यह क्या फिर सब से कहने

वाला है? सुनेगा क्यों? शायद क्षिप्त हो जाए। कहेगा, मैं खूब भला हूँ। कहने पर भी सुनता है कौन? विकार के रोगी जो सब हैं। मन में समझते हैं हम खूब सयाने हैं। काक भी सोचता है, खूब चतुर किन्तु दूसरे का गू खाकर मरता है। 'गू' माने हीन वस्तु— विषय भोग। ईश्वर का आनन्द, ब्रह्मानन्द देने से फेंक देगा— अच्छा लगेगा नहीं। मछली की छबड़ी सिरहाने रखकर सोएगा, गुलाबों की गन्ध सहन नहीं होती। ऐसा काण्ड उनका!''

श्री म क्षणकाल मौन हुए रहे— क्या सोच रहे हैं?

श्री म *(सब के प्रति)*— जगन्नाथ पुकारते हैं इस बार। सखीचरण ने चिट्ठी दी है। जगन्नाथ के सेवक वे— मैनेजर। इन्होंने लिखा है माने ठाकुर बुलाते हैं। रथ के एक मास पूर्व बुलाया था। अब भी लिखते हैं, ''पूजा सामने है, आइए।'' आहा, पुरी कैसा सुन्दर स्थान है! मिहिजाम से दोगुना रास्ता है— नरेन्द्र सरोवर, मार्कण्डेय, इन्द्रद्युम्न, सागर : ऐसे सब तीर्थ हैं। और फिर नवीन तीर्थ— चैतन्यदेव बीस बरस थे। चार बरस भ्रमण में गए थे संन्यास के पश्चात्। उनके स्थान राधाकान्त मठ, गम्भीरा, टोटा गोपीनाथ, जगन्नाथ नित्य दर्शन करते। *(सहास्य)* अच्छा वे पुकारते हैं तो वे ले लेते नहीं क्यों? ले लेने से ही तो होता है।

श्री म *(सहास्य, डॉक्टर के प्रति)*— पुरी में एक भक्त को dysentery (पेचिश) हुआ है। बार-बार पाखाना जाते। वृद्ध शरीर, अकेले कुटीर में रहते हैं। 'कष्ट हो रहा है' देखकर एक लड़का आकर सेवा करता है, जल उठा देता है, मैला साफ करता है। सन्देह होने से जिज्ञासा की, ''तुम कौन?'' लड़के ने कहा, तुम जिसको पुकारते हो, वही नारायण। तब बोले, ''तब तो रोग को ही ले जाते नहीं क्यों? कष्ट करके क्यों फिर सेवा करने आते हो?'' *(सकल का हास्य)*। तब भगवान बोले, ''नहीं भाई, तुम्हारा भोग है अल्पमात्र। वह हो रहा है ना।'' *(सहास्य)* हम भी कहते हैं— ले जाते नहीं क्यों? पुकारना आदि क्यों? वे तो सब ही कर सकते हैं— इच्छामय हैं।

हँसी बन्द करके श्री म ने गम्भीर भाव धारण कर लिया। अभी-अभी पागल स्त्री की प्रशंसा की है, उससे भक्त लोग उस ओर झुक न जाएँ तभी

सावधान करने लगे।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ठाकुर कहते, स्त्री हजार भक्तिमती होने पर भी उसके पास जाते नहीं। दूर से प्रणाम करना चाहिए। स्त्रियों को माँ जानकर पूजा करनी चाहिए। यह भाव ही तो आता नहीं। इसी कारण ही दूर से प्रणाम करना। एकजन ग्रेजुएट थे। पतिताओं को देखकर बड़ा कष्ट हुआ था उसके मन में। उनको हरिनाम सुनाने लगा। किन्तु वैसा करने जाकर गिर गया। ऐसा काण्ड! और एक भक्त, उसकी परमहंस अवस्था। एक स्त्री के पास जाता था। ठाकुर ने सुनकर मना किया था जाने को। पीछे सुना गया, गिर गया वह। तब ठाकुर की देह चली गई थी। और एक भक्त गृह में रहते, घर में युवती स्त्री। जवान भक्त लड़कों को ले जाकर भीतर बैठते। ठाकुर के कान में वह संवाद पहुँचा। झट तिरस्कार करने लगे। बोले, ''क्यों जी, क्या सुनता हूँ! घर में बहू रहती है युवती, तुम ऐसा करते हो बन्धुओं को लेकर! कहो फिर ऐसा नहीं करोगे।'' प्रतिज्ञा करवा ली। ऐसा व्यापार!

''एक बार एक भक्त स्त्री को ठाकुर ने recommend (सुख्यात) किया था। दल के दल लोग उसके पास जाने लगे। इनमें से एकजन आकर मुझ से कहने लगा, ''यह स्त्री तो ऐसी सब बातें करती है कि परमहंसदेव की अपेक्षा भी बड़ी है।'' *(सकल का हास्य)*। बाबा, कैसी मोहिनी माया। स्वभावत: ही पुरुष को आकर्षित करती है स्त्री जाति। उसके ऊपर फिर ठाकुर की सुख्याति, रक्षा कहाँ? कहते हैं कि ना, परमहंसदेव की अपेक्षा भी बड़ी है— ओ:, ओ:, कैसी मोहिनी शक्ति! जभी ठाकुर ने भक्तों को आत्मरक्षा करना सिखाया था। कहा था, ओ रे, दूर रहकर प्रणाम करेगा जगदम्बा का रूप समझकर। निकट जाते नहीं। साधक की अवस्था में दावानल— सिद्धावस्था में वे ही जगन्माता। खूब सावधान। मार्ग में कैसे चलना चाहिए यह भी ठाकुर ने कह दिया। कहा था, बौद्ध संन्यासीगण दायें-बायें बिना देखे सीधे चले जाते हैं। अचलानन्द ने कहा था, तुम शिव की कलम नहीं मानते? ठाकुर की अपेक्षा वयस में बड़ा था। ठाकुर ने उत्तर दिया, ''क्या जानूँ बाबा, मुझे वह सब (वीरभाव) अच्छा नहीं लगता, मेरा मातृभाव। वीरभाव, स्त्री को लेकर अच्छा नहीं।'' पीछे भक्तों से कहा था,

''कौन जाए उनके संग तर्क करने ? करने पर भी समझेगा नहीं। उसके भीतर वही भाव है— स्त्री लेकर साधन''। मातृभाव शुद्धभाव, किन्तु साधक की अवस्था में दूर से प्रणाम।''

●●●

कलकत्ता, 12 सितम्बर, 1923 ईसवी;
25वाँ भाद्र, 1330 (बंगला) साल, बुधवार।

तृतीय अध्याय

कालीघाट पर गदाधर आश्रम में श्री म
ज्ञानी का दिन व अज्ञानी की रात
मन्मथ-उद्धार

(1)

श्री म भवानीपुर गदाधर आश्रम में अवस्थान करते हैं। एक भक्त रात्रि में दस बजे के समय कलकत्ता से उनके दर्शन करने आए। रात्रिवास यहाँ पर ही होगा। शीतकाल, खूब ठण्ड पड़ रही है। शहर का कोलाहल प्राय: शान्त। आश्रम में दो-एकजन साधु ब्रह्मचारी हैं। ठाकुर का शयन हो गया। भक्त ने बरामदे में से ठाकुर-प्रणाम करके श्री म के गृह (कमरे) में प्रवेश किया। द्वितल के कक्ष में फर्श पर कार्पेट बिछा है। भक्तगण फर्श पर बैठते हैं। इस घर (कमरे) में आश्रम के महन्त स्वामी कमलेश्वरानन्द रहते हैं। गृह में अलमारी है, वह धर्मग्रन्थों से परिपूर्ण है। श्री म के लिए यह घर छोड़कर महन्त ने त्रितल के टीन के घर में आश्रय लिया है। महन्त ने उसी कक्ष के सम्मुख तन्त्र मत से देवीपीठ-रचना की है। कुछ दिनों से सारी रात्रि जाग्रत रहकर देवी की अर्चना करते हैं।

श्री म फर्श पर कम्बल-आसन पर बैठे पूर्वास्य होकर एक ग्रन्थ-पाठ करते हैं। गृह में बिजली का आलोक हो रहा है। भक्त के गृह में प्रवेश करते ही पुस्तक बन्द करके पश्चिमास्य होकर श्री म ने सस्नेह आह्वान करके उसको निकट बिठा लिया। इस शीत में रात्रि में कलकत्ता से कष्ट करके आए हैं। इसी कारण श्री म उसके साथ अत्यन्त आनन्द में कथावार्ता करते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— यही देखिए, गीता में भगवान कहते हैं, जो संसारी अर्थात् अज्ञानी के लिए रात्रि है वही ज्ञानियों के लिए दिन है। जो अज्ञानियों

का दिन, ज्ञानियों के लिए वह रात्रि। बात तो है ईश्वर। ज्ञानियों के पास वे प्रकाशित हैं, वे देख पाते हैं, अन्य लोग वह नहीं देख पाते। 'दिवा' माने प्रकाशित है, 'रात्रि' माने ढका हुआ। उनको देखना ही है जीवन का उद्देश्य। इसीलिए कोई-कोई उठ-पड़ लगता है। रात को दिन करता है। आलस्य नहीं, अतन्द्रित हुआ करता है। शरीर रहेगा नहीं कि ना— कब जाए निश्चय नहीं, जभी शीघ्र-शीघ्र कर लेना चाहता है। जो संसार में हैं, वे ठीक उल्टे पथ पर चलते हैं। धन-लाभ के लिए, पुत्र कन्या के लिए रात को दिन करते हैं— ठीक विपरीत पथ। ईश्वर ऊपर है, और मृत्यु संग में है— यह बोध नहीं। जभी जब सत्संग में मन जाए, उठ-पड़ लगना चाहिए। अन्य काज पीछे होगा। अन्य काज बन्द रखा जाता है। ईश्वर-भजन बन्द रखा नहीं जाता। लोग हिसाब करके कार्य करते हैं। जिसमें अधिक लाभ होता है वही करते हैं। अवतार कहते हैं, ठाकुर कहते हैं, ईश्वर-लाभ करना सबकी अपेक्षा बड़ा लाभ। ठाकुर गाया करते— ''कतो मणि पड़े आछे चिन्तामणिर नाच दुयारे'' (चिन्तामणि के नाचद्वार पर कितने ही मणि पड़े हैं)। एक क्लास के लोग इन्हीं सब मणियों का व्यापार करते हैं। उनकी संख्या है कम। अन्य जन कहते हैं, ये मूर्ख हैं। सामने की मणि अर्थात् कामिनी-काञ्चन-भोग फेंक कर, कहाँ है जिसे देखा नहीं, ऐसे मणि के सन्धान में फिरता है। वे कहते हैं हाथ के निकट जो मिलता है, उसका भोग कर लो। किन्तु इसमें मन रहने से वह धन-लाभ नहीं होता। एक छोड़ने से दूसरा लाभ होगा। एक संग दोनों नहीं होते। ठाकुर अन्तरंग भक्तों से कहते, तुम लोग 'चिन्तामणि' के खरीदार हो। देखते कि ना सब भक्त भागे-भागे जाते। कितना कष्ट करके जाते। चाहे पैदल ही चलकर मध्य रात्रि में जा हाजिर। पैसा नहीं, क्या करे? जभी पैदल। यह देखकर ही बोलते वही बात, ''तोमरा चिन्तामणिर खद्देर।'' यही गान ही गाकर सुनाते अन्तरंगों को।

श्री म गाने लगे—

गान : आपनाते आपनि थाको मन जेयो नाको कारो घरे,
जा चाइबे ता पाबे, खोंज निज अन्त:पुरे।

परम धन ओई परश मणि जा चाइबे ता दिते पारे,
कतो मणि पड़े आछे चिन्तामणिर नाच दुयारे॥

[अर्थ— हे मन, अपने में आप ही रहो। मत जाओ किसी के घर में! जो चाहोगे, बैठे-बैठे पाओगे। खोजो अपने अन्त:पुर में। परमधन तो वही पारसमणि है, जो चाहोगे वही वह दे सकती है। कितनी मणियाँ पड़ी हैं उस चिन्तामणि के नाचद्वार में!]

•

जनैक ब्रह्मचारी ने प्रवेश किया। उन्हें दिखाकर श्री म भक्तों से कहने लगे—

श्री म— ये भोर चार से आरम्भ करके सारा दिन और रात्रि अब पर्यन्त काज करते हैं। कितने घण्टे हुए? *(गणना करके)* अट्ठारह घण्टे।

ब्रह्मचारी— ठाकुर तो काज करने की बातें नहीं बोलते थे। ध्यान-धारणा की बात करते। तो फिर मठ में यह सब काज क्यों होता है— इतना काज!

श्री म— यह भी उनकी ही इच्छा और सब ही उनका काज। 'सर्वभूतों में वे हैं' यह सोचकर कार्य होता है— रिलीफ, स्कूल, अस्पताल, ये सब। यह भावना संग रहने से ये काज ही साधन होते जाते हैं। उससे चित्त शुद्ध होता है। शुद्ध चित्त में उनका ध्यान-जप होता है। उनके संग होने से जो कार्य किया जाए, वह ध्यान-जपवत् ही होता है। इस प्रकार काज बिना किए ध्यान नहीं होता। सामने जो पड़ेगा, उसे करना ही होगा। फिर भी कार्य-कार्य करके मोहल्ले भर घूमना ना पड़े।

ब्रह्मचारी— हमारा तो बहुत कुछ ऐसा ही हो गया है।

श्री म— 'इसमें उनकी ही इच्छा है' कहना होगा। वे जब किसी के द्वारा protest (आपत्ति) नहीं करवाते, तब समझना होगा उनका मत है। अमत होने से किसी strong man (बड़े लोग) को खड़ा करके protest (आपत्ति) करवाते।

ब्रह्मचारी— पहले साधन-भजन बिना किए कैसे समझा जाएगा कि वे सर्वभूतों में हैं।

श्री म— हाँ, पहले साधन-भजन करना खूब दरकार। उसके बिना कैसे समझा जाएगा? उनके बिना समझाए समझ में आने वाला नहीं। कार्य और भजन एक संग में चलेगा। बीच-बीच में कार्य छोड़कर, केवल भजन। इस प्रकार भीतर एक भाव स्थायी होने से तब कार्य ही भजन हो जाता है। प्रथम work and worship (कर्म और उपासना) चाहिए। पीछे work is worship (कर्म ही उपासना) हो जाता है। प्रथम गुरुवाक्यों को सुनकर कार्य में लगना, कार्य करना। संग में भजन रहने से गुरुवाक्य में दृढ़ विश्वास होता है। क्रमशः तब कर्म उपासना हो जाता है— ध्यान का कार्य करता है।

●●

(2)

अगला दिन, प्रातः वेला साढ़े आठ। श्री म विनय और जगबन्धु को संग लेकर गदाधर आश्रम से बाहर हुए। इधर-उधर टहलते हुए कहते हैं, ''आज दक्षिणेश्वर जाने से हो।'' तत्पश्चात् ही तीनों जन आकर ट्राम में चढ़ गए। विनय को संग लेकर दक्षिणेश्वर गए। जगबन्धु को किसी कार्य से कलकत्ता भेज दिया।

अब रात्रि साढ़े आठ। श्री म ने दक्षिणेश्वर से प्रत्यागमन किया है। मॉर्टन स्कूल में अवस्थान करते हैं। चारतल के कक्ष में चेयर पर बैठे हैं। पश्चिमास्य— भक्तगण पूर्वमुखी। सारे दिन के परिश्रम से क्लान्त हैं। बड़े जितेन और छोटे जितेन आए हैं। कुछ पीछे एटोर्नी वीरेन आए। आज खूब शीत पड़ा है। कथा-प्रसंग में निष्काम कर्म की कथा उठी।

श्री म *(वीरेन के प्रति)*— ''कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।'' (कर्म में तुम्हारा अधिकार है— फल में नहीं) इसका दृष्टान्त भरत है। राज्य-शासन करते हैं। किन्तु निज कुछ भी भोग लेते नहीं और फिर राजधानी में रहे नहीं। पीछे भोग विलास में मन चला ना जाए। इसीलिए नन्दीग्राम में कुटीर में रहे। फल-आहार करके चौदह बरस काट दिए। सारा दिन धरती पर बैठे

'राम-राम' करते हैं। एक-आध बार राज्य की बात होती है— वशिष्ठ, सुमन्त्र इनके आने पर। यही हुआ गृह में रहकर निष्काम कर्म का आदर्श।

वीरेन— वैसा क्या हम कर सकते हैं?

बड़े जितेन— हमें देह के लिए भावना करनी पड़ती है। फिर जो कर्मफल से संग हैं, उनकी चिन्ता। हमारा क्या निष्काम होना सहज है?

श्री म— जभी ठाकुर ने विवेकानन्द से कहा था। ये बोलते थे ऐसी बातें— रुपया, पैसा, माँ-भाई-बहन, पितृ-वियोग के पश्चात्। वे सुनकर बोले, देखा— लोग दो प्रकार से शोक करते हैं आत्मीय स्वजन के मरने पर। एक प्रकार है शरीर के सब अलंकार खोलकर बक्स में उठाकर रख दिए। कगाछा— सामान्य बुरी-सी पुरानी चूड़ी हाथ में रख ली और मैला एक कपड़ा पहन लिया। तब चीत्कार करके बोलने लगी— "ओ री, मेरा क्या होगा— सर्वनाश हो गया री।" यह हुआ सज-सजाकर शोक (self managed). और एक रकम है, आत्मीय का मृत्यु-संवाद सुनकर एकदम बेहोश, बाह्यज्ञान-शून्य। पोषाक-श्रृंगार सब समेत धरती पर गिरकर आर्तनाद करके अज्ञान। यही सच्चा शोक। *(वीरेन के प्रति)* उनके लिए व्याकुलता रहने से होता है। भरत को हुई कैसे, राजा होते हुए भी? निष्काम कर्म का उज्ज्वल उदाहरण भरत।

बड़े जितेन— महाशय, हमें आलस्य होता है।

श्री म— ठीक-ठीक निष्काम-कर्म जो करेगा उसका शत हस्ती का बल होता है, जैसे हनुमान जी। राम के निकट दीन हीन— किन्तु लंका में अकेले कैसा काण्ड किया! होगा नहीं कैसे— राम-चिन्ता जो उसको रहती है, ईश्वर के लिए जो करता है, तभी इतनी शक्ति! आलस्य तमोगुण का लक्षण है। निष्काम कर्मी की बात भगवान ने कही है गीता में—

"मुक्तसंगोऽनहंवादी धृत्युसाहसमन्वितः।
सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः कर्त्ता सात्त्विक उच्यते।" (गीता 18:26)

धृति अर्थात् patience, उत्साह enthusiasm प्रचुर रहेगा निष्काम कर्मी का। कारण, उनका आदर्श कितना बड़ा— ईश्वर!

श्री म कुछ क्षण चुप करके रहे, पुनः बातें बोलते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— अब और अच्छा नहीं लगता इन सब कर्मस्थलों में रहना। गदाधर आश्रम में अच्छा रहा जाता है। काली-क्षेत्र, गंगातीर, ठाकुर, साधुसंग— सब हैं। और फिर प्रसाद-भक्षण सर्वदा। इन सब कर्म-स्थलों में रहने जाने पर और एक प्रकार हो जाता है मन। इस वयस में फिर कार्य भला लगता है? उसकी अपेक्षा बीच-बीच में और आकर instruction (उपदेश) दे जाना— यह ठीक।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— मैं मण्डल मोटर सर्विस से गया था आलमबाजार, बागबाजार से। वहाँ से पैदल दक्षिणेश्वर गया। कैसी सुविधा हो गयी है इससे। यदि यह मोटर दक्षिणेश्वर-मन्दिर तक चली जाए तो अच्छा हो। *(जगबन्धु के प्रति)* आप लोग पचास नम्बर अमहर्स्ट स्ट्रीट से एक दरखास्त दे दीजिए बहुत सारे नाम सही करवा कर। और काशीपुर से डॉक्टरबाबू आदि एक करें। (डाक द्वारा) छोड़ दी जाएँ दोनों ही। लोगों को सुविधा होगी खूब। चेष्टा करके देखा जाए ना! आलमबाजार तो जाती है और यही अल्प जाने से ही होता है मीलेक।

जगबन्धु— 'आनन्द बाजार' और 'दैनिक वसुमती' में लिखने से हो। सत्येनबाबू हैं ठाकुर के भक्त और वसुमती के मालिक सतीशबाबू भी हैं भक्त।

श्री म— हाँ, ठीक बात। हमारा नाम करके सत्येनबाबू और उपेनबाबू के लड़के को कहें। वे भी भक्तलोग। अपना ही interest (स्वार्थ) है। एकजन को लगे रहना होता है ऐसे काम में। भाड़ा बढ़ा सकते हैं। कोई आपत्ति नहीं होगी। हम कितना कष्ट करके जाते ठाकुर के पास दक्षिणेश्वर! प्रत्यावर्तन के समय पैदल बराहनगर आते सवारी गाड़ी में शोभाबाजार। गाड़ी न मिलती तो दक्षिणेश्वर से सारा पथ पैदल कलकत्ता पहुँचता— सात आठ मील रास्ता। उस कष्ट की तुलना में अब कितना सुख— स्वर्ग सुख। जभी विचार करता हूँ week (सप्ताह) में दो बार जाने की चेष्टा करूँगा, if not thrice (तीन बार) न हो तो।

11-1-1924

••

(3)

गदाधर आश्रम। रात्रि पौने दस। श्री म फर्श पर कार्पेट पर बैठे हैं। निकट लालबिहारी बाबू बैठे। घर में वैद्युतिक आलोक जल रहा है। श्री म के सिर पर 'एश' कलर का कमफोर्टर, शरीर पर 'लाल इमली' का स्वेटर, उसके ऊपर वार फलानेल की पंजाबी। इन सबके ऊपर एक रैपर लपेटा हुआ। कलकत्ता से एक भक्त आए हैं। उनके संग आनन्द से बातें करते हैं। भक्त वेदान्त सोसायटी में गए थे। स्वामी अभेदानन्द ने कहा है— "अवतार जिसको जो इच्छा करें, वही बना सकते हैं। जब इच्छा तब ही कर सकते हैं, समय का निश्चय नहीं। मन्मथ भट्टाचार्य को ठाकुर ने इच्छा मात्र से बदल दिया और फिर गिरीश— कहाँ थे, ठाकुर की कृपा से कहाँ चढ़े! तब ठाकुर कहते, गिरीश का कैसा विश्वास, 'आँकड़े धरा जाय ना।' (पकड़ने में नहीं आता।) पाँच सिक्के पाँच आना विश्वास (सवा का सवाया विश्वास)।"

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ठीक बात। ठाकुर ने मन्मथबाबू को ऐसा कर दिया था— शेष मुहूर्त पर्यन्त मुख में खाली, 'प्रियनाथ, प्रियनाथ' सर्वदा यही मन्त्र-जप चलता है, अन्य दिक् ख्याल नहीं। प्रथम जब गए ठाकुर के पास, तब दूर से देखकर बोले थे, "वह एक भक्त आ रहा है।" यह बात सुनकर भक्तगण उस ओर टकटकी लगाकर नवागत भक्त को देखने लगे। उन्होंने देखा, नवागत एक नम्बर का बाबू। देह पर "आद्दिर फिनफिने पंजाबी", पैर में काला वार्निश्ड पम्प शू और सिर पर टेढ़ी मांग। भक्त देखकर सोचने लगे, यह व्यक्ति कैसे बड़ा भक्त हो सकता है! जैसे यार के संग लोग व्यवहार करते हैं, वैसे ही ठाकुर ने उसको हाथों से जकड़ लिया। मन्मथबाबू खूब पहलवान थे— उनकी बाहों में गोलियाँ थीं। ठाकुर के संग कालीबाड़ी के भीतर के आँगन में टहलते-टहलते उन्होंने बताया था, "एक दिन शिव-पूजा के लिए बेलपत्ते नहीं। खूब चिन्तित हुआ— किससे पूजा होगी? ऐसे समय में एक अच्छा गुच्छा बेलपत्ते— एक दम ताजे— संग में दो चार काँटे हैं, धप् करके ऊपर से गिर पड़े।" शिव-भक्त थे। ठाकुर अनेक दिन भक्तों से उसी घटना का उल्लेख करके कहते, "बताओ तो

देखूँ ऐसे हुआ क्यों?'' उसी बाबू ने कहा था, ''बेलपत्ते ऊपर से गिर पड़े।''

श्री म *(ब्रह्मचारी के प्रति)*— उसे बताते क्यों! लोगों को वैसे विश्वास होता नहीं— अलौकिक कुछ बिना देखे! जभी उस आश्चर्य की बात बताते, यदि कहीं थोड़ा भी विश्वास हो जाए। अरे, आश्चर्य तो सब ही!— चक्षु देखता है,कान सुनता है, मुख-जीभ शरीर का आहार और आस्वाद जुगाड़ करता है। फिर लिवर, स्पलीन, स्नायु-मण्डल (Nervous system) ये सब ही तो आश्चर्य। इतने-से सरसों जैसे बीज से इतना बड़ा अश्वत्थ वृक्ष! सूर्य आलोक देता है, तभी जगत बचा हुआ है। चन्द्रकिरणों से शस्य होता है। सब ही आश्चर्य! नित्य होता है— इस कारण लक्ष्य नहीं। देखो ना, हमारा जन्म! इतना अल्प-सा बीज, चक्षु से दिखाई नहीं देता इतना छोटा— माँ के पेट में प्रवेश किया, उससे ये हाड़-माँस और यह प्रकाण्ड देह हो गई और फिर इसके ही संग में मन-बुद्धि, चित्त, अहंकार। और फिर काम, क्रोधादि रिपु, जिसकी ज्वाला से जगत अस्थिर। इस ओर हमारा ख्याल नहीं। यह सब इतना आश्चर्य है तब भी और थोड़ा चमत्कार बिना देखे विश्वास होता नहीं। रोज देखता है इन आश्चर्यों को इसीलिए मन में नहीं लगते। सब आश्चर्य! हम आश्चर्य-सागर में भासमान (तैर रहे) हैं। चैतन्य जो होता नहीं ना, मनुष्य को इतना देखकर भी, तभी बतलाते वही बेलपत्तों की बात। सिख लोग तभी ईश्वर को 'वाह गुरु!' कहते हैं। अर्थात् यह जगत ही आश्चर्य, उसका कर्त्ता भी आश्चर्य— सब आश्चर्य!

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— एक दिन हम गए बागबाजार मन्मथबाबू के पास। देखते ही पहचान लिया। हम ठाकुर के पास जाते थे— देखा है, सुना भी है अन्य लोगों के पास से, तभी प्रणाम किया। केवल प्रणाम ही किया। किन्तु अन्य कोई भी बात नहीं पूछी। मुख में सर्वदा— 'प्रियनाथ, प्रियनाथ।' अन्य बातें करने का अवसर कहाँ? अन्या वाचो विमुंचथ— यही अवस्था इनकी। शिव-मन्दिर में बरामदे में बैठे सदा यही मन्त्र जप करते हैं। फर्श पर बैठे-बैठे असुख हो गया। अन्त में कॉलरा से देह-त्याग हुई। सर्वदा उसी आसन

पर हैं। स्नान और शौच के समय थोड़ा दूर हो जाते, बोध होता है। शेष मुहूर्त में भी 'प्रियनाथ' यही मन्त्र जप किया था। उनका एक बन्धु था— उनका नाम था प्रियनाथ। लोग कहते उसी बन्धु का नाम जप करते हैं। किन्तु यह बात नहीं— 'प्रियनाथ' माने Dear Lord (प्रिय ईश्वर)। ईश्वर, आत्मा सब की प्रिय। याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी को यही बात कही थी। पति-पुत्र, धन-जन सब प्रिय क्यों? प्रिय आत्मा, प्रियनाथ सकल के भीतर रहते हैं जभी। उसी प्रियनाथ को जानना। वह होने पर मनुष्य का कार्य शेष हुआ। मन्मथबाबू ने वही किया था। ठाकुर ने कहा था, जिसको जो भी नाम अच्छा लगे, वही नाम जप करेगा। मन्मथबाबू को यही अच्छा लगा, जभी सदा बोलते 'प्रियनाथ'।

श्री म कुछ काल मौन हुए रहे। क्या भाव रहे हैं? पुनः बातें करते हैं।

श्री म *(मोहन के प्रति)*— पढ़िए तो वही poem (कविता)— 'He will not come' (वह फिर वापस नहीं आएगा)। एक कुत्ता अपने मास्टर की समाधि पर बैठा रहता था सर्वदा— आहार-विहार सब त्याग करके। क्रमशः शीत आया। दुर्बल हुआ। स्कूल के छात्र ग्रीष्म में कभी-कभी खाने के लिए देते और स्नेह से बोलते— He will not come (वह फिर वापिस नहीं आएगा)। खूब शीत उस देश में, और चेष्टा नहीं आहार की। स्कूल बन्द हो गया। लड़के भी खाद्य देते नहीं। जभी खूब दुर्बल हो गया— मुमूर्षु अवस्था। समाधि के नीचे लुढ़क कर गिर पड़ा। वहाँ ही बैठा है। किन्तु ज्योंहि प्राण जाने का समय हुआ त्योंहि मुहूर्त में एक छलाँग में समाधि के ऊपर जाकर गिर पड़ा। तब ही वहाँ पर प्राण-विसर्जन हुआ। यही तो पूर्ण प्रेम का उदाहरण। देह जो इतनी प्रिय, उसके ऊपर भी लक्ष्य नहीं— जानवर होकर भी ऐसा प्रेम, प्यार!

श्री म *(सकल के प्रति)*— ललित महाराज की अब यही अवस्था— सब कहते हैं पागल। यह कहने से तो और भी पागल हो जाएँगे। फ्रेण्डस् को तो उचित 'अब जिससे भली सेवा मिले' वह देखना। अधिक ईश्वर-चिन्तन करके वैसा होता है। कैसा परिश्रम— सारी रात जागकर पूजा करता है दिनों-दिन। उस पर मठ चलाने के लिए रुपया उठाने की चेष्टा रहती है।

दो दल हैं। एक दल भाव आदि मानता नहीं, ज्ञानमार्गी। और एक दल मानता है। बाबूराम महाराज का भी बीच-बीच में इस प्रकार हुआ करता। उसी दल के लोग प्यार नहीं करते थे। तो तुम प्यार करो या न करो— ठाकुर जब इसके द्वारा ही इतना कर गए हैं, तब कैसे फिर इसे अमान्य किया जाए? ठाकुर का भाव देखकर एकजन बोले थे, ''आपकी जो अवस्था देखता हूँ, उससे मन में होता है अँगूर जैसे रूई के ऊपर रखते हैं वैसे ही आपको रखना दरकार।''

13-1-1924

●●

(4)

मॉर्टन स्कूल। पचास नम्बर अमहर्स्ट स्ट्रीट, चार तला बाड़ी। दोतल पर चढ़ने की सीढ़ियों के दाएँ दिक् के कक्ष में भक्तों के बैठने का स्थान। यहाँ पर स्कूल की एक क्लास बैठती है। कमरे में बैठने के छः लम्बे बैंच हैं वरन् उनके साथ पुस्तकादि रखने के हाई बैंच संयुक्त हैं। चार बैंचों पर उत्तरास्य होकर बैठना होता है। और दो पूर्व की दीवार से लगे हुए उत्तर-दक्षिण लम्बमान रहते हैं। इन पर जो बैठते हैं उनका मुख पश्चिमास्य होता है। शिक्षक के बैठने की चेयर है गृह के उत्तर दिक् में। ये दक्षिण की ओर मुख करके बैठते हैं। यह गृह बीस-बाईस फुट दीर्घ लम्बाई चौड़ाई में है। चार द्वार हैं— दो तो दक्षिण के बरामदे में और दो उत्तर के बरामदे में। सीढ़ी चढ़कर उत्तर के दरवाजे में प्रवेश करना होता है। कभी-कभी छुट्टी में सब बैंच बाहर निकाल कर फर्श पर मादुर (चटाई) पर बैठते हैं सब। इसी गृह के दक्षिण दिक् में नीचे है दरिद्र श्रमजीवियों की पल्ली। गृह में प्रवेश करने के उत्तरपूर्व द्वार के निकट बैंच पर श्री म बैठते हैं— सम्मुख संयुक्त हाई बैंच पर। वे पश्चिमास्य। श्री म के बायीं ओर भक्तगण उत्तरास्य होकर बैंचों पर बैठे हैं। बड़े जितेन, छोटे जितेन, बड़े अमूल्य, छोटे अमूल्य, रमणी, बन्धुसह सुखेन्दु, गदाधर, अश्विनी,

जगबन्धु प्रभृति हैं। श्री म आजकल भवानीपुर गदाधर आश्रम में रहते हैं, बीच-बीच में यहाँ पर आते हैं। भक्तगण रोज ही यहाँ पर एकत्रित होते हैं। कोई-कोई नित्य गदाधर आश्रम-गमन करते रहते हैं।

आज शुक्रवार। गत मंगलवार गदाधर आश्रम से आते समय कथामृत की manuscript (पाण्डुलिपि), अपनी डायरी का एक खाता, श्री म कालीघाट की ट्राम में ऐस्पलेनेड में भूल से छोड़ आए थे। बहु कष्ट से वह मिला है। पुस्तक खोने के पश्चात् श्री म जैसे पुत्र शोक से जर्जरित थे। प्राप्त हो जाने पर आनन्द हुआ है। आज भक्तों के संग इसी सम्बन्ध में बातें होती हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— दो दिन कैसा शोक गया है! पुत्रशोक से भी अधिक। गत मंगलवार गदाधर आश्रम से प्रत्यावर्तन करते समय ट्राम में कथामृत की डायरी छोड़ आया, भूल से। ठाकुरबाड़ी आकर स्मरण हुआ। तब वेला प्राय: ग्यारह। तब ही शीघ्र-शीघ्र ठनठने कालीबाड़ी में गया। ट्राम से उतर कर माँ का दर्शन करके आया था। सोचा कि कहीं वहाँ पर ही छूट गई है। वहाँ पर बैठकर पण्डितगण सब पाठादि करते हैं। उनसे पूछा पुस्तक देखी है कि नहीं। कोई कुछ भी सन्धान दे सका नहीं। तब ट्राम टिकट की खोज की। उसे फाड़कर फेंक दिया था। वे टुकड़े सब खोजकर रास्ते से उठाकर ले आया। पैंतालिस मिनट लगे। घर आकर उन सब को लेही से कागज पर लगाया। तब नम्बर मिल गया। तब फिर भवानीपुर आश्रम लौट गया। टिकट के नम्बर द्वारा ट्राम के कण्डक्टर का सन्धान मिल गया। गदाधर आश्रम के भक्तजन सन्ध्या समय कालीघाट डिपो में जाकर खोज करने लगे। अगले दिन बुधवार प्रात: समय संवाद आया, पुस्तक मिल गई है। कण्डक्टर ने डिपो में जमा कर दी थी। तब वह ओवरसीयर के हाथ में पड़ी। वे भक्तलोग। पुस्तक के ऊपर लिखा है 'जयरामवाटी'— यह देखकर इन्होंने खूब यत्न करके रखा।

श्री म *(अश्विनी के प्रति)*— सन्ध्या के समय ठाकुर के पास कितनी प्रार्थनाएँ कीं! 'पुस्तक मिल गई है,' सुनकर भी भय जाता नहीं। लाने के समय फिर न खो जाए। कितना भय, कितनी भावना गयी। कितनी प्रार्थना करता हूँ!

हाथ में जब वापिस आ गई तब कैसा आनन्द! किन्तु तब मन की और ही एक अवस्था हुई। तब सोचने लगा, 'वैसा फिर क्या हुआ। भूलकर छोड़ आया ट्राम में, कण्डक्टर ने उठाकर ऑफिस में जमा कर दी। यह तो most natural (खूब स्वाभाविक) ही है।' खूब प्रार्थना की थी— पुस्तक मिल जाने पर, इसका कोई अर्थ है— यह बात मन में आना ही नहीं चाहती। ऐसा मन है हम लोगों का। प्राप्ति के बाद अन्य प्रकार का मन हो जाता है। कितनी प्रकार के accident (दुर्घटनाएँ) हो सकती थीं। तब इस सामान्य वस्तु, हाथ की लिखी पुस्तक की कौन खबर करता?

बड़े जितेन— झाड़ूदारों के हाथ पड़ सकती थी।

श्री म— हाँ, वह हो सकता था, या अन्य कोई उठाकर ले जा सकता था। पड़ी है, उठाकर ले जाकर रास्ते में फेंक दी। कितना कुछ हो सकता था! पुस्तक मिल जाने पर सब बातें भूल गईं। तब मन कहता है 'फिर हुआ ही क्या है? गिरा आए तो कानूनवत् वह वस्तु ऑफिस में जमा हो गई थी। वहाँ से वापस प्राप्त कर ली है। इसमें आश्चर्य है ही क्या?' यही मन लेकर ही संसार में रहता है— धोखा देता है। जभी सर्वदा प्रार्थना, लक्ष्य भ्रष्ट न करवाएँ। आज गुरु-वाक्य में विश्वास हुआ। कल ही बोलने लगा मन, इसमें लाभ नहीं, छोड़ दो यह पथ। मन मनुष्य को नचाता है। मन जिसके हाथ में, उनकी शरण लेना। जभी लोक-शिक्षा के लिए ठाकुर कहते, "भुलियो ना माँ, भुलियो ना।"

"संसार चलता है इस प्रकार। कार्य का उद्धार हो जाने पर तब ईश्वर को भूल जाता है मनुष्य। प्रार्थना, क्रन्दन, धरणा देना कितना क्या-क्या? ज्योंहि लड़का हो गया त्योंहि कौन जाए फिर तारकनाथ! तब उनको भूल जाता है। लड़का मिलने पर उनकी भूल हो गई। वे ही करवाते हैं यह खेल— नहीं तो संसार चलता नहीं। सकल उनकी शरण ले लें— कैसे खेल होगा? जभी भुलवा देते हैं। फिर और दु:ख में गिर कर क्रन्दन करता है— फिर और दुख दूर करते हैं। इसी रूप में चलता रहता है। अन्त में जब इससे विरक्त हो जाता है, तब खाली उनको चाहता है। अन्य वस्तु में मन रहता नहीं। लगातार भाव बहता रहता है। उनके दर्शनों पर मन की अवस्था

बदलती है। मन का स्वभाव ही यही। किन्तु तब और पथभ्रष्ट कर नहीं सकता। किन्तु बदलना है मन का धर्म।''

श्री म आहार करने तीन तल पर चढ़ते हैं। भक्तों से कहते हैं— Rejoice ye all, for I have got the lost son (गया लड़का घर लौट आया है, तुम अब आनन्द करो)। आहारान्ते आ गए।

अब रात्रि साढ़े नौ। जगबन्धु दरखास्त पर सब के हस्ताक्षर लेते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— हाँ, हाँ, सही कर दीजिए। यह कार्य होने से खूब अच्छा है। उनकी इच्छा होने पर हो जाएगा शायद— इतना-सा ही तो रास्ता है— आलमबाजार से दक्षिणेश्वर तक। इतना-सा तो बस कम्पनी रूट बढ़ा दे सकती है अनायास ही। पहले ऐसी सुविधा रहती तो नित्य जाता। अब कितना बड़ा सुयोग जो है, वह खूब समझ सकता हूँ। शोभाबाजार से पाँच पैसे के भाड़े से बराहनगर, वहाँ से एक कोस पैदल दक्षिणेश्वर-मन्दिर जाता। किसी-किसी दिन भाड़े की सवारी गाड़ी नहीं मिलती। तब घर लौट आता। दक्षिणेश्वर से प्रत्यावर्तन के समय प्रात: ही सारा रास्ता पैदल कलकत्ता आता। अब जैसी सुविधा रहती तो नित्य संग रहकर उनकी सब अवस्थाएँ देखता। हम तो सब अवस्थाएँ देख सके नहीं— उनके मुख से सुना है। निज ही बताते, मेरी यह अवस्था हुई थी।

•

बड़े जितेन— वही आश्विन के तूफान के समय की सब बातें, ठाकुर के कठोर साधन की कथा।

श्री म— हाँ ठाकुर कहते थे, ''उस समय सब ने सोचा था मैं पागल हो गया हूँ।'' 1858-59 में। तत्पश्चात् विवाह हुआ— यदि ठीक हो जाए। ब्राह्मणी ने ही प्रथम कहा, ''यह पागल नहीं है— प्रेमोन्माद है। चैतन्यदेव की यह अवस्था होती थी— यह महाभाव है। ये सब शास्त्रों के संग मिलता जाता है।'' किन्तु जब तक वैष्णवचरण ने भी यही बात नहीं बोली, उस दिन तक

किसी को भी विश्वास नहीं हुआ। दो जनों की बात मिल जाने पर तब सब को विश्वास होने लगा।

•

बड़े जितेन— अन्तरंगों के जाने के पूर्व क्या कोई गया नहीं?

श्री म— शम्भुमल्लिक, केशवसेन, नारायण शास्त्री— और भी कोई-कोई जाते। अन्तरंग गण बाईस-तेईस वर्ष पश्चात् गए— सकल ही प्राय: एक संग। वे बताते थे,— कुटीर की छत से रो-रो कर कहता आरती के समय, ''तुम लोग कौन कहाँ पर हो? आओ रे। मेरा शरीर जला जाता है।'' वे लोग जब गए, कितना आनन्द! कितना प्यार! और फिर चिन्ता भी कि भाग न जाएँ। एक बार श्यामा-पूजा के दूसरे दिन प्रात: यात्रागान हो रहा था मन्दिर में। मैंने प्रणाम किया, कहा— कलकत्ता चला जाऊँगा। ठाकुर बोले, ''इतना शीघ्र जाओगे?'' मैं बोला, सिंथी में बेणीपाल के बागान में मिलने की चेष्टा करूँगा, तभी पहले जाता हूँ। ठाकुर उसी दिन सायँ को जाएँगे वहाँ पर— ब्राह्मसमाज में, उत्सव में। फिर सर्वदा भय, 'अन्तरंगजन भी भाग न जाएँ।'

•

श्री म मौन होकर क्या सोच रहे हैं, पुन: कहते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— मनुष्यों की प्रकृति दो प्रकार की है। एक प्रकृति के लोगों द्वारा संसार कराते हैं। और एक प्रकृति के लोगों को गृहस्थ अच्छा नहीं लगता। इस क्लास के लोगों का काज-कर्म कम हो गया है। 'कैसे उन्हें पाया जाए' उसके लिए वे व्याकुल हैं। ये योगी हैं। और भी एक प्रकार की प्रकृति है, 'इनका दोनों ही है— योग और भोग'। योग ही प्रधान। जभी ये भी हैं योगियों के दल में। उन्हें ही विवाह करना पड़ता है। संसार-धर्म करना पड़ता है। कार्य बिना किए संस्कार क्षय कैसे होंगे? जभी विवाह— उनको प्राप्त करने के लिए, काम सेवा के लिए नहीं। और एक रकम प्रकृति के लोग केवल भोग चाहते हैं। इसके भी दो भाग हैं। एक भाग खाली भोगी, उच्च चिन्तन नहीं— जैसे पशुओं में उच्च चिन्तन नहीं— आहार-विहार आदि में

सन्तुष्ट। और एक भाग 'ईश्वर हैं, वे सब को देते हैं माँगने पर'। जभी उनसे धन-दौलत, पुत्र, नाम-यश— यह सब माँगते हैं। ज्ञान-भक्ति नहीं माँगते। ये भी भोगी किन्तु ईश्वर को कर्ता मानते हैं, ये कुछ तो अच्छे। योगी और भोगी दो ही प्रधान भाग। योगी फिर दो भागों में— शुद्ध योगी जैसे मधुमक्खी, जैसे शुकदेव, और योगी-भोगी जैसे पाण्डवगण। भोगी भी हैं दो श्रेणी के— एक श्रेणी ईश्वर को स्वीकार करती है, अन्य श्रेणी वह नहीं करती। इनकी, इस शेष क्लास की (ईश्वर में विश्वास न करने वालों की) बात ही गीता में आसुरिक सम्पद् कही है। प्रथम दो क्लास की निष्काम भक्ति होती है। ये ही उनको माँगते हैं पहले— ये भले।' '

●●●

कलकत्ता, 18 जनवरी 1924, 4 माघ, 1330 (बंगला) साल।
शुक्रवार, शुक्लपक्ष, द्वादशी तिथि।

चतुर्थ अध्याय

पञ्चभूत के बन्धन, ब्रह्म करे क्रन्दन*

(1)

मॉर्टन स्कूल। सकाल साढ़े नौ। श्री म दोतल की सीढ़ी के सम्मुख दण्डायमान पूर्वास्य। उनके वाम हाथ पर बड़े जितेन दक्षिणास्य। उभय बातें करते हैं। एक भक्त ने सीढ़ी से चढ़ते हुए सुना।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— ठाकुर हँसते-हँसते बोलते जो जितना ही समझे, जितना ही खिलाड़ी हो, सब उनके ''ऑण्डारे'' (अधीन)। लोग कितना कष्ट करके एक सत्य समझते हैं। और वे सब सत्य समझ कर भरपूर होकर भी यही बात बोलते हैं जो जितना ही समझे, गर्व करने का, अहंकार करने का जो नहीं है। अनन्त काण्ड— और भी कितना क्या-क्या है! यह बात क्या सकल ही समझ सकते हैं? ''He that is able to receive it, let him receive it'' (जो अधिकारी, वही समझे)।

•

अब अपराह्ण पाँच। श्री म ठाकुरबाड़ी में अवस्थान करते हैं। आज सारा दिन ही कलकत्ता में। गदाधर आश्रम जाना हुआ नहीं। शनिवार के कारण भक्तगण अनेक ही आए हैं— कोई स्कूलबाड़ी में, कोई ठाकुरबाड़ी में। बड़े जितेन दो छोटी लड़कियाँ लेकर स्कूलबाड़ी में आए। विनय, छोटे अमूल्य, भाटपाड़ा के ललित, बसन्त और संगी, सिद्धेश्वर, जगबन्धु

---

* पृष्ठ 69-70 विशेष रूप से द्रष्टव्य।

प्रभृति कोई ठाकुरबाड़ी के भीतर, कोई सामने की गली में अपेक्षा करते हैं। श्री म ऊपर से विनय से बोले, ''सबको लेकर स्कूलबाड़ी में जाओ— मैं आता हूँ।'' वहाँ भी बहुलोग हैं। फरिदपुर के एकजन भक्त आए हैं, जतीन के संग में भी एकजन नूतनलोग आए हैं। सकल द्वितल की सीढ़ी के दायीं ओर के घर (कमरे) में बैठे हैं। श्री म फर्श पर उपविष्ट। बड़े ललित वाल्मीकिकृत गंगा का स्तव पाठ करके सुनाते हैं—

मात: शैलसुता— सपत्नि वसुधा-श्रृंगारहारावलि,
स्वर्गारोहणवैजयन्ति भवतीं भागीरथीं प्रार्थये॥

बड़े ललित *(पाठान्ते, श्री म के प्रति)*— आपका शरीर तो किन्तु बड़ा ही खराब देखता हूँ। बसन्तबाबू ने कहा था, बागबाजार में गंगा के तीर पर एक बाड़ी भाड़ा करके रहने से ठीक हो। आने-जाने से लगता है, कष्ट होता है। एक जगह रहने से कैसा हो?

श्री म— नहीं, इन दो-तीन दिन एक शोक हुआ था। उससे ही शरीर ऐसा दिखाई देता है। पुत्र-कन्या के प्रति जैसी लोगों को ममता होती है एक संग रहते-रहते, वैसे ही हम जिनका ध्यान करते हैं, बयालिस बरस जिनकी एक-एक बात सुनने के लिए चातकवत् एक दृष्टि से उनकी ओर देखता रहता था, वही 'कथामृत' खो गया था। भक्त भागवत भगवान एक— यह उनकी ही वाणी है। उनका कथामृत, उनका भागवत खो गया था। उनकी तो एक-एक वाणी के लिए उत्कण्ठित हुआ रहता था और इस पुस्तक में इतनी बातें हैं। इतने दिन तब उसी भागवत की चिन्ता की है। पूजा की है, संग-संग सर्वदा रखा है— इतना 'घर किया है' तो फिर उसके लिए ममता होगी नहीं? वही, भागवत के, खो जाने से शोक हुआ था और फिर उनकी इच्छा से ही मिल गया है। वे शब्द ब्रह्म रूप में भी हैं। जभी भागवत अर्थात् उनका कथामृत। जभी शरीर खराब दिखता है, खूब धक्का पड़ा है।

''जाने-आने से कष्ट नहीं होता, वरन् भला होता है। ट्राम में चलते हुए खूब भला लगता है। Weakness (दुर्बलता) क्रमश: जाती है। गढ़ के मैदान के भीतर से चलते हुए खूब अच्छा लगता है— Change of sights and scenes होता है, नूतन-नूतन स्थान और दृश्य दिखते हैं और खूब fresh

(ताजी) हवा मिलती है मैदान में। ट्राम में चलने से कोई असुविधा नहीं और वहाँ पर साधु-संग में रहा जाता है।''

•

ललित— बागबाजार रहने से भी 'उद्‌बोधन' में जाया जाता है। वह भी तो है खूब निकट!

श्री म— ना, वहाँ पर ठीक; गदाधर आश्रम में। सारा दिन ही वहाँ पर ठाकुर की सेवा-पूजा लेकर रहते हैं सब। 'उद्‌बोधन' में तब भी रुपया-पैसा, पुस्तक-बिक्री आदि है। वहाँ पर वह सब कुछ भी नहीं।

''साधुसंग का क्या माहात्म्य है, इनके संग रहने पर समझ आता है। उन्हें सारा दिन ही अवसर। सारा दिन भगवान-चिन्तन होता है। पूजा-पाठ, जप-ध्यान होता है। आश्रम के जितने काज सब उनको लेकर, जभी काज के संग में उनकी चिन्ता जड़ित रहती है। अवसर लेते हैं क्यों?— उनकी चिन्ता के लिए। जिस कार्य में उनकी चिन्ता होती है, उसे भी 'अवसर' कहने से चलता है। उस दिन हिसाब करके देखा गया— एकजन साधु सकाल चार से लेकर रात्रि दस पर्यन्त अठारह घण्टे कार्य करता है रोज़। यह कार्य भी अवसर-तुल्य क्योंकि उससे भगवान-चिन्ता होती है। उनकी मंगल-आरती, भोग, पूजा, नैवेद्य प्रस्तुत करना, फूल चुनना, ठाकुर-घर में झाड़ू देना— ये सब काज के मध्य नहीं, सहाय— तभी अवसर।

''और हम सब क्या लेकर रहते हैं? नौकरी-चाकरी, काज-कर्म बाल-बच्चे; इन सबसे tired (श्रान्त) हो जाते हैं, मन दुर्बल हो जाता है। हमें अवसर कहाँ? जो भी हो रात्रि में बैठने से भी होता है छत के कोने में, किन्तु वह तो होने वाला नहीं— शरीर रहेगा नहीं। सारा दिन काम कर-करके क्लान्त और अवसन्न हो पड़ते हैं। साधुओं का वैसा नहीं है, उनका सारा दिन ही ईश्वर-चिन्तन चलता है। उनके पास रहने से पता लगता है क्या अन्तर है। मैं वहाँ पर रहकर समझ पाता हूँ, कितना अन्तर है! योग में रहा जाता है उनके वहाँ पर। निरवच्छिन्न तैलधारावत् योग में रहते हैं वे। योग अर्थात् चित्तवृत्ति

का निरोध। और किसी भी विषय में मन नहीं, केवल उनमें। मैं एक बार था कणखल में (1912 ईसवी) छः मास। तब भी देखा था क्या अन्तर! कितना अवसर उनको! इसीलिए ही साधु-संग दरकार।

''सोना गलाने बैठा है— पैर से धौंकनी चलाता है, चोंगे में फूँक देता है और फिर हवा करता है, एकजन का एक संग में ही सब होता है। उस बीच यदि डॉक्टर बुलाना पड़ा, औषध लाना पड़ा तो फिर और सोना गलाना हुआ नहीं। संसारियों का इसी प्रकार व्यर्थ कार्यों में समय चला जाता है। व्यर्थ चिन्ता में मन रहने से योग होगा कैसे? Concentration (एकाग्रता) कहाँ?

''ठाकुर कहते, दूध निर्जन में रखकर दही बनाकर उससे मक्खन निकाल डालो तो फिर भय नहीं रहता। हुररुर् हुररुर् शब्द थम जाने पर माखन निकालना नहीं होता। लड़के एम०ए०, बी०ए० पास करते हैं। एकजन घर का द्वार बन्द करके पढ़ता है, उसे कोई भी विघ्न नहीं। और एकजन घर के पाँच कार्य करता है, उसे अनेक विघ्न— डॉक्टर बुलाना पड़ता है, अतिथियों का सत्कार करना पड़ता है, अनेक कार्य उसके। इतने disturbance (विघ्न), तो फिर कैसे पास होगा? तो भी दो-एक जन हैं, इतने disturbance (विघ्न) के भीतर भी पास कर लेते हैं। किन्तु वे खूब कम हैं।''

श्री म *(बसन्त के प्रति)*— गदाधर आश्रम तो सुन्दर! उद्‌बोधन भी अच्छा! तो भी वहाँ पर रुपये-पैसे का व्यापार है। प्रथम अवस्था में वहाँ पर नहीं। जो सिद्ध हो गए हैं, उनकी रुपया-पैसा, नाम-यश के भीतर रहने से भी कुछ हानि होती नहीं। प्रथम अवस्था में इन सब से अनेक दूर रहना चाहिए। ठाकुर कहते, वृक्ष जब छोटा रहता है, कहीं बकरी, गाय खा लें, जभी बाड़ लगानी पड़ती है चारों दिक् में। बड़ा हो जाने पर उसी पेड़ में हाथी बाँधने से कुछ नहीं होता। जभी प्रथम दूर रहना चाहिए। संसारियों का पथ बड़ा कठिन है। उन्हें अति सावधानी से चलना चाहिए।

•

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— नारियल का खोल अलग, गोला अलग। भगवान-दर्शन होने पर आत्मा अलग, देह अलग बोध होता है। स्थूल, सूक्ष्म, कारण— ये तीनों ही तो देह हैं। ये तीनों ही आत्मा से अलग हैं। देह और आत्मा तो दोनों दो वस्तुएँ हैं। एक नित्य, एक अनित्य। यह बोध केवल गुरु-कृपा से ही सम्भव है। संसारियों के पक्ष में बड़ा ही कठिन। केशवसेन जैसे लोग को ही ठाकुर ने क्या कहा था! हम तो उनकी पूजा करते— पूजनीय व्यक्ति! और वे religion (धर्म) के एकजन authority (सुयोग्य अधिकारी) थे। उनसे ही ठाकुर बोले, तुम घर की मात्र एक ही chink (फाँक) से 'आलो' (प्रकाश) देखते हो। और साधु लोग तो flood of light (आलोक की बाढ़) के मध्य हैं, एकदम उन्मुक्त मैदान में।

श्री म *(बड़े ललित के प्रति)*— प्रताप मजूमदार ने केशवसेन के शरीर-त्याग के पश्चात् वेदी लेकर झगड़ा-झाटि किया। दो दल हो गए। सुरेशबाबू के बागान में ठाकुर के संग मेल होने पर वे उनसे बोले, "लेक्चर-फेक्चर तो कितना हो चुका, अब कुछेक दिन ईश्वर को पुकारो।" यह बात सुनकर प्रतापबाबू सम्भवतः अवाक् हो गए। उन्होंने शायद मन में सोचा, "ओ माँ, ठाकुर कहते क्या हैं? तो फिर क्या मैंने ईश्वर को इतने दिन पुकारा ही नहीं?" ठाकुर देख सकते थे ना, मनुष्य की infirmities (दुर्बलताएँ)। उनके निकट चालाकी नहीं चलती। बिल्कुल हक् (ठीक) बात सुना दी। Sense world (इन्द्रियग्राह्य जगत) से perfectly detached (सम्पूर्ण निर्मुक्त) हुए बिना उनका दर्शन होता नहीं। किस प्रकार उन्होंने अन्य एक light (दृष्टि भंगी) द्वारा दिखा दिया। उनको लाभ करना हो, तो व्याकुल हो सब छोड़ क्रन्दन करो, तभी साक्षात्कार होता है।

●●

(2)

छोटे नलिनी कालीघाट का प्रसाद लेकर आए हैं। भक्तों के संग श्री म प्रसाद ग्रहण करके पुनः गृह (कमरे) में आकर बैठे हैं। फरिदपुर के एकजन भक्त बड़े रमेश का पत्र लेकर आए हैं। श्री म उनसे कहते

हैं, ''आप हमारा नाम करके लिख दें— हमारा मत है। यहाँ पर आकर चाचा जी के साथ रहकर लिख–पढ़ सकते हैं, वहाँ पर जब शरीर ठीक नहीं रहता।'' बड़े जितेन दोनों लड़कियों को घर छोड़कर आ गए। उनके गृह में प्रवेश करते ही श्री म उनके साथ बातें करते हैं।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— समझे हो, भक्त–भगवान–भागवत एक। ठाकुर और भी बोलते, भक्त का हृदय भगवान का बैठकखाना। बाबू सर्वत्र आना–जाना करते हैं, किन्तु बैठकखाने में मिलने की सम्भावना अधिक। कारण, अधिक भाग रहते हैं वहाँ पर।

बड़े जितेन— जभी क्या क्राइस्ट ने बोला था, ''He that hath seen me, hath seen the Father.'' (मुझे जब देख लिया है तब ईश्वर को देखने का उसका बाकी रह ही क्या गया?)

श्री म— ना, अन्य अर्थ में बोली यह बात। यहाँ पर अवतार की बात कहते हैं। ठाकुर ने इस अर्थ में व्यवहार नहीं की। भक्त–भगवान–भागवत एक, भक्त का हृदय भगवान का बैठकखाना। इन सब स्थानों पर भक्त general sense (साधारण भाव) में व्यवहृत हुआ है। ब्राह्मभक्तों से कहते वैसी सब बातें। वे तो अवतार मानते नहीं कि ना, जभी। सबको ही तो फिर एक बात कहने से चलता नहीं। जो जैसा, उसके संग वैसा। ऐसा न करने से उनका अपकार जो होगा। विभिन्न प्रकृति, विभिन्न नाड़ी— तभी रुचि–भेद। जिसके पेट में जैसा सहे, उसको वैसा देना होगा। किसी को ''माछेर झोल'' किसी को ''झाल'' किसी को ''अम्बल''— जिसमें जिसकी प्रवृत्ति और रुचि, उसको वही देना उचित। सकल का एक चलता नहीं।

विवेकानन्द ने विलायत से आकर मुझे बताया था, बलरामबाबू की बाड़ी की छत पर टहलते–टहलते— ठाकुर ने मुझसे कहा था, ''तेरा वेदान्त की दिक् द्वारा नहीं'', यह तो मैं अब तक भी समझ सका नहीं। अर्थात् वेदान्त का सोऽहं और अवतार–तत्त्व एक नहीं। यह पृथक् वस्तु। किन्तु बाद में जब समझे, तब देखो कैसा स्तव लिखा है! विवेकानन्द ने स्तव–स्तुति में जो कहा है, इसके ऊपर बात नहीं—

''तुम वाक्य–मन के अतीत परब्रह्म, तुम साकार, तुम निराकार, तुम ही इदानीं

रामकृष्ण-विग्रह नररूप-धारी। तुम्हारे श्रीपादपद्म-चिन्तन करने से मरणोर्मिनाश होता है।

''पद्मफूल खिलने में देरी होती है। एक बार प्रस्फुटित होने पर अनेक दिन रहता है— सौरभ-दान करता है। अन्य फूल अभी खिला, अभी शेष। अवतार को समझना किसकी साध्य! वे जिसको समझाते हैं, वही समझता है। जभी ब्राह्मभक्तों से बोलते यही बात। वे तो अवतार मानते नहीं ना। भक्त कहकर ही मानने से भी कार्य होगा— कारण, भक्त-भगवान-भागवत एक।''

श्री म *(सकल के प्रति)*— Avatar is the highest manifestation of the Absolute (अवतार परब्रह्म का सर्वश्रेष्ठ नररूप)। ईश्वर मनुष्य-रूप धर कर आते हैं, उनका ही नाम अवतार। वे मनुष्य की सब infirmities (दुर्बलताएँ) ग्रहण करते हैं। उनका दुःख-कष्ट देखकर, त्रिताप देखकर ही तो मनुष्य भरोसा पाएगा। भक्तगण देखते हैं, अवतार इतने दुःख-कष्टों के भीतर भी सर्वदा महायोग में रहते हैं। अपना स्वरूप-ज्ञान जाग्रत रखते हैं। तभी तो वे भी वैसा होने की चेष्टा करेंगे— दुःख-कष्ट के भीतर उन्हें स्मरण रखेंगे। मनुष्य साधारणतः भगवान से देह-सुख, द्रव्यादि माँगते हैं— धन-दौलत, मान, यश। ऐसे लोग दुःख-कष्ट में गिर कर बोलते हैं— ईश्वर है नहीं, होता तो इतना कहा है, सुनता नहीं? सकाम भक्त ये सब लोग। निष्काम भक्त हैं— वे दुःख-कष्ट में भी उनको ही चाहते हैं, जैसे पाण्डवगण। उनके पास 'ईश्वर आगे, परे संसार'। उनके ही भरोसे के लिए भगवान दुःख-कष्ट सब वरण करते हैं निज पर। यही देखिए ना ठाकुर— रोग लेकर आए, कैंसर। इस अवस्था में साधारण व्यक्ति समझेगा, ये एकजन ईश्वर-भक्त मात्र। सम्भवतः रोग देखकर कोई-कोई दया भी प्रकाश करेंगे। इनमें से जो भले हैं, ये मन में सोचेंगे ये हैं हमारे जैसे ही एकजन मनुष्य, तो भी भक्त-साधु इससे अधिक दाम दे नहीं सकेंगे— सौ-सौ रुपया पर्यन्त दे सकेंगे। बैंगन वाले की अपेक्षा तो भला है यह दाम। वह तो मात्र नौ सेर बैंगन दे रहा था। किन्तु जौहरी, निष्काम भक्तगण, अन्तरंगगण बोलने लगे, ये अवतार। उन्होंने पहचान लिया। एकदम एक लाख रुपया दाम दे दिया।

''केवल क्या रोग, और फिर शोक के वशीभूत भी दिखलाया। अक्षय

की मृत्यु पर शोक किया, अधरबाबू, केशवसेन— इनकी मृत्यु पर शोक देखा है। राम सीता जी के शोक में रोए। अवतार को समझना खूब कष्टकर— असम्भव। तो भी यदि वे समझा दें तभी होता है। गृह में जो रहते हैं, उनके पक्ष में समझना और भी कठिन। श्रीकृष्ण बोले थे, गृहियों में से कोई-कोई सब ओर ठीक रख सके थे— जनकादि। इस कारण सब ही नहीं कर सकते। पञ्चभूत के बन्धन ब्रह्म करे क्रन्दन। उनकी महामाया के संग में चालाकी करना चलता नहीं। हजार बाजी देखो, अर्थात् जितना बड़ा भक्त ही हो, अवतार होने पर भी उनके "ऑण्डरे" (अधीन)।"

बड़े जितेन— अच्छा यह भी तो हो सकता है— एक व्यक्ति बाहर सिगरेट फूँकता है, हाथ में छड़ी है और भीतर-भीतर सब समय उनको पुकारता है।

श्री म *(तत्क्षणात्)*— हाँ, ठाकुर कहते, उसका मात्र दो आना मद खाया हुआ है। अधिक खाने से अपने आप ही ये सब झड़ पड़ते हैं। धोती तक भी नहीं रख सकते थे ठाकुर।

●●

(3)

श्री म मौन। क्या सोच रहे हैं? एकजन अस्फुट स्वर में बोले, ॐ।

श्री म ने सम्भवतः उनको सुन लिया। क्षणिक पश्चात् बातें करने लगे।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— यही जो शब्द हम सुनते हैं, उसमें भी वे हैं। वे ही शब्द ब्रह्म। इसी कारण भागवत कुछ शब्दों की समष्टि है। वही भागवत उस दिन खो गई थी। शब्द का importance (प्राधान्य) कितना? शब्द द्वारा हमें ज्ञान होता है, अन्तःकरण reformed (परिशुद्ध) होता है। माँ आनन्द मनाती है, टेलिग्राम आ गया। 'राम मर गया', सुनकर मूर्च्छिता। पीछे पता लगा, यह उसका लड़का राम नहीं है, अन्य राम है। भूल से टेलिग्राम (तार) यहाँ पर आ गया था। बहुत कष्ट से उसे होश हुआ। तब सब ने माँ को पुत्र की चिट्ठी दिखाई। राम ने लिखा है, कल वह घर आ रहा है। शाम को माँ सिनेमा देखने गई।

''शब्द द्वारा ऐसी शक्ति। इंगित से भी कुछ हो जाता है, किन्तु शब्द द्वारा अधिक होता है। Sound (शब्द) brain (मस्तिष्क) में एक भाव ले जाता है। वहाँ पर effect (प्रतिक्रिया) करके मन में जाता है, तब ज्ञान होता है। एक जगह दो मास के एक शिशु को देखा था, मन अस्थिर, दृष्टि भी अस्थिर। ज्योंहि कोई शब्द अथवा स्पर्श होता है त्योंहि उस ओर दृष्टि। इसी प्रकार रूप, रस, गन्ध, शब्द और स्पर्श द्वारा गठित है यह हमारा देह-मन। मछली जैसे जल में बढ़ती है वैसे-वैसे ही हमारा देहमन बढ़ता है विषय में। मोड़ फिरा देने से इसी मन में ही ईश्वर-दर्शन होता है। Mind is the aggregate of external sensations (बाह्य वृत्तिसमूह की समष्टि है मन)। जभी मन पञ्चभूताश्रित। जैसे sensations (भाव) अन्तर में प्रवेश करते हैं, वैसे रंग में रंगा जाता है मन। ईश्वरीय भाव, ईश्वरीय रूपादि द्वारा मन ईश्वरमुखीन होता है। (दोनों हाथों से रील पर सूत लपेटने और खोलने का अभिनय करके) ऐसे करने से सूत लिपटता है और फिर ऐसे करने से खुलता है। लाल सूत खोलकर फेंक देने पर ही तब सफेद सूत रखा जाएगा। लाल सूत अर्थात् वैषयिक भाव, सफेद ईश्वरीय भाव। जो खाया हुआ है उसे उलटी करके निकाल दे तब शान्ति। बात तो यही है लपेटा हुआ सूत खोल फेंकना, अखाद्य उलटी कर देना, इसी का नाम है समाधि, मुक्ति। जिस 'लपेट' से बद्ध करता, उसी लपेट से मुक्त भी करता है— मात्र process (प्रक्रिया) भिन्न है। मन से बद्ध, मन से ही मुक्त।

''समाधि होने से ही केवल उनका दर्शन होता है। तब मनुष्य-जीवन की problem solved (समस्या पूर्ण) हो गई। सोना अनेक टोकरी मिट्टी के नीचे दबा हुआ है। मिट्टी हटाने पर ही तो सोना मिलेगा। जितना learn (सीखना) किया है, उतना unlearnt (उलटी) कर सकने पर ही तब उनको प्राप्त किया जाएगा। इसीलिए साधन-भजन आवश्यक। साधन करने से पूर्व-संस्कार दूर हो जाते हैं।''

श्री म *(बड़े ललित के प्रति)*— डॉक्टर लोग भी तभी कहते हैं। चेंज में जाओ। चेंज माने जलवायु, scenary (दृश्य) परिवर्तन करना। इससे खूब improve (उन्नति) करता है। जिसमें रोगी का interest (रुचि) होता है

ऐसी वस्तुएँ देखने से मन में आनन्द होता है। उससे ही शरीर चंगा हो जाता है। मन को छोड़कर केवल शरीर का यत्न करने से चंगा नहीं होगा। जिससे मन में आनन्द हो प्रथम वही करना, अन्य और पीछे करना। नूतन sights and scenes स्थान और नैसर्गिक दृश्य तथा fresh invigorating (विशुद्ध प्राणप्रद) हवा— इन दोनों के मेल से उपकार होता है। मैडिकल साइन्स का यही मत है। डॉक्टर लोग inductive way (भूमिका रूप) में यह बात कहते हैं। बहुत-से रोगियों को देखा है इसी प्रकार ठीक होते हैं, तभी वायु-परिवर्तन करने के लिए कहते हैं। किन्तु इसकी philosophy (तत्त्व) यही है कि हमारा मन वर्धित होता है रूप, रस, गन्ध, शब्द, स्पर्श द्वारा। नूतन स्थान, नूतन वायु के स्पर्श से, नूतन रूप से मन भला हो जाता है, शरीर भी संग-संग चंगा हो जाता है।

''परमहंस अवस्था!— तभी तो चार-पाँच वर्ष के शिशुओं के संग में रहना रुचिकर लगता है। उनका मन अभी तक भली प्रकार गढ़ा हुआ नहीं होता। भगवान-दर्शन होने पर परमहंस अवस्था होती है। यही शिशुवत् अवस्था। ठाकुर कहते— स्थूल, सूक्ष्म, कारण और महाकारण— ये एक मन की ही एक-एक अवस्थाएँ हैं।

''इसी मन को नाश करना हो तो साधन, तपस्या आवश्यक है। केवल आरामकुर्सी पर बैठकर क्या फिर वह होता है ? बिल्कुल कुछ भी किया नहीं और ऐसे ही मार दूँगा, यह भी क्या कभी होता है ? 'साधन करना होगा', यह उनका ही नियम है। एक-एक जन को साधन करते देखकर अन्य भी करेगा। लोक-शिक्षा के लिए ही साधन दरकार। उनकी ऐसी ही व्यवस्था है— मछली के तेल में मछली तलते हैं। एकजन को साधन करते देखकर— ship wrecked forlorn brothers (संसार-समुद्र में निमज्जित असहाय सहयात्रीगण) भी साहस पावेंगे एवं साधन करेंगे।

''वे किसी-किसी पर वैसे भी कृपा करते हैं। उसका भी कारण है। वे तो disclose (प्रकाश) करते नहीं। लोग spoiled (नष्ट) हो जाएँगे इसलिए। जो लोग इस जन्म में अहेतुक कृपा-लाभ करते हैं, उन्होंने सम्भवत: पूर्वजन्म में बहुत तपस्या की थी। किंवा वे पार्षद अथवा सांगोपाँग होंगे। इसीलिए— special

favour (विशेष करुणा) उनके ऊपर। नहीं तो साधन-भजन बिना कृपा नहीं होती। नाना विद्या, नाना शास्त्र ईश्वर-लाभ नहीं करवा सकते। केवल साधना भी नहीं करवा सकती। उनकी कृपा चाहिए। साधना करने पर, उनकी कृपा हो सकती है। होगी ही, यह बात भी कही नहीं जा सकती। वे सम्पूर्ण स्वतन्त्र हैं, उन्हें 'क्यों' नहीं कहा जा सकता। इच्छामय वे। ऋषिजन समझ न सकने पर ही बोले हैं 'सब उनकी लीला'। सहज बात कहने में यही ठहरता है— उन्हें कोई प्राप्त नहीं कर सकता यदि वे स्वयं न पकड़वा दें। तथापि साधन, भजन आवश्यक है। Special case (अहेतुक कृपा-लाभ जिन्होंने किया है उन्हें) छोड़ सबको ही कठोर साधन करना है। तभी साधन दरकार।''

श्री म *(जनैक युवक के प्रति)*— ''आराम-चेयर-मैन्टेलिटी'' (आराम की मनोवृत्ति) द्वारा नहीं होता यह काज। कोई भी काम नहीं होता है। आशुमुखर्जी जब पढ़ते तब सुना है, ऊँचे बैंच पर पुस्तक है, वे नीचे खड़े होकर पढ़ते हैं। तभी तो इतनी सारी डिग्रियाँ पाई हैं। ब्राह्मसमाज के वे लोग कहते, ''मशाय, हमारा राजा जनक का मत है।'' ठाकुर कहते, ''वह तो सुन लिया है। वैसा ही यदि है तो राजा जनक की भाँति तपस्या कर लो ना।'' जनक ने कितनी तपस्या की है— सिर नीचे करके तपस्या की थी, ठाकुर कहते। साधन नहीं, तपस्या नहीं और वैसे ही जनक हो जाएगा। ठाकुर अब की बार— all conceivable problems of human life solve (मनुष्य-जीवन-सुलभ सकल समस्याओं का समाधान) किए बैठे हुए हैं।

श्री म *(सब के प्रति)*— देह ही है जो भी विघ्न साधन-पथ का। देह धारण करते ही पञ्चभूतों के अधीन हो गया। गुरु-कृपा से देहबुद्धि लोप हो जाए तब ईश्वर-दर्शन होता है। ''अनेक जन्म संसिद्धस्ततो याति पराम् गतिम्।'' अनेक जन्मों से चेष्टा करते-करते फिर उनकी कृपा से उनकी प्राप्ति होती है। यही तो है साधारण नियम। और फिर किसी-किसी का दो एक जन्मों में भी हो जाता है। एकजन ने ठाकुर को कहा था, ''महाशय, मैं कुछ नहीं कर सकूँगा, खुशी हो तो कर दें।'' इसी बात के पश्चात् ही ठाकुर की समाधि हो गई थी। समाधि के उपरान्त माँ के संग बातें करते हैं, ''माँ, वह कुछ करेगा नहीं, मैं दूध से दही बनाकर, उससे मक्खन निकाल कर उसके मुख में

दूँगा!'' ऐसे ही चलता है। किसी-किसी को शीघ्र हो जाता है, किसी को अनेक बार आना पड़ता है।

''पञ्चभूत क्या कम! देखिए, राम सीता के शोक में रोते हैं। श्रीमन्त देवी का वर-पुत्र— श्मशान में बैठकर क्रन्दन करते हैं। श्रीमन्त सौदागर थे— सोलह वर्ष का युवक। ''कमले कामिनी'' (कमल में देवी) दिखलाएँगे, राजा के पास यह प्रतिज्ञा की थी। दिखला नहीं पाए। काटने के लिए श्मशान में ले जाते हैं। शर्त की थी कि यदि देवी-दर्शन न करवा पाए तो सिर काटा जाएगा। बालक साक्षात् मृत्यु सम्मुख देखकर शोकार्त हो रोने लगा। राजा से कहा, ''महाराज, महामाया का खेल मैं समझ नहीं सका, मुझे क्षमा करें।'' पीछे माँ ने दर्शन दिए थे राजा को। देखिए, इतना बड़ा भक्त होते हुए भी देह जाने के भय से रोते हैं।

''पीटर, जिसके विश्वास का कूलकिनारा नहीं था, जिसके सम्बन्ध में क्राइस्ट बोले थे,

> 'and upon this rock I will build my Church' अर्थात् इस विश्वास के पहाड़ के ऊपर मैं अपना धर्म-मन्दिर-स्थापन करूँगा, उसे ही अन्य समय कहा, 'that this night, before the cock crow, thou shalt deny me thrice.' (आज रात शेष प्रहर के पूर्व ही तुम सर्व समक्ष तीन बार कहोगे कि तुम मुझे पहचानते नहीं हो।) क्राइस्ट को पकड़कर जज के घर ले गए। पीटर भी पीछे-पीछे गए। एकजन पीटर को पहचान कर बोला, ''तुम तो क्राइस्ट के ही लोग हो।'' पीटर ने उत्तर दिया, ''ना, मैं उनको नहीं जानता।'' इसी प्रकार और भी दो बार पूछने पर दोनों बार ही बोले, ''मैं उनको नहीं जानता।''

तदुपरान्त अपनी इसी दुर्बलता की बात स्मरण करके पीटर रोने लगे। देहबुद्धि ऐसी ही वस्तु है। किन्तु क्राइस्ट जानते थे मनुष्य की यह दुर्बलता। पीटर ने गर्व से कहा था, ''प्रभो, मैं आपके लिए जीवन-विसर्जन करूँगा। तब भी आपको छोड़ नहीं सकूँगा।'' क्राइस्ट ने हँसकर तब यही बात कही— इसी

रात को मुर्गा बोलने से पूर्व (भोर होने के पूर्व) तुम तीन बार मुझे अस्वीकार करोगे। किन्तु वे सारी दुर्बलता जानकर भी दुखी नहीं हुए— for he (Jesus) knew what was in man क्योंकि जीसस क्राइस्ट जानते थे, मनुष्य में 'क्या' है। क्राइस्ट ने अपने जीवन में भी दिखाया— देह जैसी सहायक है, वैसी ही प्रतिबन्धक है। मृत्यु के पूर्व निमेष के लिए वे भी शोकार्त हो गए। बोले थे— "Father remove this cup from me" अर्थात् पिता, हमारा इस विपद से उद्धार करो। क्षणभर के लिए ही मात्र यह भाव था उनमें। तत्क्षण ही बोले, "nevertheless not my will, but thine, be done." अर्थात् "तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो"— शरीर जो धारण करके आए थे, यह करना ही होगा। ठाकुर भी बोले थे, यह शरीर कुछ दिन और रहता तो बहुत-से लोगों को चैतन्य होता। किन्तु माँ रखेंगीं नहीं। ये सारे दृष्टान्त 'पञ्चभूत के बन्धन ब्रह्म करे क्रन्दन'— ठाकुर के इसी महावाक्य के हैं।

"We are bending under the load of this grand mystery— जीवन-मरण की यह समस्या अति दुर्बोध्य है। महामाया का यह खेल समझना है कठिन। जभी उनके शरणागत हुए पड़े रहना। तभी तो ठाकुर कहते, "माँ, मैं नाना कुछ जानना भी नहीं चाहता। मुझे अपने पादपद्मों में शुद्धाभक्ति दें।"

•

श्री म *(जनैक भक्त के प्रति)*— एक दिन एकजन ने पूछा, "महाशय सबसे बड़ा आश्चर्य क्या है?" झट से ठाकुर ने उत्तर दिया— "साधु का जीवन।" सब चलते हैं एक पथ पर— मनुष्य, देवता, गन्धर्व, पशु-पक्षी, कीट-पतंग, वृक्ष-लता पर्यन्त— किन्तु साधु चलता है अन्य पथ पर, ठीक उल्टे पथ पर— उजान पथ पर। सर्वत्र स्त्री-पुरुष का मिलन— किन्तु साधु चलता है अकेला। अकेला बिना हुए उन्हें पाया जाता नहीं। कुछ दूर तक साधु-संग में, गुरु-संग में चलता है, अन्त में स्वयं को जाना होता है एकाकी। ठाकुर एक गाना गाया करते, "चलो, गुरु दु' जन जाइ पारे। आमार एकला जेते भय करे।" (चलो गुरु, दोनों पार चलें। मुझे अकेले जाते भय लगता है।) तभी साधु आश्चर्य!

उपनिषद् में भी यही बात है ''आश्चर्यवच्छृणोति चान्य:''— अन्य माने शिष्य, साधु। यही साधु ही आश्चर्य। एक निमेष बिना सोचे झट से बोल पड़े यह बात। यह भी ईश्वर कर रहे हैं। जिन्होंने बद्ध किया है, मुक्ति के लिए उन्हें ही बोलना उचित। वे जिस दिशा में चलाते हैं, उन्हें स्मरण करके उस दिशा में चलने से भय नहीं रहता उतना। गुरु आत्मा को पहचनवा देते हैं। ठाकुर ने भक्तों को जनवा दिया था। इसीलिए ईश्वर अवतार होकर आए हैं गुरु-रूप में। वे जो गुरु हैं— यही इंगित किया करते एक गल्प सुनाकर। बाघ का बच्चा बकरियों के संग रह रहकर 'में-में' किया करता था। अन्य एक बाघ ने आकर उसे समझा दिया कि तू बाघ है, बकरा नहीं। वह उसकी बात सुनना नहीं चाहता, बकरियों की भाँति भय ये चीत्कार करता है। अन्त में जल के निकट ले जाकर प्रतिबिम्ब दिखाया और मुख में माँस ठूँस दिया। तब उसको होश आया मैं बाघ हूँ। पहले भी बाघ, पीछे भी बाघ— बीच में बकरा। महामाया का ऐसा ही काण्ड है— ऐसा ही प्लान।

''गुरु बिना उपाय नहीं है। ''सत्गुरु पावे भेद बतावे''। गुरु-लाभ हो जाने पर प्राय: निश्चिन्ति।''

''कखन ओ विपथे यदि भ्रमिते चाय ऐ हृदि,
तखन इ तोमार ऐइ मुख हेरि सरमेते होइगो सारा।''

[भावार्थ— जब कभी भी यह हृदय विपथ पर चलना चाहता है,
तभी तुम्हारा यह मुख देखकर शर्म से डूब जाता हूँ।]

''श्री रवीन्द्र ठाकुर के गाने में यह है। गुरु का मुख स्मरण हो आने पर फिर अन्य काज किया नहीं जाता। गुरु हैं कर्णधार।''

•

इसी बीच नित्यकार अनेक भक्त आकर उपस्थित हो गए। डॉक्टर बक्शी, छोटे नलिनी, रमणी, सुखेन्दु, अमृत, सुरेन गांगूली आदि। अब रात्रि सवा नौ।

श्री म फरिदपुर के भक्त से बोले, ''आप तो गाना जानते हैं। गाइए ना

एक गाना।'' नूतन लोगों के आने पर श्री म गाना गाने के लिए कहते हैं। उनका भाव क्या है, गाने से समझ लेते हैं। भक्त गाते हैं—

गान : मन चलो निज निकेतने,
संसार-विदेशे विदेशीर वेशे मिछे भ्रमो अकारण।
विषय पंचक आर भूतगण सब तोर पर, केउ नय आपन।
पर प्रेमे केनो होये अचेतन भूलिछो आपन जने॥

[भावार्थ— मन चलो निज निकेतन में, संसार रूप विदेश में विदेशी के वेश में अकारण व्यर्थ भ्रमते फिर रहे हो। जागतिक सब विषय और ये पञ्चभूत— पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश— सब तेरे लिए पराये हैं, कोई भी इनमें अपना नहीं है। पराये के प्रेम में बेहोश होकर क्यों अपने जन को भूल गए हो?]

श्री म आहार करके लौटे हैं। अब रात्रि दस। छोटे अमूल्य गा रहे हैं—

''कखनो कि रंगे थाको मा श्यामा सुधातरंगिणी!''

[कब किस रंग में रहती हो माँ श्यामा सुधा तरंगिणी!]

रमणी ने गाया—

गया गंगा प्रभासादि काशी कांची केबा चाय।
काली काली काली बोले अजपा यदि फुराय॥

●●●

कलकत्ता, 19 जनवरी, 1924 ईसवी;
5वाँ माघ, 1331 (बंगला) साल; शनिवार, शुक्ला त्रयोदशी।

पञ्चम अध्याय

शिक्षा के क्षेत्र में श्री म की प्रतिभा

(1)

आज श्री म मॉर्टन स्कूल में अवस्थान कर रहे हैं। मध्याह्न में गदाधर आश्रम से यहाँ आए हैं। तीन तल के उत्तर के कोने के कमरे में बैठे हैं। निकट हैं डॉक्टर और जगबन्धु। अब अपराह्न सवा छः।

डॉक्टर *(श्री म के प्रति)*— फीस कैसे लूँगा, निश्चय तो कर ही नहीं पाता। समझ नहीं पाता कौन धनी है, कौन निर्धन— ऐसे अनेक 'केस' (case) होते हैं। अन्त में मन में कष्ट होता है। आज एक हैजे के 'केस' में बीस इन्जैक्शन के लिए चार्ज करने के कारण बुलाया ही नहीं। मोहल्ले के दूसरे व्यक्ति से पता लगा कि नित्य लाता है, नित्य खाता है। तभी मैं स्वयं ही गया। देखा, रोगी sink-निस्तेज, (मरमर) हो रहा है— पिशाब बन्द होने वाली अवस्था हो रही थी। तब स्वयं ही— बिना पैसों से— दो ढाई बजे से आरम्भ करके अनेक इन्जैक्शन लगाकर आया हूँ। बच जाएगा। अब बहुत चंगा है। उस मोहल्ले के बहुत-से 'केस' मेरे हाथ से चंगे हुए हैं। इस कारण उन्हें खूब विश्वास है— यदि मैं पकड़ लूँ तो यह भी चंगा हो जाएगा। किन्तु पैसे के अभाव में मुझे बुला नहीं सकते। तीन रुपये की औषध खरीदनी होगी, उसमें ही 'यह वस्तु रहन रख दो वह रख दो' आरम्भ हो गया। और फिर बहुत-से स्थानों पर से कम फीस ले आएँ तो उस मोहल्ले के सब ही कम देना चाहते हैं। डॉक्टर नीलरतन सरकार पचास रुपया लेकर बागबाजार-नहर के उस पार गए थे। मुझ से बोले, कम लेने से प्रैक्टिस shine (उन्नति) नहीं कर सकेगी। उसके अतिरिक्त जूनियरों के ऊपर injustice (अन्याय) करना

होगा। 'अब क्या करूँ' समझ में नहीं आ रहा।

जगबन्धु *(श्री म के प्रति)*— महापुरुष महाराज ने मुझे डॉक्टर कांजिलाल की बात बताई थी। खेवाघाट के भट्टाचार्य को असुख हुआ। मठ के लोग ही देखते थे। महापुरुष महाराज ने स्वयं कांजिलाल को बुलाने भेजा। डॉक्टर paying call (फीस देने वाले रोगी) समाप्त करके जब आए तब तक भट्टाचार्य हो चुके थे— दाह पर्यन्त शेष। बोले, ''देखो, इतना बड़ा भक्त, किन्तु पैसे की पुकार छोड़कर आ नहीं सका''।

श्री म *(सहास्य)*— ठाकुर ने एक कहानी सुनाई थी। एक गुरु को एक टुकड़ा कपड़ा आवश्यक हुआ— भक्ति-ग्रंथ आदि बाँधने के लिए। शिष्य की कपड़े की दुकान है। शिष्य से कहने पर, वह बोला टुकड़ा बचेगा तब दूँगा *(हास्य)*। टुकड़ा तो बचता ही नहीं, कई मास हो गए। और एक बार गुरुपत्नी ने मछली माँगने के लिए भेजा था। बोला, अब तो सारी बड़ी-बड़ी रोहू पकड़ी हुई हैं— 'काटिबाटा'— छोटी मछली आने पर दी जाएगी। *(सहास्य)* संसार की यही अवस्था है।

श्री म *(स्वगत उच्च हास्य सहित)*— जूनियरों के ऊपर अन्याय होगा तो इसलिए कम लिया नहीं जाएगा? जूनियरों का तो उपकार हुआ, किन्तु इधर गरीब रोगी जो मुमूर्षु। उसका क्या हुआ? *(गम्भीर भाव में)* धनी के पास से लेना और गरीब के घर में काज कर देना, ये दोनों तो ठीक हुए। अब intermediate (बीच वालों) को ठीक करना ही कठिन है। भगवान जैसा करवाएँगे, वैसी अवस्था में वही होगा। तब भी यह कर सकते हैं कि 'कितने जन हैं, कौन-सा भाई क्या करता है'— यह सब जानकर, एक चार्ट बनाने से क्या नहीं चलता?

डॉक्टर— मैं मुख से ही पूछता हूँ।

श्री म— वे तो सब lay men (अनाड़ीलोग) हैं। सब समझते नहीं। *(क्षणभर सोचकर)* गरीब 'केस' जानकर attend, परिचर्या न करना!— ओ माँ, यह तो murder (हत्या) करना होगा। किन्तु ठाकुर मधु डॉक्टर को फीस दिया करते थे।

जगबन्धु— डॉक्टर महेन्द्र सरकार तो लेते नहीं थे।

श्री म— Offer (भेंट) किया गया था, 'किन्तु उनके पास बहुत लोग आते हैं', देखकर ली नहीं। *(गम्भीर भाव से)* डॉक्टरबाबू, इस हैजे के रोगी की खबर आपको लेनी उचित है।

डॉक्टर— जी हाँ, सन्ध्या समय वे खबर देंगे, कहा है।

श्री म— तो भी आप अभी उठिए। गाड़ी तो साथ है— इस रोगी को देखकर सीधे घर चले जाएँ।

•

डॉक्टर ''जी अच्छा'', कहते हुए उठ गए। बिना 'कॉल' के रोगी को देखने गए। श्री म अनेक क्षण तक मौन रहे। डॉक्टर का रोगियों के पास बहुत सुनाम है। और वे भी भक्त हैं। प्राय: समस्त विषयों में श्री म के संग परामर्श करके संसार चलाते हैं। श्री म सम्भवत: उनकी बात सोच रहे हैं। कुछ काल पश्चात् जगबन्धु के साथ वकील और डॉक्टर की बातें होने लगीं।

जगबन्धु— रोमन 'लॉ' में 'लेकस्एकुइटा' (Lex Aquita) नामक विधान है। इसमें है— कोई डॉक्टर यदि एक आपरेशन करे अथवा कोई 'केस' take up (ग्रहण) करे और attention (मनोयोग) न दे, इससे यदि कोई slave (दास) अथवा pecudus (कर्मचारी) मर जाए तो डॉक्टर दायी है। और फिर कुछ दिन पश्चात् ऐसा हुआ था, कोई यदि दास किंवा चतुष्पद जन्तु को तनिक-सा भी आघात करता तो फिर आघातकारी को दण्ड मिलता।

श्री म— इससे पता लगता है इनके खूब दया थी। आज इसी बात से बड़ा आह्लाद हो रहा है कि इनके इतनी दया थी।

जगबन्धु— यह तो advanced stage of civilization (सभ्यता की खूब उन्नत दशा) में हुआ था। प्लैवियनों ने जब शक्ति-लाभ कर लिया था तब।

श्री म— 'लेक्स लिचिनियम रेरोगेशन' (Lex Liciniam Rerogation) में Plebiams could select a consulate from among them (जनसाधारण

ने अपना शासनकर्त्ता निर्वाचन करने का अधिकार प्राप्त कर लिया था)।

जगबन्धु— यह 377 बी०सी० में हुआ था। लिचिनियस् स्टोलो (Licinius Stolo) नामक किसी प्लैबियन के नाम पर यह नियम परिचित है। एल० सेकसटियस (L. Sextius) और सी० लिचिनियस (C. Licinius) इन दो जनों ने मिलकर यह नियम (Law) बनाया था। एक व्यक्ति के नाम पर तो यह नियम परिचित है, अन्य जन सर्वप्रथम प्लैबियन शासनकर्त्ता (Consul) नियुक्त हुए।

श्री म— इस कथा-प्रसंग में एक बात स्मरण हो आई है। मैं तब हेयर स्कूल में पढ़ता था। प्रेसिडेन्सी कॉलेज के प्रोफेसर लैफ्टिनेण्ट आईविज ने हम लोगों से रोमन और ग्रीक इतिहास के प्रश्न किए थे। एक प्रश्न था— What is Lex Liciniuam ? (लेक्स लिचिनियन क्या है) ? और एक प्रश्न था, Write a note on the battle of Thermopoly (थरमॉपॉलि के युद्ध का विवरण संक्षेप में लिखो)। *(सहास्य)* मुझे मुखस्थ था, और उसी दिन पढ़कर गया था— खूब लिख दिया। मुझ को तभी बहुत प्यार करते थे। और भी दो प्रोफेसरों ने हमारी परीक्षा ली। एक ने मैथेमेटिक्स (गणित) की परीक्षा ली। इन्होंने एक प्रश्न किया था, 'A bankrupt had assets so much, and debts so much, how much could he pay to a pound?' (एक दिवालिए की इतनी सम्पत्ति और इतना ऋण है, वह एक पाऊण्ड में कितना दे सकेगा) ? फोर्थ (चौथी)* क्लास का छात्र bankrupt (दिवालिया) का अर्थ नहीं जानता— बैंक का अर्थ ही नहीं जानता, उससे ऐसे प्रश्न करना? कैसी खराब व्यवस्था (system)? उनकी कैसी प्राणघातक मूर्खता है। Rule of three (त्रैराशिक) का पता था, इसलिए किसी-किसी ने उसी के द्वारा हिसाब लगा दिया।

●●

---

* उन दिनों 10वीं को फर्स्ट, 9वीं को सेकेण्ड, 8वीं को थर्ड, 7वीं को फोर्थ क्लास कहते थे। 6, 5, 4 को फिफ्थ, सिक्सथ, सेवेन्थ आदि कहते थे।

(2)

श्री म मॉर्टन इन्स्टिट्यूशन के स्वत्वाधिकारी (मालिक) एवं कर्म में उसके रेक्टर हैं। इसी विद्यालय के किसी एक युवक शिक्षक के साथ शिक्षा विषयक बातें हो रही हैं।

श्री म *(शिक्षक के प्रति)*— कल यूनिवर्सिटी में vernacular medium (शिक्षा का माध्यम) मातृभाषा होने की बात उठी है। कांग्रेस ने भी वैसा ही कहा है।

शिक्षक— इतने दिनों में समझ सका हूँ substance (सारांश) लिखने का अर्थ क्या है? पाठ्यावस्था में मुखस्थ करके केवल उद्धार करता आया हूँ।

श्री म— देखिए कैसा काण्ड! छिः छिः, अंग्रेज़ी हटा देना ही उचित। अच्छा, हमने जो method (शिक्षा-प्रणाली) चलाई है, उससे कैसा काम हो रहा है?

शिक्षक— खूब काम हो रहा है। अब बिना समझे मुखस्थ नहीं करना पड़ता छात्रों को। इतिहास पढ़ाने के समय नूतन प्रणाली अवलम्बन करने से लड़कों का खूब उपकार हो रहा है। प्रश्न करके जबानी पॉयन्टस बनाकर उत्तर बोल देते हैं। और मैप (नक्शे) पर स्थान दिखा देते हैं। इससे देख रहा हूँ लड़के जबानी ही सीख लेते हैं, पुस्तक तो प्रायः पढ़नी ही नहीं पड़ती।

"अंग्रेज़ी भी सुन्दर भाव से हो रही है। कोई-सा एक पाठ आरम्भ करने के पूर्व समस्त विभाग बंगला में कहानी की तरह बोल देता हूँ। तत्पश्चात् प्रधान-प्रधान प्रश्न क्या हो सकते हैं, वे भी उत्तर सहित बोल देता हूँ। बीच-बीच में दो-एक लड़कों से भी पूछ लिया जाता है। इससे मनोयोग भी होता है और सुनकर बोलने का अभ्यास हो जाता है। इसके पश्चात् पाठ आरम्भ होता है।"

श्री म— इसमें भी मैप पर दिखावें स्थान का नाम, अथवा व्यक्ति का नाम आने पर। इससे आँख से देखकर, कान से सुनकर, सीख जाएगा। व्यर्थ मस्तिष्क पर बोझ नहीं होगा। इतिहास, भूगोल, साहित्य— इन समस्त विषयों में मैप दिखाकर पढ़ाना खूब अच्छा है। इससे idea (भाव) localised (स्थायी) हो जाता है। छवि से भी काम होता है। कान से सुनकर मस्तिष्क

में जाने की अपेक्षा, आँख द्वारा देखकर और कान द्वारा सुनकर जाने पर अधिक काम होता है— कारण दोनों इन्द्रियों का काज हो जाता है। घटना के स्थान पर जा सकें तो और भी अच्छा होता है, स्पर्श हो जाता है। पाँचों ज्ञानेन्द्रियों को जितने भी कामों में लगाया जाएगा ज्ञान-लाभ उतना ही सहज होगा। मस्तिष्क का काम बच जाएगा। 'सन्देश' क्या है, इस पर लेक्चर न देकर उसे आँखों से दिखा कर— नाक से सुंघाकर, मुख में देने से लड़का झट से 'सन्देश' का ज्ञान लाभ कर लेगा। रस और गन्ध— ये दोनों ही पूरा निश्चय करवा देंगे सहज में ही। चक्षु, कर्ण, नासिका, जिह्वा, त्वचा— इन पाँच इन्द्रियों का जितना अधिक व्यवहार करेगा उतना ही ज्ञान-लाभ करना सहज होगा। सबस्टान्स— सारांश कैसे लिखवाते हैं ?

शिक्षक— एक अंश का संक्षेप में सार-सार बंगला (मातृभाषा) में बोल देता हूँ। लड़के बंगला (भाषा) में लिखकर फिर अंग्रेज़ी में अनुवाद करते हैं। देखा जाता है बंगला (भाषा) में भाव को शीघ्र पकड़ सकते हैं लड़के। भाव ठीक हो तो भाषा में प्रकाश के समय कष्ट कम होता है, और भूल भी कम होती है।

श्री म— केवल हमने ही जो बंगला (भाषा) में आरम्भ कर दिया है, वैसा नहीं है। अब कलकत्ता यूनिवर्सिटी में भी उसी सम्बन्ध में आलोचना हो रही है। इससे greatest amount of work (सबसे अधिक काम) होता है shortest time (अत्यन्त अल्प समय) में और easiest way (अति सहज) में।

श्री म— वर्तमान शिक्षा-प्रणाली से बालकों की mortality (मृत्यु संख्या) बहुत बढ़ गई है। हठात् ज्वर हुआ और झट मृत्यु। पिता समझ ही नहीं सके यह क्यों हुआ। एक तो nutrition (पुष्टिकर) भोजन का अभाव, उस पर मुखस्थ करते-करते मस्तिष्क दुर्बल होता जा रहा है। उससे ही समस्त जीवनी शक्ति के ऊपर धक्का लगता है। Vitality (जीवनी शक्ति) कम होती जा रही है। सामान्य आघात से ही हो जाता है— resist (प्रतिरोध) करने की शक्ति नहीं रहती। उससे इतनी अधिक असमय मृत्यु हो रही है। समस्त देश की यही अवस्था है— केवल क्या बंगाल में ही— समस्त भारत में।

एक तो अल्पाहार, अनाहार उस पर अस्वाभाविक प्रणाली शिक्षा की। इसीलिए छात्रों की मृत्यु-संख्या बढ़ रही है।

शिक्षक— आजकल छोटे बालकों का चश्मा लेना भी बढ़ गया है बहुत।

श्री म— वह तो हुआ, किन्तु एकदम जो मरे ही जा रहे हैं। छिः छिः, ऐसी शिक्षा प्रणाली सम्पूर्णतः उठा देनी होगी। ये समस्त बातें रिकार्ड करनी होंगी।

"अंग्रेज़ी पढ़ेगा तो उसके लिए इतनी बड़ी समस्त ग्रामर (व्याकरण) पढ़ने से क्या लाभ? मैट्रिक में यही तो मात्र आते हैं— Difference of meaning, appropriate preposition, parsing (शब्दों का विभिन्न अर्थ, उपसर्गों का प्रयोग और पदान्वय)। और कुछ टेबल-तालिका मुखस्थ करने से ही चल जाता है।"

शिक्षक— सेवेन्थ (सातवीं अर्थात् चौथी) क्लास में भी ग्रामर, कैसी अद्भुत व्यवस्था।

श्री म— उन्हें केवल जबानी बता देना, पुस्तक की आवश्यकता क्या? ये कुछ सिखाने ही काफी हैं— Parts of speech, Verb, Voice और Number (कारक, क्रिया, वाक्य और वचन)। एक पुस्तक मुझे देना, मैं सब पर निशान लगा दूँगा। नहीं, देखता हूँ— सब क्लासों में एक-एक दिन करके पढ़ाकर ही आना होगा। हमको ये नूतन नियम चलाने ही होंगे। शिक्षकगण परिश्रम के भय से प्रथम-प्रथम तो बाधा देंगे! किन्तु जिस प्रकार भी हो, चलाने ही होंगे।

•

श्री म दीर्घकाल तक अनमने होकर कुछ सोचते रहे। चक्षु स्थिर, दृष्टि अति दूर निबद्ध। पीछे लौटकर मन में कुछ देख रहे हैं। प्रायः आध घण्टा पश्चात् पुनः बातें करने लगे।

श्री म *(स्वगत)*— जीवन है प्रहेलिकामय! कहाँ अट्ठारह सौ सतासठ ईसवी, बावन वर्ष पूर्व फोर्थ क्लास (चौथी क्लास अर्थात् सातवीं श्रेणी)। वही गैलरी, वही चेयर— लेफ्टिनेण्ट आइविस उसके ऊपर बैठे हुए हैं और

लड़के सब बैंचों पर बैठे हैं। वही घर आज भी याद आ रहा है। ट्राम में जाते समय देखता हूँ, वह घर अब नहीं है। एलबर्ट इंस्टिट्यूट जहाँ पर है, वहाँ पर था वह स्कूल। संस्कृत कॉलेज में फर्स्ट, सैकण्ड, थर्ड, फोर्थ— (दसवीं, नौवीं, आठवीं और सातवीं श्रेणियाँ) ये चार ही क्लासें होती थीं। तब ठाकुर कामारपुकुर में विवाह के आठ वर्ष पश्चात् गए थे। मैं तब 'लिचिनियन रेरोगेशन' लिख रहा था। तब कौन जानता था कि ठाकुर कामारपुकुर में हैं, अब हिसाब लगाकर बोल रहा हूँ।

श्री म *(जनैक भक्त के प्रति)*— अभ्यास ऐसा देखिए, मुमूर्षु रोगी हाथ में और डॉक्टर बाबू यहाँ बैठे हैं! सर्वक्षण उसके घर ठहरना उचित।

●●

(3)

अब सन्ध्या के सात। श्री म द्वितल की सीढ़ी के पास के कमरे में बैठे हैं। जितेन, दुर्गापद, बड़े अमूल्य, रमणी, सुखेन्दु, जगबन्धु आदि भक्तगण संग बैठे हैं। सन्ध्या— ध्यानान्ते श्री म की इच्छा से पत्रिका से एकजन नागमहाशय का जीवनचरित पढ़कर सुना रहे हैं— लेखक श्रीमती राय। पाठ शेष होने पर श्री म उसी पवित्र जीवन भण्डार से मधुकरी संग्रह करके भक्तों के निकट परोस रहे हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— नागमहाशय एक बार बाजार करने गए। कृषक ने दाम अधिक ले लिया— या माँग लिया। वही उन्होंने दे दिया। अन्य लोगों ने कहा, "अरे वे तो साधु हैं, अधिक क्यों लिया?" कृषक दौड़कर पैसे लौटाने लगा। नागमहाशय बोले, नहीं-नहीं, आप ले जाइए। आपका नुकसान होगा। लिए नहीं। फूस की कुटीर में रहते हैं। छत बनाने के लिए मजदूर छप्पर पर चढ़ा। धूप से पसीना-पसीना हो गया। यह देखकर नागमहाशय दु:खित होकर कहने लगे, 'आप उतर आइए, उतर आइए, आपको बहुत कष्ट हो रहा है।' फिर हाथ में पँखा लेकर हवा करने लगे और स्वयं हुक्का बना कर पिलाने लगे। बाड़ी में आँगन घास से भर गया— उसको कटवाना जो

नहीं। इसका नाम है— सेवा, समदर्शन।

श्री म स्थिर होकर क्षणभर बैठे रहे, मुख में बात नहीं— दृष्टि अन्तर में निबद्ध। कुछ काल बाद 'देव भोग', 'नागमहाशय'— अपने आप ही अस्फुट स्वर में ये दो शब्द ही असंयुक्त भाव में उच्चारण करते हैं और फिर बातें करते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— देखा था, भक्तों ने उनके मृतदेह का फोटो लिया। यह सब अंग्रेज़ी फैशन है। इसे देखकर शोक होता है। स्मरण रखने का क्या यही उपाय है ? इससे बढ़िया क्या और नहीं है ? ईसा मसीह की क्रूसिफीकेशन की छवि चर्च में रखते हैं। ये अंग्रेज़ी फैशन ठीक नहीं। जीवित रहते हुए फोटो लेने से ही हुआ।

श्री म की फोटो के लिए भक्तों ने बहुत अनुरोध किया था, किन्तु वे सहमत नहीं हुए। जभी इसी सुयोग पर बड़े जितेन बाबू ने वही प्रस्ताव इंगित से उठाया।

बड़े जितेन *(श्री म के प्रति)*— जीवित रहते हुए यदि न दें तब फिर क्या करें ? सब भक्तों की बहुत दिनों की आकांक्षा है। चाहे फिर selected few (चुने हुए कुछेक) के लिए छवि खिंचवाकर— नेगेटिव* तोड़कर फेंक दिया जाए।

श्री म— ठाकुर की छवि होते हुए अन्य की छवि की क्या आवश्यकता ? ठाकुर कहते, "अन्य फूलों में भी मधु है। किन्तु पद्मफूल में मधु अधिक है।" ऐसे पद्मफूल के रहते हुए कौन जाए अन्य फूलों का उतना-सा मधु चूसने ? ठाकुर जो क्या वस्तु थे ! आप लोगों ने तो देखा नहीं ना ! जभी ऐसा कहते हैं।

बड़े जितेन— यदि कोई उसी प्रकार (श्री म को पद्मफूल एवं ठाकुर के साथ अभिन्न) देखे ?

श्री म *(विरक्ति सहित)*— केशवसेन से ठाकुर ने कहा था, तुम्हारी बात नहीं ले सकता। तुम नाम-यश, कामिनी-काञ्चन लेकर रहते हो। नारद, शुकदेव

---

* नेगेटिव = छवि का सांचा।

कहते तो कुछ होता।

"जो लोग यह बात कहते हैं उनकी क्या authority (अधिकार) बोलने की? वे क्या नारद, शुकदेव या त्यागी हैं? जो कामिनी-काञ्चन लेकर रहते हैं उनकी बात की worth (कीमत) ही क्या?"

●●

अब रात्रि प्राय: नौ। श्री म स्वामी बोधानन्द जी की वक्तृता की रिपोर्ट सुन रहे हैं। ये स्वामी विवेकानन्द जी के शिष्य हैं। धर्म प्रचारार्थ अमेरिका के न्यूयार्क शहर में रहते हैं। सत्रह वर्ष उपरान्त भारतवर्ष-दर्शन करने आए हैं। कलकत्ता-वासियों ने आज उन्हें यूनिवर्सिटी इन्स्टिट्यूट में एक अभिनन्दन-पत्र प्रदान किया है। उसका उत्तर देते हुए उन्होंने अतिशय तेजोमयी एक वक्तृता दी। बड़े अमूल्य शार्टहैण्ड में लिखकर लाकर श्री म को सब सुनाते हैं। सारी सुनकर श्री म मन्तव्य कर रहे हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ऐसे समस्त लोग इस देश में आएँ तभी देश की strength (शक्ति) बढ़ेगी। देश कहाँ जा रहा है, कैसी दुर्दशा! अन्न नहीं, वस्त्र नहीं, देह नहीं, गृह नहीं, शिक्षा नहीं— सब श्रीहीन हैं। उन देशों से materials (माल) इस देश में लाने की आवश्यकता पड़ गई है। ये लोग दीर्घकाल से उस देश में हैं, कोई अठारह वर्षों से, कोई पच्चीस वर्षों से। इनको जो इतने दिन उस देश में रहना अच्छा लगा है, यह उनका ही काम है। वे मछली के तेल में मछली तलते हैं। ये लोग इस देश में जितना अधिक आना-जाना करेंगे, उतना ही अच्छा है। वहाँ से साईंस, कृषि, शिल्प, वाणिज्य, देशप्रेम इत्यादि यहाँ आएगा। और भारतवर्ष से spirituality (धर्मभाव) उस देश में जाएगा। ईश्वर का काम समझना कठिन है। इसी कार्य के लिए ठाकुर ने स्वामीजी को उपयुक्त पात्र जानकर उस देश में भेजा। स्वामीजी के द्वारा उन्होंने प्राच्य और पाश्चात्य का मिलन करवाया है। मिलन-भूमि वे स्वयं। इस देश के आध्यात्मिक जितने सत्य हैं, सब निज जीवन में (ठाकुर ने) साधन करके, उपलब्धि करके 'यतो मत ततो पथ' यही महासत्य आविष्कार किया। स्वामीजी के द्वारा उसी देश में प्रचार करवाया। भविष्यत्

जगत उनके महान सत्य के ऊपर एकत्रित होगा। इसीलिए उनका सर्वधर्म साधन था। नहीं तो यह सब करने का उन्हें कोई प्रयोजन नहीं था। स्वामीजी के द्वारा उस देश के प्राणकेन्द्र पर आक्रमण और जय करवा ली है। सूक्ष्म में हो गया है, बाहर क्रमश: प्रकाश होगा। स्वामीजी क्या केवल मुख से बोलते हैं? नहीं, निज आत्मदर्शन करके समझ कर बोले हैं। उनकी अतिमानुषिक विद्या, personality (व्यक्तित्व), हृदय, पवित्रता, त्याग से समस्त बहुविध दैवीसम्पद की सहायता से उस देश के प्राण को वशीभूत कर लिया है। स्वामीजी को छोड़ यह कर्म अन्य किसी के द्वारा नहीं होता। युधिष्ठिर ने कहा था, श्रीकृष्ण जाकर peace (शान्ति) कर सकते हैं और किसी में सामर्थ्य नहीं। जभी उनकी इच्छा से अब भी मठ के ये लोग सब जा रहे हैं। जब तक opposed (बाधा) प्राप्त नहीं होती, समझना होगा इसमें ठाकुर का मत है। और फिर सम्भवत: किसी strongman (क्षमताशील जन) को खड़ा करके कहलवाएँगे, ''निर्जन में गोपन में क्रन्दन करके उनसे कहो— उनका दर्शन होगा। उनके दर्शन करना ही मनुष्य जीवन का सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य है।''

श्री म *(स्वगत)*— दो ही पथ हैं— एक तो भावभक्ति और एक निष्काम कर्म। निष्काम कर्म करते-करते चित्तशुद्ध होने पर उन (भगवान) पर समस्त मन जाएगा। *(सहास्य)* ये उनको पसन्द नहीं करते। एकजन को *(ठाकुर के समकालीन को)* बीच-बीच में भाव होता था। अन्य जन कहते पागल हो गया है। किन्तु ठाकुर तो सब भावों में ही सब कर गए हैं, भाई! पुराने लोग जो हैं उनके समय वाले, वे ही उनका भाव ठीक रखे हुए हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— For all these things do the nations of the world seek after— But rather seek ye the kingdom of God; and all these shall be added unto you.

अज्ञानी जन ही सांसारिक अनित्य वस्तु माँगता है.... तुम लोग केवल भगवान को माँगो। तुम्हें जो आवश्यक है वह भगवान जानते हैं, एवं देंगे, क्राइस्ट ने कही थी अन्तरंगों से यह बात। ठाकुर भी उसकी ही प्रतिध्वनि करके कहते हैं, ''ओ गुलो एतो भेबो ना, तिनि जानेन एर दरकार आछे। तुमि वरं केंदे केंदे व्याकुल होय बोलो, दर्शन दाओ।'' (ये चीज़ें इतनी मत सोचो,

वे जानते हैं इसको जरूरत है। तुम तो बल्कि रो-रो कर व्याकुल होकर कहो, दर्शन दो।)

"उनका दर्शन करना— यही यथार्थ धर्म है।

"क्राइस्ट की धर्म की definition (परिभाषा) देखिए, कहते हैं— पहले ईश्वर-लाभ, फिर अन्य कुछ करो। Development of agriculture, industry, trade, commerce, technical education, science (कृषि, शिल्प, वाणिज्य, यन्त्रशिक्षा, विज्ञान)— इन सब की भी आवश्यकता है। किन्तु इनके लिए भिन्न श्रेणी के लोग हैं। इन्हीं वस्तुओं को क्राइस्ट ने कहा था, "these things" श्रीरामकृष्ण की भाषा में, 'ओ गुलो', अर्थात् हेय, निकृष्ट वस्तुएँ। इसके भी ऊपर है ईश्वर। तुम केवल इसे ही माँगो। सबको नहीं कहा, जो अधिकारी हैं उन्हीं अन्तरंगों से कहा। *(स्वगत)*— "तुम मेरे अति प्रिय हो, जभी उत्कृष्ट वस्तु का सन्धान बता दिया है।" ये सब हैं, और चिरकाल रहेंगी। उनके लिए लोग हैं। तुम ईश्वर को पकड़ो। Death abolish (अति मृत्यु) न होने तक वे सब कुछ नहीं हैं। मुझे पकड़कर पहले निज का पार पाओ।

22-1-1924

(4)

श्री म का शरीर आज अस्वस्थ है। इसीलिए 50 नम्बर अम्हर्स्ट स्ट्रीट में मॉर्टन स्कूल के तीन तल के उत्तर के गृह (कमरे) में लेटे हैं— तख्तपोश पर। कभी-कभी तकिया दीवार से ठेस देकर बैठते हैं। श्री म की खाट गृह के पूर्व-दक्षिण में और सिर दक्षिण में है। अपराह्न पाँच। खूब शीत पड़ा है। गृह के पश्चिम में लम्बे बैंच पर भक्तगण बैठे हैं।

श्री म *(शिक्षक भक्त के प्रति)*— आज क्या-क्या बातें हुईं, हमारे स्कूल की टीचर-कॉन्फ्रेन्स में?

शिक्षक— देखा, वृद्ध शिक्षकगण आप द्वारा प्रवर्तित (लागू की हुई) मातृभाषा में नूतन शिक्षा-पद्धति ग्रहण करने के लिए तैयार नहीं हैं। सबस्टेन्स बंगला में लिखकर अंग्रेज़ी अनुवाद करवाना, और सब विषय बंगला में पढ़ाना— इससे प्रसन्न नहीं हैं। लगता है principle (नीति) तो मान लिया है किन्तु अभ्यास बदलना नहीं चाहते, परिश्रम और बढ़ने का भय है।

श्री म— आज ना भी हो तो कल तो करना ही होगा। मातृभाषा बिना शिक्षा हो नहीं सकती। अंग्रेज़ों ने जबरदस्ती चला दी है। यह रहेगी नहीं, रह सकती नहीं। 'अस्वाभाविक वस्तु स्थायी नहीं होती'। जगत के सब ही देश अपनी मातृभाषा में शिक्षा पाते हैं— यही है स्वाभाविक। और फिर केवल हम लोग ही इस विषय की चिन्ता करते हैं, यह बात नहीं है। हमारा दोष है कि पूर्व से ही बंगला पढ़ाना introduce (प्रचलित) कर दिया है। आशुबाबू* भी इस विषय की खूब चिन्ता करते हैं। उनकी प्रेरणा से यूनिवर्सिटी में भी इस विषय पर जोर की आलोचना होती है। आशुबाबू ने उस दिन लाहौर यूनिवर्सिटी के Convocation address (समावर्तन भाषण) में मातृभाषा में पढ़ाने की प्रशंसा की है। उन्होंने कहा, मातृभाषा में शिक्षादान— fraught with possibilities which even the best amongst us cannot foresee— का भविष्य कितना उज्ज्वल है, उसे हमारे श्रेष्ठ शिक्षाविशारदगण अभी भी समझ नहीं सकते।

•

श्री म ने मौन रहकर कुछ काल बिताया। अब कथा का प्रवाह परिवर्तित हो गया है। ईश्वरीय कथा होने लगी।

श्री म *(जगबन्धु के प्रति)*— आज कुछ समय पहले बेलुड़मठ से तीन साधु आए थे। एक बम्बई से आए हैं— महाराष्ट्री हैं, ब्रह्मचर्य लेंगे।

भक्त— उस देश के खूब कम साधु हैं मठ में।

श्री म— न, अनेक साधु हैं। मठ में कम हैं। मैं जब ऋषिकेश में था तब

---

* आशुबाबू— आशुतोष मुखर्जी।

ठाकुर-जन्मतिथि का उत्सव किया गया था। उन्होंने (महाराष्ट्र के साधुओं ने) ही सम्पूर्ण leading part (नेतृत्व) किया था। ठाकुर को वे खूब जानते हैं। जभी तो हमें कितना प्यार किया करते— रोज रोटी बनाकर ला दिया करते। आजकल ठाकुर का नाम चारों दिशाओं में फैल रहा है। भारत के सब साधु मानते हैं।

"मठ में जो आए हैं, देखा है वे बढ़िया व्यक्ति हैं, सब जानते हैं— (well informed)। बंगला नहीं समझते, संस्कृत के akin (स्वजातीय) शब्दों को समझते हैं। वे खूब advanced (प्रगतिशील) हैं।"

•

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— कल यदि आप लोग आदि ब्राह्मसमाज में जा सकें, सीन (दृश्य) देखें तो सुन्दर हो! समय हो गया है, बड़े जितेनबाबू वाली औषध तो दें। अब खा लूँ नहीं तो वे लड़ेंगे। (पिप्पल-चूर्ण के साथ औषध सेवन करते-करते) पिप्पल-चूर्ण देखते ही स्वामीजी की बात स्मरण हो आती है। ऋषिकेश में उनकी नाड़ी प्राय: चली गई थी— 'जाय-जाय' अवस्था थी। एक साधु पिप्पल चूर्ण लिए आ गए। फिर नाड़ी लौट आई— मधु के संग में मुख में देने से। किसी-किसी ने सोचा था, सम्भवत: ये फिर लौटकर आएँगे नहीं। किन्तु ठाकुर का कार्य बाकी था, इसीलिए योगायोग हो गया। सुना है, वही साधु पिप्पल चूर्ण लेकर अप्रत्याशित रूप में आ उपस्थित हुए थे। उनका काज मनुष्य क्या समझेगा? सब अलौकिक!

बड़े जितेन ने प्रवेश किया।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— समझे जितेन बाबू, मेरा ऐसा स्वभाव हो गया है, ठाकुर की कथा को छोड़कर और कुछ स्मरण नहीं रहता। सीन (दृश्य) याद रहते हैं— तभी ब्राह्मसमाज में सीन देखने जाता हूँ।

भृत्य तेजु रात्रि का आहार लेकर आया। भक्तगण द्वितल के गृह में नीचे चले गए। एक जन केवल रह गए। उन्होंने आहार का स्थान तैयार कर

दिया। आहार दूध और रोटी। श्री म आहार करने बैठे। कुछ बाद भक्त से कहा, ''आप भी नीचे जाएँ कथामृत लेकर। जाते ही पढ़ना आरम्भ कर दें। तब फिर व्यर्थ बातें और हो नहीं सकेंगी।'' नीचे कथामृत पाठ होने लगा; चतुर्थ भाग। एकादश खण्ड सम्पूर्ण हो गया। अब द्वादश खण्ड आरम्भ हुआ। इसी बीच श्री म अस्वस्थ शरीर लिए ही नीचे आ उपस्थित हुए। उनकी इच्छा से द्वादश खण्ड पुनः शुरु से पाठ होने लगा। अब द्वितीय अध्याय चल रहा है।

ठाकुरदादा *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— उनको पुकारता हूँ, बीच-बीच में अशान्ति क्यों होती है ? दो-चार दिन विशेष आनन्द में जाते हैं फिर अशान्ति क्यों ?... जी, अब क्या करूँ बता दें।

श्रीरामकृष्ण— हाथतालि द्वारा प्रातः-सायं हरिनाम करोगे, 'हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल'— बोलते हुए।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— देखिए, किस प्रकार यह महामन्त्र दे दिया ठाकुरदादा को। कोई जप करे तो सिद्ध हो जाएगा— अशान्ति समस्त दूर भाग जाएगी। हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल।

पाठ चलता है। महिमाचरण ठाकुर के आदेश से नारद पञ्चरात्र का एक श्लोक आवृत्ति करते हैं। इसमें हरिभक्ति की बात है—

अन्तर्बहिः यदि हरिस्तपसा ततः किम्।
नान्तर्बहिः यदि हरिस्तपसा ततः किम्।
आराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।
नाराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।*

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— *(सहास्य)* कैसा अद्‌भुत उपाय ठाकुर का! ठाकुरदादा गीत गाना पसन्द करते हैं। उनकी गीत गाने में ही रुचि कर दी। महिमाचरण पण्डित आवृत्ति पसन्द करते हैं। उनकी उस में ही रुचि कर दे रहे हैं। जिसका जो गुण है, उसको उसी के द्वारा ही ईश्वर की ओर lead चालित कर

---

* यदि हरि (भगवान) भीतर-बाहर हैं, तो तप से क्या अर्थात्— तप का क्या प्रयोजन ? यदि नहीं तो भी तप से क्या ? यदि हरि का आराधन किया जाए तो तप से क्या और यदि आराधन न किया जाए तो भी तप से क्या ?

रहे हैं— दैवी उपाय! ऐसी एक वस्तु है ठाकुर के पास, जिसको जो कहते हैं वही होता है। *(पाठक के प्रति)*— क्या है वह?

पाठक— ईश्वर की will power (इच्छा शक्ति)।

श्री म— हाँ, जिस will power (इच्छा शक्ति) द्वारा जगत की सृष्टि, स्थिति, प्रलय चलता है। किन्तु इस ओर मनुष्य— छह रुपये महीने का पुजारी। रोग, शोक-ताप, दारिद्रय सब हैं। कैसी प्रहेलिका!

श्री म निर्वाक् और निस्तब्ध हुए रहे। कुछ काल परे अपने मन में गाना गाने लगे।

गान : प्रेमगिरि कन्दरे योगी होये रहिबो।
आनन्द निर्झरपाशे योगध्याने थाकिबो।
तत्त्वफल आहरिये ज्ञानक्षुधा निवारिये,
वैराग्य कुसुम दिये श्रीपादपद्म पूजिबो॥
मिटाते विरहतृष्णा कूपजले आर जाबो ना;
हृदय करकंभरे शांति वारि तुलिबो।
कभु भावशृंग परे, पदामृत पान करे,
हासिबो कांदिबो नाचिबो गाइबो।*

श्री म *(सहास्य)*— ठाकुरदादा से यह गाना सीखकर एक दिन अति शोक से अश्विनीदत्त को सुनाया। वे स्थिर होकर सुनते रहे। मैंने सोचा बन्धु को एक अति उपादेय नूतन वस्तु द्वारा तुष्ट किया है। ओ माँ, थोड़ा परे अश्विनीबाबू बोले, 'वह तो मेरे द्वारा ही रचित है।' *(श्री म और सबका अति उच्च हास्य)*। इतनी आशा से नूतन वस्तु सीखी थी— सुनाई थी, अन्त में क्या बोले, 'वह तो मेरी ही है'। *(श्री म की हँसी की लहर क्रमश: ऊँचे से ऊँचे उठने लगी। अनेकक्षण पश्चात् ठहरी)*। उनके संग हमारा प्राय: ही मेल होता रहता-एक

---

* प्रेमगिरि की कन्दरा में योगी बनकर रहूँगा। आनन्द-निर्झर के निकट योग-ध्यान में रहूँगा। तत्त्वफल खाकर, ज्ञान की भूख हटाकर, वैराग्य कुसुम के द्वारा श्रीपादपद्म की पूजा करूँगा। अपनी विरहतृष्णा को मिटाने अब फिर कुएँ के पास नहीं जाऊँगा, हृदय रूप कमण्डलु भर कर शान्ति जल निकाल लूँगा। कभी-कभी भाव रूप शिखर पर चढ़कर चरणामृत पान करते हुए हँसूँगा, रोऊँगा, नाचूँगा और गाऊँगा।

संग पढ़ते थे। उनका भी एक पागलपन का-सा भाव था— ठाकुर जैसे कहा करते। वह न हो तो कैसे आएँगे ठाकुर के पास। उनके पिता को भी ठाकुर प्यार करते थे— दक्षिणेश्वर में तीन दिन अपने पास रख लिया था, उनके पिता को। जिनके लक्षण अच्छे देखते थे उन्हें पास रख लेते थे— कम से कम तीन दिन। संस्कार बदल देते थे ऐसा करके।

(5)

जनैक भक्त— नार्थ बेंगाल रिलीफ के लिए वेश्याओं ने कलकत्ता की सड़कों पर भिक्षा की थी। अश्विनीबाबू ने इस पर आपत्ति की। उनके विचार में इससे जनसाधारण की नैतिक अवनति हो सकती है।

श्री म— कहेंगे तो हैं ही। वे क्या केवल देश-सेवक ही हैं? महाभक्त व्यक्ति! *(सहास्य)* कोई-कोई भाई-बहन का मिलन करते हैं। थियेटर उसको मजाक में सुन्दर बनाकर कहते हैं— 'भाई-बहन में मिलन!'— ये लोग अनेक समय सत्य बात बोलते हैं। इससे अवनति की सम्भावना बहुत है। क्यों नहीं होगी?— स्वभाव से ही एक दूसरे को चाहता है। दूर से ही रक्षा नहीं— पास रहने की तो बात ही क्या! इसीलिए ठाकुर इस विषय में इतने सतर्क थे।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— यही देखिए ना, दो प्रकार के लोग होते हैं। एक प्रकार के लोग कहते रहते हैं— होगा, होता है, उनमें जोर नहीं। और एक श्रेणी कच्छपवत् समस्त इन्द्रियाँ भीतर घुसा देता है। काट फेंको तब भी बाहर नहीं करेगा। इनके द्वारा ही कार्य होता है— ईश्वर-दर्शन।

कथामृत पाठ शेष हो रहा है। श्रीरामकृष्ण कहते हैं,

> "उनको प्राप्त करना हो तो बहुवीर्य धारण करना पड़ता है।... स्त्री का एकदम त्याग संन्यासी के पक्ष में... अन्त में जो बचता है वह खूब refined— शुद्ध होकर रहता है। लाहाओं के घर गुड़ के घड़े रखे थे— नीचे छोटा-सा एक छिद्र करके। एक वर्ष पश्चात् देखा समस्त

दाना बन्ध गया है, मिश्री की भाँति। रस जो बहने वाला था, वह छिद्र द्वारा बह गया।''

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— अच्छा, देखिए अवतार को छोड़ और किसकी ऐसी दृष्टि होती है ? कब देखे थे लाहाओं के घर गुड़ के घड़े। वे ही स्मरण रखे हैं। किस प्रकार उसे कार्य में लगाया जाए, वही विचार करते हैं। और यहाँ कैसे सुन्दर दृष्टान्त रूप में उसी दृश्य को ही किस कार्य में लगाया है ! यही एक ही दृष्टान्त स्मरण रहे तो काज हो जाता है— ईश्वर में मन जाता है।

''ब्रह्मचर्य बिना ईश्वर-लाभ नहीं होता। पालन करने लगने पर महाविपद है, विशेषत: गृहस्थ लोगों के पक्ष में। अभ्यास द्वारा स्वभाव अन्य प्रकार का हो गया है। बदलने में मन के संग लड़ाई करनी पड़ती है। उसके अतिरिक्त शारीरिक लक्षण भी दिखाई देता है— स्वप्नदोष; 'इसे देखकर भक्त लोग पीछे भय ना पा जाएँ' इसीलिए इसी दृष्टान्त द्वारा अभय देते हैं। जो जाने वाला है जाए— स्वयं चेष्टा करके नष्ट ना करो। वैसा होने से ही काम हुआ। बाकी जो बचेगा, उससे ही काज होगा। उद्देश्य तो है, ईश्वर-दर्शन। उपाय है चित्तशुद्धि। चित्तशुद्धि के लिए ब्रह्मचर्य है आवश्यक। चित्त माने मनबुद्धि। इसको नूतन रूप से गढ़ना हो तो प्रथम शारीरिक पवित्रता की आवश्यकता है। प्रथम शरीरशुद्धि फिर चित्तशुद्धि। इसी कारण साधुओं के लिए इतना कड़ा नियम है। भक्तों के भरोसे के लिए ऊर्ध्वरेता की बात उठाई है ! नारद, शुकदेव—ऊर्ध्वरेता, इनका बिल्कुल ही वीर्यपात नहीं हुआ। बालक काल से अटूट ब्रह्मचारी। और एक प्रकार का है धैर्यरेता। इनका अनेक क्षय हो चुका है— अब और नहीं करेंगे। कहते हैं, बारह वर्ष वीर्य धारण करने पर एक मेधानाड़ी बनती है। उसके होने पर— शास्त्र का मर्मार्थ धारण होता है। गुरु की बातों का अर्थ समझ सकता है और पालन करने की शक्ति प्राप्त होती है। तब सर्वदा ईश्वर की कथा स्मरण रहती है।''

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— डॉक्टरों का परामर्श लो तो वे कहेंगे अन्य बात। 'स्वप्नदोष होता है', सुनकर शायद कह देंगे वेश्या के घर जाओ। ठाकुर ने वैसा नहीं कहा। उनकी व्यवस्था है, कुछ बाहर निकलता है तो निकल जाए अपने आप। कहते ये सब 'भात' (आहार) के दोष से होता है।

शेष जो रहेगा वह refined (शुद्ध) होकर रहेगा अर्थात् ईश्वर-दर्शन की शक्ति प्राप्त होगी मन में। संयम न रहने से मन स्थिर नहीं होता— एकाग्रता नहीं रहती। जभी ईश्वर का भाव धारण नहीं कर सकता; सम्भवत: सुनता तो है, किन्तु भूल जाता है। प्रथम मन में ईश्वर का बीज रोपण करना होगा। ज़मीन हुई मन। यह उर्वर और सारवान न होने से बीज अंकुरित नहीं होता। मनरूप ज़मीन को तैयार करने के लिए ब्रह्मचर्य अति आवश्यक है। इसके बिना होता नहीं। भय दूर करके भरोसे के लिए ये सब बातें हैं। ठाकुर कुछ भी बाकी रखकर नहीं गए। भक्तों के लिए जो-जो प्रयोजन होता है, सब देकर गए हैं।

श्री म *(सहास्य, डॉक्टर के प्रति)*— यही पुस्तक (कथामृत) जब निकली थी, अनेकों ने कितना अभिशाप किया था। यहाँ तक कहा था, इस व्यक्ति को मरने का भी डर नहीं है, इतने भले जन के संग में रहकर भी! उन्होंने सोचा था, ये सब मिथ्या बातें हैं। हमारी बनाई हुई बातें हैं— ठाकुर की बातें नहीं। अनेकों को असुविधा हुई थी कि ना ये सब बातें प्रकाश में आने पर! सब वे बतला गए थे पहले से ही।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— विवाह की व्यवस्था क्यों की भगवान ने? इसे तो फिर मनुष्य ने नहीं बनाया। उन्होंने ही किया है। क्यों? क्योंकि, सब एकदम त्याग नहीं कर सकते। जभी विवाह करके त्याग करो क्रमश:। यह व्यवस्था भक्तों के लिए है— सबके लिए नहीं। अन्य लोगों को उनकी सृष्टि-रक्षा के कार्य में लगाना है। भक्तों ने हो सकता है चेष्टा तो की। ब्रह्मचर्य-रक्षा कर सके नहीं, टूट गया। ठाकुर की यह बात सुनकर फिर और नूतन उद्यम से चेष्टा करेगा। चेष्टा करते-करते अन्त में कृतकार्य होगा। तब सम्पूर्ण त्याग हो जाता है। उन्हें ही कहते हैं धैर्यरेता।

महिमाचरण से कहते हैं यही बात— क्रमश: त्याग की बात। 'तुम लोगों को संसार-त्याग की क्या आवश्यकता... यह तो सुन्दर, किले में से युद्ध है।' एकदम कर सकेगा नहीं, जभी क्रमश: त्याग करने के लिए कहते हैं। और फिर संग-संग ही highest ideal (उच्चतम आदर्श) को भी सामने रख दिया— शुकदेव ऊर्ध्वरेता। यह तो है अन्तिम बात। इस आदर्श को आँखों

के सामने रखने से ही तो फिर ऊपर उठ सकेगा। अपने footing (आश्रय-स्थान) से आदर्श की ओर लक्ष्य रखने पर, पीछे अपनी चेष्टा और उनकी कृपा से, थोड़ा अधिक भोग हो जाने पर क्रमशः भगवान की ओर बढ़ेगा। उसके पश्चात उनका दर्शन होगा। एक पथ में सम्पूर्ण त्याग, बाहर-भीतर दोनों त्याग। दूसरे में धीरे-धीरे त्याग, प्रथम भीतर त्याग फिर बाहर। इस प्रकार माँ के समान स्नेह से कौन हमें उपदेश देगा, ठाकुर को छोड़? माँ किसी भी बच्चे को छोड़ नहीं सकती— पंगु जो है उसकी भी रक्षा करती हैं। कोई एकदम, कोई धीरे-धीरे उठेगा।

श्री म क्षणकाल कुछ सोचते हैं। पुनः बातें करते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ठाकुरदादा साधु होकर निकल गए थे। और फिर वापिस आ गए। जभी तो पूर्व से ही उसको वैराग्य की, संन्यास की बाधाएँ क्या हैं, वही बताए जा रहे हैं। (निकलने में, चले जाने में) कुछ शीघ्रता करने के कारण ठहर नहीं सके, लौट आना पड़ा घर में। किन्तु ठाकुर ने सावधान कर दिया था। कैसी अन्तर्दृष्टि!

अब रात्रि साढ़े नौ। श्री म अपने मन-मन में हँस रहे हैं। आज का सारा समय भक्तों के संग में हास्यरस में बिताया। बीच-बीच में गम्भीर हो रहे हैं। अब पुनः मजाक आरम्भ हुआ।

श्री म मजाक और हास्य से कहते हैं, रमणीबाबू, आपका 'भात तो ठण्डा हो रहा है।' बात के साथ-साथ ही हँसी का ऊँचा ठहाका उठा— समुद्र मानो तरंगायित हो गया। हँसी तो फिर थमती ही नहीं, कुक्षि में व्यथा होने लगी। उच्च से उच्चतर हँसी— फिर और हँसी की तरंग कई मिनट तक चलती रही। अब थमी है— किन्तु मुखमण्डल पर हँसी की क्षीण-रेखा दिखाई पड़ती है।

श्री म *(सहास्य, भक्तों के प्रति)*— भात ठण्डे होने की बात पर और एक बात स्मरण हो आई। *(और फिर हास्य)*

सीन लंका में हो रहा है। श्रीमन्त को श्मशान में ले जा रहे हैं काटने के लिए। जो काटेंगे उनको सात राजाओं का धन दिया गया था

जिससे वे थोड़ा अवसर दे दें कि इस बीच माँ को पुकार लें। श्रीमन्त देवी का वरपुत्र था बड़ा भक्तिमान। माँ का चिन्तन करेगा *(फिर और हँसी)*, वे कहते हैं *(हँसी)* 'शीगग्गीर करो शीगग्गीर करो।' *(दीर्घ हास्य)*। श्रीमन्त बोले, 'तुम्हें सात राजाओं का धन दिया है, मुझे कुछ समय दो।' *(सहास्य)* वे कहते हैं, 'तुम शीगग्गीर करो— इतनी देर में तो हम पचास सिर काटकर फेंक देते।' *(सहास्य)* पुकार लो जल्दी-जल्दी। हमारा भात ठण्डा हो रहा है।

(सबका उच्च हास्य और श्री म का गम्भीर विलम्बित उच्च हास्य)। अनेक क्षण पश्चात् हँसी थमी— जैसे झड़ के पश्चात् सब शान्ति...। श्री म ने अबकी बार गम्भीर भाव धारण कर लिया। बोले,

"भात तो ठण्डा हो गया— किन्तु जीवन की कितनी बड़ी problem solved (समस्या का समाधान) हो गया।"

श्री म वृद्ध, उस पर आज फिर अस्वस्थ। किन्तु बालसुलभ निर्मल आनन्दोच्छ्वास कहाँ से आ गया? यही है क्या परमहंस-परिवार की बुनियादी चाल— तन से मन को उठा लेना— तूणीर में से तीरवत् इच्छानुसार!

●●●

कलकत्ता, 24 जनवरी, 1924 ईसवी;
10वाँ माघ, 1330 (बंगला) साल बृहस्पतिवार।

षष्ठ अध्याय

मन से त्याग और सर्वत्याग
महात्मा गान्धी

(1)

सूर्य अभी भी निकले नहीं। श्री म उपनिषद्-पाठ करते हैं— दक्षिणपूर्व कोण में मॉर्टन स्कूल की चार तल की छत पर बैठे हुए। जगबन्धु, विनय, छोटे अमूल्य, छोटे जितेन क्रमशः आकर बैठे। 'ब्राह्मधर्म'* से वैदिक सुर में पढ़ते हैं—

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥
अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्षत्।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति॥

इत्यादि।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— प्रश्न हुआ है, संसार में किस प्रकार रहना होगा? जिसने प्रश्न किया है, उसको संसार के सम्बन्ध में कुछ अंश ज्ञान हुआ है— समझ गया है यह बड़ी मुश्किल का स्थान है। यहाँ पर मन सर्वदा नीचे भोग की तरफ ही जाता है और परिणाम होता है कष्ट। गुरु-मुख से सुना है ईश्वर सुखस्वरूप हैं। उनके दर्शन करके सुख की ही प्राप्ति होती है— जिस सुख के संग दुःख जड़ित नहीं है वही सुख प्राप्ति ही मनुष्य जीवन का उद्देश्य है। इन्हीं दो आकर्षणों में पड़कर श्रीगुरु की शरण ली है। जभी प्रश्न हुआ किस प्रकार चलने से उद्देश्य सिद्ध हो, ईश्वर-दर्शन हो, चिरसुख-लाभ हो। ऋषि

* यह एक पुस्तक है। इसमें उपनिषदादि शास्त्रों का संग्रह है।

ने उत्तर दिया, 'ईशा वास्यम्' अर्थात् ईश्वर-दृष्टि करो संसार में। 'इदं सर्वं' इत्यादि का अर्थ है— संसार अनित्य, दो दिन का। और फिर संसार मन को विषय में बद्ध करता है। 'ईश्वर सत्य, जगत अनित्य', यही स्थिर हुआ। अनित्य संसार में अर्थात् माया के इलाके में रहते हुए किस प्रकार मायातीत हुआ जाए— कैसे उनका दर्शन हो? जभी उपाय बताते हैं, 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा, मा गृधः कस्यस्विद्धनम्'— अर्थात् यहाँ का भोग मत लो, वैसा हो जाए तो कर सकेगा। संसार कामिनी-काञ्चनमय है। यहाँ का भोग न ले तो बड़ी वस्तु-लाभ कर सकता है— भूमा, ब्रह्मानन्द।

''अनासक्त होकर रहना। ठाकुर ने बताया है, मन से त्याग करोगे। उनको आत्मसमर्पण करना चाहिए— आँधी की झूठी पत्तलवत्। मन से क्या त्याग होता है? एकदम ही त्याग की बात कहने से भय पाएगा, जभी कहते हैं, मन से त्याग करोगे। यह जैसे केले के भीतर कुनीन देना है। मन से त्याग करने पर जब रह सकेगा, तब बाहर का त्याग भी हो जाएगा। किन्तु प्रथम कहने से सुनेगा नहीं, तभी बताया— मन से त्याग करो। यही है धीरे-धीरे (gradual)— त्याग का पथ।

''चैतन्यदेव ने किसी-किसी भक्त से कहा था— अनासक्त होकर विषयों का यथायोग्य भोग करो। यह है एक middle stage (मध्य पथ)। भोग और सम्पूर्ण त्याग के बीच में यह है। रघुनाथदास ने यही उपदेश कुछ दिन पालन किया। अन्त तक कर सके नहीं। एक दिन भाग लिए। एकदम पुरी में महाप्रभु के पास जा उपस्थित हुए। राज ऐश्वर्य और परमासुन्दरी युवती स्त्री— सब छोड़कर संन्यासी हो गए।

''दो-एकजन को घर में भी रखते हैं कभी-कभी, मन से सब त्याग करवाकर लोक-शिक्षा के लिए। किन्तु बड़ा कठिन है। यही है योग-भोग का पथ— सैकण्ड क्लास। भोग लेते ही बद्ध हो गया। वह अपनी उपार्जित हो, अथवा अन्य की दी हुई वस्तु ही हो। 'कस्यस्वित् धनम्' अर्थात् अन्य किसी के धन का लोभ नहीं करेगा। तो फिर क्या अपने धन का लोभ करेगा— अर्थात् भोग करेगा? नहीं, वह भी नहीं। अपना या पराया— सब ईश्वर का है, स्मरण रखना होगा। मैं सेवक हूँ, साधारण आहार और वासस्थान का हक है, इससे अधिक नहीं। जैसे बड़े व्यक्ति

के घर की दासी रहती है। जभी ठाकुर ने यही बात भक्तों से कही थी। स्थान, काल, अवस्था-अनुसार जितने के न होने से न चले, उतना लेना।

"और एक है योगी की श्रेणी— उनका केवल योग, भोग नहीं। मधुमक्खीवत् केवल मधु खाएगा फूल पर बैठकर— जैसे नारद, शुकदेव। 'संसार अनित्य' बोध हो जाने पर क्यों जाएगा वहाँ रहने? क्या संकट पड़ा? इस अग्निकुण्ड में ज्वलन्त दावानल में क्यों छलाँग मारने जाएगा? वे लोग एकदम त्याग करके आत्मचिन्तन करेंगे। तो भी किसी-किसी के भीतर खोखला करके संसार में (गृहस्थ में) रख देते हैं— उनके अपने काम के लिए; जैसे जनकादि।"

जनैक भक्त— योगीजन भी आहार, वासस्थान की चिन्ता करते हैं। तो फिर कैसे भोगत्याग हुआ? और फिर असुख-विसुख में देह के सुख की आवश्यकता होती है।

श्री म— वही तो बताया गया है— जितना देह-धारण के लिए आवश्यक है, उतना ही लेना, इससे अधिक नहीं। असुख-विसुख में देह-सुख में बद्ध नहीं करता। उनका यह भोग भोगों के मध्य में नहीं है। देह रहने से वैसा रहता ही है, दोष नहीं। किन्तु हमारा गृहस्थियों का, भोग में प्रायः सोलह आने मन है। योगियों का हो भी तो एक आध पैसा। और फिर उनका दर्शन होने पर बिल्कुल ही मन देह में नहीं रहता— मात्र दिखाई ही देता है कि है। उनके लिए तब ईश्वर को ही चिन्ता रहती है— 'योगक्षेमं वहाम्यहम्' (गीता 9 : 22)। वे अन्य लोगों के हृदय में श्रद्धा-भक्ति रूप में उदित होकर उनकी देह-रक्षा करते हैं। ठाकुर ने इसी दो श्रेणी के लोग तैयार किए हैं। नरेन्द्र के द्वारा योगी-श्रेणी की सृष्टि की है। और फिर कई एकजनों को गृह में भी रखा है। सबको ही त्याग करना होगा कामिनी-काञ्चन एक दिन। इसके बिना हुए उनका दर्शन नहीं होता। योगियों का पथ direct (सीधा), और योग-भोग का पथ gradual (क्रमशील) (क्रमशः)। वे कहते हैं और एक श्रेणी है— भोगी। आकार में मनुष्य तो हैं चाहे, किन्तु कार्य पशुवत्। भगवान में विश्वास नहीं, खाली भोग ही लेकर पड़े हैं पशु की तरह। उस देश में है न्युहेगेलियन। वे कहते हैं, ईश्वर ही जब सब होकर रह रहे हैं, तब जितना कर सको भोग करो— enjoyment with vengeance *(सबका हास्य)*।

श्री म *(छोटे जितेन के प्रति)*— ईश्वर अचल अटल सुमेरुवत्। और फिर मन की अपेक्षा भी वेगवान्। मन एक निमेष में सारा जगत घूम आ सकता है। ईश्वर इस मन से भी क्षिप्रगामी। अर्थात् वे सर्वव्यापी। ऐसा स्थान नहीं है, जहाँ पर वे नहीं हैं। मन की गति time and space (स्थान और काल) के भीतर रहती है। वे तो इसके भी पार हैं, अर्थात् इसका कारण हैं। आज यही स्वप्न देखा— वे अचल, अटल और फिर मन से भी चञ्चल हैं। यही जो breathing (श्वास-प्रश्वास) ही होता है— कैसे होता है? वे भीतर हैं, इसी कारण होता है।

•

बड़े जितेन का चतुर्थ पुत्र आया है, संग में एक चचेरा भाई— वयस आठ-नौ वर्ष। ये भी श्री म की उपनिषद्-व्याख्या सुन रहे हैं। बड़े जितेन ने उनके हाथ कुछ मुनक्का और एक नया हाथ का पंखा भेजा है। छोटा लड़का भक्तों को पंखे से हवा करता है— लड़के का कई मास हुए पितृ-वियोग हुआ है।

श्री म *(लड़के के प्रति)*— हम क्या पढ़ रहे हैं? वेद का नाम सुना है? यह वही वेद-उपनिषद्। भारतवर्ष के इतिहास में पढ़ा है ना वेद के बारे में, यह वही है। *(पुस्तक को बालक के हाथ में देकर)* यह देखो। तुम लोग भी बड़े होकर पढ़ोगे। इसमें है मनुष्य मरकर ईश्वर के पास जाता है। किसके पास जाता है?

बालक— ईश्वर के पास।

श्री म— क्यों जाता है? क्योंकि ईश्वर मनुष्य के सबसे अधिक अपने हैं, जभी उनके पास जाता है। अच्छा, हम किसके पास जाते हैं? अपने जन के पास जाते हैं— माँ, भाई, बाप, ताऊ जी, इनके पास। उसी प्रकार ईश्वर ही मनुष्य का अपना जन है। जभी मर कर उनके पास जाता है। हमारे साथ (उनका) मिलन होगा, इसके पश्चात्।

••

(2)

अब सन्ध्या हो गई। श्री म चारतल की छत पर बैठे हैं— चैत्रमास के 'उद्बोधन' के पन्ने पलट रहे हैं। दो नए भक्त आए हैं। प्रकाश के आते ही वे बन्द करके ध्यान करने कुर्सी पर उत्तरास्य बैठ गए। आज भाटपाड़ा के भक्तगण भी आए हैं। बसन्त, भीम, बलाइ, माखन, शची और सुशील आए हैं। लक्ष्मण, छोटे अमूल्य, छोटे जितेन, बड़े जितेन, जगबन्धु आदि पहले से ही हैं। अल्पक्षण के बीच डॉक्टर और विनय आ गए। अब सवा सात बजे हैं। श्री म बातें करते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ठाकुर की एक-एक बात word of meaning (गम्भीर अर्थपूर्ण) है। मेरा ऐसा स्वभाव हो गया है कि अन्य सब पढ़ नहीं सकता, उनकी बात के अतिरिक्त। देखिए ना, साधु किसे कहते हैं! जैसे मधुमक्खी फूल बिना नहीं बैठेगी— अन्य मक्खी दूसरी वस्तु पर भी बैठती है— वैसे ही साधु ईश्वर बिना कुछ भी नहीं लेगा। और एक कहा था— स्वाति नक्षत्र का 'स्फटिक जल' छोड़ चातक अन्य जल नहीं पिएगा। गंगा, यमुना, सिन्धु— सब जल से हों भरपूर, किन्तु यह जल पिएगा— 'स्फटिक जल' अर्थात् ईश्वर चाहिए।

(स्वगत)— ''शब्दजालं महारण्यं चित्तभ्रमणकारणम्''। महारण्य (घना जंगल) मनुष्य को बाहर निकलने नहीं देता, वैसे ही शास्त्र आदि अधिक पढ़ने से गड़बड़ हो जाती है। मन confused (संशयाच्छन्न) हो जाता है। गुरुमुख से सुनना और कार्य करना चाहिए। उसके बिना शास्त्र का अर्थ समझ में नहीं आता— clear idea (चिन्ताधारा निर्मल) नहीं होती।

•

श्री म *(माखन के प्रति)*— Concrete case (स्थूल अवस्था) देखना चाहता है, मनुष्य। Abstract idea (सूक्ष्म धारणा) ही concrete form (स्थूल रूप) ले लेता है। त्याग-त्याग हजार बोलो, हृदयंगम नहीं होगा। जो सब त्याग करके दूर खड़ा है, उसे देखने से ही हो जाता है। जभी मैं

नारायण आयंगर की बात ही चिन्ता कर रहा हूँ कई दिन से। कितना बड़ा त्याग किया है। इन्हें मिलना चाहिए। अपना ही कल्याण है। हिमालय के किसी स्थान में शीघ्र चले जाएँगे।

''और फिर किस प्रकार सब provide (व्यवस्था) करके आए हैं। परिवार के दाल–भात का प्रबन्ध कर दिया है। बंगलोर में ठाकुर का मठ कर दिया है। उस पर फिर endowment (स्थायी दान) किया है, जिससे सौ रुपया महीना आमदनी हो सके। किसी को कष्ट में छोड़कर नहीं आए। सब ठीक–ठीक करके आए हैं। कितना बड़ा आधार! ठाकुर ऐसे दो–एक जन तैयार करते हैं, लोकशिक्षा के लिए। याद रखें, ये अब world (जगत) में one of the greatest men (श्रेष्ठ व्यक्तियों में से अन्यतम) हैं। इन्हें देखकर अन्य लोग क्या सीखेंगे ?— शीघ्रातिशीघ्र परिवार की व्यवस्था करके उनको निश्चिन्त मन से पुकारने की चेष्टा करेंगे। परिवार को क्या सारा जीवन देखना होगा ? क्या मुसीबत पड़ी है।''

क्षणभर श्री म चुप रहे। पुन: बातें करते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ऐसा काण्ड! ठाकुरबाड़ी* के निकट एक डेढ़ वर्ष का लड़का मर गया। माँ का ऐसा क्रन्दन कि सुनकर मैं भी रोने लगा, मैंने लड़के को भी नहीं देखा, माँ को भी नहीं। देखिए, कैसा यन्त्र उन्होंने बनाया है। स्नेह द्वारा जगत को बाँधकर रखा हुआ है। इस स्नेह–बन्धन को छिन्न करना क्या बालकों का खेल है ? जभी कहता हूँ, नारायण आयंगर कितने बड़े महान व्यक्ति हैं।

''पैसा (अर्थ) भी बन्धन का कारण है। चैतन्यदेव पैसे वाले व्यक्ति से बात नहीं करते थे। प्रतापरुद्र के संग मिले नहीं। बार–बार कहने पर झट उठकर चल दिए अलालनाथ की तरफ। उनका तो और कोई भी बन्धन नहीं— कहते ही चल दिए। हम गए थे अलालनाथ, पुरी से ग्यारह मील है— खूब निर्जन स्थान!

---

* ठाकुरबाड़ी— अब कथामृत भवन, 13/2 गुरुप्रसाद चौधरी लेन, कलकत्ता। अब इसका नाम ''कथामृत भवन'' है।

''महात्मा गान्धी जी के असहयोग आन्दोलन से समस्त भारत में एक नव जागरण की सृष्टि हुई है। ब्रिटिश साम्राज्य के द्वितीय फौजदारी बैरिस्टर, बंगाल के सी०आर० दास (चितरंजन दास) सर्वस्व त्याग करके स्वराज-लाभ के लिए व्रती हुए। इलाहाबाद के श्रेष्ठ वकील मोतीलाल नेहरू भी व्यवसाय त्याग करके उसी कार्य में व्रती हुए। उन दोनों ने स्वराज्य पार्टी-गठन करके प्रादेशिक और केन्द्रीय विधान सभा में प्रवेश किया है। गान्धी जी का इसमें अवश्य ही मत नहीं है। उन्होंने बंगाल की ब्रिटिश सरकार को विधान सभा में हरा दिया है। कलकत्ता में इसीलिए बड़ी उत्तेजना है। भक्त सभा में भी उसकी झाल आई है।''

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— इनमें कितना जोर, spirituality (आध्यात्मिक शक्ति) है— on the background (पीछे) और ancient civilisation (प्राचीन सभ्यता) है। वे क्या नहीं हराएँगी? उनका जोर कितना! वे (ब्रिटिश) भोग लेकर पड़े हैं, उनको भय है। उनकी civilisation (सभ्यता) material (भोग) प्रधान है। अहा! दास महाशय की बातें पढ़ने की इच्छा होती है— वे बंगाल कौंसिल में जो बोले हैं। समाचार-पत्र यदि मणिबाबू के घर से लाया जाए!

एक भक्त अखबार लेने नीचे गए। पास के मैस में सुना सन्ध्या का यह संवाद 'न्यू एम्पायर' में निकला है, अन्य पेपर में नहीं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— गान्धी जी को cite (उद्धृत) करते ही जाना गया कि spirituality (आत्मतत्त्व) को cite (उद्धृत) किया है। यह जो कुछ हो रहा है— यह है spirit (आत्मचैतन्य) के संग (matter) जड़ का विवाद। इन (भारतीयों) के संग उन (पाश्चात्यों) का नहीं चल सकेगा। सैन्ट्रल लेजिस्लेटिव असेम्बली के प्रधान ने बैन्क्वेट (भोज सभा) में, नौनकोओपरेशन (असहयोग) आन्दोलन के सम्बन्ध में कहा था— It is unique in the history of the world (यह जगत के इतिहास में अद्वितीय है)। यह देश त्याग का देश है कि ना! तभी यहाँ का सब ही ईश्वर को लेकर है। किसी देश में किसी ने सुना है कि राजनीति का विवाद करने के लिए

ईश्वर विश्वासरूप महास्त्र लिया है? इस आत्मशक्ति के पास ब्रिटिश की कमान हीनबल हो जाएगी। यह क्या मनुष्य ने किया है! ईश्वर ने ही इस धर्मप्रस्थ भारतवर्ष की रक्षा के लिए गान्धी जी महाराज के द्वारा यह अभिनव पथ निकाला है। भारत की जय निश्चय है। कोई इसे रोक नहीं सकेगा। ठाकुर आए ही इसीलिए हैं कि भारत को उठाएँगे। भारत के उठने पर ही समस्त जगत की शान्ति है।

●●

(3)

रात्रि नौ। कथामृत-पाठ हो रहा है। श्रीरामकृष्ण जन्मोत्सव-दिवस में विजय केदारादि के साथ पञ्चवटी में बैठे हैं। आनन्द से भक्तों को उपदेश देते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(विजयादि के प्रति)*— स्त्री-सुख जिसने त्याग किया है, उसने जगत-सुख त्याग किया है। ईश्वर उसके अति निकट हैं। यही कामिनी-काञ्चन ही आवरण है। तुम लोगों की तो इतनी बड़ी-बड़ी मूँछें हैं, तब भी तुम उसी में पड़े हो... गीता, भागवत, वेदान्त सब उसके भीतर हैं!... जिस पर भूत चढ़ा होता है वह जान ही नहीं पाता कि मुझ पर ही भूत चढ़ा हुआ है। वह समझता है कि मैं तो ठीक हूँ... जिससे भी पूछता हूँ, वही कहता है— जी महाराज, मेरी स्त्री बहुत अच्छी है। एक व्यक्ति की भी स्त्री मन्दी नहीं है! *(सबका हास्य)*।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— यह है hard unpalatable truth (कठोर अप्रिय सत्य)! कौन लेता है यह diognosis और prescription (रोगनिर्णय और व्यवस्था)? ''हक् कथा बोलले बन्धु बेजार!'' (सत्य बात से मित्र दुःखी) यह बात कितने जन समझ सकते हैं? पालन करना तो दूर की बात। कभी-कभी naked truth (नग्न सत्य) कह डालते— कल्याण के लिए। इसे बिना बताए रोग जो ठीक नहीं होगा। सर्जन जब छुरी चलाता है तब रोगी चीत्कार करके गाली-गलौच देता है। और फिर आराम हो जाने पर डॉक्टर के

घर भेंट ले जाता है और कहता है, आप मेरे प्राणदाता हैं।

> **श्रीरामकृष्ण** *(भक्तों के प्रति)*— तुम लोग परस्पर प्रेम करते रहना तभी मंगल होगा।... ईश्वर में अधिक मन देकर थोड़े मन से संसार का काम करोगे। साधु का मन ईश्वर में बारह आना और काम में चार आना।

श्री म— गृह को आश्रम बनाकर रहने के लिए कहते हैं। यही है उपाय। सर्वदा उनकी पूजा-पाठ, नाम-कीर्त्तन होगा। और फिर साधु को भी उपाय बता रहे हैं— पढ़ो तो!

> **श्रीरामकृष्ण**— संन्यासी नारी का चित्रपट तक भी नहीं देखेगा। ऐसा कठिन नियम। रमणी का संग तो करेगा ही नहीं— लड़कियों के संग बातचीत तक नहीं करेगा। संन्यासी के लिए कामिनी और काञ्चन ऐसे हैं, जैसे सुन्दरी के लिए उसके शरीर की सड़ी-गन्ध। उस गन्ध के कारण वृथा सौन्दर्य। कहा था, मारवाड़ी ने मेरे नाम रुपया लिखना चाहा और मथुर ने जमीन लिखनी चाही, वह मैं नहीं ले सका।

श्री म— स्वयं पूर्ण संन्यासी हैं कि ना! तभी उनका आचरण है, संन्यासी का धर्म। जभी अपनी बात बताकर संन्यासी का कर्त्तव्य बता रहे हैं। किसी भी ओर को तो छोड़ा नहीं। संन्यासी अपना आदर्श ठीक रखे तो अपना भी कल्याण है, जगत का भी कल्याण है। संन्यासी जगद्गुरु— उसका आचरण लोक-शिक्षा के लिए है।

●●●

कलकत्ता, 29 मार्च, 1924 ईसवी;
15वाँ चैत्र, 1330 (बंगला) साल शनिवार।

सप्तम अध्याय

पारसी भक्त के संग दक्षिणेश्वर-मन्दिर में, और काशीपुर उद्यान में श्री म

(1)

रविवार। श्री म दोतल के बरामदे में बैठे हैं— सीढ़ी के सामने बैंच पर दक्षिणास्य। नीचे प्रांगण में मॉर्टन स्कूल की साप्ताहिक सत्प्रसंग सभा का आयोजन हो रहा है। गत रात्रि बंगाल असेम्बली में ब्रिटिश सरकार पक्ष का पराजय संवाद पढ़ने के लिए श्री म व्याकुल हो गए थे। इसीलिए आज बहुत सवेरे विनय और जगबन्धु संवाद पत्र के अनुसन्धान में निकल पड़े थे। उन्होंने श्री म के हाथ में एक पत्र लाकर दिया। वे मनोयोग पूर्वक पढ़ते हैं। अब प्रात: सात। शचीनन्दन आए, फिर मोहनवासी और उनका भाञ्जा। कुछ पीछे गदाधर आश्रम के महन्त स्वामी कमलेश्वरानन्द आए— संग में एक भक्त शिक्षक हैं। 'इनका मिष्टिमुख कराओ'— यह कहकर श्री म समागत भक्तों के लिए श्रीरामकृष्ण का कथामृत परिवेशन करने लगे।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— साधु-संग छोड़ हमारे लिए उपाय नहीं। हम गृहस्थ में रहते हैं कि ना! जभी साधु-संग दरकार। यह जैसे right (ठीक) घड़ी के संग wrong (गलत) घड़ी मिलाना है। साधुओं की घड़ी ठीक है। केवल इनके पास आना-जाना करने से ही चैतन्य हो जाता है।

अभी बातें पूरी भी न हुईं थी कि बम्बई के भक्त श्री जीनवाला अपनी पत्नी सहित आ उपस्थित हुए। ये विख्यात पारसी एटोर्नी हैं। उनको

लेकर आए हैं डॉ० डी० मेलो। ये गोआ निवासी भारतीय क्रिश्चियन हैं। अब गृहस्थ-परित्याग करके बेलुड़ मठ में वास करते हैं। नाम है ब्रह्मचारी हरिदास। इनका उद्देश्य है, श्री म को संग लेकर दक्षिणेश्वर का मन्दिर-दर्शन करेंगे। अब प्रात: आठ बजकर सात मिनट हुए हैं। मध्याह्न में दक्षिणेश्वर में रहना होगा, इसीलिए श्री म ने एकजन सेवक को संग में ले लिया। सब नीचे आकर मोटर में चढ़े। श्री म पीछे के आसन पर दायें हाथ बैठे, बायें हाथ जीनवाला दम्पति। सामने ब्रह्मचारी हरिदास और सेवक। अमहर्स्ट स्ट्रीट द्वारा गाड़ी बागबाजार में आ गई। 'सन्देश' और रसगुल्ले लिए गए— श्री श्रीमाँ काली और ठाकुर के भोग के लिए। काशीपुर, बराहनगरबाजार, रामराजातला होकर (बोरे बनाने वाला कारखाना) चटकल के पास से गाड़ी आलमबाजार के मोड़ पर आ गई दक्षिणेश्वर।

दक्षिणेश्वर-मन्दिर। कैसा मनोरम स्थान! कितना सुन्दर और पवित्र! सम्मुख पतितपावनी जाह्नवी! उसके ही पूर्वतट पर सुविस्तृत उद्यान, उसमें मन्दिर। माँ काली, भवतारिणी, राधाकृष्ण और द्वादश शिव के पृथक्-पृथक् मन्दिर बने हुए हैं। इसी उद्यान में नवयुग के अवतार जगद्गुरु श्रीरामकृष्ण का वासगृह, उनकी तपोभूमि पञ्चवटी और विल्वतल विद्यमान हैं। प्राय: नित्य जगत के सुदूर प्रान्तों से इस पवित्र भूमि का दर्शन करने बहुत लोग आते रहते हैं— जाति-धर्म-भेद रहित। मन्दिर-प्रतिष्ठा के दिन से* लेकर श्रीरामकृष्ण ने प्राय: तीस वर्ष इस मन्दिर में वास किया। कितनी कठोर तपस्या की— दीर्घ बारह वर्षों तक। फिर कितने ही रूपों में कितनी ही बातों से श्री भगवान का बहुविध दिव्य विलास उन्होंने उपभोग किया था। इसी स्थान पर ही अखण्ड सच्चिदानन्द, वाक्यमन के अतीत जो हैं, उन्हीं परब्रह्म के इन्होंने (ठाकुर ने) दर्शन किए। उनके साथ जगदम्बा रूप में— स्नेहमयी जननी रूप में सर्वदा दर्शन, स्पर्शन और आलापन किया। स्वयं परमेश्वर होते हुए भी मातृ-अंक में शिशुवत् जगन्माता के आश्रय में रहकर भक्त की भाँति सारा जीवन बिताया। परब्रह्म के विलास रूप— शिव, काली, राधाकृष्ण, सीताराम

---

* स्नान यात्रा, 31 मई 1855 से 1885 तक।

प्रभृति के दर्शन करके उनके संग आलाप और आनन्द किया। ईसा, मूसा और मुहम्मद रूप यहाँ पर ही दर्शन हुए। इस पवित्र भूमि पर श्रीरामकृष्ण ने जगत के प्रधान धर्ममतों का साधन करके सिद्धि लाभ किया। हिन्दुओं के शाक्त, वैष्णवादि शाखाप्रशाखा मतों का साधन भी यहाँ पर ही हुआ। और क्रिश्चियन और मुसलमान मतों के साधन में भी सिद्धि लाभ किया। जभी यह स्थान सब धर्मावलम्बियों के निकट अति पवित्र है। यह स्थान नवयुग का नवीन तीर्थ है— अध्यात्म जगत में जैसे डायनैमो। अनुकूल मनोभाव ले जाने पर आज भी भक्तगण ईश्वरीय शक्ति का आकर्षण अनुभव करते हैं। 'यतो मत ततो पथ'— धर्म समन्वय की यह उदार वैदिक वाणी इसी स्थान से ही पुनः निकली है। भविष्यत् जगत का सर्वजातीय सम्मिलन सूक्ष्म रूप से इसी स्थान से ही आरम्भ हुआ। यही स्थान ही अध्यात्म-अग्नि, ज्ञानघनमूर्ति श्री विवेकानन्द जी का उद्भवस्थल। जभी यहाँ का प्रति धूलिकण पवित्र, वायुमण्डल पवित्र, वृक्षलता पवित्र, पशुपक्षी, मनुष्य— सब ही पवित्र।

श्रीरामकृष्ण-पार्षद श्री म ठाकुर-घर के उत्तरदिशा के उद्यान में गाड़ी से उतरे। कैसा आश्चर्य, एक मुहूर्त में श्री म जैसे बालक हो गए— सत्तर वर्ष के ये वृद्ध। उन्होंने क्या श्रीगुरु रामकृष्ण का दर्शन करके शिशुभाव धारण कर लिया है ?

(2)

अब प्रणाम और प्रदक्षिणा आरम्भ हुए। श्रीरामकृष्ण के गृह के उत्तर के बरामदे के बाहर पूर्व-उत्तर-कोण में भूमिष्ठ होकर श्री म प्रणाम करते हैं। इसी स्थान पर खड़े होकर ठाकुर भक्तों को विदा किया करते थे, जभी वह पवित्र! ठाकुरघर में प्रवेश करके छोटी खाट के सम्मुख मध्यस्थल पर पुनः भूमिष्ठ प्रणाम किया। भक्तगण भी श्री म का अनुकरण करने लगे। अब उत्तर के दरवाजे से नहबत में आए। श्री जीनवाला से बोले, 'इसी गृह में हमारी जननी श्री श्रीमाँ वास किया करतीं थीं।'

इतने छोटे प्रकोष्ठ में कैसे मनुष्य रह सकता है, भक्तगण वही विचार करके विस्मय प्रकाश करने लगे।

श्री म आगे चल रहे हैं, पीछे जीनवाला, उनकी पत्नी, डॉक्टर डी० मेलो और सेवक। पञ्चवटी की ओर अग्रसर हो रहे हैं— बायें हाथ पश्चिम में गंगा। सब ही नहबत के घाट पर आकर खड़े हुए। भक्तों को लक्ष्य करके श्री म बतला रहे हैं,

''यही है हमारी माँ का स्नानघाट। अति भोर में स्नानादि समाप्त करके नहबत की सीढ़ी पर बैठकर वे माला जप किया करतीं। ठाकुर की सेवा के लिए ही केवल इतना कष्ट करके वे यहाँ पर रहतीं थीं।''

श्री म ने हस्त द्वारा घाटस्पर्श किया। तनिक उत्तर में अदूर गंगातीर पर एक ईंटों का बैठने का स्थान बना हुआ है, उस पर भी हस्तस्पर्श करके प्रणाम किया। और बोले,

''इसी आसन पर एक दिन ठाकुर समाधिस्थ हुए बैठे थे।''

अब पञ्चवटी में आए हैं।

पञ्चवटी के अश्वत्थ के चरण तले प्रणाम किया— पूर्वास्य होकर। भक्तों को बतलाया,

''इस पवित्र पञ्चवटी को श्रीरामकृष्ण ने अपने हाथ से रोपित किया है।''

ध्यान–गृह के द्वार पर भूमिष्ठ प्रणाम करके गृह–प्रदक्षिणा करते हैं। गृह कुण्डी लगी है। दक्षिण की खिड़की के नीचे स्थित सीढ़ी पर चढ़कर गृह के भीतर की शिवमूर्ति–दर्शन की। भक्तगण दर्शन करके प्रश्न करते हैं,

''यह शिवमूर्ति और अन्य सामान क्या ठाकुर के समय के हैं ?''

श्री म बोले,

''ना, ना। कुछ भी उनके समय का नहीं है— शिवमूर्ति भी नहीं। यह घर ही उनके समय का नहीं है। इस स्थान पर एक मिट्टी का घर था। ठाकुर यहाँ पर बैठकर ध्यान किया करते थे।''

खिड़की के निम्नस्थित छोटी सीढ़ी पर चढ़ते समय जीनवाला जूता उतारने

लगे। सेवक ने कहा,

''जूता उतारने का कोई भी प्रयोजन नहीं है, जूता लिए ही चढ़िए।''

श्री म ने बाधा देकर कहा,

''नहीं, यहाँ का सब पवित्र है।''

पुनः पञ्चवटी अर्धपरिक्रमा करके उत्तर की ओर चलते हैं। श्रीरामकृष्ण के आदिसाधनस्थल पुरातन वटवृक्ष-वेदिका के उत्तर-पश्चिम कोण में आकर खड़े हुए। वेदी पर मस्तक रखकर प्रणाम किया एवं भक्तों से कहने लगे,

''यहाँ पर मैंने एक दिन उनका दर्शन किया था। वे झाउतला से आ रहे थे। उनके पीछे गाढ़ा कृष्ण मेघाच्छन्न आकाश— दायें हाथ गंगाजल पर उसका प्रतिबिम्ब।''

पुरातन वटवृक्ष की उत्तर की ओर की एक मूल शाखा टूटकर पश्चिम में गंगा की ओर गिरी हुई है। उसके गंगातीर पर वेदी के उत्तर-पश्चिम कोण में एक नूतन वटवृक्ष की उत्पत्ति हो गई है। श्री म भग्न शाखा को दिखलाकर कह रहे हैं,

''यह शाखा आश्विन के तूफान में टूट गई थी (1864 ईसवी, 5वाँ आश्विन)।''

वेदिका की प्रदक्षिणा करके पूर्व की ओर आकर खड़े हुए। वेदी पर मस्तक स्पर्श करके प्रणाम के अन्त में भक्तों से बोले,

''यहाँ पर एक दिन ठाकुर बैठे थे। उनके पास बैठे थे विख्यात ब्राह्मभक्त केशवसेन।''

पञ्चवटी और पुरातन वटवृक्षवेदिका के मध्यस्थल में माधवीलता विद्यमान है। यह खूब मोटी हो गई है। श्री म उसको दिखलाकर कहने लगे,

''इसी माधवीलता को श्रीवृन्दावन से लाकर ठाकुर ने अपने हाथ से रोपण किया था। इसी स्थान पर ही— तब खुले स्थान पर— तोतापुरी रहते थे।

तभी ठाकुर सर्वदा यातायात किया करते। खूब पवित्र स्थान है।''

वेदिका पर चढ़ने के लिए दो सोपान हैं— एक उत्तर-पश्चिम कोण में, दूसरा दक्षिण-पश्चिम कोण में। द्वितीय के निकट आकर श्री म कहते हैं, ''इसी ऊपर की सीढ़ी पर एक दिन ठाकुर बैठे थे। विजयकृष्ण गोस्वामी और केदार चैटर्जी बायीं ओर बैठे। उनको उपदेश दिया था, उसी दिन उनका जन्मोत्सव था।''

जीनवाला *(श्री म के प्रति)*— क्या उपदेश दिया था?

श्री म *(सेवक के प्रति)*— क्या था वह भाई?

सेवक *(बंगला में श्री म के प्रति)*— 'कामिनी-काञ्चन ही बन्धन। यही सत्य को जानने नहीं देता। इसका त्याग करना चाहिए। जिसने स्त्री-सुख छोड़ा है, उसने जगत-सुख छोड़ा है। कहा था, तुम्हारी इतनी बड़ी-बड़ी मूँछे हैं किन्तु तुम लोग इसी में रह रहे हो। वेद, वेदान्त, गीता— सब इसके भीतर हैं। जिसको भूत ने पकड़ रखा है वह जान भी नहीं सकता कि उसे भूत चढ़ा हुआ है। जो माताल है, वह अपनी अवस्था समझ नहीं सकता। कामिनी-काञ्चन के नशे में मनुष्य डूबा हुआ है। *(सहास्य)* और भी कहा था, जिससे पूछता हूँ वह ही कहता है मेरी स्त्री अच्छी है। किसी की भी स्त्री बुरी नहीं *(श्री म का हास्य)*।' कल रात्रि को इसका पाठ हुआ था भक्तसभा में।

श्री म *(अंग्रेज़ी में, जीनवाला के प्रति)*— ठाकुर ने कहा था, बेटा, भोग लियो ना। वैसा होने पर संसार में बद्ध हो जाएगा। और सबको ईश्वर का रूप जानकर समझोगे। स्त्री है जगदम्बा का रूप, तभी उसकी सम्मान से पूजा करनी चाहिए।

''इसीलिए साधुसंग दरकार। कौन-सा सत्य है कौन-सा असत्य है साधु लोग ये जान गए हैं। ईश्वर सत्य संसार अनित्य, उन्हें यह बोध हो गया है। उनको जानने का यही है एक उपाय— सत्संग।

''ठाकुर यहाँ पर बैठे थे, और हम लोग यहाँ पर (ठाकुर की दायीं ओर) रास्ते पर खड़े सुन रहे थे।''

"मुझे लग रहा है— श्रीमती जीनवाला शायद थक गई हैं। वे चाहें तो यहाँ पर बैठकर विश्राम करें, हम उतनी देर में बेलतला देख आएँ।"

श्री म बिल्वतले आए, संग में सब ही हैं। वेदिका के ऊपर दक्षिण की ओर भूमिष्ठ प्रणाम किया। वेदिका के ऊपर पूर्व दिशा में एक स्थान को दिखलाकर बोले,

"एक दिन एक भक्त (श्री म) ठाकुर के उपदेश के अनुसार यहाँ पर पूर्वमुखी बैठे ध्यान कर रहे थे। कई घण्टे बीत गए। ठाकुर स्वयं भक्त को देखने के लिए आकर सम्मुख खड़े हो गए— यहाँ पर *(श्री म भूमिष्ठ होकर प्रणाम करते हुए)*। भक्त चक्षु खोलने पर विस्मयानन्द में मग्न हो गए— सम्मुख श्रीभगवान खड़े हैं। हृदय में जिनका ध्यान कर रहे थे, वे ही बाहर खड़े हैं। जभी तो यह स्थान अति पवित्र।

"इसी बेलतला पर तन्त्रमत के समग्र कठोर साधन किए थे उन्होंने। मनुष्य और जानवरों की मृतदेह चारों ओर— मध्य में बैठे ठाकुर। यह बहुत कठिन साधना है। ब्राह्मणी ने खूब सहायता की थी। मनुष्य मृत्यु को भूल जाता है कि ना! तभी मृतदेह लेकर बैठना, यही साधना— जिस से मन में यह स्मरण रहे। जभी तो ईश्वर में मन बैठेगा।

हंसपुकुर के दक्षिण घाट के चौंतरे पर आकर श्री म भक्तों के संग खड़े हुए। मध्यस्थल को दिखलाकर श्री म कहने लगे,

"यहाँ पर एक दिन ठाकुर खड़े थे— पास ही नरेन्द्र थे। 'नरेन्द्र का भविष्यत् अति महत् है', ऐसी ही सब बातें बता रहे थे। इसी पुकुर के जल से ठाकुर शौचादि किया करते थे।"

चौंतरे को स्पर्श करके प्रणाम करके कोठी में आए। पश्चिम की ओर के सोपान से बरामदे में चढ़े। सोपान के सम्मुख का कमरा दिखलाकर बता रहे हैं,

"इसी कमरे में ठाकुर ने अनेक वर्ष (16 वर्ष) वास किया था। मथुरबाबू के लड़के त्रैलोक्य आदि ऊपर ठहरते थे।"

उत्तर के फाटक द्वारा मन्दिर के आंगन में प्रवेश करके श्री श्रीराधाकान्त के मन्दिर के सोपानतले आकर श्री म खड़े हुए। सबने निम्न सोपान को हस्त द्वारा स्पर्श करके प्रणाम किया। तत्पश्चात् ऊपर चढ़कर बरामदे में विग्रह के सम्मुख भूमिष्ठ प्रणाम किया। चरणामृत धारण करके नीचे उतरकर मन्दिर की अर्धपरिक्रमा की। भक्तों को रन्धनशाला दिखाकर, बासन माँजने के घाट पर आ रहे हैं। दायें हाथ माँ काली का मन्दिर, बायें हाथ फाटक के बाहर गाजीतलापुकुर। इसी पुकुर के घाट को दिखलाकर बोलने लगे,

''यह बर्तन माँजने का घाट है। यहाँ पर माँ के बर्तन साफ किए जाते हैं जभी यह नाम है। और इसके निकट के गृह में माँ का भोग पकता है।''

(3)

श्री म भवतारिणी के सम्मुख गलवस्त्र होकर भक्तों के संग प्रणाम करते हैं— दायें हाथ पर माँ दक्षिणास्या। अब संग में लाया हुआ मिष्टान्न और रुपया माँ की सेवा में निवेदन किया। ठाकुर के भ्रातुष्पुत्र सेवक श्रीयुक्त रामलाल दादा और उनका पुत्र नकुल माँ के सेवक हैं। उन्होंने सबके हाथों में चरणामृत दिया, और ललाट पर सिन्दुर का तिलक अंकित कर दिया। नाटमन्दिर में प्रवेश करते हैं। श्री म बतला रहे हैं,

''यहाँ पर यात्रादि, भगवद्-गुणकीर्तन होता है।''

डॉक्टर डी० मेलो— ठाकुर की कुछ स्मृतिकथा इस स्थान के सम्बन्ध में हैं क्या ?

श्री म— हाँ (उत्तर की ओर से द्वितीय पंक्ति के मध्यस्थल वाला) इस पिलर को आलिंगन करके ठाकुर ने एक दिन प्रेमाश्रु वर्षण किए थे। यहाँ पर यात्रा* हो रही थी।

श्री म बलि के स्थान पर आ उपस्थित हुए। डॉक्टर डी० मेलो ने पूछा,

---

* यात्रा— धार्मिक गीति-नाटक।

''बिना बलि के क्या पूजा नहीं हो सकती?''

श्री म ने उत्तर दिया,

''हाँ, हो सकती है। वैष्णव लोग कभी भी बलि नहीं देते। एक बार वैष्णवों के हाथ मन्दिर की व्यवस्था का भार पड़ा था, तब बलि बन्द हो गई थी।''

बलि के स्थान से श्री म हाथ जोड़कर माँ का दर्शन करते हैं। विविध पुष्पसाज और अलंकार शोभिता देवी-प्रतिमा जैसे जीवन्त हैं। श्री म युक्तकर और निविष्ट-मन होकर दर्शन करते-करते देवी की ओर अग्रसर हो रहे हैं। नाट-मन्दिर के मध्यस्थल पर थोड़ा-सा पश्चिमांश में आकर खड़े हो गए। भक्तगण चारों ओर से घेरे हुए हैं। कथावार्ता हो रही है।

जीनवाला *(श्री म के प्रति)*— कहते हैं, श्रीरामकृष्ण देवी के दर्शन न पाने से अधीर होकर खड्ग लेकर निज का वध करने के लिए तैयार हुए थे— यह बात अपने कानों से सुनी है?

श्री म— ना, मैंने नहीं सुनी।

डी० मेलो— आपकी पुस्तक— 'कथामृत' में है!

श्री म— ना, इस पुस्तक में नहीं है। अन्य जन सम्भवत: लिख दें। मैंने नहीं लिखा।

डी० मेलो— ठाकुर निज ही ईश्वर। ईश्वर को देखने के लिए अधीर होकर निज को वध करना क्योंकर सम्भव हो सकता है?

श्री म— ठाकुर ने कहा था, जगन्माता विश्वरूप धारण किए हुए हैं। वही जगन्माता ही ठाकुर की देह में विद्यमान हैं। देवी ने स्वयं उनको कहा था, मेरे बहुरूपों में यह एक विशेषरूप है। ठाकुर ने भक्तभाव में ऐसे किया। वे स्वयं ही भक्त और भगवान दोनों ही हैं।

अब पश्चिम के सोपान से सबने प्रांगण में अवतरण किया। उत्तर की पंक्ति के शिव-मन्दिर के सोपान पर प्रणाम करके श्री म ने ठाकुरघर में प्रवेश किया। छोटी खाट के उत्तरपूर्वकोण में पश्चिमास्य होकर श्री म कुशासन पर बैठ गए। गंगा सामने, पश्चिम के दरवाजे से दर्शन हो रहा

है। श्री म के दायें हाथ दीवार के पास जीनवाला दम्पति दक्षिणमुखी होकर मादुर पर बैठे हैं। श्री म के पीछे सेवक और डी० मेलो। भाटपाड़ा के ललित और गदाधर मिल गए। श्री म के अभिप्राय के अनुसार सन्देश और रसगुल्ले प्रसाद— सब ठाकुर के सामने आनन्द से खाने लगे। श्रीमती जीनवाला ने नहीं खाया— साथ में घर ले जाएँगी। गृह में श्री रामलाल दादा ने प्रवेश किया, सब ने ससंभ्रम खड़े होकर उनकी अभ्यर्थना और नमस्कार करके बिठाया। उन्होंने श्री म के पास आसन ग्रहण किया। समस्त प्रसाद का आधा अंश पहले ही पृथक् करके दादा के लिए रखा हुआ था। अब वही प्रसाद दादा को उपहार दिया गया।

श्री म *(दादा के प्रति)*— गाइए ना, आप एक गाना। सुना दें इन्हें!

दादा गाते हैं—

चिन्तय मम मानस हरि चिद्घन निरञ्जन।
किवा अनुपम भाति मोहन मूरति भकत हृदय–रञ्जन।
नव रागे रंजित कोटि शशि विनिन्दित,
(किवा) बिजली चमके से–रूप आलोके पुलके शिहरे जीवन॥
हृदि कमलासने भज ताँर चरण
देख शान्तमने प्रेम–नयने अपरूप प्रिय दर्शन।
चिन्दानन्द रसे भक्ति योगावेशे हो–ओ रे चिरगमन॥

[भावार्थ— हे मेरे मन, हरि चिद्घन निरञ्जन का चिन्तन करो, वह मोहन मूर्ति भक्तों के हृदय को प्रसन्न करने वाली कैसी अनुपम ज्योतिर्मय है! नूतन प्रेम से रंगी हुई करोड़ों चन्द्रमाओं को निष्प्रभ करने वाली कैसी सुन्दर बिजली चमक रही है, जिसके आलोक में जीवन (मनुष्य) पुलकित होकर सिहरने लगता है। हे मन, हृदय के कमलासन पर उनके चरणों का भजन कर। और शान्तमन में प्रेम–नयनों से उस अपरूप प्रियदर्शन को देख। उस चिदानन्द रस में भक्ति–योग के आवेश में, हे मन! तुम चिरमगन हो जाओ।]

श्री म अंग्रेज़ी में अर्थ बतलाते हैं।

(4)

ठाकुर घर के उत्तर बरामदे में श्री म और रामलाल दादा खड़े हैं। उनके चारों ओर जीनवाला दम्पत्ति, डॉक्टर डी० मेलो, सेवक, ललित, गदाधर आदि हैं। श्री म पूर्वदक्षिणकोण दिखाते हुए श्रीयुक्त जीनवाला से कहते हैं,

''यहाँ पर एक दिन श्रीरामकृष्ण निश्चल समाधिस्थ हुए खड़े थे। और नरेन्द्र ने यही गाना गाया था। मेरा यही था प्रथम समाधि-दर्शन— सुख-दु:ख के अतीत निरवच्छिन्न आनन्दमय अवस्था।''

बरामदे की पूर्व की दीवार पर ठाकुर की अपने हाथ से अंकित मयूर-छवि-दर्शन करके सब ने विदा ली। गाड़ी फाटक की ओर आ रही है— शचीनन्दन ने तब बाग में प्रवेश किया।

आलमबाज़ार-मठ देखकर गाड़ी बराहनगर आई। सेवक ने डॉक्टर डी० मेलो के कान में कहा,

''वह है काशीपुर महाश्मशान— यहाँ पर ही ठाकुर की देह का दाह किया गया था।''

डॉक्टर ने श्री म से कहा,

''हम क्या एक बार काशीपुर-श्मशान दर्शन कर लें?''

श्री म गाड़ी के पीछे के आसन पर बैठे श्रीयुक्त जीनवाला के संग में आनन्द से नाना कथाएँ कह रहे थे। 'काशीपुर श्मशान'— ये शब्द कान में पड़ते ही श्री म के मुखमण्डल पर बिच्छू के डंक मारने की यन्त्रणा प्रतिबिम्बित हो उठी; प्रफुल्ल मुखकमल जैसे विषाद-मेघ से ढक गया। सेवक ने वह लक्ष्य कर लिया, डॉक्टर को पुन: यह प्रसंग उठाने के लिए मना किया; और बोले,

''पहले भी और एक बार ठीक ऐसी ही यन्त्रणा हुई थी। इन लोगों का है प्रेम का शरीर— विरह-व्यथा असहनीय हो जाती है, वैसी बात सुनकर।''

गाड़ी ने आकर काशीपुर-उद्यान में प्रवेश किया— दक्षिण फाटक से।

ठाकुर के वासगृह के पश्चिम की तरफ सब गाड़ी से उतरे।

•

श्री म ने **काशीपुर-मन्दिर** के सोपान पर प्रणाम किया। गृह पश्चिममुखी, द्वितल। उसके उत्तर में रन्धनशाला और उत्तर-पूर्व में अस्तबल हैं। इसी उद्यान में आजकल एक अरमेनियन क्रिश्चियन परिवार रहता है। ये अतिशय महत् लोग हैं। जो लोग इस स्थान का दर्शन करने आते हैं, उन्हें ये अनुमति दे देते हैं। इसी स्थान का दर्शन करने आज पृथ्वी के सुदूर प्रान्त से लोग आते हैं— अमेरिका, यूरोप, आस्ट्रेलिया आदि देशों से। इस मन्दिर में भगवान श्रीरामकृष्ण ने रोगशय्या पर दस मास वास किया था। इसी स्थान पर ही उनको महासमाधि-लाभ हुआ था। रोग के बहाने से अपने गृही और त्यागी अन्तरंग भक्तों को यहाँ पर ही आकर्षित किया। इसी स्थान पर ही श्री भगवान की सेवा को आश्रय करके श्रीरामकृष्ण संघ संघटित हुआ— बहुजन सुखाय, बहुजन हिताय। इसी उद्यान में ही श्रीरामकृष्ण ने कल्पतरु रूप धारण करके एक दिन* अधिकारी-अनधिकारी आगत जनगण को निर्विचार आत्मदर्शन करवाया था। इसी स्थान पर ही संदिग्ध नरेन्द्रनाथ (स्वामी विवेकानन्द) को अन्तिम शय्या पर कहा था, 'जे राम, जे कृष्ण, सेइ इदानीम् रामकृष्ण।' यहाँ पर ही नरेन्द्रनाथ को सर्वशक्ति प्रदान करके फकीर हो गए थे। यही उद्यान है आज पवित्र तीर्थभूमि।

डॉक्टर डी० मेलो ने अनुमति-पत्र भेजा। इस बीच श्री म सब को लेकर उत्तर की ओर के भृत्यशाला, रन्धनशाला आदि दर्शन करने लगे। उत्तर का गृह दिखाकर श्री म जीनवाला से कहने लगे,

''यह रन्धनशाला, और यहाँ पर रहती थीं हमारी माँ (मूलगृह के एकतल के उत्तरपूर्व के कोने के घर में)।''

धीरे-धीरे आकर अस्तबल में उपस्थित हुए। यहाँ पर उत्तरदक्षिण लम्बमान— तीन छोटे कमरे हैं। यह है अश्वशाला, सेवकगण यहाँ पर

* पहली जनवरी, 1886।

रहते थे। पैर से जूता उतार कर हाथ जोड़कर— प्रणाम मुद्रा में श्री म ने दक्षिण के कमरे में प्रवेश किया। कुछ काल चुपचाप खड़े रहे— मानो कुछ सोच रहे हैं। फिर श्री म बातें करने लगे,

''एक दिन प्रात:काल इसी पुण्य गृह में, पीछे जो लोग सर्वस्व त्याग करके साधु हुए थे— उन्होंने तन्मय होकर यह गाना गाया था—

'शशधर तिलक भाले गंगा जटा पर, करे लिये त्रिशूल रुद्र विराजे।
भस्म अंग छायि, गले रुण्ड माल, भैरव त्रिलोचन हरयोगी साजे।'

''तीव्र वैराग्य जिनका है, सर्वत्यागी महादेव उनके आदर्श हैं। बाह्यज्ञानशून्य होकर गाया था।

''ज्वलन्त त्याग। भविष्यत् के आचार्य तैयार हुए थे यहाँ पर।''

अन्य कमरों के सामने से हाथ जोड़ श्री म जा रहे हैं— पूर्व पुकुर के उत्तरपश्चिम कोण में आ उपस्थित हुए। पुकुर के दक्षिण के घाट को दिखाकर बोले,

''यहाँ पर मैं आकर कभी-कभी बैठा करता था।''

अब घाट पर आए और घाट के दक्षिण का एक आम का पेड़ दिखाकर बोले,

''इसके नीचे नरेन्द्र ने धूनी जलाकर ध्यान किया था। इस घाट से बाग के बड़े रास्ते पर जाने का एक पथ था। अब उसका चिह्न भी नहीं है। इसी घाट पर बैठकर भक्तगण गर्मी के समय ध्यान किया करते थे। सैंतीस वर्ष पश्चात् अब की बार यहाँ पर आया हूँ।''

श्री म स्वामीजी की तपोभूमि— आम के वृक्ष के नीचे आए हैं। पवित्रवृक्ष को आलिंगन करके भूमिस्पर्श करके प्रणाम किया। बोले,

''यहाँ पर धूनी के पास बैठकर नरेन्द्र ध्यान कर रहे थे। शरीर पर कितने कीड़े आकर बैठे हैं— होश नहीं। मन अति ऊँचे ब्रह्म में लीन— बाह्यज्ञान सम्पूर्ण तिरोहित, जैसे जड़।''

श्री म उद्यान के बड़े रास्ते पर आए। दायें हाथ मन्दिर। एक पाइन वृक्ष दिखलाकर बोले,

''ये, ये ही हैं हमारे पुरातन बन्धु।''

इतनी देर में मन्दिर-प्रदक्षिणा हो गई। श्री म मन्दिर के निम्नतले पादपीठ पर खड़े हैं। ऊपर से अनुमति आ गई, अब द्वितल पर आरोहण करते हैं। सीढ़ियाँ उत्तरपश्चिम दिशा में हैं। श्री म बोले,

''ये सीढ़ियाँ उस ओर थीं— पूर्वउत्तर में माँ के घर की तरफ— बदली हैं उन्होंने।''

द्वितल का हॉल-कमरा रामकृष्ण-मन्दिर है। यह है अब कार्पेट मण्डित— साहबों की बैठक। इसी के पश्चिमदक्षिण कोने में श्री म ने भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया ठाकुर के पदप्रान्त में। दक्षिण में दीवार। दीवार में एक बन्द दरवाजा, पश्चिम में 'खड़खड़ि'* की खिड़की। श्री म बोले,

''यहाँ पर उनका बिछौना था।' अर्थात् पश्चिम की 'खड़खड़ि' की खिड़की से 3/4 हाथ पूर्व में। और दक्षिण की दीवार की ओर था ठाकुर का सिराहना।''

दक्षिण की दीवार से चार-पाँच हाथ उत्तर में धरती पर, ठाकुर के पदप्रान्त में, बैठकर श्री म ने कुछ काल ध्यान किया— हाथजोड़े वीरासने आसीन।

श्रीयुक्त जीनवाला दो-एक गृहवासी सज्जनों के संग आलाप करने लगे— ये भी पार्सी हैं, अब यहाँ पर आए हैं। श्री म ने नीचे उतर आना चाहा। सेवक ने कहा,

''दक्षिण के गृह की अनुमति ले ली गई है।''

''चलो ना, चलो''— यह कहकर उस कमरे में प्रवेश किया— यह शयनकक्ष। बड़ा एक दर्पण उत्तर की दीवार के पास रखा है। इसके सामने क्षण भर श्री म खड़े हुए, दर्पण पर दृष्टि डालकर दक्षिण की उन्मुक्त छत पर चले गए। छत स्पर्श करके प्रणाम करते हैं। और पश्चिम की

---

* खड़खड़ि = Venetian Blind, खिड़की में रोशनी या हवा रोकने के लिए सीधे लगे तख्ते।

रेलिंग पर भार देकर उद्यानभूमि-दर्शन करते हैं। गृहवासियों को धन्यवाद देकर सब नीचे उतर आए। गाड़ी के फुटबोर्ड पर चढ़े— पुन: उतर आए। श्री म और सेवक पश्चिम के तालाब के चौंतरे पर गए। अब सब गाड़ी में बैठ गए।

बड़े रास्ते से गाड़ी कलकत्ते की ओर चलने लगी। श्री म मध्य में— दायें श्रीमती, बायें श्रीयुक्त जीनवाला— पिछले आसन पर। जीनवाला ने प्रश्न किया,

''प्रतीची (West) प्राच्यदेश (East) से क्या शिक्षा लाभ कर सकते हैं?'

श्री म ने उत्तर दिया,

''यही महाशिक्षा— ईश्वर हैं, मनुष्य उनके दर्शन कर सकता है, उनके संग बातें कर सकता है। 'वैस्ट' यही महाशिक्षा प्राप्त कर सकता है 'ईस्ट' से।''

गाड़ी बागबाज़ार स्टीमर घाट पर आई। डॉक्टर डी० मेलो उतर गए। ये बेलुड़मठ में जाएँगे। तदुपरान्त बागबाज़ार रोड, कार्णवालिस स्ट्रीट द्वारा गुरुप्रसाद चौधुरी लेन में आ गई। श्री म और सेवक उतर कर ठाकुरबाड़ी में चले गए। जीनवाला दम्पति प्रणाम करके चले गए।

●●

(5)

सन्ध्याकाल। श्री म नवविधान ब्राह्मसमाज में बैठे हैं— पश्चिम की ओर, उत्तर दिशा से होकर द्वितीय द्वार के सामने बैंच पर। आज रविवार। बिजलियों की आलोक माला से गृह आलोकित। आचार्य ने वेदी पर बैठकर प्रार्थना शेष की। अब भजन हो रहे हैं। श्री म के पास जगबन्धु, डॉक्टर बक्शी, शान्ति और मनोरंजन हैं। श्री म मुड़कर धीरे-धीरे जगबन्धु से कहते हैं,

''शास्त्र में है, सन्ध्या देवालय में या नदी-तीर पर करे। यहाँ पर ठाकुर आए

थे, तभी यहाँ पर की जा रही है।''

एक घण्टा ठहर कर साढ़े सात बजे चले गए।

अब आठ। श्री म मॉर्टन की चारतल की छत पर बैठे हैं— कुर्सी पर उत्तरास्य। बैंचों पर भक्तगण सामने, पूर्व और पश्चिमास्य बैठे हैं। गर्मी पड़ी है। श्री म खूब कष्ट बोध कर रहे हैं। उस पर फिर दक्षिणेश्वर जाने-आने का परिश्रम। काशीपुर-उद्यान की बात उठी।

जगबन्धु ने श्री म से पूछा, ''दोतल के हॉल कमरे के दक्षिण-पश्चिम कोण में धरती पर ठाकुर सोते थे— यह तो दिखाया आज। किन्तु उनका सिर किधर था?''

उन्होंने उत्तर दिया, ''दक्षिण की दीवार के निकट। ठाकुर के बाईं ओर खड़खड़ि की खिड़की के तीन हाथ दूर।''

प्रश्न हुआ, दक्षिण दिशा के कमरे में नहीं थे? श्री म बोले, ''ना। तब वह कमरा ही नहीं था— खुली छत थी।''

डॉक्टर बक्शी बोले— ''खाट पर क्यों नहीं सोते थे?''

श्री म ने उत्तर दिया— ''पृथ्वी पर सोने में सुविधा थी। दुर्बल शरीर। मादुर के ऊपर दरी, उस पर बिस्तर।''

जगबन्धु ने पूछा— ''छत पर कभी-कभी टहलते थे?''

श्री म बोले— ''बहुत कम।''

जगबन्धु ने प्रश्न किया— ''नीचे पैदल कभी-कभी बाग में टहलते थे?''

श्री म ने उत्तर दिया— ''कभी-कभी। (प्रथम) फर्स्ट जनवरी को टहले थे। मन में बड़ी इच्छा थी, वह हो गई। सैंतीस वर्ष हो गए— इस बीच एक बार सम्भवत: गया था।

(भक्तों के प्रति) आज कुछ 'कथामृत'-पाठ हो जाए, काशीपुर की कथा।'

शान्ति पाठ करते हैं— चतुर्थ भाग, तेतीसवाँ खण्ड। ठाकुर के आदेश से

उनके सम्मुख मास्टर और नरेन्द्र विचार करेंगे। ठाकुर बिछौने पर लेटे हुए हैं। 'ईश्वर हैं कि नहीं', उस सम्बन्ध में बातें होती हैं।

नरेन्द्र दार्शनिक बर्कले का मत समर्थन करके कह रहे हैं, ''विचार में तो यह कहा नहीं जाता कि ईश्वर हैं। (किन्तु) विश्वास में ईश्वर मानना पड़ता है।''

यह बात सुनकर ठाकुर बोले, ''न्यांगटा (तोतापुरी) कहते थे, 'मन में ही जगत है, फिर मन में ही लय हो जाता है'। किन्तु जब तक 'मैं' है, तब तक सेव्य-सेवक-भाव ही ठीक है।

(नरेन्द्र के प्रति) मुझको किन्तु खूब बोध होता है, भीतर कोई एक हैं।''

श्री म— यह बात ही बोलने के लिए दो जनों को विचार करने के लिए लगा दिया। वे देखते हैं कि ना, माँ रह रहीं हैं भीतर। इसके ऊपर फिर बातचीत नहीं चलती। वह मत भी ठीक है। किन्तु उसके अधिकारी बहुत कम हैं। देहबुद्धि जाना चाहती ही नहीं। जभी तो सेव्य-सेवक-भाव में रहने को कहते हैं।

पाठक पढ़ते हैं, नरेन्द्र ने बताया—

उन्होंने *(ठाकुर ने)* मुझ से कहा था, 'मुझ को कोई-कोई ईश्वर कहता है।' मैंने कहा, हजार-हजार लोग चाहे ईश्वर कहें! मुझे जब तक सत्य जानकर यह बोध नहीं होता, तब तक मैं नहीं कहूँगा।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— बड़ा आधार है ना, जभी! कमल खिलने में देर लगती है किन्तु रहता है बहुत दिन। अन्य फूल आज खिलते हैं, कल झड़ जाते हैं। देखो, जिस मनुष्य ने अब यह बात कही है, उसी ने फिर स्तव में क्या कहा है— 'मर्त्यामृतं तव पदं मरणोर्मिनाशम्'— अर्थात् आपके पादपद्म चिन्तन करने से ही व्यक्ति मृत्युंजय हो जाता है। और फिर कहते हैं, 'नर रूप धर निर्गुण गुणमय।' अर्थात् जो अखण्ड सच्चिदानन्द वाक्य-मन के अतीत हैं, जो ईश्वर-रूप में जगत की सृष्टि-स्थिति-संहार करते हैं, वे ही इस

नरशरीर को धारण करके अवतीर्ण हुए हैं। जभी तो, 'नमो नमो प्रभु वाक्य-मनातीत' बोलकर प्रणाम करके उनकी शरण लेते हैं— 'त्वमेव शरणम् मम दीनबन्धो।'

कलकत्ता, 30 मार्च, 1924 ईसवी;
रविवार, 16वाँ चैत्र, 1330 (बंगला) साल।

अष्टम अध्याय

अमेरिकावासी डॉक्टर ह्यूमेल के संग श्री म (1)

(1)

मॉर्टन स्कूल। अपराह्न पाँच। द्वितल का बैठकखाना। श्री म मध्यस्थल में बैठे हैं— पूर्वास्य। उनके सम्मुख दक्षिण-पश्चिमास्य हुए कुर्सी पर बैठे हैं डॉक्टर ई०एम० ह्यूमेल (Dr. E.M. Hummel, M.D.)। श्री म के पीछे एक सेवक खड़े हुए हैं। ये सज्जन अमेरिका के कैलेफोर्निया प्रान्त के लॉस एंजलस् से आए हैं। स्थूलकाय,वयस पचास प्राय: और अविवाहित। साधन-भजन करते हैं। घर के लोग कहते हैं, 'मस्तिष्क खराब हुआ है'। ये श्री म के दर्शन करने आए हैं। प्रात: साढ़े ग्यारह के समय भी और एक बार थोड़ी देर के लिए आए थे। इन्होंने 'कथामृत' का प्रथम भाग अंग्रेज़ी में असंख्य बार पढ़ा है। ग्रन्थ जैसे कण्ठस्थ है। बालक जैसे 'बाल्यशिक्षा' आदि पुस्तक नाना रंगों की पैंसिलों से रंग करके पढ़ते हैं, उनकी पुस्तक भी वैसी ही है। कैसे मनोयोग से पढ़ी हुई है! यहाँ तक कि गानों के दुर्बोध्य शब्दों पर भी दाग लगा रखा है— श्री म से उनका अर्थ पूछेंगे। विदेश में ऐसे भक्त विरल हैं— ऐसे शान्त, चिन्तनशील और श्रद्धावान। पहले मधुर भाषणादि के पश्चात् कथोपकथन होता है।

डॉक्टर ह्यूमेल *(श्री म के प्रति)*— भारत-भ्रमण के लिए निकलने के समय ही संकल्प किया था, आपके निश्चय ही दर्शन करूँगा। मैंने आपकी पुस्तक पढ़ी है। बहुत अमेरिकावासी उस पुस्तक के पाठ से खूब ही उपकृत हुए हैं।

श्री म— यह खूब आनन्द की बात है। अच्छा, आप क्या बेलुड़मठ गए हैं?

डॉक्टर— जी हाँ, बेलुड़ मठ में गया था— दक्षिणेश्वर भी गया था। एक

युवक ने मुझ को सब पवित्र स्थान दिखाए हैं। मुझे कुछ पूछना है— अनुमति हो तो कहूँ?

श्री म— हाँ, कहिए।

डॉक्टर— भगवान-दर्शन के चिह्न क्या-क्या हैं?

श्री म— जिन्हें भगवान-दर्शन होता है, उनका स्वभाव पाँच वर्ष के बालक की न्यायीं हो जाता है। वे सर्वदा योग में रहते हैं। और फिर कभी हँसते हैं, कभी रोते हैं— कभी जैसे उन्मादी।

डॉक्टर— आपने श्रीरामकृष्ण के अन्तर्धान के विषय में विशेष कुछ क्यों नहीं लिखा?

श्री म— ये तो अत्यन्त शोक और दुःख की बातें हैं। लिखने की इच्छा नहीं होती।

डॉक्टर— उनके सम्बन्ध में आपके पास और कितना रिकॉर्ड है?

श्री म— बंगला में चार भाग 'श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत' छप गए हैं। मात्र एक भाग की अंग्रेज़ी मैंने की है। इनके अतिरिक्त और भी सब रिकॉर्ड हैं।

डॉक्टर— आप इन्हें अंग्रेज़ी में प्रकाशित करना क्यों नहीं चाहते? अथवा वैस्ट को देना नहीं चाहते?

श्री म— ना, ना। शारीरिक दुर्बलता के कारण होता नहीं। भगवान शक्ति देंगे तो होगा।

डॉक्टर— स्वामी अभेदानन्द की पुस्तक आपकी पुस्तक से भिन्न है।

श्री म— हाँ, अपनी reminiscences (स्मृतिकथा) मिलाकर उसे निकाला है....।

डॉक्टर— ज्ञान का कोई (गज) माप नहीं है?

श्री म— नहीं, वे यही बात कहते। वे कहते, अवस्था का परिवर्तन— अब एक अवस्था, फिर बदल गई। जभी कोई माप नहीं।

डॉक्टर— 'कामिनी-काञ्चन त्याग करो'— यह है उनका उपदेश। इस बात से क्या वे समझाने की चेष्टा किया करते थे कि इनका (कामिनी-काञ्चन का) भोग त्याग करो— 'काम और लोभ त्याग करो' क्या यही सोचते थे? अथवा

कुछ और?

श्री म *(क्षणभर मौन रहकर)*— 'मेरी ने ही असल वस्तु (ईश्वर-प्रेम) को पहचान लिया है। इसे कोई कभी निकाल कर ले जा नहीं सकेगा।'*

डॉक्टर— क्राइस्ट नाम से हमारे जैसे एकजन जीवन्त व्यक्ति थे, इस सम्बन्ध में उनके मुख से कुछ आपने सुना है क्या?

श्री म— हाँ, बताया था, एक दिन यदुमल्लिक के बाग में— क्राइस्ट उनकी देह में प्रवेश करके मिल गए थे।

डॉक्टर— आप तब वहाँ पर थे क्या?

श्री म— नहीं, उन्होंने पीछे हम लोगों को बताया था।

डॉक्टर— उनके मुख द्वारा आपने अपने कान से सुना है क्या?

श्री म— हाँ, उनके मुख से सुना है।

डॉक्टर— आप जब यह बात कहते हैं तो मुझे विश्वास होता है।

(2)

श्री म *(कुछ क्षण मौन रहने के पश्चात्)*— उन्होंने ईश्वर का 'अल्लाह' नाम तीन दिन माला पर सर्वदा जप किया था। तब मुसलमानों की भाँति पाँच बार दिन में नमाज पढ़ते थे।

''उन्होंने कहा था, 'मैं ही पहले क्राइस्ट-रूप में अवतीर्ण हुआ था'। सौभाग्य से हमने उन्हें देखा था, तभी क्राइस्ट का कुछ आभास मिल जाता है। क्रिश्चियन लोग प्राय: उन्हें समझ नहीं सकते।''

डॉक्टर— बहुतों के लिए यह तो एक फैशन हो गया है। वे उनको समझे नहीं हैं। वे यदि रामकृष्ण की कथा सुनें तो फिर क्राइस्ट को भली प्रकार समझेंगे। आप धन्य हैं, उनका संग करने का सौभाग्य-लाभ किया है!

श्री म— हाँ, शास्त्र में है— पूर्वजन्म के बहु पुण्यफल से मनुष्य अवतार के

---

* But one thing is needful and Mary hath chosen that part, which shall not be taken away from her. —Bible.

दर्शन और संग करने का सौभाग्य प्राप्त करता है।

डॉक्टर— जिन्होंने उनके चरणों में स्थान पाया था, उनमें से कितने जन आत्मदर्शन करने में समर्थ हुए?

श्री म— इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर देना बहुत कठिन है।

डॉक्टर— अच्छा, 'आवेश' क्या है?

श्री म— क्राइस्ट ने सुमेरीय (Samaritan) रमणी से कहा था, 'इस कुएँ से तुम मुझे थोड़ा-सा जलपान करवाकर बचाओ, मैं इसके बदले तुम्हें ऐसा जलपान करवाऊँगा जिससे तुम अनन्तकाल बची रह सकोगी— अमृतत्व-लाभ होगा।' यही एक ही दृष्टान्त है 'आवेश' का— भगवद्भाव में तन्मय हो जाना। मुहूर्त में बदलकर देवमानुष हो जाना।

डॉक्टर— अपने तिरोधान की बात क्या उन्होंने पूर्व से ही आप लोगों को बता दी थी?

श्री म— हाँ, उन्होंने बताया था, ''और भी कुछ काल इस शरीर में वास करने की मेरी इच्छा थी। उससे और भी कई लोगों को चैतन्य होता। किन्तु रहने का उपाय नहीं है। माँ पुकार रही हैं, जाना होगा।''

डॉक्टर— उनके अन्तर्धान के समय आप उपस्थित थे क्या? उन्होंने क्या समाधिस्थ होकर शरीर त्याग किया था?

श्री म— 'माँ, माँ, काली'— ये शब्द बोले। इसके पश्चात् ही समस्त शरीर रोमाञ्चित हो गया। आठ घण्टे तक इस अवस्था में शरीर की रक्षा की गई थी। कलकत्ता के भक्तलोग दर्शन के लिए आने लगे। उन्हीं के संग नेपाल के राजप्रतिनिधि 'काप्तेन' (कप्तान) भी आए। उनको इस विषय में सब पता था, बोले— ''अब देह ले जाओ, सत्कार (दाह) करो।''

डॉक्टर— आपकी अपनी कोई छवि है क्या?

श्री म *(सेवक के प्रति)*— हमारे ग्रुप वाली लाओ तो। *(गिरीश, देवेन, गोपाल, लाटु, श्री म प्रभृति इसमें हैं— डॉक्टर को दिखला कर)* सब चले गए हैं, मैं ही अकेला पड़ा हुआ हूँ।

डॉक्टर— आप अपनी एक छवि क्या दया करके मुझे देंगे?

श्री म *(निजपुत्र प्रभासबाबू को दिखलाकर)*— इससे माँग कर देख सकते हैं— यदि हो कोई। पन्द्रह वर्ष हुए और एक ली गई थी। *(स्वगत)* वे सब चले गए हैं उसी देश में जहाँ से फिर कोई कभी भी लौटता नहीं है : They have gone to that land 'from the bourn of which no traveller returns!'

डॉक्टर— आपने क्या शेक्सपियर पढ़ा है ?

श्री म *(सुपण्डित होते हुए भी विनीत भाव से)*— कुछ देखा हुआ है।

डॉक्टर— विवेकानन्द आदि अनेक युवक थे— उनमें से किसी ने भी लिखकर नहीं रखीं उनकी बातें। आपने कैसे रख लीं ?

श्री म *(सविनय)*— मैंने नहीं रखीं, उन्होंने रखवा लीं।
(डॉक्टर के प्रति) सकुशल अमेरिका लौटकर हमें लिखें हम बहुत खुश होंगे।

डॉक्टर— जाऊँगा कि नहीं जाऊँगा, इसका भी निश्चय नहीं है। मेरे पिता-माता भी नहीं हैं और विवाह भी नहीं किया है। (जभी जाने का आकर्षण नहीं है)।

श्री म *(आनन्द से)*— वाह! वैसा है, तब तो देख रहा हूँ आप संन्यासी— परम भक्त हैं! वृक्ष का परिचय फल से।

डॉक्टर *(सविनय)*— मैं अभी भी संन्यास का अधिकारी हो नहीं सका। संन्यास ही मेरे जीवन का श्रेष्ठ आदर्श है। जी, मैं और एक प्रश्न करना चाहता हूँ— समाधि किसे कहते हैं ?

श्री म— समाधि में बाह्यज्ञान लोप हो जाता है— ईश्वर के संग में एक हो जाता है। जभी तो उस समय अन्तर में क्या अवस्था होती है, कोई बोल नहीं सकता। एक नमक की पुतली समुद्र मापने गई थी— किन्तु गलकर स्वयं ही समुद्र हो गई। इसीलिए तब खबर दे कौन ? रूपरसमय बाह्यजगत से मन तब सम्पूर्ण रूप से हट जाता है। जिनकी वैसी अवस्था होती है, केवल वे ही समझ सकते हैं कि क्या होता है— ठीक-ठीक यह बात दूसरों को समझानी सम्भव नहीं। इन्द्रियों और उनके ज्ञान के बाहर की है यह अवस्था— वाक्यमनातीत अवस्था। एकजन ने समुद्र देखा है, जिसने नहीं देखा ऐसे और

एकजन को वह समझाने की चेष्टा करता है। यह वर्णन जैसे असम्पूर्ण आभास मात्र है, वह भी वैसा ही है। समाधि का वर्णन ठीक-ठीक हो नहीं सकता। मुख से तो कहा नहीं जाता। समाधि के पश्चात् एक विशेष सतत आनन्द-अफुरन्त आनन्द भीतर रह जाता है— फिर शान्ति। 'मैं अमृत-आनन्द स्वरूप', यह ज्ञान कभी भी विलुप्त नहीं होता। इस मरजगत् में समाधिवान पुरुष ही केवल जीवन्त जाग्रत होकर रहते हैं। वे चाहे जगत में वास तो करते हैं, किन्तु जगत्मुक्त, जीवन्मुक्त।

(क्षण भर मौन रहकर) ज्ञान की नाना अवस्थाएँ हैं। एक अवस्था में, ठाकुर बतलाते थे— पेड़-पौधे, फल-फूल, माली— समस्त बाग ही जैसे मोम द्वारा बना है— सब सच्चिदानन्दमय। इसको विशिष्टाद्वैतवाद कहते हैं।

डाक्टर ह्यूमेल ने विदा ली। कह गए आगामी कल फिर आएँगे।

●●

(3)

आज कलकत्ता में प्रचण्ड गर्मी पड़ी है, मानो अग्निवर्षण हो रहा है। आज रिकॉर्ड गर्मी, 44 डिग्री हुई। यहाँ पर ऐसी गर्मी बहुत कम होती है। गर्मी में श्री म को बहुत कष्ट होता है— वृद्ध शरीर। किन्तु व्याकुल भक्त के संग में ईश्वरीय बातों में देहज्ञान जैसे भूला ही हुआ था इतनी देर। अब अपराह्ण साढ़े छह। श्री म छत पर टहलते हैं, संग में सेवक हैं। बातें हो रही हैं।

श्री म *(सेवक के प्रति)*— ये सब लोग सचमुच ही व्याकुल हैं। देखो, कहाँ से आए हैं— कितने सागर पार करके! ठाकुर ने कहा था, 'आन्तरिक होने पर यहाँ आना होगा'। वे लोग (प्रतीचीवासी— वैस्ट वाले) क्या समझेंगे इस देश की बातें! क्राइस्ट को समझना हो तो पहले ठाकुर को समझो। आज इन साहब ने भी यही बात कही, वे लोग कुछ भी समझे नहीं हैं।

ठाकुर की कैसी महिमा ही प्रचार हो रही है! क्रिश्चियन, मुसलमान, पारसी, यहूदी, हिन्दू— सब जातियाँ ही ले रही हैं। अब कष्ट हो रहा है 'कुछ

खिला नहीं दिया'। ऐसे व्यक्ति की कितनी सेवा करनी चाहिए! फिर भी पुस्तक (Gospel Part I) तो दे दी ही गई है। कल सेवा-यत्न किया जाएगा। फोटो माँगते थे। उसे देने से क्या होगा— शरीर जब रहेगा ही नहीं! ठाकुर ने दी थी, वह भिन्न बात है। कारण— लोगों का उपकार होगा। वह, 'समाधि की अवस्था' देखकर कितने लोगों का उपकार हो रहा है। उस देश में नियम है, जिन्हें प्यार करते हैं उनकी फोटो लेते हैं। कल साढ़े पाँच बजे आएँगे— ठाकुर की जो छवि सुन्दर रूप से बनाई है वह भी लेकर आएँगे, कहते थे।

सदानन्द ने आकर प्रणाम किया। सदानन्द और लक्ष्मण उत्कलवासी युवक हैं। यहाँ पर कर्म करते हैं। भक्त हैं। लक्ष्मण अद्वैताश्रम में कर्म करते हैं। अभी शंकर घोष लेन में उसी आश्रम की ब्राँच खुली है।

श्री म *(सदानन्द के प्रति)*— उससे कहो *(लक्ष्मण से)*— ऐसे स्थान पर पैसा बिना लिए भी लोग रहना चाहते हैं। तो भी बाप-माँ को घर में कुछ देना होता है, इसलिए कुछ ले लेना। ऐसे स्थान पर वह रहना नहीं चाहता।

सदानन्द— वह कहता है, वह मास्टर महाशय के पास जाना चाहता है पर समय नहीं है।

श्री म— मास्टर महाशय के पास आने पर वे भी तो वही कहेंगे— साधुसंग, साधुसेवा करो। *(क्षणिक चुप रहकर, जगबन्धु के प्रति)* साधुसंग, साधुसेवा को छोड़ और कोई गति नहीं है। किन्तु महामाया का कैसा काण्ड है उल्टा समझा देती है। 'साधुनिन्दा' के मिलते ही एकदम 'सैन्टर' (केन्द्र) बनाकर जम जाते हैं लोग। ऐसा मजा है! अमुक महाराज ने मठ के दो साधुओं की निन्दा की थी। अमुक बाबू को बुलाकर मैंने हटा दिया— कहा छत पर जाओ। मुझसे कहे तो और बात है। उन्हें ऐसी बातें कहने पर वे ठहरेंगे कहाँ? 'ग्रेट मैनों' (महापुरुषों) की निन्दा करने पर तो लोग 'हॉ' करके सुनते हैं। मनुष्य में दोष-गुण दोनों होते हैं। शरीर धारण करने से ऐसा होता ही है।

सन्ध्या हो गई है, श्री म छत पर बैठे हैं। 'कथामृत' का प्रथम भाग अंग्रेज़ी का पढ़ा जा रहा है। छोटे अमूल्य, शची, बड़े जितेन, शान्ति, जगबन्धु

आदि हैं। ठाकुर काशीपुर उद्यान में रह रहे हैं। सेवक पढ़ते हैं। श्री म चक्षु मुद्रित किए ध्यानस्थ हुए सुन रहे हैं। किसी के मुख में कोई भी बात नहीं है। गर्मी के पश्चात् अल्प शीतल हवा चलने लगी। ऊपर कृष्ण वर्ण का आकाश— चारों ओर शहर की आलोकमाला। हरिकेन (लालटैन) के आलोक में पढ़ा जा रहा है। केवल पाठक का स्वर— और ठाकुर की दिव्य लीला-कथा सुनाई दे रही है। और सब चुप, जैसे ध्यानस्थ। पाठ समाप्त हो गया है। श्री म को जैसे होश नहीं— अनेक क्षण से बैठे हैं। भक्तों में से भी कोई यह शान्त समाहित भाव भंग करने का साहस नहीं करता। दीर्घकाल पश्चात् मुद्रितचक्षु श्री म अस्फुट स्वर में कहते हैं—

"I see— I realise— that all things, every conceivable thing comes out of this. *(चक्षु खोलकर)* अर्थात् 'मैं ही हूँ इस जगत की सृष्टि-स्थिति-प्रलय का कारण— अब नर देह में आया हूँ'— इतना करके बोलते हैं, तब भी क्या लोगों को विश्वास होता है! ऐसी उनकी माया है। ये ही कई-एक बातें पकड़कर रहे तो सारा जीवन कट जाए, सकल समस्या का समाधान हो जाए, मनुष्य देवता हो जाए।"

कलकत्ता, 31 मार्च, 1924 ईसवी;
17वाँ चैत्र 1330 (बंगला) साल, सोमवार

नवम अध्याय

अमेरिकावासी डॉक्टर ह्यूमेल के संग श्री म (2)

(1)

अपराह्न, पाँच बजे हैं। आज भी अमेरिकावासी डॉक्टर ई०एम० ह्यूमेल एम०डी० आए हैं। गत कल भी आए थे। श्री म उन्हें लेकर दोतल के बैठकखाने में चेयर पर बैठे हैं— श्री म पूर्वास्य, अतिथि दक्षिणास्य। मणि, छोटे अमूल्य, जगबन्धु भी हैं। प्रभासबाबू और उनके लड़के भी कभी-कभी आना-जाना करते हैं। डॉक्टर ह्यूमेल ने पॉकेट से एक नूतन घड़ी निकाली, नाम 'इयांकि रेडिओ लाइट'। इसे अमेरिका से लाए हैं। फिर ठाकुर की दो छवियाँ इन्होंने अपनी इच्छावत् तैयार की हैं। खूब सुन्दर रंग दिए हैं— खूब अच्छी दिखती हैं। घड़ी और छवि दोनों हाथों में लेकर सविनय अतिशय श्रद्धा सहित श्री म को उपहार दिया। बोले, कृपया ग्रहण करके कृतार्थ करें। छवि मेरे पास और भी हैं। और इसे भी लें— (अमेरिका में छपा गॉस्पेल)।

श्री म— बहुत धन्यवाद! यह पुस्तक तो मेरे पास कई-एक हैं। सान फ्रांसिसको आश्रम ने मुझे पचास कापियाँ भेज दी थीं, तभी हैं। पुस्तक तो आप ले जाएँ।

डॉक्टर— इस फोटो को देखकर हम डॉक्टर लोग कह सकते हैं कि पहले से ही ठाकुर को कैंसर होने का भय था। चक्षु की दृष्टि पर पहले से ही आक्रमण हुआ है। जभी तो छवि में ऐसी दिखलाई पड़ती हैं।

श्री म— ठीक!

डॉक्टर— ठाकुर की कहानियों में से मुझे कौन सी प्रिय है, जानते हैं?— रंगरेज़

की गल्प! एकजन गया, उसका कपड़ा पीले रंग का रंग दिया। और एकजन को लाल और एकजन को काला रंग दिया। बिना रंगवाए कोई लौटता नहीं। यही बहुत अच्छी लगती है।

श्री म— यह सुन्दर है! इस कहानी द्वारा परब्रह्म की साकार सगुण अवस्था की बात समझाई गई है। ईश्वर निराकार निर्गुण और फिर साकार सगुण। अपनी साकार सगुण अवस्था से ही नाना नामरूप धारण करते हैं— अवतार आदि भी इसके ही भीतर हैं। जो कोई भी धर्म पालन क्यों न करे, यहाँ पर उसका स्थान है। क्रिश्चियन होवें तब भी स्थान है, मुसलमान हों तो भी स्थान है— सकल धर्म का स्थान उन के पास है। इस कहानी का यही तात्पर्य है। यहाँ पर कोई सीमा नहीं— मतवाद का अवसर नहीं। वर्जन नहीं, सब ग्रहण।

सानफ्रांसिसको से छपी अंग्रेज़ी की 'कथामृत' (Gospel) प्रथम भाग खोलकर श्री म ने डॉक्टर को एक ग्रुप फोटो दिखाई। इसमें बारह भक्त हैं। श्री म ने उनका एक-एक का नाम बताया। अब डॉक्टर ठाकुर की फोटो के सम्बन्ध में आलोचना करते हैं।

डॉक्टर— ठाकुर की कितनी असली फोटो हैं?

श्री म— तीन। अभी तक उनकी तीन विभिन्न प्रकार की छवियाँ हमलोगों को मिली हैं। (एक को दिखाकर) यह तो केशवसेन के गृह में ली गई थी— सेवक हृदय उनको पकड़े हुए हैं। यह खड़े हुए की ली गई थी— 1870-75 के बीच ली गई। उनका मन तब अतीन्द्रिय, अति उच्च अवस्था में आरूढ़ था। (और एक को दिखाकर) और यह भी खड़ों की है। ठाकुर एक हाथ को एक स्तम्भ के ऊपर रखे हुए हैं। यह भी अति उच्च अवस्था का द्योतक है। यह ली गई थी राधाबाजार के स्टुडियो में, 1881 ईसवी में। इसके पास ही झामापुकर में श्रीयुक्त आर० मित्र के गृह में ठाकुर उस दिन आए थे। (और एक दिखाकर) यह तो सब मठों में पूजित होती है। इसी छवि को दिखाकर तो ठाकुर एक दिन बोले थे, ''इसके पश्चात् यही घर-घर में पूजित होगी''। इसी में तो मन एकदम परब्रह्म में विलीन है। बाह्यजगत का ज्ञान सम्पूर्ण तिरोहित है। मन परमात्मा में, सच्चिदानन्द-सागर में मिलकर एक हो गया है।

एकाकार— समाधिस्थ। यह 1882-1885 के बीच ली गई। दक्षिणेश्वर में कालीबाड़ी में शिव-मन्दिर की सीढ़ी पर ठाकुर बैठे थे। एक भक्त भवनाथ ने फोटोग्राफर को लाकर उसे खिंचवाया था।

डॉक्टर— वैस्ट में यदि कोई ईश्वर को पुकारता है, तो सब लोग कहते हैं इसका मस्तिष्क बिगड़ गया है। आत्मीय बन्धु मर जाए तो वे शोकचिह्न लगाते हैं, एक सप्ताह तक। कोई यदि शोकचिह्न न पहने तो उसे कहते हैं, मस्तिष्क खराब है। वे सब कामिनी-काञ्चन लेकर भूले हुए हैं।

श्री म— ईसाई धर्म तो फैशन हो गया है। इस देश की प्रधान बात है 'ईश्वर', उस देश में 'मैटर'— जगत। इसीलिए इस देश को कहते हैं ईश्वरवादी और उस देश को कहते हैं जड़वादी।

(2)

गतकल डॉक्टर को जलपान नहीं करवाया गया था। इस कारण श्री म ने दु:ख प्रकाश किया था। आज पहले से ही उसका आयोजन हो गया था। अब उन्हें खिलाते हैं। इस देश के ही सब खाद्य द्रव्य हैं। हाईबैंच पर थाल रखकर हिन्दुओं की तरह डॉक्टर हाथ से खाते हैं। घर में स्त्रियों ने ही सब बनाया है— 'लुचि', 'पुरी पटल भाजा' (तले साबुत परवल), दूध और किशमिश की चटनी, पनीर का पायस। बंगाल की विख्यात मिठाई— सन्देश और रसगुल्ले भी दिए गए। प्रभासबाबू खड़े हैं। श्री म डॉक्टर को खाने के विषय में बता-बताकर उनकी सहायता करते हैं— इसको पहले खाइए इसको पीछे— इस प्रकार से। उन्होंने अपने हाथ से और भी दो 'पटल भाजा' थाली में डाल दिए। थोड़ी चटनी भी दी। फिर सन्तरे। बरफ वाला जल बीच-बीच में डॉक्टर पीते हैं। सबसे पीछे डाब का जल पीने के समय— पॉकेट से एक काँच की नली नारियल के भीतर डालकर पीने लगे। डाब का जल पीते-पीते कहते हैं,

''इसके विषय में बहुत सुना था। जभी भारत में आकर ही सर्वदा डाब का जल इसी नली द्वारा पीता हूँ। अन्य जल नहीं पीता। यह बड़ा ही स्वास्थ्यकर,

स्निग्ध और सुमधुर है।''

आहार शेष हो गया है। डॉक्टर बैठे हैं। कमरे के भीतर कुछ अन्धकार हो गया है तो भी श्री म प्रथम भाग 'गॉस्पेल' खोलकर अन्तिम अध्याय पढ़कर सुनाते हैं। ठाकुर काशीपुर उद्यान में रह रहे हैं।

(श्री म पढ़ते हैं)— ...ठाकुर कह रहे हैं,

उनके मध्य में *(विभिन्न अवतारों में)* इस रूप को भी देखता हूँ। भगवान इस शरीर में भी अवतीर्ण हुए हैं।

'यह रूप' माने उनका अपना शरीर। वे जो अवतार हैं, इस विषय में यह एकदम स्पष्ट उक्ति है। इसमें और कोई सन्देह नहीं है।

''अन्य बहुत से लोगों के चैतन्य के लिए उनके ज्ञाननेत्र खोलने की उनकी बड़ी ही इच्छा थी। किन्तु जगदम्बा की इच्छा से— लौट गए। भगवान का श्रेष्ठ दान मोक्ष— पीछे करुणा में जिस किसी को भी ठाकुर न दे दें, जभी उनको बुलाकर ले गईं। देखिए, ठाकुर आप ही कहते हैं,

> ''यह शरीर यदि और कुछ दिन यहाँ पर रहता, तो और भी अनेक कितने ही लोगों को चैतन्य होता।''

''एक युवक भक्त (लाटु) उदास हुए ठाकुर की शय्या के पास बैठे हैं। ठाकुर उन्हें उत्साह देते हुए कहते हैं, ''यह क्या, उदास क्यों? शोक को हटा दो, आनन्द करो।'' बाइबल में भी तो वह है। वर जब आता है, गृह के सब ही तब आनन्द करते हैं। 'वरयात्री क्या कभी शोक करते हैं, जब तक वर के संग रहते हैं?'

''ठाकुर कहते हैं, 'इस शरीर के भीतर दोनों हैं। एक जगदम्बा, दूसरा उनका भक्त। द्वितीय को, भक्त को असुख हुआ है। इस बात द्वारा भी इंगित किया है, भगवान इस नरदेह में अवतीर्ण हुए हैं।''

श्री म *(क्षणिक चुप रहकर)*— ठाकुर अब कहते हैं, ज्ञान और भक्ति— इनमें से चाहे किसी एक के द्वारा भी उनका दर्शन होता है। कारण, वे और भी कहते हैं, शुद्ध ज्ञान, और शुद्धाभक्ति एक हैं। निराकार निर्गुण ब्रह्म।

दर्शन के पश्चात् भी किसी-किसी में उनके साकार सगुण रूप में भक्ति रहती है— ठाकुर यह बात कहते हैं।

(डॉक्टर के प्रति)— यह सुनिए, ठाकुर बोलते हैं, ''मैं देख रहा हूँ— स्पष्ट समझ पा रहा हूँ— यह समस्त जगत, जो कुछ दिखाई देता है, इसकी प्रत्येक वस्तु ही तो— इस *(अपने शरीर को दिखाकर)* में से आई है।'' ठाकुर के शरीर में जो भगवान अवतीर्ण हुए हैं— इसकी यह और एक संशयहीन उक्ति तथा स्पष्ट घोषणा है— उनके स्वयं के मुख का यह महावाक्य।

(3)

पाठ शेष करके श्री म कुछ सोच रहे हैं। पुनः बातें करते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— आम के बाग की दो बन्धुओं की कहानी आप जानते हैं? एकजन ने तो प्रवेश करते ही शीघ्र-शीघ्र आम खाने आरम्भ कर दिए थे। और दूसरे ने 'कितने पेड़ हैं, कितनी रकम के पेड़ हैं, कितनी डालें, कितने लाख पत्ते'— ये सब गिनने आरम्भ कर दिए थे। जब बाहर निकलने का समय हुआ तब माली ने दोनों को बाहर कर दिया। एकजन तो महा खुश था और दूसरा जन महा दुःखी, जो आम खा नहीं सका था।

इस गल्प का अर्थ यही है कि हे जीव, अन्य सब काज छोड़कर लक्ष्य की ओर चलो— पहले किसी प्रकार उनका दर्शन कर लो। मृत्यु कब आ जाएगी, कोई जानता नहीं— एक मुहूर्त में बस सब समाप्त हो जाएगा। घण्टा बजते ही बाग से बाहर होना पड़ेगा— एक क्षण भी ठहरने से नहीं चलेगा। इस महायात्रा के पूर्व ही हमें प्रस्तुत रहना उचित है। 'आम खाना' अर्थात् निरवच्छिन्न प्रार्थना, जिसके द्वारा उनकी ज्ञान-भक्ति प्राप्त हो— वही चेष्टा।

डॉक्टर— यह कहानी बहुत ही सुन्दर है।

श्री म— ठाकुर ने भक्तों से कहा था, ''तुम लोगों को अधिक कुछ करना नहीं पड़ेगा। मैं कौन हूँ और तुम कौन हो, यह बात जान सकने पर ही होगा।'' अर्थात् 'मैं भगवान नररूप में अवतीर्ण हुआ हूँ और तुम मेरी सन्तान हो' यह

जान लेना ही यथेष्ट है। इतनी देर जो पढ़ा गया है 'गॉस्पेल', इसका सार यही है। जो उनके इस महावाक्य पर विश्वास करेगा, वह निश्चय ही बच जाएगा।

डॉक्टर— इसके लिए आपको मेरा आन्तरिक धन्यवाद! और एक विशेष प्रश्न आपसे पूछता हूँ। 'गॉस्पल' में दिखाई पड़ता है कि स्त्रियाँ पुरुष से जैसे अन्य प्रकार की हैं— धर्माचरण में इसका अर्थ क्या है? धर्मजगत में उनका स्थान कहाँ है?

श्री म— ठाकुर कहते, स्त्रियों के भीतर दो भाग हैं— विद्याशक्ति और अविद्याशक्ति। विद्याशक्ति भगवान-प्राप्ति में सहायक है, अविद्याशक्ति दूर ले जाती है, विषय-भोग में आबद्ध करती है। विद्याशक्ति स्त्रियाँ अति विरल होती हैं— गिन कर बताया जा सकता है, कितनी हैं। ठाकुर बताते, स्त्रियाँ भक्ति में डूबी हुई भी हों तो भी साधक पुरुष उनके संग न मिलें। स्त्रियाँ पुरुष के बिना रह नहीं सकतीं, तभी क्या उन्हें अबला कहते हैं?

डॉक्टर— 'वैस्ट' में स्त्री-पुरुष में कोई भेद नहीं— दोनों के अधिकार समान हैं। बहुत स्त्रियों ने मुझ से पूछा है— क्या ईश्वर-लाभ में हमारा कोई भी अधिकार नहीं है?

श्री म— निश्चय ही है— विद्याशक्ति हो तो। उनको प्यार करें, उनका दर्शन होगा।

(4)

डॉक्टर— आपको एक गाना दिखलाता हूँ। जिज्ञासा है।

> डॉक्टर 'ह्यूमेल' ने 'गोस्पल' खोलकर 'केशवसेन के संग नौका विहार' अध्याय निकाला। एक गाना पढ़कर सुना रहे हैं— ''आय मन बेड़ाते जाबि, काली कल्पतरु मूले...।'' उसके तृतीय चरण में है, 'शुचि अशुचिरे लोये दिव्य घरे कबे शुबि।'

डॉक्टर *(श्री म के प्रति)*— ईश्वर-दर्शन के पश्चात् शुचि-अशुचि-बोध लुप्त हो जाता है— इसका क्या यही अर्थ है?

श्री म— हाँ। एक अवस्था में ऐसा हो जाता है। तब मन में हो जाता है सब ब्रह्ममय है। जभी शुचि-अशुचि का प्रश्न तब रहता नहीं।

डॉक्टर— आपने इन्हें इस अवस्था में देखा है कभी-कभी ?

श्री म— हाँ, कभी-कभी उनका ये सब भेद दूर हो जाता था।

डॉक्टर— ठाकुर कहते हैं, निर्जन में गोपन में जाकर रो-रो कर उन्हें व्याकुल होकर पुकारना चाहिए। किन्तु क्या करने से यह होता है— जिसे काज-कर्म करके खाना है ?

श्री म— नहीं, सर्वदा के लिए सब के लिए यह व्यवस्था नहीं है। कभी-कभी जाना चाहिए— यह बात ही सबके लिए बताई है।

डॉक्टर— 'वैस्ट' में मनुष्य काम करके धन उपार्जन करना पसन्द करते हैं। इनके लिए ईश्वर-दर्शन का उपाय क्या है ?

श्री म— उपाय है निश्चय। वे यदि ईश्वर के लिए सब करें, निष्कामभाव से, वैसा करने से होगा। प्रकृति में काज है— बिना किए रह नहीं सकता तभी करता हूँ। देहसुख के लिए, अपने भोग के लिए करने से नहीं होगा।

डॉक्टर *(आक्षेप करते हुए)*— देखता हूँ, शिक्षा ही मन को रंग देती है अन्य प्रकार से। ठाकुर की ऐसी अर्थकरी विद्या नहीं थी। जो मैंने सीखी है— मैं भूल सकूँ तो बच जाऊँ।

श्री म— 'यह क्या सूत्रधर (जुलाहे) जोसेफ का पुत्र है ? उसने तो कभी लिखना-पढ़ना सीखा नहीं— किन्तु कैसा आश्चर्य! ऐसी ज्ञान की बातें तो कभी भी कोई नहीं बोला।' भगवान-दर्शन हो जाने पर ज्ञान का अभाव नहीं रहता। ''माँ राशि ठेल देती हैं,'' ठाकुर कहा करते थे।

डॉक्टर— चिकित्सा-विज्ञान पढ़ते समय थोड़ा-सा मनोविज्ञान भी पढ़ना पड़ा था। इसके पश्चात् जब ठाकुर के उपदेश पढ़े— शुद्धज्ञान और शुद्धभक्ति एक हैं— तब एकदम अवाक् हो गया— यह सोच कर कि कैसे उच्च मनोविज्ञान की बात है। ग्रीक-दर्शन में— प्लुटार्च और अन्य किसी-किसी की बातों में इससे मेल दिखाई देता है।

श्री म— हाँ, किन्तु ठाकुर ने यह बात विचार करके नहीं कही जैसे पण्डित

लोग करते हैं। यह उनका साक्षात् दर्शन है। माँ ने उन्हें दिखा दिया था दप् से। ज्ञानपथ से जहाँ पर पहुँचे थे— भक्तिपथ द्वारा भी वहाँ पर ही जा पहुँचे थे। तदुपरान्त यह महावाक्य कहा था। यह भी है एक शाश्वत सत्य— उनके पास प्रतिभात हुआ था, यह गम्भीर चिन्तन का फल नहीं है।

ठाकुर ने कहा था, ''प्रतिज्ञा करके कहता हूँ, जो मेरा चिन्तन करेगा वह मेरा ऐश्वर्य लाभ करेगा— जैसे पिता का ऐश्वर्य पुत्र लाभ करता है। ज्ञान-भक्ति, विवेक-वैराग्य, शान्ति-सुख, प्रेम-समाधि— ये सब मेरे ऐश्वर्य हैं।''

डॉक्टर ह्यूमेल विदा ले रहे हैं। श्री म स्नेह से उनके संग नीचे उतरे। अमहर्स्ट स्ट्रीट में संग-संग चलने लगे। मछुआबाज़ार में प्रवेश करके 'नवविधान' मन्दिर के सम्मुख आकर खड़े हो गए। डॉक्टर से बोले,

''इसे देखिए, केशवबाबू का ब्राह्मसमाज। ठाकुर यहाँ पर आए थे।''

''इसके भीतर क्या सबको ही प्रवेश का अधिकार है ? ''

''डॉक्टर के इस प्रश्न पर श्री म बोले, ''हाँ''।''

डॉक्टर ने प्रणाम करके विदा ली। जाते समय सेवक के पास अपना ठिकाना (पता) रख दिया— और श्री म का ठिकाना ले गए। श्री म करुण हृदय से गमनशील भक्त की ओर देखते रहे— मुख में 'दुर्गा-दुर्गा-श्री दुर्गा'।

●●

(5)

मॉर्टन स्कूल— चारतल की छत। कृष्ण पक्ष। रात्रि प्राय: नौ। उज्ज्वल कृष्ण आकाश में अगणित तारे मणिवत् ज्वल-ज्वल कर रहे हैं। उनकी ही आभा से छत ईषत् आलोकित है। नीचे हैं कलकत्ता महानगरी की असंख्य वैद्युतिक आलोकमाला। उसकी आभा भी प्रतिफलित हो रही है। श्री म छत पर उत्तरदक्षिण में दीर्घ पदक्षेप से टहल रहे हैं। अमेरिका

के डॉक्टर इ०एम० ह्यूमेल ने कुछ क्षण ही हुए विदा ली है। भक्तगण कोई श्री म के संग हैं, अथवा कोई दक्षिण की छत पर बैठे हैं। आलोक की क्षीण आभा में श्री म का मुखमण्डल देखकर लगता है कि वे जैसे अवाक् हुए कोई अद्‌भुत दृश्य देख रहे हैं। कुछ काल पश्चात् चलते-चलते अपने आप ही बातें करते हैं।

श्री म *(स्वगत, सविस्मय)*— Where does kartaagiri come from? (कर्तागिरि कहाँ से आती है?) मछली जैसे जल बिना रह नहीं सकती— बाहर रखने से छटपट करेगी— हम भी वैसे ही हवा बिना रह नहीं सकते। इसमें कर्तागिरि कहाँ? अभी ही तो डन साहब (Mr. Dunn) का अन्त हुआ है।

"शिशु माँ का दूध पीता है तो बचता है। हम भी तो वही पीते हैं। Big Mother (जगदम्बा) का दूध पीते हैं सर्वदा। हवा, जल, आहार— सब ही दूध हैं। शीत के समय वे ही रूई, पशम रूप में शरीर पर रहकर रक्षा करती हैं। वह भी दूध ही पीते हैं।"

छत पर उत्तर की ओर बैठ गए। भावोन्मत्त होकर गाना आरम्भ कर दिया।

गान : मा त्वं हि तारा, तुमि त्रिगुणधरा परात्परा।
आमि जानि गो ओ दीन दयामयी, तुमि दुर्गमेते दुःखहरा॥
तुमि जले, तुमि स्थले, तुमि आद्यमूले गो मा,
आछो सर्वघटे अक्षपुटे, साकार आकार निराकारा॥
तुमि संध्या तुमि गायत्री, तुमि जगद्धात्री गो मा,
अकूलेर त्राण कर्त्री, सदा शिवेर मनोहरा॥

[भावार्थ— माँ! तुम ही तारा, तुम ही त्रिगुण धरा, परात्परा हो। हे दीन दयामयी! मैं जानता हूँ तुम विपत्ति में दुःख हरण करने वाली हो। हे माँ! तुम्हीं जल में, तुम्हीं स्थल पर और तुम ही आद्यमूल में हो। तुम सर्व घटों में, अर्घ्यपुटों में साकार, आकार, निराकार हो। तुम सन्ध्या, तुम गायत्री और जगद्धात्री हो हे माँ! तुम व्याकुल प्राणों की त्राणकर्त्री,सदा शिव के मन का हरण करने वाली हो।]

गान : अन्तरे जागिछो गो मा, अन्तरयामिनी,
कोले करे आछो मोरे दिवस रजनी॥
अधम सुतेर प्रति केनो अतो स्नेह प्रीति,
प्रेमे आहा एकेबारे जेनो पागलिनी॥
कखनो आदर करि, कखनो सबले धरि,
पियाओ अमृत, शुनाओ मधुर वाणी,
निरवधि अविचारे कत भालोबासो मोरे,
उद्धारिछो बारे बारे पतितोद्धारिणी॥
बुझेछि एबार सार, मा आमार अमि मार,
चलिबो सुपथे सदा शुनि तव वाणी;
करि मातृस्तन्य पान, होबो वीर बलवान,
आनन्दे गाहिबो गान जय ब्रह्मसनातनी॥

[भावार्थ— हे माँ अन्तर्यामिनी, आप मेरे अन्तर में जाग रही हो। और मुझे रात दिन गोद में लिए हुए हो। इस अधम पुत्र के लिए आपको क्यों इतनी प्रीति, स्नेह है? आप तो प्रेम में मानो एकदम पागलिनी हो गई हो। मैं तो कभी प्यार करता हूँ, कभी जोर से पकड़ता हूँ। आप मुझे अमृत पिलाती हो और सुमधुर कहानी सुनाती हो। निरवधि अविचार से आप मुझे कितना प्यार करती हो! हे पतित उद्धारिणी! आप बार-बार उद्धार करती आ रही हो। माँ, अबकी बार मैंने सार समझ लिया है। माँ मेरी है, मैं माँ का हूँ। मैं सदा आपकी वाणी सुन कर सुपथ पर चलूँगा। आपका स्तनपान करके मैं वीर बलवान बन जाऊँगा और आनन्द में 'जय ब्रह्म सनातनी' गाऊँगा।]

कितने ही क्षण चुप रहकर फिर बातें करने लगे।

श्री म— जैसे पुतली का नाच। ज्योंहि तार (wire) गिर गया, झट बस हो गई।

श्री म फिर गाते हैं,

सदानन्दमयी काली, महाकालेर मनोमोहिनी।
तुमि आपनी नाचो, आपनि गाओ, आपनि दाओ मा करतालि॥

आदिभूता सनातनी शून्यरूपा शशिभालि।
ब्रह्माण्ड छिलो ना जखन, मुण्डमाला कोथाय पेलि॥
सबे मात्र तुमि यंत्री, आमरा तोमार तंत्रे चलि,
तुमि जेमन नाचाओ तेमनि नाचि, जेमन बोलाओ तेमनि बोलि॥
अशान्त कमलाकान्त दिये बोले, मा, गालागालि।
एबार सर्वनाशी धरे असि धर्माधर्म दु'टो खेलि॥

[भावार्थ— हे महाकाल के लिए भी मनमोहिनी सदानन्दमयी काली, तुम आप ही नाचती हो, आप ही गाती हो और आप ही तालियाँ बजाती हो। हे आदिभूता, शून्यस्वरूपा, मस्तक पर शशि धारण किए सनातनी, जब ब्रह्माण्ड ही नहीं था, तुम्हें मुण्डमाला कहाँ से मिली? सभी की तुम यन्त्री (चलन-शक्ति) हो, हम तुम्हारे शासन में चलते हैं, जैसे तुम नचाती हो, वैसे ही नाचते हैं; जैसे बुलवाती हो, वैसे ही बोलते हैं। किन्तु अशान्त 'कमलाकान्त' तुम्हें माँ, गालियाँ देकर कहता है, इस बार हे सर्वनाशिनी, तुमने तलवार लेकर धर्माधर्म दोनों ही खा डाले हैं।]

श्री म— जभी तो ऋषियों ने खोजने पर उन्हें ही देखा— 'देवात्मशक्तिं स्वगुणैर्निगूढ़ाम्।' जभी ठाकुर कहते, "मैं विचार और क्या करूँ— सब ही देख रहा हूँ— माँ ही सब होकर रह रही हैं।"

"जैसे छिद्र से पंखा खींचता है। उस ओर व्यक्ति बैठा खींच रहा है, दिखाई नहीं देता। इसलिए कहता है आदमी नहीं है। उसी तरह वे कहते हैं— creation automatic (अपने आप जगत बना है।) 'Predisposition (ईश्वरेच्छा से जो हुआ है वह तो) देख नहीं सकते। जभी God (ईश्वर) नहीं है— यह बात कहते हैं।'

यह बात कहते-कहते श्री म आकर दक्षिण की ओर नित्य वाले स्थान पर बैठ गए— कुर्सी पर उत्तरास्य।

(6)

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— वारुणी* का जल कोई लाया नहीं? आज के दिन एक anniversary (उत्सव) हुआ था काशीपुर-गार्डन (बागान) में। ठाकुर ने वारुणी का जल मँगवाकर सबको लेने के लिए कहा था। आज हमने देखा बड़े रास्ते पर कार्णवालिश स्ट्रीट में लोग जल लिए जा रहे हैं। मस्तक पर तिलक है। एक धोती पहने हैं गीली। इतनी धूप कि वह भी सूख गई।

''इसके भीतर तीन शरीर हैं— स्थूल, सूक्ष्म, कारण। कारण शरीर को ठाकुर 'भागवती तनु' कहते। स्थूल के लिए यह सब आहार आदि खाद्य; मन, बुद्धि हैं सूक्ष्म शरीर; इसे भी आहार की आवश्यकता है। और फिर कारण शरीर है— इसका खाद्य है, ईश्वर-लाभ की चेष्टा।

''वही शरीर आहार माँगता है। तभी तो (वे लोग) जा रहे थे आहार की खोज में।''

श्री म चुप रहे। फिर बातें करने लगे।

श्री म— जो जैसा है वैसा ही association (संगी) खोजता है। ठाकुर की इच्छा हुई थी— कई भक्त बैठकर जप करें।

'' 'लाटु देर में निद्रा से उठता है', देखकर एक दिन खूब तिरस्कार किया था। कहा, शरीर खराब हो तो भी उठकर हाथ-मुख धोकर, थोड़ा नाम करके फिर लेटे रहो।

''उनके निकट बेताला जन ठहर नहीं सकता था। वहाँ रहने पर सर्वदा ईश्वरीय कुछ करना पड़ता था— जप, ध्यान इत्यादि।''

धर्मपद बाबू *(श्री म के प्रति)*— उसका चिन्तन (कारण शरीर के खाद्य— ईश्वर-चिन्तन) बिना किए रह सकता है क्या? वह चिन्तन करना तो उचित।

श्री म— कर सकना, न कर सकना; उचित, अनुचित का question (प्रश्न)

---

* वारुणी = चैत्र की कृष्णा त्रयोदयी की सन्ध्या के समय का एक स्नान-उत्सव।

यहाँ कहाँ आता है? वे करवाते हैं। यह क्या मनुष्य विचार करके चिन्तन करता है? वे करवाते हैं, बिना किए उपाय नहीं है। प्रकृति ऐसी है— no question of 'उचित'— 'उचित' की बात ही नहीं आती।''

धर्मपद चट्टोपाध्याय मार्टन के शिक्षक हैं।

श्री म गाना गाते हैं :

गान : कबे तव दरशने हे प्रेममय हरि।
उथलिबे हृदि माझे चिदानन्द लहरी॥
(से दिन आमार कबे होबे?)

तनु होबे रोमांचित, प्राणमन पुलकित,
दुनयने बहिबे बारि (रूपमाधुरी हेरि)
तोमार प्रेममूर्ति निरमल मुखज्योति;
निरखिबो प्राणभरि (भावे मग्न होये)
सब साध मिटाइबो स्पर्श आलिंगन करि॥

[भावार्थ— हे प्रेममय हरि, तुम्हारे दर्शन पाकर मेरे हृदय में कब चिदानन्द लहरी उमड़ेगी? (वह दिन मेरा कब होगा?) जब मेरा शरीर रोमाञ्चित होगा, प्राणमन पुलकित होंगे और तुम्हारा रूपमाधुर्य देखकर दोनों नयनों से प्रेमाश्रु बहेंगे! तुम्हारी प्रेममूर्ति, निर्मल मुखज्योति, भाव में मग्न होकर कब जी भर कर देखूँगा और स्पर्श, आलिंगन करके सब 'साध' मिटाऊँगा!]

गान : सब दुःख दूर करिले दरशन दिये, मोहिले प्राण।
सप्तलोक भूले शोक तोमारे पाइये, कोथा आमि अति दीनहीन।

[भावार्थ— दर्शन देकर तुमने मेरे सब दुःख दूर कर दिए हैं और प्राणों को मोह लिया है। तुम्हें पाकर सप्तलोक भी शोक भूल जाते हैं, मेरे जैसे अति दीनहीन की तो बात ही क्या!]

श्री म— विवेकानन्द ने गाया था, काशीपुर बागान में ठाकुर की वह बात सुनकर— ''मुझे किन्तु खूब अच्छी प्रकार प्रतीति होती है कि भीतर कोई एक है।'' और कहा था, ''जब तक 'मैं' है तब तक सेव्य-सेवक ही अच्छा है।''

उसी भाव में थे भरपूर। तभी गाया नीचे आकर।

श्री म फिर और गाते हैं :

गान : मन रे कृषि काज जानो ना।
एमन मानव जीवन रइलो पतित, आबाद करले फलतो सोना।
कालीनामे दाओ रे बेड़ा, फसले तछरूप होबे ना।
से जे मुक्तकेशीर शक्त बेड़ा, तार काछेते यम घेंसे ना॥

अद्य किंवा शताब्दान्ते, बाजाप्त होबे जानो ना।
आछे एकतारे मन एइबेला तुइ ताय सेचो ना।
एखन आपन एकतारे (मन रे) चुटिये फसल केटे ने ना॥

गुरुदत्त बीज रोपण करे, भक्तिवारि सेंचे दे ना।
एका यदि ना पारिस मन रामप्रसाद के संगे ने ना॥

[भावार्थ— रे मन, तू कृषि-काज नहीं जानता। ऐसी उत्तम मानव-जमीन पड़ी रही, 'आबाद' करते तो सोना फलता। इसे काली-नाम की बाड़ लगाते तो फसल बेकार नहीं होती। वह तो मुक्तकेशी काली की वह सख्त बाड़ है, यम भी जिसके निकट नहीं जाते। आज या सौ वर्ष बाद यह जमीन जप्त होगी, तुम यह नहीं जानते। रे मन, अब एकाग्र होकर गुरु द्वारा दिए बीज का रोपण कर और भक्तिवारि से सींचकर भरपूर फसल काट लो ना! अकेले यदि न कर सको तो हे मन, 'रामप्रसाद' को संग ले लो ना!]

श्री म इस गाने को गाकर अनेक क्षण बैठे रहे चुपचाप। फिर बातें करने लगे।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— हम नाना प्रणालियों के द्वारा उनका ही स्तनपान करते हैं, दिन-रात। गोलदीघि पर देखा था— पक्षी स्नान कर रहे हैं जल में एक के बाद एक। देखकर मन में हुआ— ओहो, तभी तो उन्होंने पहले से ही जल बनाकर रख दिया है, उनके लिए भी।

(गदाधर के प्रति)— जभी निर्जन में तपस्या करनी चाहिए। ठाकुर से केवल कहना चाहिए, 'दर्शन दो, दर्शन दो, दर्शन दो'।

श्री म *(गाने के सुर में)*— 'मा तोर रंग देखे रंगमयी अवाक् होयेछि।'

"देखो ना, क्राइस्ट का crucifixion (क्रूसविद्ध) हुआ। राम सरयू में डूब गए। कृष्ण ने व्याध के शर से प्राण त्याग किया। चैतन्यदेव एक version (मत) से समुद्र में डूब गए। परमहंसदेव ने एक वर्ष कैन्सर से भोगा।

"अवतारों को क्यों होता है ऐसा दुःख, कष्ट?— लोगों को भरोसा होगा, इसलिए।

"और देखो, शंकराचार्य को भगन्दर हुआ। बुद्धदेव को colic pain (पित्तशूल) हुआ। आयु खूब अधिक हो गई थी। तो भी कैसे— जैसे एक गाड़ी है, पहिया टूट गया है, उसे ही खेंचे लिए जा रहे हैं— अचल देह।

"ठाकुर को ऐसा क्यों हुआ?— क्योंकि उनको देखकर भक्त लोग भरोसा पाएँगे।

"आनन्द को बुलाकर बुद्धदेव ने यही बात कही थी। गाड़ी का एक पहिया नहीं है। उसको जैसे खेंचकर ले जाना, वैसे ही इस शरीर का बोध हो रहा है।"

श्री म की ऊर्ध्वदृष्टि। गाने का एक ही चरण गाते हैं— 'माँ, तोर रंग देखे रंगमयी अवाक् होयेछि।' (माँ, तेरे रंग देखकर हे रंगमयी, मैं अवाक् हो गया हूँ।)

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— केवल जीव के साहस के लिए। इसमें उन्हें भूल न जाएँ— जिनके पास से देह पाई है, उनको। कहते हैं— 'देखो, मैं भी भोगता हूँ। देह रहने से ऐसा होता ही है।'

"चैतन्यदेव जल में डूब गए थे। First time (प्रथम बार) मछुवों ने उठा लिया। Second time (द्वितीय बार) फिर पता ही नहीं लगा। यही most reliable verson (विश्वासयोग्य मत) प्रतीत होता है।*

श्री म छत पर खड़े हुए हैं। भक्तलोग सब ही चले गए हैं।

---

* डॉक्टर दिनेशचन्द्र सेन ने 'बृहत् बंग' में कहा है, चैतन्यदेव ने रथ के समय गुण्डिचा-मन्दिर में 'सेप्टिक फीवर' से देह त्याग किया।

अब रात्रि ग्यारह। श्री म हैं पूर्व भाव में ही मत्त। जगबन्धु, विनय और छोटे जितेन को बुलाकर बातें करने लगे छत पर— टैंक के पास खड़े हुए।

श्री म— उससे बहुत ठीक समझ में आता है— वही जो ट्राम की होती है— क्या कहते हैं, ऊपर जो घूमती है— जिसके द्वारा electric current आता है।

विनय— ट्रॉली।

श्री म— ठीक नाम से क्या कहते हैं, पूछकर बताना। जैसे वह ट्रामगाड़ी को चलाती है, हमारा जीवन भी वैसे ही चलता है। उनके संग में इन सबके द्वारा ही योग है। देखो ना हवा— यही निश्वास लेता हूँ। यही बन्द हो जाए तो बस— सब बन्द, गाड़ी जैसे बन्द। इसीलिए उससे ही ठीक समझा जाता है। सर्वदा ही उनके संग में योग में रहता हूँ। वही एक ही सुन्दर दृष्टान्त है। उनके हाथ की पुतलियाँ हैं सब मनुष्य। कर्तागिरि नहीं रहती। जभी तो, 'तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।' उनके शरणागत हुए पड़े रहो। अन्य उपाय नहीं।

कलकत्ता, 1 अप्रैल, 1924 ईसवी;
मंगलवार, 18वाँ चैत्र, 1330 (बंगला) साल।

दशम अध्याय

प्रतीची (वैस्ट) के प्रति भारत की हितवाणी

(1)

मॉर्टन स्कूल की चारतल की छत। प्रभात काल। सूर्य उदित हो रहे हैं। श्री म मादुर पर बैठे उपनिषद्-पाठ करते हैं— 'ब्राह्मधर्म', षष्ठ-अध्याय। जगबन्धु और छोटे जितेन हैं। वैदिक सुर में पाठ करते हैं।

श्री म— ब्रह्मविदाप्नोतिपरम् सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म.....
न तत्र सूर्य्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः ।...
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥
न चक्षुषा गृह्यते नापि वाचा नान्यैर्देवैस्तपसा कर्मणा वा।
ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्त्वस्ततस्तु तं पश्यति निष्कलं ध्यायमानः ॥

श्री म— ठाकुर ने कहा था, ईश्वर वस्तु और सब अवस्तु। जभी उनका लाभ करने पर सब ही लाभ हो गया। तब प्राप्त करने को शेष कुछ और नहीं रहता। मनुष्य का मन लाभ, नुकसान— ये ही सब relative (सांसारिक भाव) लेकर व्यस्त रहता है। किसी भी लाभ की आशा ना हो तो मनुष्य काम में अग्रसर नहीं होता। जभी ऐसी human language of gain and loss (मनुष्य की लाभ-क्षति की भाषा) द्वारा वेद कहता है— तुम यदि लाभवान होना चाहते हो तो ईश्वर का लाभ करो। इसके ऊपर लभ्य और कुछ नहीं है। इससे ही अग्रसर हो जाओगे।

"उनका स्वरूप इसके पश्चात् बोलते हैं : वे ही सत्य, वे ही ज्ञान, वे ही अनन्त हैं। वे सच्चिदानन्द— वाक्यमन के अतीत हैं। वे हैं, तो जगत है।

उनके प्रकाश से जगत प्रकाशित है। वे स्वयंप्रकाश (self-effulgent)— ज्योति की ज्योति हैं।

"कहाँ किस रूप में, किस उपाय से पाओगे, वह भी बतलाते हैं : हृदय में उनका दर्शन होता है। ठाकुर भी वह कहते हैं, हृदय "डंका मारा" अर्थात् famous (विख्यात) स्थान है। और भी कहते हैं, "भक्त का हृदय भगवान का बैठकखाना है।" माने सब हृदयों में ही हैं, तो भी भक्त के हृदय में हैं प्रकाशित। और फिर उपाय बतलाते हैं : ध्यानयोग से उनका लाभ होता है। ठाकुर ध्यान के ऊपर तभी खूब जोर दिया करते। तपस्या, कर्म, किंवा मनबुद्धि द्वारा वे लभ्य नहीं— इसका अर्थ यह नहीं है कि इन सबका प्रयोजन नहीं है। किन्तु केवल इनके द्वारा जाना नहीं जाता। सहायक चाहे ये हैं। तभी तपस्या माने उनको पाने की चेष्टा होना। किंवा अन्य कर्म प्रकृति में हों तो वे भी निष्काम होकर करना। निष्काम होकर, उनका शरणागत होकर तपस्या अथवा कर्म करते-करते चित्तशुद्ध होता है। इसी शुद्ध चित्त में उनका दर्शन होता है। जभी "शुद्धबुद्धि और शुद्धआत्मा एक", ठाकुर कहा करते।

"जिन्होंने ईश्वर-दर्शन किया है, उनके कई एक लक्षण कहते हैं। प्रथम वे अतिवादी नहीं होते, अर्थात् उनका अतिक्रम करके कुछ बोलते नहीं। माने सर्वदा उनकी बातें ही करते हैं यदि बातें करनी ही हों। ईश्वर ही कर्त्ता और सब अकर्त्ता, यही बात बोलते हैं। वाक् इन्द्रिय अति प्रबल है, जभी उसके काम का उल्लेख करते हैं। ईश्वर का दर्शन करने पर और सब अलूनी (फीका) लगता है, ठाकुर कहते। तभी अन्य वस्तु में अनुराग नहीं।"

●●

(2)

रात्रि साढ़े आठ। चारतल की छत पर श्री म भक्त सभा में उपविष्ट हैं। अन्तेवासी आए हैं, कॉलिज स्क्वेयर से। थिओसोफिकल सोसाइटी में बेलुड़ मठ के शर्वानन्द जी का लेक्चर था— न्यूयार्क मठ के अध्यक्ष स्वामी बोधानन्द जी सभापति हुए थे। श्री म ने साढ़े छः बजे भेज दिया

था। श्री म का खूब आग्रह है कि ईश्वर को लेकर जो-जो कुछ करते हैं या बोलते हैं उनको सुनूँ। निज वृद्ध— जा सकते नहीं, जभी 'friends' (बन्धुओं) को भेज देते हैं। अब तक इन्तजार कर रहे थे। वक्तृता का विषय था The National Reconstitution (जातीय पुनर्गठन)।

श्री म *(साग्रह अन्तेवासी के प्रति)*— क्या-क्या सब बातें हुईं? हम 'हॉ' करे बैठे हैं, सुनने के लिए।

अन्तेवासी— शर्वानन्द स्वामी बोले,

> ''देश को उठाना हो तो civic virtues (समाजनीति) और spiritual virtues (धर्मनीति) एक संग चलानी होगी। और life (जीवन) द्वारा universality of religion (धर्म की सार्वजनीन दृष्टि) सिखानी होगी। और a band of soldiers with spiritual weapons will have to be sent out, both here and abroad, for the propagation of ideas of the universality of religion (सुदृढ़ धर्मनीति द्वारा सुसज्जित करके एकदल धर्मसैनिक, धर्म के सार्वजनीन भाव-प्रचार के लिए, इस देश में और विदेश में भेजना आवश्यक हो गया है)।''

स्वामी बोधानन्द बोले,

> '' 'Education' (शिक्षा) की आवश्यकता है। 'Body and mind' (देह और मन) दोनों को ही तैयार करना होगा। 'You are the part of Brahman' (तुम ब्रह्म का अंश हो), यह बात प्रचार करके लोगों के मन को ऊपर उठाना होगा। और West (पाश्चात्यों) की civic quality (समाजनीतियाँ), punctuality, honesty etc. (समय का सद्व्यवहार, सत्यता आदि) लानी होंगी। ये गुण हमारी spirituality (धर्म) के संग मिलने से तब बढ़िया फल फलेगा। धर्म के नाम पर laziness (अलसता) प्रवेश कर गई है लोगों में। इसे दूर करना होगा।''

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— In a nutshell (संक्षेप में) यही स्थिर होता है—

कर्म करना। 'Reconstruction' (पुनः संगठन) अर्थात् कर्म करना। उसे करेंगे नहीं? कर्म बिना किए उपाय है क्या? न करने से ही तो फिर देश नीचे गिर गया है। सबको कर्म करना होगा। फिर भी एक ही काम नहीं, भिन्न-भिन्न लोगों का भिन्न-भिन्न काज है। कैसा काण्ड उन्होंने कर दिया है! कैसे रहेगा बिना काम किए? 'कार्यते ह्यवशः कर्म'— प्रकृति जोर करके करवाएगी। एक-एक प्रकृति एक-एक रकम का कर्म करेगी। इस जगत की रक्षा के लिए ही उनकी ऐसी व्यवस्था है। किसी को भी नाक-भौं चढ़ाना नहीं।

''फिर भी घर अलग-अलग हैं, ठाकुर बतलाते, तुम्हारा यह घर, इसका वह घर। भिन्न घर का भिन्न काज। एक ऋषि को यदि कहो— तुम तपस्या छोड़कर उठकर अन्य काज करो। वे क्या उसे सुनेंगे? उन का घर अलग है।

''उनका अनन्त काण्ड चले कैसे! एक श्रेणी और भी है। वे केवल उनको ही पुकारेंगे।

''देखिए चार वर्ण हैं, और फिर उसके भीतर चार आश्रम हैं। ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और संन्यास। ये चारों आश्रम ही उन्हें पुकारेंगे— देखकर नाक सिकोड़ना नहीं चलेगा।

''ठाकुर की इच्छा थी East-West (पूर्व-पश्चिम) का मेल हो जाए। इसीलिए स्वामीजी को उस देश में भेज दिया, वे लोग इस देश की वाणी— धर्म की बातें सुनेंगे और उस देश से उनकी सब विद्या इस देश में आएगी। उनके कितने गुण हैं, तभी तो वे इतने बड़े हुए हैं। वह सब इस देश में आएगा। आदान-प्रदान।

''मूल में ईश्वर में विश्वास न होने से सब ही व्यर्थ श्रम है। स्वार्थी हो जाता है मनुष्य। मन में समझता है निःस्वार्थ करता हूँ, किन्तु वैसा नहीं होता। उससे ही ईर्ष्या-द्वेष-वृद्धि होते हैं। West (पाश्चात्य) का यह भाव विलक्षण है। Narrow Nationalism (संकीर्ण जातीयता) आ जाती है।

''ठाकुर का message (सन्देश-वाणी) broad, universal (उदार, सार्वजनीन) है। यह सारे जगत को अपना कर देती है। West (पश्चिम)

में यह वाणी जानी आवश्यक है— तभी तो स्वामीजी (विवेकानन्द) जाकर फैला आए। क्रमशः यह फैलेगी। Politicians (राजनीति विशारदों) के भीतर ठाकुर का universal message (सार्वजनीन सन्देश) क्रमशः प्रवेश कर रहा है। West (पाश्चात्य) का ही benefit (उपकार) अधिक होगा।

"क्राइस्ट का धर्म वे लोग शुरु से ही समझ नहीं सके हैं। ठाकुर की वाणी सुनकर धीरे-धीरे उसे समझ सकेंगे। उनका अन्य सब ठीक है, शरीर सुन्दर है। उसकी रक्षा के सब उपकरण निकल आए हैं। मन भी सतेज है, किन्तु दृष्टि निम्न है। ऊर्ध्व दृष्टि होने पर ही अच्छा है— अर्थात् ईश्वर की ओर दृष्टि। इसको यदि वे लोग highest idea (सर्वश्रेष्ठ भाव) समझ कर ग्रहण करें तभी मंगल है। यही तो है ठाकुर का message to the West (प्रतीचियों के प्रति उपदेश)— One, God is; two, I have seen God; three, you also can see God. (प्रथम— 'ईश्वर हैं', द्वितीय— 'मैंने ईश्वर-दर्शन किया है', तृतीय— तुम लोग भी ईश्वर को देख सकते हो)।' इसको ग्रहण करके वे लोग बच जाएँगे।

"बाइबल में भी है यह बात— Ye are divinities; 'seek ye first the kingdom of God;' 'what is a man profited, if he shall gain the whole world, and lose his own soul?' (तुम सब देवता हो; पहले तो ईश्वर-लाभ की चेष्टा करो; आत्मजय बिना जगत-जय भी निष्फल है)। ये सब दब गई हैं। यह भी उनकी इच्छा।"

7-4-1924

●●

(3)

श्री म चारतल के घर में बैठे उपनिषद्-पाठ करते हैं। प्रातः सात प्रायः। निकट दो-एकजन भक्त हैं। 'ब्राह्मधर्म', सप्तम अध्याय का पाठ वैदिक स्वर से किया।

तमीश्वराणां परमं महेश्वरं तं देवतानां परमं च दैवतम्।...
हृदा मनीषा मनसाभिक्ऌप्तो य एतद्विदुरमृतास्ते भवन्ति।।

तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या वाचो विमुञ्चथ अमृतस्यैष सेतुः।...
ब्रह्मोडुपेन प्रतरेत विद्वान् श्रोतांसि सर्वाणि भयावहानि॥

श्री म— ब्रह्मा, विष्णु, शिव— ये ईश्वर हैं, किन्तु परमेश्वर इनका भी ईश्वर है। इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, यम, वरुण, अग्नि, वायु प्रभृति देवता महाशक्तिशाली हैं। किन्तु परमेश्वर हैं इनके भी जन्मदाता। वे अतुलनीय। उनके समान ही कोई नहीं है, तो उनसे बड़ा कैसे हो? वे ही सबसे बड़े हैं, उनकी अचिन्त्य शक्ति है। इस अनन्त विश्व की रचना की बात सोचकर अवाक् रहना पड़ता है। कैसी अद्‌भुत बुद्धि का प्रकाश, और क्रियाशक्ति भी फिर कैसी प्रचण्ड! कैसी विचित्र बुद्धि है जिन्होंने इस plan (छवि) को तैयार किया है! वैज्ञानिक लोग अवाक् हो जाते हैं, एक-एक विषय का चिन्तन करते हुए। इस देह को ही देखो— किस प्रकार चलती है। तनिक भी इधर से उधर हुआ कि सब बन्द। और कैसी सूक्ष्म क्रिया चलती है भीतर। तभी तो (आचार्य प्रफुल्लचन्द्र) राय महाशय कहते हैं, ''चकित हो जाता हूँ— जब छोटा सा घास का तिनका लेकर देखता हूँ कि कैसी विचित्र बुद्धि के द्वारा इसे तैयार किया है।'' वैज्ञानिकों में से कोई-कोई Grand Intelligence (विचित्र बुद्धि) कहते हैं। और फिर कर्मशक्ति देखो— कोई ज़रा-सी शरीर की शक्ति दिखाता है तो वाह-वाह देते हैं। और यह कैसा काण्ड ही चल रहा है! कितनी बड़ी शक्ति का प्रयोजन है इसको handle (परिचालन) करने के लिए। बुद्धि का जोर, शरीर का जोर दोनों ही अद्‌भुत।

''और फिर कहते हैं उनका मन-बुद्धि, देह कुछ भी नहीं है। हमारी इस मन-बुद्धि का कारण भी वे ही। जभी स्वाभाविक ही कहते हैं ज्ञानशक्ति और क्रियाशक्ति। अर्थात् मनुष्यवत् मस्तिष्क लगाकर इस plan (परिकल्पना) को तैयार नहीं किया। नाही मनुष्यवत् शरीर से परिश्रम करके ही चलाते हैं। असली बात है— वे सकल का स्वरूप और कारण हैं। इच्छामात्र से ही निःश्वास की भाँति सब हो रहा है। एक ही विषय को लेकर चिन्तन करने से सारा जन्म कट जाता है, समझ में नहीं आता। जगदीशबोस महाशय ने सारे जीवन में यह निकाला— वृक्ष को भी मनुष्यवत् सुख-दुःख का बोध होता है। तो भी उन्होंने ऋषियों की वाणी पर विश्वास करके experiment (गवेषणा)

किया था, इसलिए शीघ्र हो गया। किन्तु जिन्होंने इस स्थूल-सूक्ष्म जगत को बनाया है, और फिर सब चलाते भी हैं निःश्वास की भाँति, उनकी कैसी असीम और अचिन्त्य शक्ति!

''इस ओर से चिन्तन करे तभी मनुष्य की littleness (क्षुद्रता) पकड़ी जाती है। जभी ऋषियों ने इस प्रकार कहा है। आँखों के सामने अँगुली से पकड़ कर दिखाया है। जाना चाहता है नहीं ना अहंकार! एक-एक mudball (मृत्पिण्ड) हम लोग हैं, सोचते हैं एक-एक lord (अधीश्वर) हैं, किन्तु compare (तुलना) करके देखो, कहाँ है तुम्हारी lordship (कर्त्तागिरि)? वे ही कर्त्ता, हम अकर्त्ता।''

श्री म— इतने बड़े होते हुए भी वे भक्त के लिए छोटे बनकर पकड़वा देते हैं, और फिर मनुष्य के हृदय में वास करते हैं। चित्त शुद्ध होने से वे दिखाई देते हैं— ध्यानयोग में। 'हृदा' माने व्याकुलभाव में, मौखिक नहीं। व्याकुल होकर उनका चिन्तन करते-करते चित्त शुद्ध हो जाता है। उनकी छाप पड़ती है शुद्धचित्त में, जैसे स्थिर निर्मल जल में प्रतिबिम्ब पड़ता है। जभी व्याकुलता चाहिए। ठाकुर कहते, व्याकुल होकर रो-रो कर कहो, वे दिखाई देंगे ही देंगे। कहते, जैसे dawn heralds the sunrise (उषा जैसे सूर्योदय की घोषणा करती है)। वैसे ही व्याकुलता के पश्चात् दर्शन होता है। उनका दर्शन हो चुके तब problem of human life (मनुष्य जीवन की समस्या) solved (समाप्त) हो गई। जन्म-मृत्यु के हाथ से परित्राण हुआ। अमृतत्व (life ever lasting) प्राप्त हो गया।

''जभी तो जब तक उनका लाभ न हो तब तक अन्य वाक्य बन्द करो, कहते हैं। अर्थात् अन्य सब कार्य— चेष्टा छोड़कर उनके लाभ की चेष्टा करो। ठाकुर ने ईशानबाबू से कहा था— चलो, कुछ दिन उनके लिए पागल ही हो गए। वे इतने बड़े होते हुए भी शरणागत के निकट छोटे से भी छोटे हो जाते हैं। और फिर साढ़े तीन हाथ के मनुष्य होकर आते हैं। भक्तगण जब व्याकुल होकर रोते हैं, तब वे आते हैं। आकर उन्हें अंक में उठा लेते हैं। जैसे अब ठाकुर आए हैं। वेद में जिनके लिए इतना करके कहा गया है, वे ही अभी मनुष्य होकर दक्षिणेश्वर में आए हैं, भक्तों के भरोसे के लिए। बोले हैं, 'मेरा

ध्यान करने से ही होगा। और कुछ करना नहीं पड़ेगा।' केवल बोलकर ही शान्त नहीं हुए। कई जनों के द्वारा अपना ध्यान करवा लिया। और फिर उससे ईश्वर-लाभ हुआ है। वे हैं उनकी वाणी का जीवन्त प्रमाण— living testimony.

''जभी ऋषिजन कहते हैं उनको, 'अमृतस्य एष सेतुः।' मृत संसार, अमृत वे। जड़ और चैतन्य। रक्त-मांसमय भौतिक शरीर, मन और चिन्मय वे। इन्हीं opposite (विरुद्ध) दो पदार्थों का संयोग सेतु भी वे। यद्यपि दो स्रोत दो दिशाओं में जाते हैं— भोग और त्याग, प्रवृत्ति और निवृत्ति, मृत्यु और अमृत, शान्ति और अशान्ति, ज्ञान और अज्ञान, जगत और ईश्वर— इन दोनों का संयोगस्थल वे, जभी 'सेतु', 'उडुप' कहते हैं। उडुप माने नौका— जीवन नौका (life boat)।

''संसार की भीषण छवि एक और दिखाते हैं। यह फिर दिखाना ही पड़ेगा, क्यों? ताकि सब ही समझ सकें कि यह कैसी झंझट की जगह है! ज्वलन्त अनल। अन्दर-बाहर शत्रु। भीतर काम, क्रोधादि और बाहर शोकतापादि। और फिर एक और कहते हैं, मेरी शरण लो। अमृत के सेतु (पुल) पर आरोहण करो। ब्रह्मोडुप आश्रय करो। उस पर चढ़ने के पश्चात् फिर भय नहीं। चिर शान्ति, चिर आनन्द लाभ करो।''

श्री म— ठाकुर का रास्ता और भी सहज है। कहते हैं— माँ, मैं जानना नहीं चाहता कि तुमने क्या किया है, क्या नहीं किया है, तुम्हारे पादपद्मों में शुद्धा भक्ति दो। ब्राह्मभक्तों से कहा था, तुम लोग उनके ऐश्वर्य की बातें इतनी बोलते क्यों हो— तुमने यह किया है, तुमने वह किया है? 'किस प्रकार उनके संग मिलना हो' उसकी चेष्टा करो। वे निश्चय दर्शन देंगी। यही है प्रार्थना का सरल पथ।

•

श्री म छत पर अल्प टहल कर चारतल के गृह में बिछौने पर आकर बैठ गए। हाथ में गीता लेकर सोलहवाँ अध्याय पाठ कर रहे हैं।

श्री म— यहाँ पर दो प्रकार के मनुष्यों की बात कहते हैं। मनुष्यों में असुर भी

हैं और फिर देवता भी हैं। ईश्वरविद्वेषी और ईश्वरविश्वासी।

"जो ईश्वरविद्वेषी— असुर, अर्थात् जो स्वयं कर्त्ता बन बैठे हैं, उनके लक्षण बतलाते हैं। इनको बताए बिना कैसे लोग सावधान होंगे? दोनों भाव ही मनुष्य में हैं कि ना, जभी। आदर्श ईश्वर-लाभ— दैवी भाव सहाय। आसुरिक भाव वर्जनीय। आसुरिक लोगों में प्रवृत्ति-निवृत्ति अर्थात् भोग-त्याग, जगत-ईश्वर यह विवेकज्ञान, यह बुद्धि नहीं होती। सब में ही प्रवृत्ति— सब जगत का ही भोग्य। उनका है ऐसा ही ज्ञान। तभी वह शुचि-अशुचि, सदाचार-असदाचार, सत्य-असत्य— इन सबके सम्बन्ध में धारणा नहीं करता। Eat, drink and be merry (खाओ, पिओ और आनन्द करो) उनका है यही आदर्श।"

(4)

श्री म— (तर्जनी द्वारा शून्य में वृत्त अंकित करके) ईश्वर से ईश्वर में। जीव की गति ही है, वहाँ से आकर वहाँ ही जाना। मनुष्य-जन्म एक necessary stage (अति प्रयोजनीय अवस्था) है in the course of progress (आगे बढ़ने की गति के पथ में)। इस stage (अवस्था) के दोनों extreme points (चरम बिन्दुओं) की बात कही गई है यहाँ पर। एक असुर और एक देव— (from the brute man to the God-man)। आकार में मनुष्य, कार्य में brute (पशु)। उसका क्या कार्य है, क्या विचार है, उसका एक चित्र दिया है। और देवमानव (Godman) का कैसा व्यवहार, उसका एक चित्र दिया है। क्योंकि तभी तो अपना foothold (अवस्थान) कहाँ है, पकड़ सकेगा और वहाँ से आगे बढ़ेगा ईश्वर की ओर। ये सब जैसे milestones (पथ के निशान) हैं। सब लोग ही विचार करके अपनी-अपनी अवस्था जान सकते हैं— कहाँ पर खड़े हैं। मिला लेने से ही हुआ। 'गाइड बुक' में जैसे direction (निर्देश) होते हैं, वैसे ही ये हैं। जीव की सुविधा के लिए कितना करके आयोजन किया है। और फिर बीच-बीच में स्वयं आकर इनकी व्याख्या करते हैं, अवतार होकर। उनके आने के समय

देवभाव की छड़ाछड़ि (रेलपैल) हो जाती है, अन्य समय भाँटा (कमी) पड़ जाती है। ठाकुर आए हैं अब इसी देवभाव को दिखाने। तब मनुष्य भरोसा पाएगा। अवतार का जीवन ही है देवभाव का living demonstration (जीवन्त अभिनय)।

"ठाकुर ने मनुष्यों के तीन भाग किए थे— योगी, योगीभोगी और भोगी। प्रथम दो में तो देवभाव है— शेष में है असुर का भाव। अर्थात् स्वार्थपर देहात्मबुद्धि का पुतला। पशुभाव— खाली आहार, विहारादि लिए ही व्यस्त।

"देवभाव और पशुभाव दोनों ही मनुष्य में हैं। जब समाज में देवभाव का अधिक प्रकाश होता है तब कहते हैं सत्ययुग। दोनों ही घूमते हैं। जब कम होता है तब कलियुग। और बीच के दोनों त्रेता, द्वापर। धीरे-धीरे आता है देवभाव। इस प्रकार चक्र घूमता है। ये दोनों ही universal force (जागतिक) प्रकृति के विधान में शक्तियाँ हैं। ये ठीक एक नियम से चलती हैं (by the law of nature)। एक मनुष्य में जिस प्रकार ऐसे भावों का बढ़ना, घटना होता है, वैसे ही एक society of men (मनुष्य समाज) में भी, एक जाति में भी वही चलता है।

"वर्तमान समय इन दो भावों का संधिक्षण है। Materialism (जड़वाद) बढ़ गया है। लोग देहबुद्धि सम्पन्न अधिक हो गए हैं। जभी as a course of evolution (क्रम विकास के नियमानुसार) ठाकुर आए देवभाव फैलाने। Material culture (जागतिक उन्नति) की लीलाभूमि West (प्रतीची) है। उसमें अमेरिका अन्यतम। वहीं पर स्वामीजी को भेजा। उनके घर में जाकर उनके मुख के ऊपर कह आए उनका यह दोष है। सावधान हो जाओ नहीं तो ध्वंस अनिवार्य है। यही देखो— दोनों दिशाएँ ही हैं। इधर तो उनको वैसा बनाया, इधर से फिर स्वामीजी के द्वारा सावधान करवा दिया। वैसा तो करेंगे, यह तो उनका काम है। दोनों ही स्वयं करते हैं।

"स्वामीजी द्वारा उन्हें कहलवा भेजा; तुम लोग विश्वास करो, ईश्वर है। और तुम उसे देख सकोगे। तुम लोग ही उनका part and parcel (अंग-प्रत्यंग)— अपने जन, 'Children of Immortal Bliss' अमृत की

सन्तान। अमेरिका को centre (केन्द्र) करके पश्चिम में वही देवभाव फैलावेंगे। इसीलिए स्वामीजी का अमेरिका-गमन।''

श्री म पढ़ते हैं। कहते हैं—

''अब आसुरिक चित्र को अंकित करते हैं; Extremely selfish man (अति स्वार्थपर मनुष्य) क्या काम करता है, कैसा भाव होता है उसका, वही बताते हैं।

''वह सोचता है, 'मैं धनी और मानी, मैं कुलीन, विद्वान, मैं सिद्ध और सुखी, मैं बलवान और सबसे बड़ा, मैं दाता और विधाता। आज मेरा यह मनोरथ पूर्ण हुआ; कल उसे पूर्ण करूँगा। आज मेरी इतनी सम्पद और ऐश्वर्य, कल इससे बढ़ जाएगी। आज इसको मारा है, कल उसको मारकर पथ निष्कण्टक कर लूँगा।'

''दैवी मनुष्य सोचता है, 'ईश्वर कर्त्ता हैं, मैं अकर्त्ता हूँ। मैं यन्त्र, वे यन्त्री; मैं चालित, वे चालक। मेरा जो कुछ है, सब उनका है। वे मालिक हैं। धन-जन, पुत्र-मित्र, बल-ऐश्वर्य, विद्या-बुद्धि, कुल-शील-मान सब उनका है। मैं सम्पूर्ण रूप से उनका हूँ। यह विश्व संसार उनका है। जभी यह विश्व संसार मेरा परम आत्मीय है। जैसे— श्रीकृष्ण, यीशु, ठाकुर।' ये दोनों चित्र बनाकर पास-पास कमरे में लटकाए रखना उचित है।

''एक मनुष्य विचार करता है, 'मैं कर्त्ता, ईश्वर अकर्त्ता।' और एक ठीक उल्टा सोचता है 'ईश्वर कर्त्ता, मैं अकर्त्ता'। क्यों ऐसा contrast (विरोध) बनाया है ?— लोकशिक्षा होगी, इसी कारण। Opposite forces (विरुद्ध शक्तियाँ) न हों तो काम नहीं होता ना!— इसीलिए। बाधा शक्तिवृद्धि करती है। जभी सृष्टि में देव, असुर दोनों ही रखे हैं। यह तो उनका खेल है, तभी कहा ऋषियों ने।

''ईश्वर में विश्वास होने पर अपने आप ही दैवी गुण प्रकाश पाते हैं। वैसा ना होने पर आसुरिक दोष दिखाई देंगे। दैवीलोग कर्मक्षेत्र में uncompromising (नैतिक विषय में अटल), जैसे यीशु, श्रीकृष्ण, हनुमान।

''ठाकुर 'मैं', 'मेरा' प्राय: बोल भी नहीं सकते थे। कहते 'यहाँ पर'

'यहाँ का'। देखते थे कि ना, माँ सर्वत्र हैं। भले में भी माँ, मन्दे में भी माँ। भवतारिणी भी माँ, 'रति की माँ' भी माँ।

"यहाँ पर जो कुछ कहा गया है, सत्संग करने पर उसकी धारणा होती है। नहीं तो समझ में ही नहीं आता। सत्संग में अपना दोष, गुण पकड़ा जाता है। Right (ठीक) घड़ी के संग Wrong (गलत) घड़ी का मिलान हो जाता है। जभी सत्संग बड़ा आवश्यक है।

"ये दोनों ही चित्र कण्ठस्थ कर रखना उचित। और प्रार्थना करना 'समझा दो' कह कर। ये सब living guides to religion in practice (दैनन्दिन जीवन में सच्चे धर्माचरण की जीवन्त शिक्षा) हैं।"

●●

(5)

हावड़ा रेलस्टेशन। श्री महापुरुष महाराज (स्वामी शिवानन्द) प्लेटफार्म पर खड़े हुए हैं। चारों ओर सौ से अधिक साधुभक्त हैं। ये मद्रास जा रहे हैं। संग में स्वामी बोधानन्द, स्वामी शर्वानन्द और स्वामी श्रीवासानन्द हैं। ये सब ही सैकेण्ड क्लास में हैं। सेवक उमेश, शंकर, चिनु और दक्षिणी ब्रह्मचारी और एकजन उटाकमण्ड जा रहे हैं— चिनु के पिता के आन्तरिक आमन्त्रण पर। महापुरुष महाराज 7 बजकर 45 मिनट पर प्लेटफार्म पर आए हैं, 39 मिनट की अब भी देर है। गाड़ी छूटती है 8.24 पर— पुरी ऐक्सप्रेस। खड़े-खड़े बातें करते हैं। भक्तगण माला, फल, मिठाई उपहार दे रहे हैं। ये सहास्यवदन आशीर्वाद वितरण करते हैं। एक भक्त 8-10 सन्तरे कागज के लिफाफे में डालकर देते हुए बोले 'मुख सूखने पर खा लेना।' उन्होंने भी गर्दन हिलाकर बालकवत् ग्रहण किया। दो मिनट रहते गाड़ी में बैठे। साधु-भक्तों की विविध जयध्वनि से स्टेशन मुखरित हो गया। गाड़ी भी छूट गई।

श्री म मॉर्टन स्कूल की छत पर बैठे हैं। डॉक्टर, दोनों जितेन, बलाइ आदि भक्त लोग अनेक ही हैं। वे हावड़ा स्टेशन से प्रत्यावृत्त (लौटने

वाले) भक्तों के लिए इन्तजार कर रहे हैं। जगबन्धु, छोटे जितेन, विनय— ये लोग 9.45 पर आए। स्टेशन का सारा संवाद श्री म को बड़े प्रेम से कहा— सब साधु-भक्तों के नाम तक।

माखन श्री म की इच्छा से रामकृष्ण-वन्दना गाते हैं। 'गाओ रे जय जय रामकृष्ण नाम।' भक्तगण भी गाते हैं। श्री म ध्यानस्थ हुए श्रवण करते हैं। वन्दना शेष हुई।

भावविभोर हुए मधुरकण्ठ से श्री म कहते हैं,

''सौभाग्य से वे आए थे, जभी इतने साधु और ऐसे सब साधु दिखाई देते हैं। इस देश में साधु कहाँ थे? ठाकुर आए हैं, तभी सब तैयार हो रहे हैं।

''आज कालीतला (ठनठन वाले) में खड़ा हुआ था। देखा ट्राम में हरिहर तथा एक और साधु जा रहे हैं। सोचा, कितना सौभाग्य!— साधु-दर्शन हुआ। और आप लोग इतने-सारे साधु एकसंग दर्शन करके आए हैं! यही real life (असली जीवन)।

''साधु देखकर उनकी (बात) मन में आती है। तब अपनी बात भी मन में आती है। मैं कहाँ, ये लोग कहाँ, और वे कहाँ। ऐसा होने पर automatically (अपने आप ही) काम हो जाता है। मन में यही चिन्ता अपने आप उठती है— ईश्वर के पास जाना होगा। ये लोग इसी यात्रा के पथिक हैं। बहुत-से तो बहुत आगे बढ़ गए हैं। कोई-कोई लक्ष्य पर पहुँचकर फिर वापस आए हैं, अन्य जनों को आगे ले जाने के लिए। मैं भी इनका संगी हो जाऊँ, और क्या? एकदम संगी न भी हो सके, उनके संग में मेलजोल रखना चाहिए। वैसा होने पर जहाँ भी हो, वहाँ से ही आगे बढ़ा जा सकता है। किन्तु खूब close contact (घनिष्ठ सम्पर्क) चाहिए।''

कलकत्ता, 8 अप्रैल, 1924 ईसवी;
मंगलवार, 25वाँ चैत्र, 1330 (बंगला) साल।

एकादश अध्याय

उपनिषद् के ऋषि श्री म (1)

(1)

मॉर्टन स्कूल। अमहर्स्ट स्ट्रीट कलकत्ता। चार तला की छत पर श्री म बैठे हैं पूर्वदक्षिण कोण में। मादुर पर बैठे हुए 'ब्राह्मधर्म' से उपनिषद्-पाठ कर रहे हैं। सूर्य नहीं निकले अभी तक भी। खूब गर्मी पड़ी है कई दिन से। अष्टम अध्याय श्री म पढ़ते हैं।

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्।...
य एष सुप्तेषु जागर्ति कामं कामं पुरुषो निर्मिमान: ।...
अणोरणीयान् महतो महीयान्...
तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम्॥ इत्यादि

श्री म— वे सर्वव्यापी, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान हैं। इन कई मन्त्रों में यही कहा गया है। वे ही स्थूल, सूक्ष्म, जगत के कारण, और फिर परिचालक हैं।

"एक मनुष्य चिन्तनशील है। वह अपने मध्य में जो देखता है, और बाहर जो देखता है, वही उसके ज्ञान की सीमा होती है। 'उसके बाहर कुछ और है', ऐसी धारणा होना कठिन है। अपने भीतर देखता है चक्षु, कर्ण आदि ज्ञानेन्द्रियाँ, हाथ, पाँव आदि कर्मेन्द्रियाँ और मन, बुद्धि अन्तरिन्द्रियाँ। यह सब उसका प्रत्यक्ष अनुभव है। और देखता है बाहर का जगत— कैसा है? यही तो— अनित्य, अचेतन, स्तब्ध और अनेक।

"चौबीस तत्त्वमय इस जगत को सामने देखता है मनुष्य। जिसकी विषय-भोग की मादकता बहुत-कुछ कम हो गई है, उसमें ही यह प्रश्न जागता है— 'कहाँ से ये सब आए हैं', 'क्यों आए हैं', 'किसने किया है यह

सब'— ऐसे जिज्ञासु को ऋषिगण ऐसी बातें बताते हैं। उन्होंने उनके दर्शन किए हैं। जभी वे कहते हैं— इन सब के सृष्टिकर्त्ता ईश्वर हैं। अनित्य, अचेतन और बहुतों के अर्थात् जीवजगत के मध्य में वे नित्य, चेतन और एक हैं। इस देह-मन को लेकर जो गर्व है, वह भी उन्होंने ही दिया है। जगत भी उनका। उनकी वस्तु 'अपनी कह कर' मत लेना, उनको दे दो। अहंकार जब तक नहीं जाता, उनके अधीन होकर, दास होकर रहना। किसी भी प्रकार का उनके संग में एक सम्बन्ध बनाकर जीवनधारण के लिए जितना भी कम से कम आवश्यक हो, उतना थोड़ा-सा ही उनसे माँग कर लेना। इस प्रकार शरणागत होकर रह सकें तो इस शरीर में ही उनका दर्शन हो जाता है। जिस उपकरण से बद्ध— उससे ही मुक्त।

"Misappropriate (अपव्यवहार) करने पर ही मुश्किल पड़ती है, जेल में जाना पड़ता है। उन्होंने सब कुछ बना दिया है, तुम कहते हो 'मेरा है यह सब'— देहमन, धनजन, यह जगत। 'यह सब उनका है', यह जान लेने पर ही तब सब में श्रद्धा आएगी, पवित्र भाव आएगा। मन में होगा भोग की वस्तु नहीं, पूजा की वस्तु है यह जीव-जगत। ऐसी बुद्धि होते ही बच गया।

"मन-बुद्धि के परे, जाग्रत-स्वप्न-सुषुप्ति के भी परे वे हैं। सर्वदा हैं, सर्वत्र हैं और फिर इस शरीर में हैं। उनको देख सकने पर शाश्वत, माने everlasting सुख लाभ होता है— क्योंकि, वे जो सुखस्वरूप हैं।

"इसी मनुष्यदेह में उनका दर्शन होता है। इस बार यदि उनके दर्शन कर न सकोगे तो विपद में पड़ोगे। जन्म-मरणचक्र में पड़ोगे। बहुत देरी हो जाएगी। सुख कौन नहीं चाहता? फिर भी जो बुद्धिमान है, वह सुख की खान चाहता है, (अनन्त) अफुरन्त सुख अर्थात् ईश्वर। विषय का सुख एक कण सुख है। बुद्धिमान वह चाहता नहीं— चाहता है सुखस्वरूप को।

"म्युजियम (अजायब घर) देखने की भाँति देख सके तो बच गया। म्युजियम में सब कुछ देखता है, किन्तु कुछ भी ले नहीं सकता। निर्लिप्त भाव में देखता है। वैसे ही संसार में रहना। तभी उनकी कृपा से दर्शन होता है।"

●●

(2)

अपराह्ण पौने सात। कई दिन गर्मी के पश्चात् आज जल हवा से अच्छा ठण्डा हो गया है। शीतल हवा बहती है। श्री म ध्यान करते रहे थे अल्पक्षण शिव-मन्दिर के चबूतरे पर दक्षिणास्य बैठकर, ठनठने के कालीतला में।

एक भक्त ने श्री म को खोजते हुए आकर देखा, वे कार्नवालिस स्ट्रीट के पूर्व फुटपाथ पर खड़े हैं, हाथ में छाता। रास्ता पार होकर कालीतला में आए। प्रथम नीचे से माँ काली को युक्तकर से प्रणाम किया। तत्पश्चात् ध्यान करते हैं।

ध्यान के बाद भक्त ने कहा, एक साधु स्कूलबाड़ी में प्रतीक्षा कर रहे हैं। इतनी देर वे बोले नहीं थे। श्री म ने माँ काली को प्रणाम किया पुनः। अब शिव की आरती होने लगी— कुछ क्षण उसका दर्शन किया मन्दिर के सामने के भाग पर खड़े होकर। ठाकुर झामापुकुर में रहते समय सर्वदा इस मन्दिर में आते और माँ को गाना सुनाते थे। जभी श्री म भी सर्वदा यहाँ पर आते हैं।

श्री म मार्टन स्कूल को आ रहे हैं बेचुचैटर्जी स्ट्रीट द्वारा। गुरुप्रसादचौधुरी लेन के संयोगस्थल पर खड़े होकर दक्षिण के गृह को दिखाकर बोले,

''यही आर० मित्र का घर है। यहाँ पर ठाकुर आए थे।''

श्री म चलते हैं। एक भक्त ने कहा,

''23 मार्च, बुधवार रात को स्वप्न देखा, मैंने नैष्ठिक ब्रह्मचर्य व्रत लिया है। संगवाले उन्होंने नहीं लिया। और देखा मेरा previous (पूर्व का) संस्कार जैसे assert (जोर मारना) चाहता है।''

झामापुकुररोड के मोड़ को पार करते-करते श्री म बोले,

''ऐसे स्वप्न खूब अच्छे हैं— ब्रह्मचर्य का स्वप्न— 'यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं

चरन्ति'। कहाँ पर होता है?''

भक्त ने उत्तर दिया, 'मठ में देखा'।

श्री म बोले, 'खूब भला'।

भक्त— 12 जनवरी को देखा था संन्यास का। आप तब गदाधर आश्रम में थे। तब भी देखा था previous (पूर्व) संस्कार assert (जोर मारते) हैं।

श्री म— कहाँ देखा था— गदाधर आश्रम में?

भक्त— नहीं, वहाँ से आने पर।

अब तक सिटी कॉलिज के सामने आ गए हैं।

श्री म— यह खूब सुन्दर हो रहा है। सम्भव है किसी दिन होगा। इससे पता लगता है भीतर साफ हो रहा है। साधुसंग करें— उसे छोड़िए मत। बीच-बीच में उसे करना। ठाकुर कहते, ''मन धोबी के घर का कपड़ा होता है— जिस रंग में रंगवाओगे वही रंग ही होगा।'' उसे छोड़ें नहीं।

अमहर्स्ट स्ट्रीट पार करके 'आम्स हाउस' (Alms House) के दक्षिणपश्चिमकोण के फुटपाथ पर श्री म खड़े हुए हैं। सम्मुख है पञ्चाननघोष लेन। दक्षिण में दो घरों के पश्चात् ही मॉर्टन स्कूल है— एच० बोस की बाड़ी से लगा हुआ। एक भक्त के संग साधु के ऐश्वर्य की बातें हो रही हैं। श्री म कहते हैं,

''बाहर का glamour (शोभा) देखकर भूलें मत। कितना गाड़ी-घोड़ा ही चाहे हो, बाहर का glamour (ऐश्वर्य) देखकर— भूलें नहीं। Inspiration (भगवत् प्रेरणा) के लिए ठाकुर के निकट प्रार्थना करें।' जो जितना ही बड़ा क्यों न हो, उनसे बड़ा तो और कोई नहीं है। उनके निकट ही inspiration (प्रेरणा) के लिए प्रार्थना करें।''

•

श्री म दो तल पर कुछ क्षण विश्राम करके चार तल पर आ गए। गदाधर आश्रम के अध्यक्ष स्वामी कमलेश्वरानन्द छत पर इन्तजार कर रहे थे। वे कमरे में आ गए। श्री म बिछौने पर— पश्चिमास्य— उत्तर में चेयर पर साधु और बड़े जितेनबाबू। श्री म के दक्षिण में बेंच पर जगबन्धु बैठे। और माखन बिछौने पर बैठे। 'गदाधर आश्रम में अन्नपूर्णा-पूजा' की बात होती है।

श्री म *(साधु के प्रति)*— लोकबल बिना हुए विराट काज में हाथ देना उचित नहीं। अर्थ होने से ही तो नहीं होता। मनुष्य चाहिए, और फिर willing (कर्म करने के इच्छुक)— ऐसे मनुष्य। गीता में है जो काम सम्भाल सको वही काज करो। वैसा न हो तो शरीर टूट जाएगा।

श्री म को निमन्त्रण देकर साधु ने विदा ली मीठा मुख करने के पश्चात्।

•

रात्रि प्राय: 8 बजकर 15 मिनट। श्री म छत पर आकर बैठे— चेयर (कुर्सी) पर; प्रथम दक्षिणास्य, फिर उत्तरास्य। सम्मुख आमने-सामने दो पंक्तियों में भक्तगण पूर्वपश्चिम की ओर मुख किए बैठे हैं। सामान्य वृष्टि होने से अच्छा ठण्डा हो गया है। श्री म आज खूब स्वच्छन्द बोध कर रहे हैं। शीतल वायु प्रवाहित हो रही है।

शियालदाह में एक डिप्टी मैजिस्ट्रेट आजकल ईश्वर-चिन्तन करते हैं। उनके सम्बन्ध में बातें हो रही हैं।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— आप पहचानते हैं?

बड़े जितेन— जी नहीं। सुना है, वैष्णव भाव है— बड़ा कड़ा, कठोर नियम।

श्री म— वहाँ पर भी नहीं था। ठाकुर के पास वैसा नहीं है। वहाँ पर एक वृक्ष पर बहुत पक्षी हैं— नाना रंग के। वे किसी को पुकारते भी नहीं हैं। आते-जाते हैं। जैसे दर्पण के ऊपर छवि पड़ती है वैसे ही। फिर भी ईश्वर के लिए उन्हें व्याकुल देखकर माँ से कहते, ''माँ, मैं और विचार नहीं कर सकता, तुम खेंच लो।''

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— जाइए ना, जाइए ना एक दिन आप।

बड़े जितेन— ना महाशय, वैसा नहीं होगा। वहाँ पर शास्ति है। खड़ा किए रखते हैं, कान मलना आदि-आदि है— वैष्णव अपराध के लिए।

श्री म— तो फिर स्थान बताएँ। जगबन्धु जाएँगे। वे जाने के लिए ready (प्रस्तुत) हैं।

जगबन्धु— क्या पता कहीं फिर kneel down (घुटने टिकवा कर) रखें *(सकल की हँसी।)*।

श्री म— नहीं, क्या एक दिन जाने से ही करेंगे?— वैसा नहीं करेंगे।

बड़े जितेन— हम जाएँगे तो भी फिर ट्रान्सफर सर्टिफिकेट लेकर तो नहीं जा रहे *(सबका हास्य)*।

श्री म— यह स्कूल तो un-organised (असंगठित) है। इसका तो affiliation (किसी भी दल विशेष के साथ योग) नहीं है।

''मैं कई वर्ष पश्चात् जान पाया वे (ठाकुर) मेरे गुरु हैं। पहले तो पता ही लगने नहीं दिया। Equal term (समान मान से) बातें करते। वहाँ पर एक वृक्ष पर बहु पक्षी हैं— organisation (दल) नहीं।

'' थोड़ा-सा 'नमाज' कर लिया जाए।''

●●

(3)

श्री म उत्तरास्य चेयर पर ध्यान करते हैं। श्री म के सम्मुख पश्चिम के बैंच पर बड़े जितेन, पूर्व बैंच पर बलाइ, छोटे जितेन और जगबन्धु। माखन, डॉक्टर और विनय ने विदा ली। ध्यान के पश्चात् श्री म छत के उत्तरदक्षिण में टहलते हैं, अकेले। बड़े जितेन ने join (योगदान) किया, क्रमशः छोटे जितेन, बलाइ और अन्त में जगबन्धु ने भी योगदान किया। चलते-चलते बातें करते हैं।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— कैसा काण्ड चल रहा है! मनुष्य की तो उस

ओर दृष्टि ही नहीं। Procreation (सन्तान उत्पादन) का कैसा व्यापार! देखिए ना, एक बार! सृष्टि रखने के लिए क्या करते हैं! जिस किसी एक को ही लेकर देखने से देखा जाता है, कैसा अद्‌भुत सब!

"मनुष्य कहता है मैंने उसके संग love (प्रेम) किया था। आहा! सारी रात छाती पर वही चिट्ठी लिए सोता रहा। किन्तु वे तो जानते नहीं इस के पीछे किसका हाथ है। वे ही सृष्टि के लिए यह सब करवाते हैं। वे समझते हैं हम करते हैं।

"इस देश में कहते हैं 'फलटान्'। युवती कन्या होने पर ससुराल आना चाहती है। तब साधारण भाषा में कहते हैं इसे 'फलटान्' हुआ है। अर्थात् procreation (सन्तान-उत्पादन) का आकर्षण।

"देखिए तो यही काण्ड! यह क्या केवल मनुष्य का है? सब का ही होता है। वृक्ष-लता का भी होता है। वृक्ष में pestil (पेस्टिल) नामक female organ (योनि) होती है। जब समय होता है, फलटान् होता है। तब कहाँ से पक्षी किसी पेड़ का फल खाकर बैठता है इसके ऊपर, उससे बीज पड़ा और वृक्ष हो गया fertilisation (उर्वरता) पाकर। फूल का भी वही। रेणुकण हवा में सर्वत्र फैले रहते हैं। Male pollen (पुरुष रेणु) उड़कर female (स्त्री रेणु) के ऊपर पड़ते हैं, पेड़ पर। उससे फूल होता है। समस्त काण्ड आगे से पीछे तक ऐसा ही है।

"किन्तु मनुष्य समझता है कि मैं ही करता हूँ। कौन करता है उसका निश्चय नहीं? जभी ऋषियों ने इन सब के पीछे उनका हाथ देखा था— 'देवात्मशक्ति' वे ही सब कर पाती हैं। गंगा को क्या सारी को स्पर्श करना होगा? एक स्थान पर करने से ही तो हो गया। उन्होंने देखा था उनका हाथ। एक जगह पर देखने से ही हो गया।"

भृत्य श्री म का रात्रि-भोजन लेकर आया। एक सेवक कमरे में जाकर उसे रख आए। उन्होंने सुना श्री म पूर्व प्रसंग में कह रहे हैं—

श्री म— एक स्त्री ने एक पुस्तक लिखी है। उसमें है कि मछली जब जल में अण्डे देती है तब लाख-लाख अण्डे होते हैं। तब अन्य जानवर आकर उन्हें

गप्-गप् करके खा जाते हैं। इनमें से जो एक-दो बच जाते हैं, उससे ही इतने सब species (बच्चे-कच्चे) हो जाते हैं।

"यही देखो ना, मृत्यु ही कैसी! यदि कोई ना मरता तो फिर सबके लिए स्थान कहाँ होता? इसीलिए मृत्यु। वेद में है 'मृत्युः धावति पञ्चमः'।

बड़े जितेन— 'पञ्चमः' क्या?

श्री म— अग्नि, सूर्य, मेघ, वायु, मृत्यु। मृत्यु हुई पञ्चम। सब अपने-आप अपना-अपना काम करे जाते हैं। कौन करवाता है, वह तो जानते नहीं।

"वे Scientists (वैज्ञानिकगण) जहाँ पर जाकर रुक जाते हैं, वहाँ पर ही कहते हैं automatic (अपने-आप) होता है। जानते तो नहीं ना कि कौन करवाता है! ऋषियों ने देखा था उनका हाथ है, इन सब के पीछे। 'भयादस्याग्निस्तपति भयात्तपति सूर्य्यः। भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः॥' अग्नि, सूर्य, इन्द्र, वायु और मृत्यु सब उनके भय से काज करते हैं।

"तभी तो याद रखें कितने लोग आते हैं, और फिर चले जाते हैं। उनका कोई चिह्न तक भी नहीं। यही जैसे गेरुआ-फेरुआ— कोई भी चिह्न नहीं। चुपचाप चले जाते हैं चुपचाप आकर। दो-एक का नाम सुना जाता है जो लोकशिक्षा देंगे। जैसे मछली के दो-एक अण्डे ही रहते हैं। और सब खाए जाते हैं।"

बड़े जितेन— यही आकाश-तारे, उनके भी होते हैं?

श्री म— कौन जाने! उसमें आश्चर्य ही क्या? हो भी सकता है!

"यही जो मृत्यु की बात, यह तो common sense (साधारण बुद्धि) से हम करते हैं। इसके भीतर कितना बड़ा mystery (रहस्य) है, उसको कौन कह सकता है? हम ऊपर-ऊपर देखकर बोलते हैं। Mystery penetrate (रहस्य-भेद) कौन कर सकता है?"

साढ़े नौ बज गए हैं। बड़ी सुन्दर स्निग्ध शीतल वायु प्रवाहित हो रही है।

9-4-24

(4)

आज प्रभात खूब सुशीतल। श्री म चारतल के गृह में बैठे वैदिक सुर में उपनिषद्-पाठ करते हैं— 'ब्राह्मधर्म', नवम अध्याय। निकट छोटे जितेन और जगबन्धु। साढ़े सात बजे हैं।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति ॥....[1]

तदेतत् प्रेयः पुत्रात् प्रेयो वित्तात् प्रेयोऽन्यस्मात्
सर्वस्मात् अन्तरतमं यदयमात्मा ॥....[2]

स य आत्मानमेव प्रियमुपास्ते न ह अस्य प्रियं प्रमायुकं भवति....[3]
युजे वां ब्रह्म पूर्व्यं नमोभिः।
अनादिमत्त्वं विभुत्वेन वर्तसे यतो जातानि भुवनानि विश्वा ॥[4]

श्री म— एक वृक्ष पर दो पक्षी अर्थात् हमारी देह पर परमात्मा और जीव। परमात्मा साक्षीस्वरूप निर्लिप्त हैं। जीव जड़ित हुआ पड़ा है।

"यह plan (परिकल्पना) उनकी है। वे निज ही दो भाग हुए हैं। जीव भाव में वे जगत की सृष्टि के काम में योगदान करते हैं, और परमात्मारूप में निर्लिप्त। अर्थात् यह भी जीवशिक्षा के लिए। कहते हैं, मेरी तरह निर्लिप्त रहो, तब भय नहीं। गोलमाल के भीतर रह कर भी गोलमाल में पड़ोगे नहीं। फल खाना चाहो तो फिर वही टैक्स दो; सुख-दुःख भोग करो।

"परमात्मा चिरसुखशान्ति का आश्रय, जीव मिश्रित सुखशान्ति का आश्रय। जीव का अहंकार ही ज्वाला है greatest riddle of the universe (विश्व की सबसे बड़ी समस्या) है। इस द्वारा विश्व चलाते हैं। जिसका अहंकार नहीं, उसके निकट जगत भी नहीं।

"और फिर उपाय भी किया है; कहते हैं इस अहंकार को मेरी ओर मोड़ दो। तब फिर भय नहीं। मेरे आश्रय में रहो। एक सम्बन्ध बनाकर रहो।

1　मुण्डकोपनिषद्— III, 1.1
2,3　वृहदारण्यकउपनिषद्
4　श्वेताश्वतर उपनिषद्

'अहं ब्रह्मास्मि' यह भी सम्बन्ध है। 'मैं तुम्हारा दास, पुत्र, मित्र' ये भी सम्बन्ध हैं। ऐसा होने से क्रमशः निर्लिप्त हो सकोगे। राजा का पुत्र भिखारी के घर बड़ा हुआ, उसकी जैसी अवस्था वैसी ही जीव की। 'ईश्वर का अंश' भूल जाने पर ही इतने झँझट में पड़ा।

''ईश्वर ने फिर ऋषियों के मुख द्वारा उपाय भी बता दिया है। किसी को प्यार मत करो नहीं तो मुश्किल में पड़ोगे। केवल मुझ को प्यार करो। जीव-जगत को प्यार करना चाहो, मुझसे कहकर प्यार करो। मुझे छोड़ अन्य किसी को प्यार करने से हाय-हाय करनी पड़ेगी! मुझको प्यार करने से चिरकाल तुम्हें सुखशान्ति दूँगा।

''ऋषिगण हाथ देख पाए थे कि न उनका! जभी सावधान कर दिया था। उन्होंने ही अटकाया है, और फिर वे ही पथ कह रहे हैं, बाहर निकलने के लिए। जिस विष की ज्वाला में मर रहे हो, वह विष मुझे दे दो— यह अहंकार। कहा था, 'मा गृधः कस्यस्विद्धनम्'। धन माने कामिनी-काञ्चन। अपना हो, या पराए का हो, इसे लेने से ही है बन्धन।

''यह संसार मानो 'वृश्चिकपुरी' है। एक विशाल पुरी। भोग के सब उपकरण हैं, बाधा देने वाला कोई नहीं। बाग में कितने रसाल, सुमिष्ट फल! ज्योंहि एकजन ने हाथ डाला कि झट बिच्छू बन कर डंक मारा। उससे भी हुआ नहीं, फिर गया और एक खाने, वैसे ही बिच्छू ने और एक डंक मारा। अन्त में रोता-रोता बाहर आता है। सामने वृक्षतले एक व्यक्ति दिखाई दिया, वह बैठा है, शान्त और सहानुभूति सम्पन्न। उसने बताया— भाई, यह स्थान ऐसा ही है। मैंने भी दंश (डंक) खाए हैं। अब मजे में हूँ। एक भला व्यक्ति आकर मुझे बता गया है— यहाँ पर रह सकते हो यदि भोग की इच्छा छोड़ो। उसकी ही वाणी पर पड़ा हूँ। मजे में हूँ। भोजनादि एकजन आकर दे जाता है, कहाँ से— वह नहीं पता। सारा दिन दासीवत् सेवा करता हूँ इन सब बाग-बगीचों की।

''संसार में भोग लेने से ही मुश्किल है। ठाकुर ने जभी तो दासीवत् रहने के लिए कहा है संसार में। और कहा था पुत्रादि को पुत्र रूप में प्यार न

करो— मन में रखो, भगवान इस रूप में हैं मेरे सामने। उनकी सेवा करता हूँ। मृत्यु सब हरण करके ले जाएगी तब दुःख होगा। इसीलिए वेद में कहा है, ईश्वर को जो प्रिय कहता है— प्यार करता है, उसी प्रिय की मृत्यु नहीं, उसके लिए शोक नहीं होगा— 'न ह अस्य प्रियं प्रमायुकं भवति।'

"ऋषि इसीलिए शिष्यों से कहते हैं, मैं ब्रह्म को नमस्कार करके उनके संग में युक्त होता हूँ। नमस्कार करके भी योग होता है। गीता में है 'मां नमस्कुरु (गीता 9:34, 18:65)।' शिष्य भी वैसा ही करें, यही अभिप्राय है। नमस्कार करना अर्थात् शरणागत होना। 'युजे वां ब्रह्म पूर्वं नमोभिः'— नमस्कार के द्वारा भगवान के संग में युक्त होना, यह सहज साधना है।

●●

(5)

रात्रि प्रायः आठ। मॉर्टन की चारतल की छत पर श्री म ध्यान करते हैं। वे मादुर पर बैठे हैं पूर्वास्य। जगबन्धु, शान्ति और बड़िशाल के एक भक्त भी पास बैठे ध्यान करते हैं। भक्तलोग आ रहे हैं— बड़े अमूल्य, फिर डॉक्टर, विनय और बलाइ। फिर छोटे जितेन और बड़े जितेन। आज बहुत देर से ध्यान करते हैं— सन्ध्या से। ध्यानान्ते श्री म जाकर चेयर पर बैठे— दक्षिणास्य। मादुर पर— डॉक्टर, शान्ति और बड़िशाल के भक्त पूर्वास्य। बड़े अमूल्य, विनय, छोटे जितेन उत्तरास्य। बलाइ, जगबन्धु और बड़े जितेन पश्चिमास्य बैठे हैं। श्री म ईश्वरीय कथा कहते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ठाकुर कहते, "माँ अब भी मुझे बदल रहीं हैं।" इसका अर्थ, humanity को (मनुष्य को) यही teaching (शिक्षा) दे रहे हैं, कि सर्वदा ही शिक्षा दी जाती है, इसका अन्त नहीं। कोई-कोई सोचता है कि अल्प जप करके, या अल्प (चक्षु मुद्रित करके ध्यान का अभिनय करके) ऐसा करके, मेरा हो गया है; किन्तु वह नहीं।

"वे कहते, "किसी का आधार ऐसा (छोटा), किसी का ऐसा (अल्प) बड़ा, किसी का और भी बड़ा, और भी बड़ा। छोटा आधार भर जाए तो और

नहीं लेता''।

''कहाँ रखेगा? आधार ही जो छोटा। छोटा बर्तन भर जाने पर ही कोई जैसे यह न समझे कि और जल ही नहीं है।

''ठाकुर कहते, ''ऐसी सब बातें कहता हूँ, किन्तु भाण्ड कहाँ है?'' यह छोटा-सा भाण्ड! दो कारणों से समाता नहीं। एक, पात्र छोटा। और फिर सम्भवतः पात्र तो बड़ा हो, किन्तु वह कूड़े-करकट से भरा हो, अर्थात् कामिनी-काञ्चन से पूर्ण। भीतर केवल रबिश्। तभी तो आता नहीं। इसमें फिर कितनी चीनी आएगी?— अल्प-सी।

''वे जभी अन्त में कहते थे, ''माँ और बोल नहीं सकता, शुद्ध भक्त ला दो— उन्हें दो-एक बातों से ही चैतन्य हो जाएगा। अन्य लोगों को वहाँ (केशवसेन प्रभृति के पास) भेजो''।

''ठाकुर कहते, ''सोना, किसी का बीस मन मिट्टी के नीचे है— किसी का एक-दो टोकरी के नीचे। कौन जाए खोदने बीस मन''?''

शान्ति— छोटा बर्तन भरने से ही तो होगा, और क्या चाहिए?

श्री म— ना, वे इच्छा करें तो सब कर सकते हैं। इसीलिए उन्हें इच्छामय कहा जाता है। वे छोटे को फिर और, और बड़ा कर सकते हैं। जभी केवल प्रार्थना करनी चाहिए। वेद में है, वे ऊँचे को नीचा करते हैं, नीचे को ऊँचा करते हैं। फिर गाने में भी है— 'तुमि पंके बद्ध करो करी, पंगुके लंघाओ गिरि।' ठाकुर गाते, 'कपाले लिखेछो विधि, ताइ बलवान यदि— केनो तबे तोर श्रीदुर्गा नाम लबे।' (प्रारब्ध में लिख दिया है विधाता ने, इसीलिए यदि बलवान है— तो फिर क्यों तेरा श्रीदुर्गा नाम लेगा?)

''यही जितने भक्त देखते हैं— जिनके भीतर व्याकुलता देखेंगे, मन में सोचना, उनका आधार खूब बड़ा है। तभी कभी-कभी अफसोस करके कहते, ''किसको ही कहूँ, अथवा सुनता ही कौन है''?''

•

श्री म *(डॉक्टर कार्तिकबाबू के प्रति)*— घर में कौन है?

डॉक्टर— (भ्रातुष्पुत्र) विश्वनाथ।

श्री म— वह तो अब लायक हो गया है।

(सहास्य) हमें एक बात याद आई। एक boy (बालक भृत्य) था 14-15 वर्ष वयस का। श्यामपुकुर में तब वास करता था। उसके सिर पर थी ऐसी एक बड़ी पगड़ी— हिन्दुस्तानी। एक बार दोलपूर्णिमा के दिन हमें ले गया बेलुड़। वही leader (दलपति) होकर आगे-आगे चलता है। Eighteen Ninety (1890)। 'फेरि' (boat) पर शालके जाकर, वहाँ से लगातार पैदल। रास्ते में मारवाड़ियों के ठाकुर-मन्दिर में ऊपर जाना पड़ा। राधाकृष्ण देखकर आए। ऐसा सजाया हुआ था कि ऐसा लगा जैसे श्याम-दर्शन करके वहाँ पर जा रहा हूँ। माँ का वास तब बेलुड़ में था। रास्ते में हम इसी विषय पर आलाप करते-करते गए। उसी रात्रि को तब प्राय: एक बजा होगा— फिर 'फेरि' में ही लौट आए। बीडन स्ट्रीट के मोड़ पर से आहार खरीद कर लाए थे। चौंतीस वर्ष हो गए हैं।

"और एक दिन बहुत से भक्त-परिवार कुटुम्ब को लिए नौका किए माँ ठाकुरण के निकट बेलुड़ जा रहे थे। ऐसा काण्ड दिखाया नौका में! एकजन बैठे-बैठे सोचने लगा और बोला, "मेरी इच्छा हो रही है कि उन्हीं मेघों के बीच से चलूँ"। और झट तूफान। नौका 'डूबी कि डूबी' हो गई। कहाँ गई कविता? चौदह वर्ष का एक लड़का सिर पर हाथ रखकर रोने लगा और गाने लगा, 'विपदे पड़िये डाकि हे तोमाय' (विपत्ति में पड़कर हे भगवान! तुम्हें पुकारता हूँ)। यही एक गाना ही जानता था— seriously (व्याकुल) होकर गाया।

"एकजन ने advise (परामर्श) दिया, "नौका को बीच में ले जाओ, किनारे पर क्यों रखी है?" फिर बीच में ले जाने पर ठण्डा हुआ, कपड़े आदि सब भीग गए। वहाँ पर (बेलुड़) जाकर किसी-किसी को नूतन धोती मिली। और सब कुछ सुखाया। फिर चाय-पान हुआ।"

जगबन्धु— कहाँ पर ठहरती थीं माँ?

श्री म— किराये के घर में।

"गरीब थे सब भक्त— भक्तों के पास पैसा नहीं था आजकल की भाँति। आजकल तो माँ जातीं तो पालकी पर जातीं। और संग में सात-आठ बैलगाड़ियाँ। तब माँ वृन्दावन में एक वर्ष रहकर आईं। वर्धमान में उतरी थीं। पैदल ही रवाना हो गईं। एक स्थान पर जाकर क्लान्त होकर तालाब के किनारे बैठ गईं। एक भक्त पंखे से हवा करता है। तब फिर वापसी बैलगाड़ी में सवा या डेढ़ रुपया देकर जाना हुआ। अब तो कितनी फर्स्ट क्लास! साथ में पोटली-पाटली कितना कुछ! कहाँ था तब यह सब!

"राखाल को श्रीवृन्दावन में असुख हुआ। कितने कष्ट से पाँच रुपये दिए गए! बलरामबाबू के कुञ्ज में एक वेला खाते।"

•

रात्रि प्राय: पौने नौ। Gospel of Sri Ramakrishna Part-I— 'कथामृत'-पाठ होता है।

"श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में। नरेन्द्र को गिरीशघोष के संग अधिक मिलने से मना करते हैं। गिरीश अनन्यस्मरण भक्त होने पर भी गृहस्थाश्रम में रहते हैं। नरेन्द्र के द्वारा श्रीरामकृष्ण एक योगी-श्रेणी सृष्टि करवाएँगे। गृहस्थ भक्तों का योग-भोग दोनों ही हैं, किन्तु योगियों का केवल योग। जभी नरेन्द्र को इतना सावधान करते हैं।

"श्रीरामकृष्ण कहते हैं, जो अधिक दिन कामिनी-काञ्चन लेकर रहते हैं वे जैसे लहसुन की कटोरी हैं— हजार धोने से भी गन्ध जाती नहीं। फिर ज्ञानाग्नि में जलाने पर गन्ध जाएगी। किंवा वे जैसे बड़ी वयस के दामड़ा साँड। अधिक वयस में जो साँड दामड़ा होता है, उसके मन से देहसुख की स्मृति जाना चाहती नहीं। वे जैसे काक टुकराए आम। देवसेवा में लगते नहीं। बालक संन्यासी— जैसे नूतन हाँडी। इसमें दूध रखने से नष्ट नहीं होता। ये देवसेवा में लगते हैं। मन में अभी तक कामिनी-काञ्चन का दाग

नहीं पड़ा। ईश्वर इच्छा करें तो गृहस्थाश्रम में रखकर भी योगी की भाँति निष्कलंक रख सकते हैं। 'आमड़ा वृक्ष' पर आम लगा सकते हैं, किन्तु वह अति विरल है। योगी और योगीभोगी— दो पृथक् श्रेणी।''

श्री म *(शान्ति के प्रति)*— तुम्हारे लिए पढ़ा गया है। तुम क्या करोगे— फर्स्ट क्लास, कि सैकण्ड क्लास?

शान्ति डॉक्टरी पढ़ रहे हैं। विवाह की बात हो रही है।

शान्ति— मन तो मानता नहीं।

श्री म— वह क्या तुम्हारी इच्छा? गुरु जब हुए हैं, तब तुम्हारी इच्छा और नहीं।

भक्तगण विदा लेते हैं। श्री म जगबन्धु से कहते हैं, ''आपके ऊपर भार रहा— सब से कुछ-कुछ लेकर— अन्नपूर्णा-पूजा में गदाधर आश्रम में एक संग में कुछ जिससे दिया जाए''।

10-4-24

●●

(6)

श्री म अपने घर में उपविष्ट— खाट पर पश्चिमास्य। श्री म के बायीं ओर— छोटे जितेन, जगबन्धु और मनोरञ्जन। हाथ में 'ब्राह्मधर्म'-दशम और एकादश अध्याय-पाठ किया।

'ओमिति ब्रह्म....
तं वेद्यं पुरुषं वेद यथा मा वो मृत्युः परिव्यथाः....
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः।....
उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत।'

''सामान्य भाव से बंगाली में अर्थ बताते हैं— ब्रह्म अनादि, अनन्त और नित्य। वे अजर, अभय और अमृत। वे रूप, रस, गन्ध, शब्द, स्पर्शात्मक

इस जगत के अतीत। वे ही फिर— इस जीव-जगत के अन्तरात्मा। अनन्यशरण होकर ऐकान्तिक चेष्टा से उनको जाना जाता है। उनको जान लेने पर अमृतत्व-लाभ होता है— चिरसुख, चिरशान्ति-लाभ होता है।''

श्री म— तरुण ऋषिगण बड़े ऋषियों के निकट उपस्थित हुए हैं। बड़ों ने वही बात कही, निराकार निर्गुण ब्रह्म की बात। किन्तु उसकी धारणा होती नहीं। तभी कहते हैं, ऊँकार को आश्रय करके उनका ध्यान करो। केवल abstract (निर्गुण) का चिन्तन करना सबके पक्ष में कठिन है। मन की गठन ही है ऐसी। इसीलिए ऊँकार रूप प्रतीक की बात कही। उसे ही ब्रह्म की symbol (मूर्ति) कल्पना करके, नित्य, अमृतादि गुण आरोप करके, चिन्तन करो। यही है मूर्ति-पूजा का अर्थ (Philosophy).

''दुर्बल मन से प्रथम ही ब्रह्मवस्तु की धारणा नहीं कर सकता। इसीलिए इस help (आलम्बन) का प्रयोजन। चिन्तन करने से निराकार सगुण पर्यन्त चल सकता है। इसके ऊपर जाने से फिर और खबर नहीं मिलती। वह अवस्था 'बोझे प्राण बोझे जार'— अवाङ्मनसगोचरम्। (जो समझता है, बस उसका प्राण ही जानता है— वाणी-मन से अतीत।)

''बोले, तुम लोग इस पथ पर खूब सावधानी से चलोगे। बड़ा दुर्गम पथ है। तलवार की धारवत् तीक्ष्ण है। तनिक-सा अमनोयोगी होने पर ही विपद। धीर, शान्त, एकाग्रचित से अग्रसर होइए।

''उठ-पड़-लगना होगा— समस्त शक्ति एकत्र करके। With a heart for any fate (जो प्रारब्ध में है), कह कर 'उत्तिष्ठत जाग्रत'-प्रण करके। 'अठारह मास' का वर्ष होने से होगा नहीं— इसी क्षण चाहिए। गोबरगणेश का कर्म नहीं है। क्यों इतना करके कहा? रास्ता जो है अति दुर्गम और सुदूर— जभी। शिथिल प्रयास होने से फिर होता नहीं। नाना कार्यों में मन देने पर सोना गलाना होगा नहीं। 'एक काज, एक चिन्ता' चाहिए।

''साधन दो प्रकार के हैं— बहिरंग और अन्तरंग। यहाँ पर अन्तरंग साधन की बात कहते हैं। ध्यान— निराकार सगुण का ध्यान करने के लिए

कहा है— ऊँकार के आलम्बन से। वेद में ऊँकार-ध्यान ही है प्रधान।

"ठाकुर ने कहा था— शिव, दुर्गा, काली, विष्णु, राम, कृष्ण जो कोई भी रूप तुम्हें पसन्द हो, उसका ही ध्यान करोगे ईश्वर का रूप जानकर। यह भी आलम्बन। किसी-किसी के निकट फिर यह ही आलम्बन, यह ही उद्देश्य।

"ठाकुर ने फिर अन्तरंगों से कहा था, "आमार ध्यान करलेइ होबे"। (मेरा ध्यान करने से ही होगा)। कहा था, "जो मेरा ध्यान करेगा, वह मेरा ऐश्वर्य लाभ करेगा— जैसे पिता का ऐश्वर्य पुत्र लाभ करता है"। अर्थात् आत्मदर्शन होगा, ब्रह्मदर्शन होगा।

"निज को निज पहचाना था कि ना! तभी इस प्रकार कहते। नहीं तो कौन कह सकता है यह बात? कहते, "माँ, मैंने क्या अन्याय किया है, यह बात कहकर अर्थात् "मेरा ध्यान करने से ही होगा। मैं तो देख रहा हूँ तुम्हीं सब होकर रह रही हो। देह, मन, बुद्धि, आत्मा सब ही तुम। अन्तरे बाहिरे तुम"।"

श्री म— केवल लेक्चर या पाण्डित्य, अथवा तीक्ष्ण बुद्धि— इनके द्वारा उन्हें लाभ किया नहीं जाता। शरणागति और चेष्टा, दोनों एक संग में हों तो होता है। कृपा और पुरुषार्थ दोनों ही चाहिएँ। अन्तर में दृढ़ संकल्प— बाहर प्रचण्ड उद्यम। चेष्टा में त्रुटि रहने से होगा नहीं। मन्त्र का साधन अथवा शरीर-पतन।

"बुद्धदेव ने कहा था, "इहासने शुष्यतु मे शरीरम्"।— (इस आसन पर मेरा शरीर सूख जाए।)— बिना दर्शन किए उठूँगा नहीं। ऐसी चेष्टा चाहिए। हड्डीतोड़ परिश्रम चाहिए। ऐसी चेष्टा देखने पर उनकी कृपा हो सकती है। तब उनका लाभ होता है।

"ठाकुर ने आहार-निद्रा त्याग करके चेष्टा की थी। दिन रात बोध नहीं था। ऊपर से साँप चला जाता है, ख्याल नहीं।"

श्री म अल्प चुप रहे। पुनराय बोलते हैं।

श्री म— कहते थे, "मेरा यह सब उदाहरण के लिए है। तुम लोगों को इतना करना नहीं होगा। मैं कौन और तुम कौन, यह जान लेने से ही होगा।"

अर्थात् मैं अखण्ड सच्चिदानन्द अवतार होकर आया हूँ, और तुम लोग मेरे अन्तरंग। राम को अवतार कहकर पहचान पाए थे— असित, देवल, व्यासादि। वे हैं अवतार— ऐसा विश्वास जिनको हुआ है वे तो उनके हाथ में हैं। कहा था, उनका शेष जन्म होता है, जिन्हें नरलीला में विश्वास होता है। वह न हो तो वही— ध्यान, भजन, तपस्या लिए ही पड़े रहना। उसी किसान की भाँति— जल लाऊँगा धरती पर, तब नहाऊँगा, खाऊँगा। ऐसा दृढ़ संकल्प— प्राणपण चेष्टा चाहिए।

''ईश्वर में जिनका आन्तरिक विश्वास है, उनके मन से संसार अपने-आप झड़ पड़ता है— बहुत अलग हो जाता है। कामिनी-काञ्चन से मन उठ जाता है। वैसा बहुत कम लोगों का होता है।

''पता लग गया है कि उस गृह में धन है। भीतर से द्वार बन्द है। अब क्या किया जाए— द्वार पर पड़े रहना सब छोड़कर। सत्याग्रह करके पड़े रहना। ठाकुर ने पक्षी की बात कही थी। सब ओर उड़कर, कूलकिनारा न पाकर मस्तूल पर जाकर बैठा है। जो होना है, होगा।

''वैसी अवस्था में मन में बहुत शान्ति आती है, और निर्भरता। अवश्य ही ठीक-ठीक शान्ति, निर्भरता, विश्वास होता है दर्शन होने पर। उसके पहले गुरुवाक्य पर विश्वास किए पड़े (लगे) रहना। गुरुमुख से जो-कुछ सुना गया है, चेष्टा करके, बोधे-बोधे करके पड़े (लगे) रहना। दर्शन?— यह उनकी इच्छा।

''प्रार्थना भी ठीक होती है इस अवस्था में। 'माहं ब्रह्म निराकुर्याम्'— मैं जैसे तुम्हें न भूलूँ। 'धियो यो नः प्रचोदयात्' इसका अर्थ भी वही, मन जिस प्रकार उनमें रहे। ठाकुर ने प्रार्थना सिखाई थी, ''अपनी भुवनमोहिनी माया में मुग्ध करो न माँ''। ऐसी अवस्था में ही ऋषिगण बार-बार नमस्कार करते हैं— ''तस्मै देवाय नमो नमः''।

''ठीक-ठीक प्रार्थना होती है सिद्धावस्था के पश्चात्। कारण तब देखते हैं कि ना, कि माया का है कैसा भीषण खेल! क्राइस्ट ने बोला था, ''lead us not into temptation but deliver us from evil:'' (अपनी

भुवनमोहिनी माया में मुग्ध करियो ना; और पाप के हाथ से सर्वदा मुक्त करो)।''

आज के पाठ में साध्य, साधन, साधक और फल एक संग में सब बातें हैं। साध्य ब्रह्म, साधन उनका ध्यान, ऐकान्तिक उद्यमशील साधक और अमृतत्व फल। आज का पाठ सुन्दर! एक स्थान पर सब मिल गया।

●●

(7)

रात्रि साढ़े आठ। चारतल की छत पर श्री म बैठे हैं— चेयर पर। सम्मुख बैंच पर भक्तगण। बड़े जितेन, छोटे जितेन, शान्ति, सुरपति और संगी, बड़े अमूल्य, डॉक्टर, विनय, बलाइ और जगबन्धु। एक वृद्ध साधु भी आए हैं। सन्ध्या से ध्यान चल रहा था। गरमी भी अच्छी है।

श्री म— यही जो कभी-कभी वे साधु भेज देते हैं, क्यों? इसीलिए ना कि हमें चैतन्य होगा। हम सर्वदा जा नहीं सकते, बूढ़ा हो गया हूँ, तभी वे भेज देते हैं। इन्हें देखकर स्मरण होगा ईश्वर सत्य, जगत् अनित्य। उन्हें कितना स्नेह हमारे लिए! उन्हें हमारे लिए चिन्ता अधिक है, अपने लिए हमारी अपनी चिन्ता की अपेक्षा। जभी तो कहा था, ''तुम्हें वह सब विचार करना नहीं होगा, तुम केवल उन्हें पुकारो— 'दर्शन दो, दर्शन दो' कह-कह कर।'' चन्द्र, सूर्य, जल, अग्नि, वायु बना रखे हैं हमारे लिए। शस्य, फल, फूल, नाना प्रकार के खाद्य— इनकी भी व्यवस्था है। ये सब हुए स्थूलशरीर के लिए। और फिर सूक्ष्मशरीर के लिए नाना विद्या— सायन्स, आर्ट, फिलोसफी आदि। विद्या अर्थात् उनके ही बनाए universal laws (विश्व-नियमसमूह), जो मनुष्य-बुद्धि द्वारा निकाले गए। इससे ही एकजन अभिमान करता है ('मैं महाविद्वान्')। Laws (नियमसमूह) भी उनके, बुद्धि भी उनकी। भीतर रहकर चलाते भी हैं वे। अब हम कहते हैं, हम ने इस विद्या की सृष्टि की है। सृष्टि की है उन्होंने— आविष्कार करता है मनुष्य— उनकी ही दी हुई बुद्धि से। कारणशरीर के लिए साधु, तीर्थ, देवालय, शास्त्र बना रखे हैं। सब 'perfect arrangement' (पूरी व्यवस्था निर्दोष)।

वे कहते हैं, विश्वजन्य तुम्हें चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी, वह भार मेरा है। अपने लिए भी तुम्हें चिन्ता नहीं करनी होगी, वह भी मैं देखता हूँ। तुम केवल मेरा चिन्तन करो। "For all these things do the Gentiles seek: for your heavenly father knoweth that ye have need of these things. But seek ye first the kingdom of God, and his righteousness; and all these things shall be added unto you." [Matthew 6 : 32-33]

श्री म कुछ चुप किए बैठे रहे। कुछ क्षण परे वे बोले, 'जगबन्धु बाबू हैं? सुनिए तो', यह कहकर अपने आसन से उठकर उत्तर की ओर जल के टैंक के निकट जाकर खड़े हो गए एवं धीरे-धीरे बोले,

"ललित महाराज ने निमन्त्रण दिया है अन्नपूर्णा-पूजा में। मेरे मन में हो रहा है कि सब ही कुछ-कुछ देकर इकट्ठे पाँच रुपये दे दें तो अच्छा हो। चार आने या आठ आने जिसकी जो इच्छा हो देगा, जोर न पड़े। एक-एक को बुला कर कहिए। ठाकुर का जन्मोत्सव एक बार दक्षिणेश्वर में हुआ था। उन्होंने कह दिया था— रुपया-पैसा किसी से माँगा नहीं जाएगा। जिसकी जो इच्छा हो, दे।"

श्री म आसन पर आकर पुनराय बैठ गए।

श्री म *(भक्तों के प्रति, सविस्मय)*— यह देखिए आकाश, चाँद, नक्षत्र सब ही वे होकर रह रहे हैं। देखिए, देखिए, अन्तरे-बाहिरे। बाहर भी वे। और भीतर कैसी कल की है— 'लीवर', 'स्प्लीन', nervous system (स्नायु मण्डली)।

"इस चाँद को नित्य देखते हैं, तभी आश्चर्य लगता नहीं। इसीलिए हमने फिर नूतन रूप से देखना आरम्भ किया है।

"उन्होंने कितना काण्ड किया है, देखिए। प्रथम हुई— शरीर धारण की चेष्टा। उसके लिए ही काजकर्म— पेट के लिए। तब द्वितीय फिर procreation (सन्तान-उत्पादन) की चेष्टा। बच्चे बढ़ाना। केवल वह ही नहीं— उनको फिर खिलाना-पिलाना। कितने बन्धनों में बाँधा है!

"और फिर इसमें रहकर ही ईश्वर-लाभ भी होता है। कैसा काण्ड

ही उन्होंने किया है!''

पुनः चुप रहे। फिर बातें करते हैं—

''एक आम हो तो उसका छिलका उतार कर खाते हैं। किन्तु कच्चा हो तो क्या उस समय छिलका फेंका जाता है? तब, Growth (वृद्धि) नहीं होती। वैसे ही जिस 'मैं' से पतन होता है, फिर उसी 'मैं' से ही उनका लाभ होता है। इन्हीं रूप, रस, गन्ध द्वारा ही उनकी पूजा होती है।

''असमय में मन को विषय से उठाकर लाने से उसकी growth (वृद्धि) नहीं होती। क्रमशः मोड़ फिरा देने से होता है। उनसे प्रार्थना करने से वे ही फिरा देते हैं।''

(बड़े अमूल्य के प्रति)— शास्त्र में क्या है? शास्त्र साधु मुख से सुनना होता है। और काज करना होता है। तब ही धारणा होती है। काज और प्रार्थना।

रात्रि दस— भक्तों ने विदा ली। श्री म छत पर खड़े हैं— निकट जगबन्धु, विनय और छोटे जितेन। पूजा के चन्दे के सम्बन्ध में बात होती है।

भक्तों में दो मत हो गए हैं। एक मत— एक हाथ पाँच रुपये दे देना। और एक मत है पृथक्-पृथक् नाम लिखवाकर देना। अन्त में द्वितीय मत ही स्थिर हुआ। यह सब बात सुनकर श्री म ने कहा 'मेरी तो वैसी ही इच्छा थी। आप लोगों ने कहा, इस प्रकार। वह आप लोगों के मुख से उन्होंने बुलवाया। वह अच्छा हुआ। ठाकुर के खाते में नाम रहना अच्छा है। पीछे साल-साल वही देना होगा।'

11-4-1924

दूसरे दिन गदाधर आश्रम में अन्नपूर्णा पूजा। शनिवार। श्री म प्रातः गदाधर आश्रम जाने के लिए बाहर निकले। ट्राम द्वारा वापस आए। शरीर बड़ा ही weak (दुर्बल)। भक्तों में से कोई कोई गए। पुनः अपराह्न में चेष्टा करके पौने छः बजे भवानीपुर उपस्थित हुए। गदाधर आश्रम में सारदानन्द जी, अखण्डानन्द जी और धीरानन्द जी दोपहर से

पहले ही आ गए। उन्होंने अतिशय आह्लाद से श्री म को आदर करके बिठाया। रात्रि प्राय: आठ बजे तक थे। तब फिर ट्राम में बिठा दिया गया। वे अकेले लौट आए। विनय, जगबन्धु, छोटे जितेन और गदाधर रात को गदाधर आश्रम में रहे। मणीन्द्र ने उन्हें जोर करके रख लिया।

●●

12 अप्रैल, 1924 ईसवी;
29वाँ चैत्र, 1331 (बंगला) साल। शनिवार, शुक्ला अष्टमी।

द्वादश अध्याय

उपनिषद् के ऋषि श्री म (2)

(1)

मध्याह्न काल— बारह बजे। श्री म चारतल के कमरे में बैठे हैं। एक भक्त के संग बातें करते हैं। बिछौने पर बैठे हुए हैं। भक्त ने गदाधर-आश्रम का प्रसाद दिया। वे गदाधर-आश्रम की पूजा का विवरण सुनते हैं। इसी प्रसंग में भक्त ने एक ब्रह्मचारी की बात कही। गत कल गदाधर-आश्रम में उनके संग जो बातें हुई थीं, वे सुनकर श्री म बोले—

श्री म *(भक्त के प्रति, सहास्य)*— उसकी अमेरिका आदि देशों में जाने की बड़ी भारी इच्छा है, नहीं तो ऐसी बातें कैसे करता?

''हमें थर्ड इयर (तीसरे वर्ष) में एक बार विलायत जाने की वायु चढ़ी थी। सातकड़िबाबू ने चेष्टा की थी। इस बैरिस्टर, उस बैरिस्टर के यहाँ आना-जाना किया था। कितना कुछ किया! फिर *(उन्मुक्त दीर्घ हास्य सहित)* फिर स्वप्न भी देखा था। Mediterranean Sea— foggy weather (भूमध्य सागर के घने कुहासाच्छन्न प्रभात) में मैं निद्रा से उठा हूँ।'' *(उच्च हास्य)*।

भक्त— थर्ड इयर में मेरा भी वैसा हुआ था।

श्री म— पासपोर्ट बन गया था?

भक्त— जी, वह नहीं हुआ था, शेष सम्पूर्ण हो गया था। सब व्यवस्था हो गई थी, यात्रा का समय पर्यन्त भी ठीक था।

श्री म— जो ग्रेजुएट हैं, उनकी उस देश में जाने की इच्छा सब की ही होती है।

भक्त— कोई-कोई फिर उस देश के लोगों को इस देश में आते देखकर फिर

जाना नहीं चाहते। 'वे लोग आते हैं यहाँ पर, वहाँ जाकर फिर क्या होगा?', इसी भाव से।

•

श्री म विश्राम करते हैं। भक्त भी विश्राम करने गए। समय ढाई का। श्री म के घर में जगबन्धु ने प्रवेश किया। तब भी वे बिछौने पर लेटे हुए हैं। बोले,

''आज मछुओं के संघ को देख आइए। आकर मुझे describe (वर्णन) करना।''

एक भक्त ने अन्नपूर्णा-पूजा में एक रुपया चन्दा दिया था। उसकी साधारण आमदनी है। श्री म ने आज प्रात: उसे छ: आना लौटा ले जाने के लिए कहा था— दस आने रख लिए थे।

संघ ने हेरिसन रोड अतिक्रमण करके अमहर्स्ट स्ट्रीट में प्रवेश किया है। मछुवाबाजार से कार्णवालिस स्ट्रीट में जाएगा। जगबन्धु श्री म को विवरण देते हैं— 'साधेर कालोजाम', 'झाड़ूदारों का दल', 'मोची' ऐसे दृश्य हैं। बृहत् दल है। अनेक दृश्य बताए। बहुलोकसमागम हुआ है— रास्ते पर चला नहीं जाता। चैत्रमास की भीषण गर्मी की परवाह नहीं है। डाब, बरफ का शरबत, लस्सी-शरबत लोगजन पी रहे हैं। इसी गर्मी में घरों की छतों, बरामदों में बहुत स्त्री-पुरुष, बालक-बालिकाएँ खड़े हैं— सामाजिक आनन्द उपभोग कर रहे हैं। श्री म बोले—

''सब देखना चाहिए, तभी उनके सम्बन्ध में धारणा होती है। वे कितने रंगों में हमें नचा रहे हैं। नाक सिकोड़ने से चलेगा नहीं। 'तुम्हें पसन्द नहीं है, इसलिए इसकी आवश्यकता नहीं है', ऐसा सोचना उचित नहीं। ये सब देखने से चैतन्य होता है कि किस प्रकार हमें रखा हुआ है— कितने खिलौने देकर भुला रखा है।

''ये क्यों किए हैं? लोगों को आनन्द होगा। कट्टरपन (एकरस) भाव टूट जाएगा। ठाकुर भक्तों को मेले में भेजा करते। और फिर कुछ खरीदकर लाने के लिए भी कहते।

''वे ही यहाँ पर इस रूप में खेलते रहे हैं। और फिर पट-परिवर्तन।

अन्य स्थान पर अन्य रूप में। यह बन्दोबस्त क्या मनुष्य ने किया है? उन्होंने ही किया है इसी organisation (अखिल जगतरूप प्रतिष्ठान) को चलाने के लिए। इसकी भी है आवश्यकता।

"और फिर अन्य स्थान पर अन्य रूप। किसी के द्वारा फिर अपना चिन्तन करवा लेते हैं। वनों में, तपोवनों में बैठे कितने-कितने साधक ईश्वर-चिन्तन करते हैं। वे भी आनन्द के लिए ही करते हैं। उन्हें उसी में आनन्द है। जभी उन्हें आत्मरत, 'आत्मक्रीड़' कहते हैं— जो केवल ब्रह्मानन्द उपभोग करते हैं।

"यही जो संघ है; यह भी उसी आनन्द का ही अंश है— कणमात्र। ठाकुर कुछ भी छोड़ते नहीं थे। कैसे छोड़ते? माँ को सब में देखते हैं। मनुष्य-देह, मन, बुद्धि, जीवात्मा, परमात्मा। परमात्मा अर्थात् 'माँ'। वे देखते हैं माँ ही नाना मनुष्य, नाना जीव होकर नाना भावों में आनन्द कर रही हैं। जभी ऋषियों ने कहा है, 'यह जगत उनका खेल है'— 'लोकवत्तु लीलाकैवल्यम्।' साधारण मनुष्य तो देखता है इस मनुष्य का बाहर का ही। बुद्धिमानजन की दृष्टि व्यक्ति के गुणों में रहती है। ईश्वर-भक्त की दृष्टि रहती है मनुष्य की श्रद्धा-भक्ति-ज्ञान और वैराग्य के ऊपर। ठाकुर की दृष्टि एकदम 'माँ' के ऊपर। वे देखते हैं, मनुष्य कुछ नहीं करता। सब ही वे— माँ करती हैं। तब किसको छोड़ेंगे फिर? उनकी दृष्टि में विश्व, संसार ही आनन्द की हाट— निरानन्द कहाँ?"

संघ अब तक मछुवाबाजार के मोड़ पर आ गया है। चार बजे हैं। अमहर्स्ट स्ट्रीट के ऊपर की पश्चिम की खिड़की खोलकर श्री म संघ देखते हैं— जैसे बालकवत् उत्सुक, आनन्द में पूर्ण।

●●

(2)

'ब्राह्मधर्म' हाथ में लेकर श्री म उपनिषद्-पाठ करके सुना रहे हैं। अन्तेवासी निकट बैठे हैं। द्वादश अध्याय पाठ करते हैं। अब एक-एक मन्त्र का

सरल अर्थ और व्याख्या करते हैं—

> वृक्ष इव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकः।
> तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्॥ (ब्राह्मधर्म 12:2)

श्री म— उन्होंने ही इस जगत का सृजन किया है। जीव के लिए जहाँ पर जो आवश्यक है, उसे सजा कर पूर्ण करके रखा है। इसके भीतर बन्धन की वस्तु भी है, और फिर मुक्ति का पथ भी है। जिसे जो चाहिए ले लो। सुख-दुःख दोनों ही हैं। दुःख ही अधिक है— उन्हें बिना पकड़े। जभी तो गाने में है— ''तोमार ए पागला गारदे केहो हासे केहो कांदे केहो नाचे आनन्द भरे।'' (तुम्हारे इस पागलखाने में कोई हँसता है, कोई रोता है, कोई आनन्द में भरकर नाचता है।) एक ओर हाहाकार, आर्तनाद, शोकताप, महामारी, प्राकृतिक विपर्यय, भूकम्प, आग्नेय उत्पात, युद्ध विग्रह— ऐसी भीषण मूर्ति; अन्य ओर संघ— हँसी-तमाशा, नाचगाना, विवाहादि और फिर ईश्वर को लेकर आनन्दोत्सव। ये दोनों ही हैं यहाँ पर।

''किन्तु जो इस grand drama (महा नाटक) के कर्त्ता, वे साक्षीवत् हैं— देखते-सुनते हैं, किन्तु उदासीन। जैसे वृक्ष— निश्चल, स्थिर— unaffected by these pair of opposite forces (सुख दुःखदि द्वन्द्व द्वारा विचलित नहीं)। निज ही actor (नट), निज ही spectator (द्रष्टा); बहुरूपों में खेलते हैं। एक बनकर देखते हैं— सम्पूर्ण उदासीन।

''यह भी जीव की शिक्षा के लिए। दोनों दिशाएँ रखने का उपाय बना देते हैं। इसके भीतर मेरी भाँति रह सकने से बच जाएगा। नहीं तो मुश्किल। चक्र में पड़कर हैरान होगा। अर्थात् संसार में साक्षीवत् रहना। सब करना, किन्तु भोग न लेना। बड़े घर की दासीवत् रहने के लिए कहा था, ठाकुर ने। सब की सेवा करो ईश्वरबुद्धि से; किन्तु benefit (सुविधा) नहीं लेना। स्थान, काल, अवस्था के अनुसार जितना शरीर-धारण करने के लिए आवश्यक हो उतना ही लेना। सब किया जाता है, किन्तु मन पड़ा है अपनी 'कुटीर में' अर्थात् ईश्वर में। शरणागत, पूर्ण शरणागत होने पर ऐसा होता है। कठिन तो खूब है किन्तु उनकी कृपा से हो जाता है।

यथा सौम्य वयांसि वासोवृक्षं संप्रतिष्ठन्ते।
एवं ह वै तत् सर्वं पर-आत्मनि संप्रतिष्ठते॥ (ब्राह्मधर्म 12:2)

श्री म— ऋषि वन में रहा करते थे, जभी ऐसे दृष्टान्तों द्वारा ही समझाते हैं। पहले कहा है, वृक्षवत् साक्षी होकर रह रहे हैं ईश्वर। यही मन्त्र में कह रहे हैं वृक्ष का उदाहरण देकर— उनमें ही फिर समस्त जीव आश्रय लेते हैं। जैसे सन्ध्या के समय सब पक्षी वृक्ष पर आश्रय लेते हैं। नाना पक्षी, नानारूप शब्दादि। किन्तु आश्रयस्थल एक, वैसे ही वे हैं सब प्रकार के जीवों का आश्रय। मुमुक्षु शिष्यों को उपदेश देते हैं— इसको स्मरण रखकर चलो, शान्ति पाओगे। अन्य पथ नहीं है। ठाकुर को ऐसा देखा है। उनके पास एक वृक्ष पर बहुपक्षी थे— विभिन्न भाव और भाषा, किन्तु सब का आश्रयस्थल थे वे अकेले।

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च॥*

श्री म— अन्तर-बाहर वे, जीव जगत रूप में वे, जीव-जगत की अन्तरात्मा भी वे। जीव-जगत से दृष्टि उठाकर उनमें (अपने में) ले जा रहे हैं। जगत सर्वप्रकार से उनके ऊपर निर्भर करता है।

'सर्वव्यापी'— अर्थात् जहाँ तक space (स्थान) की कल्पना हो सकती है, वे भी वहाँ तक। कारण, space (स्थान) भी उनमें ही है। वे फिर उससे भी अधिक। Space (स्थान) का कारण वे, सर्वभूत, सर्वजीव (all living beings) उन सबके भी कारण एवं चालक भी वे।

"Space (स्थान) द्वारा खोजने जाओ, घूम फिर कर उनमें ही आना होगा। उसी 'एक देव' पर। प्रति जीव के भीतर देखो— उसी एकजन को ही देख सकोगे। हठात् किसी बात पर विश्वास होता नहीं। मन विचार करता है— यह उसका स्वभाव है। जभी मन, बुद्धि को एक से एक बड़ी वस्तु के भीतर से ले जाकर ऋषियों ने दिखाया है, उसी एकजन को ही। Intellectually (युक्ति) द्वारा समझाते हैं ऋषिजन।

"वे यदि एक हैं बहुतों के मध्य में, तो फिर हम देख पाते नहीं क्यों? इसके उत्तर में कहते हैं, 'गूढ़' अर्थात् छिपे हुए हैं— प्रच्छन्न। देखा जाता है,

* श्वेताश्वतर उपनषिद्— 6:11 ब्राह्मधर्म 12.3

देखने वाले उपाय का अवलम्बन करने से। हमने देखा है। तुम लोग भी देख पाओगे— उसी पथ को पकड़ो। यही हुई direct evidence (प्रत्यक्ष अनुभव) की बात।

''वे 'कर्माध्यक्ष:'। 'कर्म'— अर्थात् यही organisation (सृष्टि), यही universe (विश्व), इसका 'अध्यक्ष'— माने परिचालक। यह भी वे। सब कर्मों के कर्त्ता की न्यायीं इस कर्म के कर्त्ता, परिचालक वे। पृथक-पृथक दृष्टि से देखो space, species (स्थान और विभिन्न जाति) आदि की ओर से, उनका भी शेष वे। Collective view (समष्टि दृष्टि) द्वारा देखो, उसका भी कारण वे। Analytical and synthetic view (व्यष्टिभाव से अथवा समष्टिभाव) से देखो, दोनों दिशाओं से चलकर उनमें ही पहुँचना होगा।

''सर्वभूताधिवास— सकल जीवों का वासस्थान वे। शेष आश्रयस्थल वे। जीवगण कहाँ रहते हैं?— अपने आश्रय में। आश्रय है विश्व में— विश्व है उनमें। जभी सर्वभूत का अधिवास वे।

''यदि बोलो जल, वायु, अग्नि, सूर्य, खाद्य, प्राण, मन— इनके द्वारा जगत चलता है। क्या आवश्यकता उन्हें मानने की? उसका उत्तर— इन सबका ही कारण वे। वे हैं इसीलिए, उनके भय से और व्यवस्था से ये सब अपना-अपना काज करते हैं। प्रमाण क्या? उत्तर— हम देखते हैं आँखों के सामने। मन की भूल भी हो सकती है— नरेन्द्र ने कहा था। ठाकुर ने कहा, वह कैसे हो सकता है! मिलता जा रहा है जो। दर्शन, उपदेश और बाह्य कार्य— तीनों ही तो मिलते जा रहे हैं। वे लोग दर्शन करते हैं कि वे सब के कारण हैं। उनको जानने से उन्हें परम शान्ति और सुख-लाभ हुआ है। अतएव तुम भी दर्शन करो; सुख, शान्ति, लाभ कर सकोगे। दर्शन, उपदेश और कार्य— सुख, शान्ति और लाभ। यह मिल गए हैं। कैसे कहा जाए कि मन की भूल (hallucination) है?

'' 'साक्षी' वे— अर्थात indifferent (उदासीन)। सब करते हैं अथच साक्षी। Affected (विजडित) नहीं। जैसे ठाकुर बताते, मुख में विष है किन्तु साँप affected (विष से प्रभावित) होता नहीं— वैसे ही।

"अब स्वरूप-लक्षण बताते हैं। वे 'चेता'— चैतन्य-स्वरूप। जभी 'साक्षी'। सम्पूर्ण मन उनमें जाने पर ही साक्षीत्व लाभ होता है। वैसा होता है उनके दर्शनों के पश्चात् ही ठीक-ठीक। साधना की अवस्था में गुरुवाक्य पर विश्वास करके चलना चाहिए।

" 'केवलो'— माने अकेला, alone (असंग)। Loneliness (निर्जनता), शान्ति उनका स्वरूप। समस्त जगत, समस्त चिन्ता renounce (परित्याग) करके वही एक चिन्तन करने से होता है। साधारण भाषा में कहते हैं, 'केवल एक चिन्तन'— अर्थात् एकमात्र ईश्वर-चिन्तन। मनुष्य जिस प्रकार संगी है, चिन्तन भी वैसे ही संगी है। सब चिन्तन, सब संगी छोड़कर 'केवल चिन्तन'— ईश्वर-चिन्तन। तभी कैवल्य-लाभ होता है।

" 'निर्गुण'— वे सत्त्व, रज, तम के अतीत, त्रिगुणातीत। गुणों में बद्ध होता है जीव। वे बद्ध नहीं, जभी निर्गुण।

" 'साक्षी, चेता, केवल, निर्गुण'— ये सब उनके गुण आरोप करके कहा गया है। मुख से बताना हो तो इसी प्रकार बताया जाता है। उनका स्वरूप मुख से बोला नहीं जाता। बोलना हो तो nearest approach (निकटतम वर्णन) यही है। सिद्ध अवस्था में यह ठीक-ठीक बोध होता है। ठाकुर की ऐसी अवस्था हुई है। साधक के लिए तो यही beacon light (दिशादर्शक आलोक) सामने रखकर चलना।"

सर्वा दिश ऊर्ध्वमधश्च तिर्यक् प्रकाशयन् भ्राजते यद्वनड्वान्।
एवं स देवो भगवान् वरेण्यो योनिः स्वभावानधितिष्ठत्येकः॥*

श्री म— सूर्य जैसे स्वयं भी प्रकाशित हैं, और जगत को भी प्रकाशित किए हैं, वैसे ही। उनके अस्तित्व में जगत का अस्तित्व है। वे हैं— जभी 'सब है'— ऐसा प्रतीत होता है। वस्तुतः यह सब कुछ भी नहीं। केवल वे हैं। वे जगत की योनि, उत्पत्ति स्थल। सृष्टि, स्थिति, प्रलय— तीनों को ही वे करते हैं। जभी वे वरेण्य, अर्थात् सब के पूजनीय। 'भगवान' ज्ञान और क्रियाशक्ति-सम्पन्न। जैसा ज्ञान वैसी ही क्रियाशक्ति। कैसी विचित्र इस जगत की plan (परिकल्पना)! Scientist (वैज्ञानिक लोग) अवाक् रह जाते हैं इस

* ब्राह्मधर्म 12.4

engineering skill (सृजन-कौशल) को देखकर। फिर क्रियाशक्ति कैसी प्रचण्ड! उनके भय से सूर्य, अग्नि, पवन, मेघ, यम अपने-अपने काम में नियुक्त हैं। तनिक-सा भी गोलमाल नहीं होता। Organisation (संघ) सृष्टि— चलाने के लिए बुद्धिमान और कर्मशक्ति सम्पन्न व्यक्ति चाहिए। इस विश्व को वे निःश्वासवत् चला रहे हैं। उनका ज्ञान और क्रिया कैसी अद्भुत है! Planning and execution (परिकल्पना और परिचालना) दोनों ही marvellous (विस्मयकर)।

"हमारे संशय जाना नहीं चाहते, तभी निज को बुद्धिमान, शक्तिमान समझते हैं। इसीलिए कहते हैं, बुद्धि और शक्ति की दिशा से जाओ,— उससे भी अन्त में उनमें ही पहुँचोगे।"

(3)

नैनमूर्ध्वं न तिर्यञ्चं न मध्ये परिजग्रभत्
न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद् यशः॥ (ब्राह्मधर्म 12.5)

श्री म— प्रथम लाइन का अर्थ हुआ, वे इतने बड़े हैं कि इस सुबृहत् विश्व की किसी भी वस्तु से उनको समझाया नहीं जाता। न किसी भी स्थान द्वारा सीमाबद्ध किया जाता है। वे अप्रतिम— अतुलनीय। तुलना समान वस्तु से होती है। उनके समान कुछ भी नहीं, जभी तुलना होती नहीं। विचार के द्वारा जाओ तो यही निष्कर्ष निकला है। Time, space and causality (स्थान, काल और कार्यकारण सम्बन्ध)— ये तीनों लेकर ही जगत है। इस जगत के कारण वे। इसीलिए इसके द्वारा उनका बोध नहीं करवाया जाता। उनकी तुलना वे निज।

"किन्तु भक्ति के द्वारा देखो— वे ही ये मनुष्य होकर आते हैं, अवतार होकर— जैसे ठाकुर। उन्होंने कहा था, मैं ईश्वर-अवतार। मनुष्य का बनाया हुआ नहीं। वे इतने बड़े हैं, इसीलिए ही जीव के कल्याण के लिए आते हैं। उनका स्वरूप, अवस्था जीव की कल्पना के अतीत है। जभी रूप, रस, शब्दादि के भीतर आते हैं। इसके द्वारा धीरे-धीरे उनका ज्ञान होगा।

'' 'महद् यशः', (of grand fame) जिसकी अनन्त सुख्याति है। जगत में एक काम करके यश अर्जन करता है— जैसे ताजमहल। जिन्होंने यह विश्व सृजन किया है, उनका कितना बड़ा यश! जभी 'महद् यशः' ऋषियों ने कहा है। इस आकाश की ओर आँख उठाकर देखो, कैसा काण्ड रचा है! दिन में सूर्य— कैसा व्यापार है, विचार करके देखो। रात्रि में अगणित नक्षत्र। ये सब उसी grand architect (विश्वकर्मा) का यश-कीर्तन करते हैं। विश्व है उनका यशस्तम्भ।

''न सदृशे तिष्ठति रूपमस्य न चक्षुषा पश्यति कश्चनैनम्।
हृदा मनीषा मनसाभिक्लृप्तो य एनमेवं विदुरमृतास्ते भवन्ति॥''*

श्री म— इन नेत्रों से ईश्वर-दर्शन नहीं होता। ठाकुर कहते, साधन-भजन करते-करते एक शरीर तैयार होता है— भागवती तनु। उनमें सब हैं इन्दियादि। वे शुद्ध चक्षु के गोचर हैं। जिस चक्षु आदि इन्द्रिय द्वारा ये रूप, रसादि विषय ग्राह्य होते हैं, वह अशुद्ध है। इसके द्वारा शुद्धस्वरूप भगवान-दर्शन होता नहीं। इनका मोड़ उनकी ओर फिरा देने से शुद्ध हो जाता है।

''रूप— अर्थात् साकार, निराकार दोनों ही रूप। निराकार भी रूप। वे साकार, निराकार दोनों ही हैं। यहाँ पर निराकाररूप की कथा कहते हैं। हाथ, पाँव, मुख— अर्थात् रूप नहीं। अखण्ड सच्चिदानन्द— यह भी रूप है— भाव रूप। क्या साकार, क्या निराकार, कोई भी रूप इस इन्द्रिय द्वारा ग्राह्य नहीं है।

''किन्तु ठाकुर ने कहा है, ''इन्हीं आँखों से उनको देखा है। अब और वैसा रूप दिखाई नहीं देता। भाव में दर्शन होता है अब।'' तब फिर ऐसे क्यों कहा कि इन्हीं आँखों से देखा है? उसका अर्थ है— यह है अति उच्चावस्था की बात। एक अवस्था में normal state (साधारण अवस्था) ही थी उनकी भावावस्था। वे सर्वदा ही contact state (संयोगस्थल) पर रहते थे तब— meeting place of the two circles (ईश्वर और जगत इस चक्रद्वय) का संयोगस्थल। एक चैतन्य और एक जगत। भाव चक्षु ही उनके तब normal (सर्वदा वाले) चक्षु थे।

---

* ब्राह्मधर्म 12.6

" "अब और वैसा रूप दिखाई नहीं देता, भाव में दर्शन होता है"— अर्थात् उसी पूर्व की अवस्था में रहने से लोकशिक्षा तो फिर होती नहीं। जभी नीचे उतर कर भक्तों के संग मिलते हैं। इतने ऊँचे पर्दे पर से भक्त पकड़ नहीं सकेंगे, तभी नीचे उतर कर आए हैं— इस जगत के कल्याण के लिए। बकरों के संग बातें करनी हों तो 'बुरुर् बुरुर्' करना पड़ता है। यह भी वैसा ही है।

"निर्विकल्प अवस्था, सविकल्प अवस्था और सहज अवस्था अर्थात् साधारण मनुष्य की अवस्था। इन तीन अवस्थाओं के भीतर से 'बाइच' खेलते हैं, जैसे नौका का बाइच (दौड़ वाला) खेल।

"किन्तु साधारण जीव का वैसा नहीं होता। अवतारों आदि का ही सम्भव। जीव एक बार चढ़ने पर फिर प्रायः लौटता नहीं। अवतारादि को लोकशिक्षा के लिए ऐसा करना पड़ता है। उनके लिए है पकी हुई गोटी का कच्चा रहना।

"जभी कहते, साधारण जीव को, साधन-भजन करने पर शुद्धचित्त होने से, उनका दर्शन हो जाता है। नियमितभाव से धैर्य धर कर उनका चिन्तन करते-करते वह होता है। निरवच्छिन्न तैलधारावत् चिन्तन। उससे बुद्धि भी शुद्ध होती है। उसी शुद्धबुद्धि में वे प्रकाशित होते हैं। मैली आरसी पर देखने से मुख नहीं दिखाई देता। स्पिरिट से स्वच्छ कर लो— तब मुख दिखाई देगा। यह भी वैसा ही। कामिनी-काञ्चन का मैल— भोगवासना का मैल। चिन्तन करने पर वह दूर हो जाता है। तब उनका दर्शन होता है।

"शुद्धबुद्धि से दर्शन होता है। और भी आगे है— शुद्धबुद्धि ही शुद्धआत्मा है। गंगासागर में गिरने पर जो होता है। जभी extreme purification of the mind is God (चित्तशुद्धि की चरम अवस्था का नाम ही है ईश्वर)।

"साधना भी फिर आन्तरिक होनी चाहिए। Head and heart (बोध-शक्ति और हृदय मन)— एक होने से होता है। तभी ठाकुर कहते, व्याकुलता चाहिए। इससे परे की stage (अवस्था) ही है दर्शन, जैसे sunrise follows dawn (अरुणोदय के उपरान्त ही सूर्योदय)। दर्शन होने पर ही

अमृतत्व-लाभ। यही है चरमलक्ष्य मनुष्य का।''

श्रवणायापि बहुभिर्यो न लभ्यः शृण्वन्तोपि बहवो यन्न विदुः।
आश्चर्यो वक्ता कुशलोऽस्य लब्धा आश्चर्यो ज्ञाता कुशलानुशिष्टः॥[1]

श्री म— 'ईश्वर सत्य, संसार अनित्य'— बहु भाग्य से यह बोध होता है। तब ही सद्गुरु-लाभ होता है। भगवान ही गुरु। वे ही दर्शन देकर कृतार्थ करते हैं। उनका commission (आदेश) लेकर कोई-कोई उनकी कथा लोगों से कहते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति जब ईश्वर की कथा बोलते हैं— जैसे शुकदेव, उसमें फिर प्रमाद नहीं रहता— ठीक-ठीक बोलते हैं। ऐसे जन सुदुर्लभ। जभी कहते हैं 'आश्चर्य' अर्थात् wonder of the spiritual world (आध्यात्मिक जगत का विस्मय)।

''संसार में कामिनी-काञ्चन लेकर सब लोग भूले हुए हैं। उनके पास अवसर नहीं ईश्वर की कथा सुनने के लिए। दो-चार जन सुनकर (दर्शन) पाने की चेष्टा करते हैं। कोई-कोई दर्शन पाता है very few (अति अल्प) लोग। उनमें से लोकशिक्षा का आदेश पाते हैं और भी few (अल्प)।

''ब्रह्मज्ञान-लाभ करना हो तो ब्रह्मज्ञ गुरु के शासन में रहना होता है— तभी लाभ होता है।

''अज्ञ, व्याकुल और ब्रह्मज्ञ— ये तीन क्लास के लोग हैं। अज्ञ ही प्राय: हैं सब। शेष दो क्लास rare (दुष्प्राप्य), तभी 'आश्चर्य'— व्याकुल भक्त और ब्रह्मद्रष्टा लोग। और फिर द्रष्टाओं में लोकशिक्षा के लिए आदेशप्राप्त तो और भी कम हैं— जभी अति आश्चर्य।''

पराचः कामाननुषन्ति बालास्ते मृत्योर्यन्ति विततस्य पाशम्।
अथ धीरा अमृतत्वं विदित्वा ध्रुवमध्रुवेष्विह न प्रार्थयन्ते॥[2]

श्री म— उनका चिन्तन जो नहीं करते, उन्हें 'बालाः'— शिशु (babies) अर्थात् अज्ञानी कहा गया है। कामिनी-काञ्चन लेकर जो हैं, वे बालक हैं। केवल worldlywise— (विषयबुद्धि सम्पन्न) जो हैं उनका वहाँ पर स्थान नहीं है। ठाकुर कहते, 'चिड़ाभेजा बुद्धि' का कर्म नहीं। चिड़वा भिगोने के

1 ब्राह्मधर्म 12.7 2 ब्राह्मधर्म 12.8

लिए जल जैसी पतली दही की भाँति बुद्धि अर्थात् विषयबुद्धि। जिस बुद्धि से केवल धन, मान उपार्जन होता है, जिसके द्वारा पाण्डित्य लाभ— जज, बैरिस्टर होता है, किन्तु ईश्वर में मन नहीं जाता— ऐसी बुद्धि अति हल्की बुद्धि है। उसके द्वारा ईश्वर-लाभ नहीं होता।

''संसार की दृष्टि से बड़ा होने पर भी पारमार्थिक दृष्टि से शिशु— बालक। बालक के सरलता, निर्भरता ऐसे भले गुण भी हैं। किन्तु यहाँ पर दोषों की बात ही कही है— अज्ञता की बात। जभी ठाकुर कहते, खाली पण्डित लोग घास-फूस जैसे लगते हैं— trifle (तुच्छ)। किन्तु विवेक-वैराग्य रहने पर पसन्द करते।

''ऐसे कामिनीकाञ्चन-आसक्तचित्त भोगियों की कैसी दुर्दशा होती है, वह भी बतलाते हैं। वे जन्ममृत्यु-चक्र में गिरते हैं। बार-बार दुःखयन्त्रणा-भोग करते हैं— 'विततस्य पाशम्'— विस्तीर्ण मृत्युपाश में पतित होता है। निष्काम मन न हो तो ऐसा होता है। सकाम होने से मृत्यु के इलाके में। जितनी दूर पञ्चभूत का zone (इलाका) है, उतनी दूर ही मृत्यु का jurisdiction (सीमा, अधिकार) है। जभी 'विततस्य' कहा है। ईश्वर और जगत— ईश्वर अमृतत्व— जगत अनित्य, जभी मृत्यु के अधीन।

''जो यथार्थ wise (ज्ञानवान), वे शान्त, धीर। उन्हें बोध हो गया है 'संसार अनित्य, ईश्वर सत्य'। तभी अनित्य संसार का कुछ भी माँगता नहीं। चाहता है केवल ज्ञान, भक्ति, विवेक, वैराग्य। क्यों माँगता है ये सब? इनसे 'ध्रुवं, अमृतत्वं' लाभ होता है— everlasting freedom from death (मरण के हाथ से छुटकारा)— अर्थात् ईश्वर-लाभ होता है।''

येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्याम्।
असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्मामृतं गमय। आविरावीर्म एधि।
रुद्र यत्ते दक्षिणं मुखं तेन मां पाहि नित्यम्॥*

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— जो ईश्वर-लाभ में सहायक नहीं है, उस वस्तु से

* ब्राह्मधर्म 12.9

क्या करूँगा? वह नहीं चाहिए। केवल ईश्वर को ही चाहता हूँ। मैत्रेयी ने पति याज्ञवल्क्य से जभी कहा था, आपके प्रदत्त धन से यदि ईश्वर-लाभ नहीं होता तो फिर वह धन मुझे नहीं चाहिए। जिससे उनका लाभ हो, वही उपाय बतावें। व्याकुल भक्त की है यही प्रार्थना।

''ऋषिगण फिर यही प्रार्थना करते हैं— हे ईश्वर! यह संसार अनित्य, अज्ञानता और मृत्यु की लीलाभूमि। यहाँ पर मन का अपव्यवहार होता है। तभी अशान्ति है। कृपा करके इस मन को अपने श्रीपादपद्मों में स्थान दें। आप सस्वरूप में दर्शन दें। और सर्वदा प्रसन्न होकर हमारी रक्षा करें।'

''यह है ऋषियों की universal prayer (सार्वजनीन)— सबके लिए प्रार्थना। ऋषियों ने उनके दर्शन करने के उपरान्त ही यह प्रार्थना की है। तभी अन्य लोग भी प्रार्थना करेंगे। और आँखों के सामने देखते हैं कि ना, कि कैसा काण्ड चल रहा है, उनकी अघटनघटन-पटीयसी माया का। उन्होंने ईश्वर के अति निकट रहकर उस महाशक्ति का ऐसा खेल देखकर ही फिर ऐसी व्याकुल प्रार्थना की है। कहते हैं— हे प्रभो, आपका रुद्ररूप देखकर भय होता है, सौम्यरूप धारण करो। रुद्ररूप की आवश्यकता है— काम करना हो तो, जगत चलाना हो तो। भक्तलोग किन्तु सौम्यरूप चाहते हैं। अर्जुन भी कहते हैं, सौम्यवपु धारण करो। जगत-लीला की प्रतीक है माँ काली की मूर्ति। सृष्टि, स्थिति, प्रलय— तीनों भाव ही उस मूर्ति में हैं। माँ के हाथों में खड्ग और नृमुण्ड हैं। वैसे ही वर और अभयमुद्रा भी है। भक्तगण यही प्रसन्न सौम्यरूप चाहते हैं। इसके बिना पालन-कार्य होता नहीं।

''जिन्होंने उनका दर्शन किया है, वे ही यह प्रार्थना करते हैं। वे पूरी तरह समझ गए हैं कि वे कृपा न करें, वे रक्षा न करें तो यहाँ रक्षा करने वाला और कोई नहीं है। जभी व्याकुल होकर ऐसी प्रार्थना करते हैं, यह सब देखकर। सिद्ध होने पर भी भय। शरीर रहने से ही भय, माया के अधीन जो है। ठाकुर जभी कहते, 'महामाया का काम समझने मत जाना। सब गड़बड़ झाला है, अव्यवस्थित है, समझ नहीं सकोगे। तुम अपनी कार्य-सिद्धि करो। हाथ जोड़ प्रार्थना करो व्याकुल होकर— ''अपने पादपद्मों में शुद्धाभक्ति दो। माँ! शरणागत, शरणागत।'' शरीर-त्याग के कुछ दिन पूर्व भी कहा, ''सब

उनके 'अण्डर' (under) है। अब भी मुझे बदल रही हैं''।

''क्राइस्ट प्रार्थना करते हैं, Lead us not unto temptation and deliver us from evil (भुलाइयो ना माँ, अपनी भुवनमोहिनी माया में भुलाइयो ना)।

''ठाकुर की प्रार्थना—

'देह सुख चाइ* ना माँ, लोकमान्य चाइ ना माँ,
अष्टसिद्धि चाइ ना माँ, शतसिद्धि चाइ ना माँ।
आपके पादपद्मों में जैसे शुद्धा भक्ति हो।

और ऐसा करो कि जिस प्रकार आपकी भुवनमोहिनी माया में मुग्ध ना होऊँ।'

''जिन्हें ईश्वर-दर्शन नहीं हुआ है, अथच वे साधन-भजन में लगे हैं, अनेक कुछ आगे बढ़ गए हैं वे भी व्याकुल होकर यह प्रार्थना करते हैं। साधन-भजन करते-करते 'संसार अनित्य है', बोध हो जाता है। तब सर्वत्र मृत्यु की छाप देख लेता है। क्योंकि अपनी मृत्यु सर्वदा सामने देखता है। तब अपने-आप प्राणों से यह प्रार्थना निकलती है। जिन्हें ईश्वर के अस्तित्व का कुछ बोध नहीं हुआ है उन्हें भी मौखिक प्रार्थना करना उचित, गुरुवाक्य पर विश्वास करके। प्रथम अभ्यास, फिर आन्तरिक होगी।

'' 'आविरावीर्म एधि'— हे प्रभो, मुझे दर्शन दो। वे दर्शन न दें तो दिख सकते नहीं। जभी ऐसी प्रार्थना। दर्शन होने पर शाश्वत सुख-शान्ति लाभ होता है। सब दुःख दूर होते हैं।''

अब अपराह्न साढ़े पाँच। भाई भूपति के एक भक्त आए हैं। इन्होंने 'गुरुपद भरोसा करो' इस गाने की रचना की है। श्री म की भक्त-सभा में कभी-कभी वह गीत गाया जाता है। उनके संग आए हैं, उनके बन्धु नरेन। नरेन एम०ए० पास हैं। सामयिक वैराग्यवशतः गृह-त्याग किया था। किन्तु दो मास पश्चात् ही गृह लौट आना पड़ा था। श्री म के दर्शन करने आज नरेन आए हैं। गृह-त्याग के पूर्व भी श्री म के दर्शन किए थे।

* चाइ = माँगता।

श्री म ने उपदेश दिया था और भी कुछ काल गृह में रहकर अपेक्षा करना और कुछ जनों के संग मिलना और परामर्श करना। किन्तु भाव के आवेग में असमय में गृह-त्याग किया। जभी वैराग्य स्थायी नहीं हुआ। घर लौटने के पश्चात् आज प्रथम मिलने आए हैं। नरेन ने बताया, नीचे मोटर में उनकी स्त्री, सास और चाची-सास बैठी हैं। अनुमति हो तो वे आकर श्री म के दर्शन कर लें। श्री म के पास शान्ति और जगबन्धु हैं। और ऊपर स्त्रियों का आना निषेध। श्री म चिन्तित हो गए। अगत्या (लाचार) ये सत्तर वर्ष-वयस में भी भक्तों को दर्शन देने चारतल से एकतल पर उतर गए।

यहाँ पर भक्त-सभा में स्त्रीभक्त नहीं आतीं। कोई स्त्रीभक्त दर्शन करने आई हैं, यह संवाद पाते ही तीनतल पर स्त्री महल में गिन्नी माँ (श्री म की धर्मपत्नी) के पास जाने के लिए कहते। श्री म एक बार नीचे जाकर खड़े हुए, दो चार बातें करके चले आते हैं। आज घर की स्त्रियाँ नीचे नहीं हैं, तभी चिन्तित होकर स्वयं ही नीचे उतर गए।

अमहर्स्ट स्ट्रीट के फुटपाथ पर श्री म खड़े हैं, मॉर्टन स्कूल के सम्मुख। महिलाओं ने मोटर से उतर कर भूमिष्ठ प्रणाम किया। उनकी गाड़ी चली गई।

श्री म पूर्व फुटपाथ से दक्षिण की ओर चल रहे हैं, संग में शान्ति और जगबन्धु हैं। डॉक्टर पी०डी० बोस के गृह के सम्मुख आकर खड़े हो गए। एक वृद्ध के संग आनन्द से हँसी की बातें करते हैं। वृद्ध चले गए। श्री म की हँसी रुकती नहीं। तीव्र हास्य से कहते हैं, इस व्यक्ति के 'नांग'बाई है। इन्हें वहम है, इनकी माँ, बहू, कन्या सब 'नांग' करते हैं। वे सब सज्जन हैं— वे ही खिलाते हैं। ऐसे ही करते-करते लक्ष्मीछाड़ा (निर्धन) हो गया है। किसी के संग रह नहीं सकता— पृथक् खाता है।

•

श्री म नवविधान ब्राह्मसमाज में बैठे हैं पश्चिम की ओर। ध्यान करते हैं। आज रविवार का सम्मेलन है। साढ़े सात बजे उठकर मछुआबाजार से झामापुकुर रोड पर प्रवेश किया। रास्ते में जाते-जाते ठाकुर के जीवन के साथ जुड़े हुए स्थानों के दर्शन और प्रणाम करते हैं। अदूर ईशान मुखर्जी

का गृह, रास्ते के पास ही राजा दिगम्बरमित्र का प्रासाद। विजयकृष्ण गोस्वामी का किराये का घर, 27 नम्बर झामापुकुर, रामकुमार का टोल फिर ठाकुर वासस्थान। मोड़ से आर० मित्र का गृह दिखला कर बोले,

''यहाँ पर ठाकुर आए थे, एटीन एटीवन में— (1881 ईसवी में) मेरे जाने के दो मास पूर्व।''

अब तक ठनठनिया कालीबाड़ी में आ गए। माँ को प्रणाम करके, चरणामृत लेकर साधारण ब्राह्मसमाज की ओर अग्रसर होने लगे कार्नवालिस स्ट्रीट के पश्चिम वाले फुटपाथ द्वारा। बांयें हाथ पर सड़क के ऊपर एक मिष्टान्न की दुकान है। नाना रंगों की प्रचुर हिन्दुस्तानी मिठाई से दुकान सजा रखी है। इसके ही ऊपर की मंजिल में 'महत् आश्रम' नामक विख्यात होटल है। संगियों से श्री म आनन्द से कहते हैं,

''देखिए, कैसा सुन्दर सजा कर रखा है। रूप है, रस है, गन्ध है और फिर स्पर्श है। (एक भक्त बोले, खाते समय शब्द होता है) तब तो फिर शब्द भी है। एक ही वस्तु में सब है— सब ओर से मन पर आक्रमण करती है। रक्षा तभी है, यदि कोई इन सब में उनका रूप आरोप कर सके, उन की कृपा से और अभ्यास द्वारा।''

चलते-चलते पूर्व फुटपाथ पर लाहाओं का गृह दिखलाकर सहास्य कहते हैं, 'बचपन में यहाँ पर पालकी में माँ के साथ निमन्त्रण खाने आया था।' अब साधारण ब्राह्मसमाज में प्रवेश किया। खड़े होकर तीन चार मिनट दर्शन किया। आचार्य वेदी के ऊपर से प्रार्थना करते हैं। अब सड़क पार करके पूर्व फुटपाथ पर आते हैं। जगबन्धु ने पूछा,

''यह बाड़ी किसकी?''

श्री म ने उत्तर दिया,

''पहले गोबिन्द डॉक्टर नामक एक सज्जन की थी। तभी मैं आया था। तब मेरी वयस चारेक वर्ष थी। तत्पश्चात् hand change (हस्तान्तरण होकर) अब लाहाओं की हो गई है।''

शंकर घोष लेन से श्री म पूर्वमुखी चलते हैं। बायीं ओर विद्यासागर कॉलिज। दायीं ओर का एक गृह दिखला कर बोले,

''यही है शंकरघोष की बाड़ी— खोका महाराज के पूर्वपुरुष। इन्होंने ही इस कालीबाड़ी की प्रतिष्ठा की है।''

अब मार्ग के प्रान्त में आ गए— सम्मुख गुरुप्रसाद चौधुरी लेन है। बायें हाथ पर फूस के घर में एक उत्कलवासी की मुड़ि-मुड़की (दानों) की दुकान है। उसके सामने कई उत्कलवासी लोग खड़े हैं, श्री म देखते हैं। दायें हाथ अमूल्य डॉक्टर का घर है। श्री म खड़े हो गए; कहते हैं,

''देखिए, मनुष्य कैसी अद्भुत वस्तु उन्होंने बनाई है। यह रक्त-मांस का शरीर, फिर ईश्वर-दर्शन आदि कितना कुछ होता है। क्यों किया है, ऐसा कौन जाने?''

श्री म ने अपनी ठाकुरबाड़ी में प्रवेश किया, गुरुप्रसाद चौधरी लेन में। भक्तों से बोले,

''आप लोग आगे स्कूलबाड़ी में जाएँ। Possible (सम्भव) हुआ तो मैं खाकर आता हूँ।''

मॉर्टन स्कूल की छत पर भक्तगण प्रतीक्षा करते हैं। डॉक्टर, विनय, बड़े अमूल्य, वकील ललित बैनर्जी, अमृत, छोटे जितेन, बलाइ, गदाधर, शान्ति, जगबन्धु प्रभृति आए हैं। श्री म आ गए— छत पर कुर्सी पर बैठे हैं— उत्तरास्य। कुछ समय पश्चात् बातें करते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— कैसी आश्चर्यभरी बातें ही ठाकुर ने की हैं। प्रथम आश्चर्य देखो— उन्होंने कहा है, गृहियों को बीच-बीच में निर्जनवास करना उचित। द्वितीय— सब धर्मों द्वारा ही उनको पाया जाता है। तृतीय— ईश्वर-दर्शन मनुष्य जीवन का सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य है। चतुर्थ— ईश्वर केवल दिखाई ही नहीं देते, फिर बातें भी करते हैं। इतना emphasis (ज़ोर) देकर और किसी ने यह बात नहीं बोली। मैंने बहुत खोज कर देखा है। बाइबल भी पढ़कर देखी है। कहीं भी खोज नहीं पाया। आहा! क्या बात ही कही है ठाकुर ने!

'ईश्वर बातें करते हैं'। केवल बोला ही नहीं, घर भरे लोगों के सामने फिर स्वयं ईश्वर के संग बातें करते हैं। एक दिन ही नहीं, सारा जीवन।

रात्रि अधिक हो गई है। भक्तों में से अनेक चले गए हैं। विनय, छोटे नलिनी, बलाइ, गदाधर और जगबन्धु अब भी बैठे हैं। श्री म पुनराय बातें करते हैं।

श्री म *(छोटे नलिनी के प्रति)*— जिन्होंने विवाह किया है, उनके लिए कामिनी-काञ्चन त्याग नहीं है। वे मन से त्याग करेंगे। जिन्होंने विवाह नहीं किया है, वे बाहर से भी त्याग करेंगे और भीतर से भी त्याग करेंगे। विवाह करने पर परिवार वालों को सन्तुष्ट रखना होता है। मन प्रफुल्ल रखना पड़ता है। तभी भगवान के पथ में सहायक होंगे, नहीं तो गड़बड़ी बढ़ जाएगी। जो देश से कलकत्ता में हैं काजकर्म के लिए, वे भी इच्छा करने से ही संन्यास-जीवन यापन कर सकते हैं। रुपया भेज देने से ही हुआ। घर के लोग उससे सुखी होंगे। सुनता हूँ, कोई-कोई तो दो-दो वर्ष भी देश नहीं जाते। रुपया भेजकर चिट्ठी-पत्र से सब खबर रखते हैं। उनके लिए यहाँ पर भी निर्जन है। परिवार का कोई भी रहने से ऐसा नहीं होता।

''संन्यासी, गृही— सबके लिए ही उपाय दिखा गए हैं। किसी को भी बाकी नहीं छोड़ा। उनकी वाणी पर विश्वास करके पालन करने की चेष्टा करना उचित है। तो फिर बच जाएगा। नहीं तो दुःख-कष्टों के बोझ में नीचे गिर जाएगा। एक बार पीछे पड़ जाने से कब फिर यह दुर्लभ मनुष्य जन्म होगा, कौन जाने! और फिर अब अवतार आए हैं— सूखे में भी एक-एक बांस जल है। उनमें मन रहने से दुःख के भीतर भी शान्ति रहती है। भक्तों का आदर्श है, 'दुखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः'। ठाकुर बिना हमारा उपाय नहीं है। जभी कहते हैं, 'आमाय धर' (मुझे पकड़ो)।''

कलकत्ता 13, अप्रैल, 1924 ईसवी;
30वाँ चैत्र, 1331 (बंगला) साल, रविवार, शुक्ला नवमी।

त्रयोदश अध्याय

केले के भीतर जैसे कुनीन

(1)

नववर्ष प्रभात। सूर्य अभी तक उदय नहीं हुए। श्री म मॉर्टन स्कूल के चारतल की छत पर बैठे हैं— ध्यानमग्न, पूर्वदक्षिण कोण में पश्चिमास्य। सम्मुख हैं जगबन्धु, विनय, छोटे जितेन और गदाधर। सब ही ध्यान करते हैं। प्राय: दो घण्टे बीत गए। श्री म अब वैदिक सुर से उपनिषद्-पाठ करते हैं— 'ब्राह्मधर्म' से पहले गार्गी-याज्ञवल्क्य-संवाद और फिर तृतीय अध्याय से नवम अध्याय तक। इसी बीच लक्ष्मण, सदानन्द और विनय का भाई किरण आ गए। अल्प परे आए सुरपति एक संगी के साथ। सब के अन्त में आए उमेश। ये कॉलिज में पढ़ते हैं, अन्तेवासी के विशेष परिचित हैं।

आज 14 अप्रैल, 1924 ईसवी, पहला वैशाख, 1331 (बंगला) साल; मंगलवार।

श्री म सुरसंगयोग से पढ़ते हैं और व्याख्या करते हैं—

यो वा एतदक्षरं गार्ग्यविदित्वास्माल्लोकात् प्रैति स कृपण:।
अथ य एतदक्षरं गार्गि विदित्वास्माल्लोकात् प्रैति स ब्राह्मण:।*

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ठाकुर कहते थे, एक व्यक्ति कितना कष्ट करके बंगला देश से जगन्नाथ-दर्शन करने गया। मन्दिर के सम्मुख उपस्थित हो गया। तब देखा, एक बैलगाड़ी जा रही है। गाड़ीवाले से उसने अल्प ठहर कर उसे ले जाने के लिए कहा और कहा कि वह झट से मन्दिर-दर्शन करके आता

---

* ब्राह्मधर्म 3.23

है। गाड़ीवाले ने कहा, "यह नहीं होगा"। तब फिर क्या करे? — लाचार गाड़ी में चढ़कर बैठ गया। खूब क्लान्त था। उसके भाग्य में जगन्नाथ-दर्शन नहीं हुआ। यही व्यक्ति है कृपण; अर्थात् कृपा का पात्र। इतनी चेष्टा पर भी दर्शन नहीं हुए, बुद्धि के दोष से। जो लोग ईश्वर-दर्शन के लिए बिल्कुल भी चेष्टा नहीं करते, वे हैं और भी अधिक कृपा के पात्र— और भी कृपण। ब्रह्म को जान लेने पर ही ब्राह्मण।

"मनुष्य कैसा अद्‌भुत जीव ईश्वर ने रचा है। इसी रक्त-मांस के शरीर में ही ईश्वर का दर्शन किया जाता है। अन्य जीव के शरीर में होता नहीं। तभी मनुष्य-जन्म दुर्लभ।"

(एक भक्त के प्रति)— "देखिए, यह बात कई दिनों से ही मन में आ रही थी। तभी आप लोगों से कई बार कही है।"

श्री म *(स्वगत)*— उह:, कैसा आश्चर्यजनक व्यापार! इतनी दुर्बलता है, इसी मनुष्य के शरीर और मन में। किन्तु उसके होते हुए भी अमृतत्व-लाभ होता है इसी शरीर में। अखण्ड सच्चिदानन्द— जो वाक्य मन के अतीत हैं, उनका दर्शन होता है। यह अमृतत्व-लाभ ही है मनुष्य का परम पुरुषार्थ, श्रेष्ठ सम्पद और सर्वश्रेष्ठ कर्त्तव्य। उनको न जानने से जन्म-मृत्यु का ग्रास होना पड़ता है। दु:ख लांछना का तो अन्त नहीं। तभी कृपण, कृपा का पात्र।

श्री म पढ़ते हैं—

तदेतत् प्रेय: पुत्रात् प्रेयो वित्तात् प्रेयोऽन्यस्मात् सर्वस्मात् अन्तरतरं यदयमात्मा।.... आत्मानमेव प्रियमुपासीत। स य आत्मानमेव प्रियमुपास्ते न ह्यस्य प्रियं प्रमायुकं भवति। स वा अयमात्मा सर्वेषां भूतानामधिपति: सर्वेषां भूतानाम् राजा।[1]

तद्‌यथा रथनाभौ च रथनेमौ चारा: सर्वे समर्पिता:। एवमेवास्मिन्नात्मनि सर्वाणि भूतानि सर्वे देवा: सर्वे लोका: सर्वे प्राणा: सर्व एत आत्मान: समर्पिता: ।[2]

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— यही देखिए, ऋषि कहते हैं, सब का प्रिय ईश्वर।

1, 2 ब्राह्मधर्म 9/78-83

जब तक मन नीचे की ओर रहता है तब तक ये सब चीजें प्रिय लगती हैं— ये स्त्रीपुत्रादि, वित्त, कुटुम्ब अर्थात् ठाकुर की भाषा में कामिनी-काञ्चन। इसे ही कहते हैं संसार।

''ईश्वर इन सब के भीतर हैं। जीव उनको देख नहीं पाता। वस्तुतः वह ईश्वर को, आत्मा को ही प्यार करता है। किन्तु समझता है कि वह अपने पुत्रवित्तादि को प्यार करता है। याज्ञवल्क्य मैत्रेयी से कहते हैं, ''आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति।'' गिलाफ को जीव प्यार करता है। भीतर जो रह रहे हैं, उसे देख नहीं पाता।

''ठाकुर ने कहा था, यही तो है उनकी अविद्या माया का कार्य— जो सत्य है, और अपने हैं उनको करवा देती है पराया। और जो पराया है, उसको करवा देती है अपना। केवल ईश्वर की कृपा से ही यह चैतन्य हो सकता है। उनकी माया के संग कोई भी पार नहीं पा सकता। कहा करते, विद्या से अविद्या का जोर अधिक है। विद्या, अविद्या दोनों ही माया हैं।

''ठाकुर का जीवन ही तो है इस महाकाव्य का जीवन्त भाष्य। आत्मा, जो अति प्रिय है, उनमें ही रहते निशिदिन निमग्न। किसी पर भी मन नहीं। परिवार के व्यक्तियों को खाना नहीं मिलता, मलेरिया में मर-मर हो रहे हैं, तथापि एक दिन भी ईश्वर को नहीं कह सके कि इन्हें यह दो— खाना, वस्त्रादि। बताया था, यदि समझता कि ये वस्तुएँ रहेंगी तो कामारपुकुर को सोने में मढ़ देने के लिए माँ से कहता। किन्तु जागतिक प्रिय जो है, वह अन्त तक ठहरता नहीं। 'एक ईश्वर ही प्रिय और सब कुछ अप्रिय। एक ईश्वर सत्य और सब अनित्य'— ठाकुर का सर्वदा यही भाव ही था जाग्रत। माँ ठाकुरण कामारपुकुर चली गईं। ठाकुर ने पीछे भक्तों से कहा था, 'के तो के चले गेलो!' (क्या हुआ जो चली गयीं!) अपनी अवस्था स्वयं ही वर्णन करते हैं। कहा, रामलाल आदि ये सब हो गए पराये। और बाबूराम प्रभृति भक्तगण हो गए अपने, प्रिय।

''दो बातें हैं, एक ईश्वर और एक जगत। जगत को प्यार न करके ईश्वर को प्यार करना। उनकी कृपा से उनको प्यार कर सके तो फिर जगत रहता नहीं। तब 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म', ठाकुर ने यही देखा था। अल्प नीचे

आकर बोले थे, माँ ने दिखाया सब मोम का है। बाग, घर–द्वार, पेड़–पौधे, माली— सब मोम के बने हैं, सब सच्चिदानन्द में मढ़े हुए हैं।

''किस प्रकार ईश्वर में प्यार हो, वह भी बता दिया है। 'जिनका ईश्वर में प्यार हुआ है, उनके लिए लोटा भर जो रोते हैं'— उनका संग करना, और उनकी सेवा करना। साधु–संग और सुाध–सेवा करने के लिए कहा। किन्तु सुनता है कौन यह महावाणी!''

श्री म *(अन्तेवासी के प्रति)*— शिष्यों से ऋषि कहते हैं कि जिस प्रकार रथ के पहिये में— अर्थात् rim में spokes (शलाकाएँ) घुसी रहती हैं वैसे ही ईश्वर के संग सब का संयोग है। तब तो फिर यह सब कुछ ही है उसी whole (पूर्ण) का part (अंश)। समस्त ब्रह्माण्ड, सकल जीव हैं उनके संग संलग्न।

''और वही हमने discover (आविष्कार) किया है— ट्रोलि (trolly)। ट्रोलि के संग संयोग होने पर ट्रामगाड़ी चलती है। इसी में विद्युत की शक्ति है। और वही है संयोगस्थल— गाड़ी का और ऊपर के तार का। ज्योंहि ट्रोलि अलग हुई त्योंहि गाड़ी बन्द हो गई। यह बहुत ही सुन्दर दृष्टान्त है। पहले ये वस्तुएँ थीं नहीं, तभी ऋषियों ने गाड़ी के नाभिचक्र (धुरी) का दृष्टान्त दिया है। यह भी वेद है। और इसीलिए तो वेद नित्य है।''

श्री म की यह बात सुनकर एक भक्त सोचने लगे तब तो ये भी ऋषि हैं। क्योंकि ये इसी सत्य के नूतन रूप के आविष्कारक हैं।

श्री म (भक्तों के प्रति)— ऋषियों का एक नाम और है, मन्त्रद्रष्टा। उहः, कितनी दूर उन्होंने विचार किया है! ईश्वर ने उन्हें ये सब सत्य दिखा दिए हैं। ऋषियों ने ये सब तत्त्व प्रत्यक्ष किए हैं, तब फिर शब्द द्वारा प्रकाश में लाए हैं। उसी का नाम है वेद।

अब प्राय: आठ। छोटे जितेन आदि किसी–किसी ने विदा ली।

एक भक्त *(श्री म के प्रति)*— आज बड़े नलिनीबाबू के घर मठ के कई जन साधु खाएँगे। उन्होंने नरहरि की help (सहायता) माँगी थी। रात को उसे कहा था जाने के लिए, वह गया नहीं। कहता है, एक बार जाऊँगा। कब

जाऊँगा, उसका निश्चय नहीं है।

श्री म *(विरक्ति सहित, नरहरि के प्रति)*— उठो, उठो। तुम्हें किस लिए निमन्त्रण किया है? यही तो, कि साधु-सेवा करेगा। परम सुहृद का काम उन्होंने किया है। साधु-सेवा का निमन्त्रण, तुम्हारा कितना मंगल! अभी-अभी तो सुनी हैं, ये सब बातें। उठो, उठो!

नरहरि चला गया। श्री म उत्तम वैद्य। भक्त के श्रेय-लाभ के लिए बलप्रयोग करने में भी कुण्ठित नहीं होते।

श्री म *(एक भक्त के प्रति)*— मुझ को पहले क्यों नहीं बताया?

भक्त— कल रात उसको कहा था। उसने सुना नहीं, इसीलिए फिर आप से नहीं कहा।

श्री म— अधिक सुविधा वाला (काम का) व्यक्ति नहीं है, देख रहा हूँ। हण्डी का एक ही चावल दबाने से सब पता चल जाता है। साधु-सेवा में जिस समय मन नहीं है तब तो समझना होगा, भला व्यक्ति नहीं है। यह सब ही क्या जानते हैं— जैसी environment (वातावरण) के भीतर brought up (वर्धित, पालित) होता है वैसा ही होगा! ठाकुर कहते, पुली (गुजिया, समोसे) देखने में तो सारे एक जैसे किन्तु किसी के भीतर होता है खोये का पूर, किसी में उड़द की दाल का। केवल आँख बन्द किए रहने से ही ध्यान हो गया? 'एक बार जाएगा' जो कहा है, 'वह खाने के समय'!

•

आज नववर्ष के कारण सारा दिन साधु, भक्तों का समागम रहा। श्री म को प्रणाम करने सब आ रहे हैं।

अब सन्ध्या। श्री म चार तल की विस्तृत छत पर मादुर पर बैठे हैं— उत्तरास्य। खूब गर्मी है, और फिर मृदु, मन्द, शीतल हवा भी चल रही है। बड़े जितेन, डॉक्टर बक्शी, विनय, छोटे जितेन, रमणी, ललित, गदाधर, मणि, शान्ति, जगबन्धु प्रभृति भक्त श्री म के पास बैठे हैं। आध घण्टा ध्यान के पश्चात् 'कथामृत'-पाठ होता है। श्री म ने स्वयं ही तृतीय

भाग षड्विंश खण्ड निकाल दिया है। वे बहुत क्लान्त हैं। शान्ति पढ़ते हैं।

श्री श्रीरामकृष्णदेव काशीपुर बाग में रहते हैं, अस्वस्थ हैं। चड़क का मेला लगा है। ठाकुर ने मेले से बतासे, बटि आदि मँगवाए हैं। श्री म कहते हैं—

''यही है ठाकुर की बाल-लीला का पुनरभिनय।''

अब कर्मफल की बात होने लगी। डॉक्टर श्रीनाथ कहते हैं, ''कर्म-फल किसी से भी हटाया नहीं जाता''।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— यह बात ठाकुर ने नहीं मानी। कहते हैं, 'ईश्वर कोटि का अपराध नहीं होता।' जीव-कोटि के लिए ऐसे नियम, कानून हैं। कर्मफल भोग करना, यह तो साधारण नियम है। उनकी कृपा, यही तो है असाधारण नियम। उनकी कृपा से उनका दर्शन कर लेने पर संचित और क्रियमाण कर्म, सब नष्ट हो जाते हैं। जैसे भुने हुए धान से पौधा नहीं होता। प्रारब्ध शेष रहता है। ठाकुर कहते हैं, वह भी उनकी कृपा से कम हो जाता है। कहते, जहाँ पर तलवार का घाव लगता वहाँ पर नहरनी की खरूँच लगती है। और फिर उनकी इच्छा हो तो उसे भी हटा लेते हैं। ठाकुर-भाव में विभोर होकर यह गाना गाया करते थे—

'कपाले लिखेछे विधि ताई बलवान यदि,
तबे ओ माँ तोर दुर्गा नाम के नेबे।'

[भावार्थ— 'कपाल में विधि ने जो लिख दिया है', यदि वही बलवान है तो माँ, तेरा दुर्गा नाम कौन लेगा?]

कहा था, उनका नाम करने पर, उनका चिन्तन करने पर, उनके शरणागत होने पर प्रारब्ध भी नष्ट हो जाता है।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— गृहस्थियों के लिए ज्ञानपथ ठीक नहीं— सब कुछ स्वप्नवत् जानना! उनके लिए भक्तिपथ अच्छा है। तभी कहा था, ''ज्ञान-ज्ञान करने से ही क्या ज्ञान होता है?'' दो-चार जनों का ही यह होता है। तभी नरेन्द्र से कहा था 'अखण्ड का घर'।

•

ठाकुरबाड़ी से प्रसाद आया— प्रचुर फल, मिठाई। ग्रीष्मकाल है तभी बहुत-से तरबूज का भोग दिया हुआ है। डॉक्टर बक्शी भी इससे पहले श्री माँ काली का प्रसाद ठनठने से लाए हुए हैं— बहुत-सा सन्देश। भक्तों ने परितोषपूर्वक प्रसाद पाया।

फिर 'कथामृत' पाठ होगा। श्री म क्लान्त हों तो पाठ ही अधिक होता है। उन्होंने अब फिर द्वितीय भाग, छब्बीसवाँ खण्ड स्वयं निकाल दिया— संसारी और त्यागी की बातें। शान्ति पढ़ते हैं। बीच-बीच में श्री म व्याख्या करते हैं।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— संसार में (गृहस्थ में) रह कर ईश्वर-लाभ बहुत rare (बिरला) है। 'होता ही नहीं', यह बात भी कहने से चलता नहीं। किन्तु बहुत कठिन है। दो-एक जन को होता है, उनकी कृपा से। इतने बड़े व्यक्ति थे केशवबाबू। उन्हें ही ठाकुर ने कहा था, घर में रहकर भी प्रकाश मिलता तो है किन्तु टिम-टिम (थोड़ा-थोड़ा) करता है। बाड़ की फाँक से प्रकाश आता है। और त्यागी लोग प्रकाश की बाढ़ में खड़े होते हैं— flood of light में।

" 'जो कष्ट में गृहस्थ-त्याग करता है वह हीन श्रेणी का व्यक्ति है', ठाकुर कहते हैं। अनासक्त होकर कर्म करने से ठीक-ठीक ईश्वर-लाभ होता है। गृहस्थ ज्ञानी जैसे काँच के घर में रहता है। काँच में से भीतर-बाहर दोनों को ही देखता है। क्षुद्र छिद्र के भीतर से जैसे देखना। किन्तु त्यागी का 'वसुधैव कुटुम्बकम्'।"

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— संसार में रहने पर मेघ उठेगा ही। सूर्य को भी ढक लेता है बीच-बीच में। फिर सब स्वच्छ। काजल के गृह में रहना। हजार सयाना ही हो, एक-आध दाग लग ही जाता है। निर्लिप्त होना बड़ा ही कठिन है। गिरीशबाबू ने ठाकुर से कहा था, "क्या संसारी, क्या त्यागी, सब को ही आप शुद्ध और निर्लिप्त कर दे सकते हैं। आप का सब कुछ नियम रहित।" कैसा विश्वास! ठाकुर मान गए। कहते हैं, "हाँ, वैसा हो सकता है। भक्ति-उन्माद वेदविधि माने ना।" यहाँ पर अपने आपको पकड़वा दिया है। ईश्वर के अतिरिक्त और किसकी सामर्थ्य है इस बात को मान लेना? केवल

क्या मान ही लेना? गिरीशबाबू ने जो चाहा, वही पा लिया। गिरीशबाबू ने स्वयं ही कहा है, ''आप की चिन्ता करके मैं क्या था और क्या हो गया हूँ।'' आँख में उँगली डालकर दिखाकर कहते हैं ठाकुर— ''मैं ईश्वर, जगत के कल्याण के लिए आया हूँ। मेरी बात सुनो, चिरशान्ति-लाभ करोगे।''

•

भक्त बहुत-से चले गए हैं। दो-चार जन रह गए हैं। श्री म उनके संग छत पर पायचारी करते हैं— उत्तर-दक्षिण। क्या सोच रहे हैं, और चल रहे हैं! हठात् टीन के गृह के सामने खड़े हो गए। इसी कक्ष में अन्तेवासी रहते हैं।

श्री म *(अन्तेवासी के प्रति)*— उह, कैसी उत्कट साधना ही लोगों ने की है इस 'मैं' को भूलने के लिए! *(सहास्य)* गु-म-फों तक हुआ है। *(भक्तों के प्रति)* शायद आप यह समझ नहीं पाए? शिष्य को डर लगा है। तभी टेढ़ा (आड़ष्ट) होकर कहता है— गुरु, मरा* तो फोंस करता है। शिष्य शव-साधन करता है। मरे के ऊपर बैठ कर जप करना होता है। भूत के पकड़ने पर मरा फोंस करता है। तब उनके मुख में 'चाट' देता है— छोले, चने, दाने आदि। वह करड़-मरड़ करके खाता रहता है। उसी बीच में शिष्य जप करके काम पूरा कर लेता है।

'' 'गु-म-फों' करने पर फिर जय नहीं होता। भय हुआ और गया। उह, कैसा कठिन साधन हुआ है ईश्वर-लाभ के लिए! घोर अन्धकार है, साँप किलबिल-किलबिल करते हैं। उस पर फिर भूत का उत्पात— वैसे स्थान पर बैठ कर साधन।''

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ढेकी का एक सिरा जितना ऊपर चढ़ेगा अन्य किनारा उतना ही नीचे उतरेगा। मन ईश्वर की ओर जितना बढ़ेगा, संसार की little things (क्षुद्रता) से उतना ही पृथक् होगा।

ठाकुर ने बताया था, ''माँ ने मेरे द्वारा सब प्रकार के साधन करवाए हैं। क्यों? लोकशिक्षा के लिए और 'शास्त्र सत्य है', इसी प्रमाण के लिए।

* मरा = मुर्दा

तुम लोगों को इतना करना नहीं होगा। मैं कौन और तुम कौन यह जान लेने से ही हुआ।'' अर्थात् वे भगवान हैं और हम लोग उनकी सन्तान हैं। कहा था, ''प्रतिज्ञा करता हूँ, जो मेरा चिन्तन करेगा वह मेरा ऐश्वर्य-लाभ करेगा— जैसे पिता का ऐश्वर्य पुत्र लाभ करता है।'' इस पर विश्वास होने से हो शान्ति।

●●

(2)

आज मंगलवार है, 15 अप्रैल, 1924 ईसवी; दूसरा वैशाख 1331 (बंगला) साल। अपराह्न साढ़े पाँच। श्री म ने अभी 'ठाकुरबाड़ी' से आकर अपने कक्ष में प्रवेश किया है। निकट ही प्रशस्त छत है। उस पर मादुर बिछी हुई है। भक्तगण आ-आ कर बैठ रहे हैं। लक्ष्मण, सदानन्द, माखन, शान्ति और उनका संगी, जगबन्धु, महेश चैतन्य प्रभृति प्रतीक्षा कर रहे हैं। 'प्रवासी'-ऑफिस के उमेश चक्रवर्ती भी आए हैं। उनके हाथ में एक 'प्रवासी' है। कुछ क्षणों में ही बड़े जितेन, डॉक्टर, विनय, बलाइ, छोटे जितेन, मनोरञ्जन आदि भी आ उपस्थित हुए। अब छः बजे हैं।

अब श्री म सभा में आए। वे उत्तरास्य कुर्सी पर बैठे। उमेश बैंच पर पश्चिममुखी बैठे। श्री म को 'प्रवासी' में से माँ का 'जीवन-चरित' सुनाते हैं। लेखक हैं 'प्रवासी' और 'मॉड्रन रिव्यु' के विख्यात सम्पादक श्री रामानन्द चट्टोपाध्याय। श्री म ने ध्यानस्थ होकर पाठ सुना। पाठ शेष होने पर अपना मन्तव्य कहते हैं।

श्री म *(सब के प्रति)*— खूब कल्याण होगा इससे लोगों का। विशिष्ट व्यक्ति ने लिखा है और फिर हैं वे ब्राह्मसमाज के व्यक्ति। बहुत लोग पढ़ेंगे।

''भारतीय नारी का आदर्श है माँ। माँ तो, सब ही की माँ। जो लड़कियाँ उनका जीवन लेंगी, वे सब धन्य हो जाएँगी। ठाकुर ने माँ को अपने पास क्यों रखा था? लोकशिक्षा के लिए। माँ में मातृत्व का पूर्ण विकास है। और स्त्री जाति का पूर्ण विकास है मातृत्व में। संयम और सेवा की मूर्तिमती

विग्रह माँ! वेस्ट (पश्चिम) के कितने लोग उनका दर्शन करके धन्य हो गए हैं!

''ठाकुर को और माँ को देश जितना ही लेगा, समझना होगा देश उतना ही ऊपर उठा है। जैसे ठाकुर, वैसी ही माँ— दोनों ने ही साधारण मनुष्य के आचरण में अपना-अपना स्वरूप लुका रखा था। जिनके निकट (अपने को) पकड़वा दिया है, वे धन्य हैं। जगत के लोग क्रमश: समझ सकेंगे।''

•

बातों-बातों में ठाकुर और माँ के जन्मस्थान कामारपुकुर और जयरामवाटी के निकटवर्ती सिंहवाहिनी देवी की बात उठी। बलि के सम्बन्ध में बात हो रही है।

महेश चैतन्य *(श्री म के प्रति)*— कोई-कोई इसे इन्द्रियों की बलि कहता है।

श्री म *(सहास्य)*— तो फिर अपनों की बलि क्यों नहीं देता?

•

महेश चैतन्य— मठ में इस विषय पर बहुत आलोचना हुई है। अहेतुकी कृपा क्या है?

श्री म— काम करने पर उसकी मजदूरी मिलती है। किसी को वैसे ही मिल गई मजदूरी, बिना कोई काम किए ही; ठीक उसी तरह ही। इस कृपा का कोई भी कारण खोजने से नहीं मिलता। सब जानते गरीब है, वह तो रातोंरात राजा हो गया! कितने भक्त कितना साधन-भजन करते हैं किन्तु उन्हें ईश्वर-दर्शन नहीं देते। और किसी को झट दर्शन दे दिए। उसने कुछ भी नहीं किया।

''ईश्वर का स्वभाव तो मानो बालक का स्वभाव है। वे हैं स्वतन्त्र कार्यकारण-सम्पर्क के बाहर। यही कार्य-कारण सम्बन्ध (Law of causation), यह भी उनकी सृष्टि है। यह सब ही उनमें है किन्तु वे इन सब के पार हैं। जैसे साँप के मुख में विष। अन्य को काटे तो वह मर जाता है किन्तु स्वयं नहीं मरता मुख में विष होते हुए भी। विचार करके यह समझ में आने वाला नहीं

है। केवल उनकी कृपा से ही समझ में आता है कि उनकी कृपा क्या है। और पथ नहीं है।

"और भी एक है अहैतुकी भक्ति। कोई धन माँगता है, कोई यह, कोई वह माँगता है। कोई केवल भक्ति माँगता है।

"लड़के को माँ मारती है किन्तु लड़का उसी माँ की गोद में ही गिरता है। ईश्वर-दर्शन की वासना वासनाओं में नहीं है।

"कोई-कोई अत्यन्त दुःख-निवृत्ति के लिए भगवान के निकट मुक्ति की प्रार्थना करता है। उनका दर्शन होने पर, आत्मदर्शन हो जाने पर वह भी हो जाती है।

"इन सबके ऊपर भी और एक है। मुनि, ऋषि कोई-कोई उसे ही लिए हुए थे। वह है अहैतुकी भक्ति। अन्य कुछ भी चाहते नहीं, कुछ प्रयोजन नहीं, केवल भगवान के पादपद्मों में शुद्धाभक्ति चाहते हैं। वहाँ पर दुःख निवृत्ति की आकाँक्षा नहीं है। है केवल प्रेमानन्द-सम्भोग।

'आत्मारामाश्च मुनयः निर्ग्रन्थाः अपि उरुक्रमे।
कुर्वन्त्यहैतुकीं भक्तिं इत्थम्भूतगुणो हरिः॥'

"यह भिन्न क्लास की भक्ति है। सकाम-निष्काम की श्रेणी के ऊपर की वस्तु। नरलीला में ठाकुर ने यही भक्ति ली थी— माँ का पुत्र। चैतन्यदेव की भी थी यही भक्ति।"

•

महेश चैतन्य— कृपा क्या है?

श्री म— उनका अनुग्रह, उनकी इच्छा। उनकी कृपा का कहाँ अन्त! सर्वदा कृपा रहती है। जीव, जगत् की चौबीस तत्त्वों द्वारा रचना की है। और फिर इन सबके भीतर वे ही प्रविष्ट होकर रहते हैं! मनुष्य इसे समझ नहीं सकता। उनकी अविद्यामाया इसे भुला देती है। उनको तभी तो देख नहीं पाता, इतने निकट हैं तब भी। विद्यामाया की सहायता से जीव स्वरूप का सन्धान पाता

है। ठाकुर कहते, उनकी विद्यामाया की अपेक्षा अविद्यामाया का जोर अधिक है।

"साधक जितना ही ऊपर उठता है, उतना ही इस माया का रूप देखता है— भीषणतम वही रूप ही है। भक्तभाव में ठाकुर तभी तो सर्वदा प्रार्थना किया करते, "माँ, अपनी भुवनमोहिनी माया में मुग्ध न करो।" यीशु भी उसकी ही प्रतिध्वनि करते हैं— "Lead us not unto temptation". जो व्यक्ति ये दोनों वस्तुएँ देखता है, वही 'कृपा, कृपा' दिन-रात करता है। इनमें एक है मनुष्य की दुर्बलता, दूसरे महामाया का विचित्र खेल— अघटनघटनपटीयसी का यही है 'ताज्जुब काण्ड'!

महेश चैतन्य— तो फिर साधन-भजन का क्या प्रयोजन?

श्री म— नहीं, उनकी कृपा साधन-भजन द्वारा मिलेगी ही— ऐसा कोई नियम नहीं है। उनकी ही इच्छा से उनकी कृपा होती है। फिर भी साधन-भजन तो करना ही है, क्योंकि सब ही महापुरुषों ने वह किया है और अब भी करते हैं। तभी उसे करना— यदि दया हो जाए।

महेश चैतन्य— मठ में पण्डित महाशय कहते हैं, कारण बिना कार्य हो नहीं सकता। तब तो फिर कृपा का कोई न कोई कारण चाहिए।

श्री म— बड़ी-बड़ी बातें हम अनेक कहते हैं, किन्तु धारणा कहाँ होती है? कितनी ही बातें तो हो लीं। बाजे के बोल मुँह से बोलने सहज हैं किन्तु हाथ में कहाँ आते हैं? उनकी इच्छा करने से सबकुछ हो जाता है, उनकी इच्छा से सब होता है।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ऑक्सिजन और हाइड्रोजन के भीतर से इलैक्ट्रिक current (विद्युत प्रवाह) चला दो। झट वाटर वेपर (वाष्प) तैयार हो जाएगी। इसे बनाया किसने? मनुष्य तो देखता है जल तैयार हो गया, किन्तु किसकी इच्छा से यही होता है। उनकी इच्छा करने से यही नहीं भी हो सकता था।

"बड़े-बड़े मस्तिष्कों ने यह निश्चय किया था— A system of phenomena is followed by a system of effects (कारण समूह

कार्य को जन्म देता है)। Uniformity of Nature (प्रकृति है अपरिवर्तनीया), इसी को मानकर ही फिर cause and effect (कार्यकारण) की बात कहते हैं। Nature जो Uniform (प्रकृति जो एकरूप) है, अब इसका क्या प्रमाण है? यह तो अनुमान मात्र है। प्रकृति का रूप तुमने देखा है क्या? तो फिर तुम कैसे बोलते हो? जिन्होंने देखा था, वे ही ऋषिगण कहते हैं, 'सदेव सौम्य इदमग्रे आसीदेकमेवाद्वितीयम्'। Nature (प्रकृति) ही नहीं थी तब। एकमात्र सच्चिदानन्द परमेश्वर थे।

"सब ने मान लिया था— all crows are black (कौवा काला होता है)। किन्तु पीछे पता लगा white crow (सफेद कौवा) आस्ट्रेलिया में है। Generalisation (सब एक जैसा है), यह अनुमान नहीं किया जा सकता। जोर करके तो कुछ भी कहा नहीं जा सकता।"

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— विचार करके कुछ भी नहीं होगा, कुछ भी नहीं। दिखा दें तो होता है। उन्होंने जिन्हें दिखाया है, उनकी कथा पर विश्वास करो और फिर विचार करो। केवल विचार से पता नहीं लगा सकोगे। शान्ति भी नहीं होगी। इसीलिए, "गुरुवाक्य पर विश्वास"— ठाकुर का महावाक्य है।

"अपने शरीर की ओर ही एक बार आँख उठाकर देखिए ना! कितना काण्ड इसमें है— liver, spleen, nervous system, lungs, heart, kidney, bladder— यकृत, प्लीहा, स्नायुमण्डल, फेफड़े, हृदय, मूत्राशय, पित्तकोष कितना क्या-क्या! और फिर इसमें हैं मन, बुद्धि, अहंकार। ये सब साधन हैं, जिनसे ईश्वर-दर्शन होता है। विचार करके देखो ये सब कैसे आए? ये सब बाहर से तो आए नहीं, सब भीतर ही थे। क्रमशः बाहर आए। Involved (अन्तर में परिव्याप्त) थे, फिर धीरे-धीरे evolved (बहि:प्रकाश) पाया। पहले involution (परिव्याप्ति), फिर evolution (क्रमविकास)। किसने यह सब बनाया है? कैसे तुम explain (व्याख्या) करोगे, बोलो? शक्ति जो नहीं है। यही जो जन्म से ही हम breath (श्वास) लेते हैं *(अभिनय करके)* ऐसे-ऐसे करके, इसे ही किसने किया है? कोई-कोई automatic (सहजात) (अपने-आप होता है) कहता है। ऐसा कहकर भी तो कुछ भी explained (समझाना) नहीं हुआ। Automatic (अपने-आप)

होता है अर्थात् mysterious (रहस्यमय) है। तर्क करिये ना, explained (समझाना) कहाँ होता है? Argument (युक्ति) की यह weakness (दुर्बलता) देखकर हमने निश्चय कर लिया है कि अवतार जो कहते हैं, वही लेंगे। These things have been revealved unto us (ये गम्भीर तत्त्व हमारे निकट ईश्वर द्वारा प्रकटित हुए हैं) इसमें फिर कोई भी 'किन्तु' नहीं है।

''ऋषि विचार करके ये सब नहीं जान सके थे। विचार समाप्त करके ध्यान में बैठे थे। तब ईश्वर ने धप्-धप् करके (क्रमशः) एक-एक विषय दिखा दिया। ठाकुर इसीलिए तो कहा करते, ''विचार और क्या करूँ? देख रहा हूँ, माँ ही सब होकर रह रही हैं, सब करती हैं।'' 'साकार-निराकार-दर्शन' के पश्चात् ऐसी अवस्था होती है। तब 'यह सब कुछ ही वे हैं' दर्शन होता है।''

श्री म *(युवक के प्रति)*— विचार द्वारा कुछ भी नहीं होने वाला, और न कुछ होगा ही। क्राइस्ट ने कहा था, Father (ईश्वर) को Son (अवतार, क्राइस्ट) जानता है। Son अर्थात् पुत्र क्राइस्ट, अवतार। और Son (अवतार) जिसके पास revealed (स्वरूप में प्रकट) होते हैं, वे जानते हैं। अन्य नहीं जानते। जभी गुरुवाक्य पर, अवतार की वाणी पर विश्वास बिना और उपाय नहीं है।

श्री म *(छोटे जितेन के प्रति)*— एक बार बाबूराम अनेक दिन दक्षिणेश्वर नहीं गए। ठाकुर ने उससे कहा था, 'अब आता नहीं। इसके पश्चात् माँ अवस्था बदल दे सकती हैं। तब कुछ भी भला नहीं लगेगा।' कहा था, ''माँ मुझे जिस प्रकार रखती हैं, वैसे ही रहता हूँ।'' यही बाबूराम महाराज ही राणाघाट में आपके घर गए थे। अवतार को समझना बहुत ही कठिन है।

''क्राइस्ट को वे लोग क्या समझ सकते हैं? 'जो पहचानेंगे', वे ही भोग लेकर रह रहे हैं। तब तो वे फिर कैसे समझेंगे? हम जो कुछ समझ सके हैं, वह इसी कारण कि उन्हें (ठाकुर को) देखा है।''

•

साधु और भक्तगण अब ठाकुर का फलमिष्टि प्रसाद खाते हैं। अब रात्रि के साढ़े आठ हैं। मोहनवासी आए हैं। उनकी इच्छा है कि कुछ दिन श्री पुरीधाम में जाकर रहें। श्री म को पकड़ा है कि जगन्नाथ-मन्दिर के मैनेजर रायबहादुर सखीचाँद को कह दें।

श्री म *(मोहनवासी के प्रति)*— उनके साथ रहा नहीं हूँ। मात्र एक बार यहाँ पर दस मिनट का परिचय है। हठात् किस प्रकार कहा जाए? विचार करके देखें।

"दक्षिणेश्वर में रहें तो बहुत अच्छा है। माँ काली की सेवा की जाएगी। वशिष्ठ ने राम से कहा था— " 'तुम आओगे', यही जानकर पुरोहित का काम लिया है। नहीं तो क्या ऐसा दीन काम मैं कभी लेता?" पेट खा ले तो पीठ सहती है।"

●●

(3)

अपराह्न चार। मॉर्टन स्कूल का चारतल। श्री म अपने कमरे में बिछौने पर बैठे हैं पश्चिमास्य। सम्मुख जगबन्धु बैंच पर बैठे हैं। कुछ क्षण पश्चात् 'तोता' ने गृह में प्रवेश किया। तोता श्री म का पौत्र। वयस दसेक वर्ष। श्री म 'तोता' के संग फष्टिनष्टि *(हँसी मजाक)* करते हैं। किन्तु आश्चर्य का विषय है कि साधारण व्यक्ति पोते के संग जिस प्रकार का व्यवहार करते हैं, उस प्रकार का नहीं है। श्रद्धायुक्त व्यवहार है। लड़के को जैसे भगवान का रूप मन में समझ रहे हैं। स्नेह का सम्पर्क नहीं, श्रद्धा का।

श्री म *(तोता के प्रति)*— सुनो, सुनो। ठाकुरबाड़ी* के मोहल्ले के दो लड़कों को वहाँ बटतला पर खड़े हुए देखा था। दोनों भाई। बड़े ने छोटे भाई के गले में हाथ डालकर पकड़ रखा था। मुझे देखकर बोला, "हमारी पाठशाला में पढ़ता है, तुम्हारे घर में है।" *(अन्तेवासी के प्रति)* उसे world (जगत) की

---

* ठाकुरबाड़ी— श्री म का निवासस्थान।

यही खबर है। *(तोता के प्रति)*— मैं बोला, तुम लोग यहाँ पर क्यों आए हो? रास्ते में गाड़ियाँ चलती हैं। वे बोले, हम रोज यहाँ पर आते हैं। *(हास्य)*

बालक के साथ बालक की न्यायीं व्यवहार इन महापुरुष का। अल्प क्षण पश्चात् उन्होंने गम्भीर मूर्ति धारण कर ली। मन जैसे और इस जगत में नहीं है, चक्षु की दृष्टि भीतर प्रवेश कर गई है। बिछौने के ऊपर एक पुस्तक थी, वहाँ से लेकर पाठ करने लगे। पुस्तक है 'ब्राह्मधर्म'। वह उपनिषदादि शास्त्रों का संग्रह है। श्री म ने पाँच अध्याय पाठ किए।

जगत का सृष्टिकर्ता ब्रह्म ही अक्षर नाम से परिचित है। उनका ही लक्षण, अन्वय और व्यतिरेक मुख से दिखा कर ब्रह्म का स्वरूप लक्षण वर्णन करते हैं।

श्री म *(अन्तेवासी के प्रति)*— यही देखिए ऋषि कहते हैं, सृष्टि से पहले कुछ नहीं था। एक अद्वितीय सत्य वस्तु मात्र थी। वे निज को निज जानते हैं। तभी उन्हें आत्मा कहते हैं। वे साधारण लोगों की तरह नहीं हैं। वे हैं अजर, अमर, अमृत और अभय; अज और महान। वे ऐसी वस्तु हैं, जिसका द्वितीय नहीं, तभी अद्वितीय। संसार में जो वस्तु है, गिनती में उसका एक है, दो है, तीन, चार है। किन्तु उनका ऐसा नहीं है। वह वस्तु तो सर्वदा एकरूप है, उसमें कोई परिवर्तन नहीं है। षड् विकार वर्जित है। 'एकमेवाद्वितीयम्'। उनके ही शासन में जगत चलता है 'भीषास्माद्वातः पवते। भीषोदेति सूर्यो।' कारण वे हैं— 'महद्भयं वज्रमुद्यतम्'। उनको जान लेने पर क्या होता है, वह भी बतलाते हैं— 'अमृतास्ते भवन्ति'। तब जन्म-मरण के हाथ से जीव की रक्षा हो गई। भगवान के पास रहेगा सदानन्द में। उनको प्राप्त करना हो तो त्याग चाहिए। संसार का सब त्याग करना होगा। 'भय पाएगा', इसी कारण यह बात कहते नहीं हैं। गृहियों को ठाकुर ने कहा था, ''तुम लोग मन में त्याग करोगे''। यह जैसे केले में कुनीन है।

''मनुष्य का मन तो एक है। दो वस्तुओं पर एक समय में नहीं जा सकता। ईश्वर में जाने पर जगत में नहीं। और फिर जगत में जाने पर ईश्वर में नहीं। इसीलिए कहते हैं, 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा। मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।' गीता में भी श्रीकृष्ण ने यही बात ही अन्य भाव से कही है। काम, क्रोध, लोभ

का त्याग चाहिए।

''यदि कोई सोचे कि उनको इसी हाथ से पकड़ लूँगा, अथवा देख लूँगा इन्हीं आँखों द्वारा, किंवा कोई कर्म करके उनको प्राप्त कर लूँगा जैसे पढ़कर परीक्षा पास करते हैं— वह नहीं होगा। कहते हैं, तपस्या द्वारा भी उनको नहीं पा सकते। तब फिर किस प्रकार होता है— 'ज्ञान प्रसादेन विशुद्ध' होने से होता है।

''तभी ठाकुर ने कहा था, ईश्वर के संग एक सम्पर्क स्थापन करना चाहिए— 'मैं उनका बालक', 'मैं उनका दास', 'मैं ही वह हूँ', ऐसे ही सम्पर्क। 'मैं ही वह हूँ' इस बात पर कहते, यह गृहस्थों के पक्ष में ठीक नहीं है। 'मैं उनकी सन्तान हूँ' यही सुन्दर है। ठाकुर ने स्वयं भी यही भाव लिया था। इसका ही नाम है ज्ञान। अज्ञान— मैं मनुष्य, मैं अमुक का बालक— ये सब। 'मैं उनका हूँ' यह चिन्तन करने पर, 'मैं संसार का हूँ' यह अज्ञान नष्ट हो जाता है। यह ही तो है चित्तशुद्धि। शुद्धचित्त में भगवान दर्शन देते हैं— जैसे निर्मल आरसी में छाप पड़ती है। जैसे गंगा का शेष सागर है, वैसे ही चित्तशुद्धि का शेष ईश्वर हैं। तभी ठाकुर कहते, ''शुद्धबुद्धि और शुद्धआत्मा हैं एक''।

''यह सब ही उनका कृपासाध्य है। 'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म' को मनुष्य— यही शोकमोहाभिभूत मनुष्य— कैसे जानेगा उनकी कृपा बिना? 'चेष्टा भी करना, और सब है उनके अन्डर (under)' ठाकुर का यही महावाक्य सर्वदा स्मरण रखना। चेष्टा और कृपा दोनों ही चाहिएँ।''

श्री म कुछ काल नीरव रहे। गृह में कैसा प्रशान्त गम्भीर वातावरण! ग्रीष्मकाल, किन्तु गर्मी का बोध नहीं। अन्तेवासी के मन में और एक बात उठ रही है— 'यही महापुरुष कुछ काल पूर्व बालकवत् बालक के संग में चपल व्यवहार कर रहे थे। इसी व्यक्ति के भीतर किस प्रकार यह प्रशान्त गम्भीर भाव अभिव्यक्त हुआ!'

•

प्राय: आध घण्टे के पश्चात् श्री म ने हाथ में गीता ली। त्रयोदश अध्याय पाठ करके शेष किया। भाव में विभोर हुए एक ही श्लोक पुनः-पुनः आवृत्ति करने लगे। कैसा मधुर कण्ठ!

''ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक्।
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः॥ (गीता 13 : 4)

[भावार्थ— यह क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का तत्त्व, ऋषियों द्वारा बहुत प्रकार से कहा गया है अर्थात् समझाया गया है और नाना प्रकार के वेदमन्त्रों से विभागपूर्वक कहा गया है तथा अच्छी प्रकार निश्चय किए हुए युक्तियुक्त ब्रह्मसूत्र के पदों द्वारा भी वैसे ही कहा गया है।]

श्री म *(अन्तेवासी के प्रति)*— ठाकुर ने कहा था, 'सत्-असत्-विचार' चाहिए। और बतलाया था, जब आत्मा पृथक् और शरीर अलग बोध होता है तब ही ठीक-ठीक धर्मजीवन आरम्भ होता है। देह के संग में आत्मा इस प्रकार जड़ित है कि यह संयोग सहज में तोड़ना नहीं चाहती। अर्जुन को विश्वरूप दिखा दिया, तब भी देहबुद्धि छोड़ता नहीं! इसीलिए यहाँ पर (त्रयोदश अध्याय में) ये दोनों ही वस्तुएँ पृथक्-पृथक् समझाते हैं— क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ, प्रकृति और पुरुष, देह और आत्मा। चौबीस तत्त्वों की देह बनी है। आत्मा है अलग। यह ही है पच्चीसवाँ तत्त्व।

''जीव की यह देहबुद्धि जाना ही नहीं चाहती। जभी ठाकुर की व्यवस्था— उनका दास होकर रहो, उनका पुत्र होकर रहो। 'मैं ईश्वर का हूँ'— यह अभिमान चाहिए।

''यहाँ पर ज्ञान-ज्ञेय-ज्ञाता, साधन-साध्य-साधक— इसका भेद दिखलाते हैं। इसके होने पर जीव निजी position (अवस्था) समझ सकेगा। श्रीकृष्ण बार-बार अर्जुन के मन को ही भगवान के स्वरूप में आकृष्ट करते हैं। कभी-कभी विश्वरूप का वर्णन करते हैं, कभी-कभी अन्तर्यामी रूप का। इसे ही समझने का उपाय 'अमानित्वादि' का साधन है। सत्यपालन, गुरुसेवा और निर्जनवास बिना यह समझ में नहीं आता। ठाकुर ने कहा था, 'क्या जानते हो, मैं ईश्वर का— संसार का नहीं, यही भाव लाना चाहिए'। इसीलिए तो जिनका यह भाव पक्का हो गया है, उनका संग चाहिए।

"यह सब समझने में जब कष्ट होगा तब "ठाकुर-चरितामृत-ध्यान" करोगे। ये सब अवस्थाएँ ही उनमें प्रकट हुई थीं। विश्वास चाहिए— गुरुवाक्य पर विश्वास।

"यहाँ पर कहते हैं, 'श्रुत्वा अन्येभ्य: उपासते।' गुरु के पास से सुनकर, जिनको आत्मदर्शन हुआ है— उनके पास से सुनकर। अर्थात् गुरुवाक्य पर विश्वास करके उनको पुकारना। इसका फल भी समान है। ज्ञानयोग, ध्यानयोग, कर्मयोग से जो होता है गुरुवाक्य पर विश्वास से भी वही होता है। विश्वासयोग का क्या फल है वह सुनो। (मधुर सुर से) 'ततो याति परां गतिं'— प-रा-म् गतिम्। श्रेष्ठ गति-लाभ होता है, ईश्वर-दर्शन होता है।

"जो अपने भीतर भगवान को देखता है एवं सबके भीतर भी इसी भगवान को देखता है, उसका होगा। यह अवस्था ठाकुर की सर्वदा देखी है, एक आध दिन नहीं— सर्वदा समान रूप से देखी है। एक मुहूर्त के लिए भी इस अवस्था में कमी नहीं हुई। 'माँ, माँ'— सर्वदा माँ के अंक का शिशु। इसी माँ को ही यहाँ पर कहा गया है— 'समं परमेश्वरं'।"

•

चारतल की छत। अब सन्ध्या। श्री म छत पर मादुर पर बैठे ध्यान करते हैं, उत्तरास्य। बड़े जितेन, सुधीर, शान्ति, छोटे जितेन, डॉक्टर, विनय, बलाइ, जगबन्धु आए हैं। योगेन और उसका लड़का खोका भी आए हैं। सब श्री म के संग ध्यान करते हैं। क्षण भर पश्चात् आए सतीश और उनके चाचा जी। सतीश गदाधर आश्रम में रहकर कॉलिज में पढ़ते हैं। ध्यानान्ते बातें होती हैं।

श्री म *(सतीश को दिखाकर योगेन के प्रति)*— यही ये हमारे घर के जन आए हैं। कैसा निष्काम ही काम करते हैं! प्राय: रोज सात-आठ घण्टे आश्रम का सब काम करते हैं। और फिर कॉलिज में पढ़ते हैं, ये धन्य हैं। प्रथम तो ललित महाराज आश्रम में रहने नहीं देते थे। इनके पिता जी भी छोड़ने वाले पात्र नहीं हैं। बेलुड़ मठ को— higher authorities (ऊर्ध्वतम कर्त्ताओं के

संग) consult (परामर्श) करके ठहरने की अनुमति ले आए हैं। इन्होंने ही पिता का ठीक–ठीक कर्त्तव्य–पालन किया है। बेटे को केवल खिलाने और पढ़ाने से पिता का काम शेष नहीं होता। उसके धर्म–जीवन की खुराक भी पिता को जमा करनी होगी। तीन शरीर हैं कि ना— स्थूल, सूक्ष्म, कारण। इन तीनों के लिए ही व्यवस्था रहनी चाहिए। इसके पिता ने सब की ही व्यवस्था की है। आश्रम की कोई भी advantage (सेवा) नहीं लेता— केवल रहना। किन्तु सारा दिन अवसर पाने पर ठाकुर–सेवा, साधु–सेवा करता है। आहारादि बाहर करता है। अहा, कैसी निष्काम सेवा!

श्री म *(योगेन को लक्ष्य करके, भक्तों के प्रति)*— अनेक दक्षिणेश्वर में चाहे कितना ही रह लिए हों, अथवा मठ में कितना ही जा लिए हों, किन्तु जैसे के तैसे ही हैं। फिर से विवाह करके बूढ़ी वयस में गृहस्थ आरम्भ करने जाते हैं। चैतन्य कहाँ होता है! संस्कार कहाँ बदलते हैं?

•

सुधीर— क्या संस्कार बदलते हैं? और कैसे बदलते हैं?

श्री म— कौन बदलना चाहता है? आप चाहें तो बदल सकेंगे। जो चाहता है, समझना होगा वह महत् है। लोग तो बिल्कुल भी नहीं चाहते। आप जब जानना चाहते हैं, तो महत्‌जन होंगे। गीता में है, जिज्ञासु और उदार। आर्त्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी सब ही हैं 'उदारा:'। कोई नहीं चाहता। केवल झगड़ा करता है। कहता है, 'उसने अधिक खा लिया, उस व्यक्ति ने मुझे खाने नहीं दिया', ऐसा करके मरता है। ठाकुर ने कहा था, कच्ची दीवार में लोहा गड़ाना सहज है। पक्की दीवार में गड़ाने जाओ तो लोहे समेत निकल आती है।

"साधु–संग से संस्कार बदलता है। निष्काम भाव में करना चाहिए— संसार का कुछ भी न माँग कर, केवल ज्ञान और भक्ति–प्राप्ति के लिए। साधु–संग करने से उनकी सेवा करने की इच्छा होगी। सेवा करने से ही उनके संग प्यार होगा। तब वे जो करते हैं, वही करने की इच्छा होगी— ईश्वर का नाम–गुणकीर्तन, उनका चिन्तन। ऐसा करते–करते ईश्वर के ऊपर प्यार होता है। तत्पश्चात् शरणागति। उनके शरणागत हो जाने पर फिर भय

नहीं। वे ही सब करेंगे। प्रयोजन होने पर संस्कार बदल देंगे।

''ठाकुर ने हम लोगों से यही बात कही थी। केवल कही ही नहीं थी— जोर करके पास रख लेते और भक्तों के संस्कार बदल दिया करते। अश्विनीबाबू के पिता व्रजबाबू को तीन दिन पास रख लिया था। उनके संस्कार बदल दिए थे। जो आन्तरिक चाहता है, उसके बदल जाते हैं।''

श्री म *(सब के प्रति)*— विद्यासागर महाशय की एक गल्प याद आ रही है। *(सहास्य)* उनके ही स्कूल के एक नूतन हैडमास्टर (श्री म) ने कहा ''इच्छा हो तो लड़कों को अच्छा बनाया जा सकता है।'' विद्यासागर महाशय मुस्करा कर बोले, ''अच्छा तो है, कर सको तो करो न! किन्तु बापू, मुझे यदि कहो, या पूछो, तब तो मैं कहता हूँ— जिसका होना है, उसका होगा।'' तब एक गल्प सुनाई— ''मैं तब संस्कृत कॉलिज में प्रिन्सीपल था। दसेक वर्ष का एक लड़का खूब शैतानी करता था। सब ही शिकायत करते थे। एक दिन स्कूल की छुट्टी होने के पश्चात् उसे लेकर छत पर गया। कहा, शैतानी क्यों करता है? छत से तुझे अभी नीचे फेंक दूँगा। लड़के के कान में तो यह बात जाती ही नहीं। वह अपनी मौज में था। मुख से कुछ नहीं बोला। फिर उसे दोनों हाथों से पकड़ कर एकदम नीचे झुला दिया। उस पर कोई असर ही नहीं! निर्भीक देखता रहा। मेरे हाथ में पुस्तक थी। फिर तब उसकी जिल्द से खूब मारा। तब भी कोई बात नहीं। अन्त में एक बार केवल बोला, 'उह, लगता है'। वह भी कितना patronising way (बड़ेपन के भाव) में कहा'' *(सब का हास्य)*। आहा, कैसी पक्की बात ही विद्यासागर महाशय ने कही थी— ''जिसका होने वाला है, उसी का होगा''।

''वैसे ही संस्कार बदलना— ज्ञानभक्ति-लाभ जिसका होना है, उसका होगा। सबका कहाँ होता है? कितना मठ, दक्षिणेश्वर किया। अब फिर नया गृहस्थ बसाना चाहता है। The leviathan will never get tamed (सामुद्रिक दानव कभी भी सिधाए नहीं जाते।)''

श्री म की चेष्टा से योगेन दक्षिणेश्वर के मन्दिर के खजाञ्ची के कर्म पर नियुक्त हुए थे। कर्मचारियों के संग अमेल होने से उस काम को छोड़

दिया है। और देश में जाकर पुन: विवाह करके नूतन संसार बसाना चाहते थे। उनकी वयस पचास के ऊपर है। पहले का एक बेटा है। श्री म की कृपा से उस विपद से रक्षा मिली है।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— एकजन ने आकर ठाकुर से कहा, मुझे बड़ा दु:ख है। ठाकुर सुनकर बोले, बाबा सुख की अपेक्षा दु:ख अच्छा है। प्रवृत्ति से निवृत्ति अच्छी है। इससे मन उनकी ओर रहता है। और एक बार कामारपुकुर से एक स्त्री आई थी। उसने ठाकुर से कहा, मेरा कोई नहीं है। ठाकुर सुन कर धेई–धेई करके नाचने लगे। और बोले, ''जिसका कोई नहीं, उसका हरि है''। फिर शान्ति लेकर स्त्री वापस चली गई।''

•

श्री म का रात्रि का आहार आया है। ये उठकर चारतल के कमरे में चले गए। अनेक भक्तों ने विदा ली। भोजन के पश्चात् छत के ऊपर मादुर पर लम्बे होकर लेट गए, सिर पश्चिम की ओर। पास बड़े जितेन, बलाइ, छोटे जितेन और जगबन्धु बैठे हैं। सब ही चुप हैं। श्री म लेटे ही लेटे आकाश देखते हैं। कुछ काल पश्चात् बातें करते हैं।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— कैसा काण्ड उन्होंने किया है, एक बार आँख उठाकर देखिए ना! इतने काल से वे लोग (वैज्ञानिकगण) इतना देख रहे हैं! किन्तु इतनी चेष्टा करके भी nearest star (निकटतम तारे) का दूरत्व कहाँ निकाल पाए! एक बार जाने किसने ट्रिग्नोमेट्रिकल सर्वे किया था, अर्थात् given the base, and the angles at the base, solve the problem. (आधार और उस पर बने कोण दिए हों तो समस्या–समाधान करो।) उससे कुछ भी फल नहीं हुआ था। *(अन्तेवासी के प्रति)* आपके पास तो ट्रिग्नोमेट्री था? हमारी जैसी बात (समस्या) है, कोई नक्षत्र में रहता है, तो उसकी भी वही बात (समस्या) है। देवता, यक्ष, गन्धर्व जो जहाँ भी हैं, सब की एक ही बात है।

''यहाँ से यदि एक straight line (सरल रेखा) खींची जाए और God (ईश्वर) को centre (केन्द्र) बनाकर उस रेखा को उस ओर बढ़ा

दिया जाए और base (तल) की रेखा को भी produce (बढ़ा दिया) जाए, it will never meet (ये कभी भी नहीं मिलेंगी); किन्तु ऐसा लगता है कि vertex (त्रिभुज शीर्ष) पर meet (स्पर्श) करेंगी। किन्तु यहाँ पर ऐसा नहीं होता। They will never meet at the vertex. Because they are parallel straight lines (वे त्रिभुज शीर्ष पर कभी भी नहीं मिलेंगी। कारण, वे समानान्तर रेखाएँ हैं)। Parallel straight lines (समानान्तर रेखा) की definition (परिभाषा) है straight lines which meet in infinity (जो दो रेखाएँ अनन्त में जाकर मिलती हैं)। अनन्त में फिर मिलन क्या?''
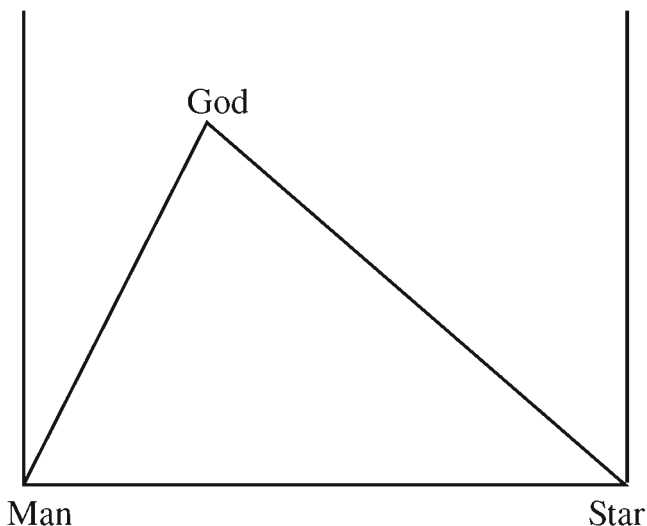
रात्रि साढ़े दस। श्री म उठकर उत्तर की ओर एकाकी पायचारी करते हैं।

मॉर्टन स्कूल, कलकत्ता।
16 अप्रैल, 1924 ईसवी;
3 वैसाख, 1331 (बंगला) साल, बुधवार, द्वादशी।

चतुर्दश अध्याय

महासमाधिमग्न क्राइस्ट

(1)

अपराह्न साढ़े पाँच। श्री म ठाकुरबाड़ी से मॉर्टन स्कूल में आए हैं। अर्चनालय के ब्रह्मचारी प्राणेश कुमार और गिरीशबाबू के भक्त यामिनी डॉक्टर श्री म के लिए प्रतीक्षा कर रहे थे। श्री म चारतल पर चढ़ रहे थे, क्लान्त होकर दोतल की सीढ़ी के निकट बराण्डे में बैंच पर बैठ गए। संवाद पाकर भक्त नीचे उतर आए। प्राणेश कुमार ने श्री म को ईटाली के उत्सव का निमन्त्रण दिया।

आज 17 अप्रैल, 1924 ईसवी; 4था वैशाख, 1331 (बंगला) साल, बृहस्पतिवार, त्रयोदशी। श्री म ने यामिनी से पूछा,

''कोई गिरीशबाबू की जीवनी लिख रहा है? कौन-कौन सर्वदा निकट रहता था? यह तो उनका ही काम है।''

यामिनी ने उत्तर दिया,

''इसमें कट्टरपन का भय रहता है।''

श्री म ने फिर उत्तर दिया,

''नहीं, केवल facts (घटनाएँ) देकर लिखने से ऐसा फिर नहीं होता। जो सर्वदा निकट रहते हैं, उनका ही यह काम है। दूसरों के करने से अन्य प्रकार का हो जाता है। चण्डीबाबू ने विद्यासागर का जीवन-चरित लिखा है। वे सर्वदा उनके पास बैठते थे।''

•

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— मैं पहले hero worship (वीर-पूजा) किया करता था। एक बार एक कॉलिज की रीयूनियन में बंकिमबाबू को देखने गया था। वे जहाँ पर जाते, मैं पीछे-पीछे वहाँ पर जाता।

(सहास्य) एक बार बंकिमबाबू को एक पत्र लिखा गया उनकी फोटो माँगने के लिए। उन्होंने जवाब में लिखा, ''मैं बड़ा ही दु:खी हूँ। जो कई थीं, वे सब खो गई हैं *(सब का उच्च हास्य)*।'' तब पढ़ा-लिखा करता था।

''विद्यासागर महाशय के संग-संग भी जाता था। इस घर के बाहर, उस घर के बाहर खड़ा रहता था। वे जाते हैं इस घर में, उस घर में।''

श्री म *(नयन-हास्ये, भक्तों के प्रति)*— अहा, विद्यासागर महाशय ने कैसी अच्छी बात कही थी! कहते, ईश्वर तो हमारा पिता है। हम उनकी बात नहीं मानेंगे तो पिता हमें पच्चीस बेंत मारेंगे। और केशवसेन के मारेंगे पचास बेंत! पच्चीस अधिक मारेंगे उनके दोष के लिए। पिता जब लड़के से कहेगा तुम्हारा यह-यह दोष है, लड़का तब कहेगा— ''केशवबाबू ने हमें ऐसा करने के लिए कहा है, पच्चीस अधिक इसीलिए। आह, कैसे विश्वास की बात है!

''सौभाग्य से हम में यह hero worship (वीर-पूजा) तो थी ही। जभी ठाकुर को जिस दिन देखा था, उसी दिन से ही पकड़ लिया था।''

•

गिरीशबाबू के सम्बन्ध में और भी कुछ क्षण बातें हुईं। भक्तों ने विदा ली। श्री म जगबन्धु, उमेश और शान्ति को संग लेकर चारतल पर चढ़ने लगे।

थोड़े समय में छत पर भक्त सभा बैठ गई। अनेक लोग आए हैं। बड़े जितेन, छोटे जितेन, शुकलाल, मनोरञ्जन, डॉक्टर, विनय, बलाइ, योगेन, खोका, जगबन्धु प्रभृति हैं। ग्रीष्म काल है, किन्तु ठण्डी हवा चल रही है। श्री म आनन्द से बातें करते हैं।

श्री म *(योगेन के प्रति)*— रहने का एक स्थान बना लें। आसन (ठिकाना) करना चाहिए। ठाकुर ने एक भक्त से कहा था, ''यह रही तुम्हारी कुटीर। दोपहर को शाकभात नून से खाओगी। रात्रि में कुछ हुआ तो भला। नहीं हुआ

तो न सही। और सारा दिन-रात जप करो।'' देखिए, किस प्रकार सहज करके problem of life (जीवन की समस्या) solve (समाधान) कर गए हैं। उस देश में (वैस्ट में) ऐसा कहाँ होता है? जभी आप एक आसन करें।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— राजा दक्ष प्रजापति थे। उनके दस हजार पुत्र थे। नारद ने उनसे कहा, ''तुम्हारा पिता तुम्हारा विवाह करके, राज्य देकर तुम लोगों को अटकाएगा। तुम गृहस्थ में बद्ध मत होवो। हरिपादपद्म-चिन्तन करो। तब फिर मुक्त हो जाओगे।'' उसके पश्चात् उनको लेकर एक बड़ी झील के निकट गए। उन्होंने हरिपादपद्म का चिन्तन करके समाधि में देहत्याग कर दिया। दक्ष (नारद का) बड़ा भाई था ना! तब क्रोध में नारद से कहा, ''ओ रे अर्वाचीन (मूर्ख), तूने क्या किया? तू क्या जानता है! कर्म बिना किए कुछ नहीं होता। तूने परामर्श देकर इनका जीवन नष्ट कर दिया है। मेरे मन को कितना कष्ट दिया है! मैं जभी शाप देता हूँ, तू घूमता फिरेगा।'' *(हास्य)* किन्तु धार्मिक नाटक— यात्रागान में सुन्दर बोलते हैं।

''प्रजापति की इच्छा संसार में बद्ध करना। नारद की इच्छा हरिपादपद्म-चिन्तन करना। दोनों ही सत्य। दोनों जन ही हैं ब्रह्मा के पुत्र। दक्ष को उन्होंने कह दिया था, 'कर्म आदि करने के लिए'। नारद को बोला, 'हरिपादपद्म-चिन्तन करने के लिए'। नारद क्यों लेंगे दक्ष की बात?

''किन्तु शाप लग गया। जभी नारद घूमता फिरता है। *(योगेन के प्रति)*— आप भी तभी घूमते फिरते हैं *(सब का हास्य)*। उसकी अपेक्षा तो एक कुटीर बना कर रहना अच्छा है।''

•

विपिनसेन का प्रवेश। ये ठाकुर के परम भक्त, अधरसेन के भतीजे हैं। विपिन गिल्यँडर (Gillender) कम्पनी के खजाञ्ची। श्री म उनके साथ अति स्नेह से बातें करते हैं। अधरबाबू की मृत्यु के समय की गई घटनाओं की आलोचना की। श्री म कहते हैं, ''नूतन काकी (अधरबाबू की पत्नी) के ऊपर नजर रखें। उन्हें कष्ट न हो।'' 'प्रवासी' खोलकर माँ-ठाकुरण का जीवन-चरित पढ़कर विपिन को सुनाते हैं।

सतीश मुखर्जी का प्रवेश। वे 'वसुमती' के प्रतिष्ठाता, ठाकुर के भक्त उपेनबाबू के पुत्र हैं। वसुमती के सत्ताधारी। श्री म पुत्रवत् सस्नेह उनको अपने पास बिठाकर बातें करते हैं। एक-एक बार उनके शरीर पर हाथ फेरते हैं। सतीश नूतन 'कथामृत' लिखने का अनुरोध करते हैं।

अब सन्ध्या हुई है। प्रकाश के आते ही श्री म ईश्वर-चिन्तन करने बैठ गए। तत्पश्चात् 'कथामृत' पाठ होगा। श्री म ने चतुर्थ भाग त्रयस्त्रिंशत् (33 वाँ) खण्ड (1886, 17वीं अप्रैल, काशीपुर— नरेन्द्रादि भक्तों के संग) निकाल दिया। एकजन भक्त पढ़ते हैं। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से कहते हैं,

''मुझे किन्तु अच्छा बोध होता है कि भीतर में एक है ही।''

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— स्पष्ट करके कहते हैं, ''मैं अवतार हूँ।'' ''मैं अवतार हूँ।'' यह है जैसे आँखों में उँगली देकर कहना। भगवान ने मनुष्य-शरीर धारण किया है। इसमें फिर संशय क्या? निज-मुख की वाणी। किन्तु उनकी कृपा बिना इस वाणी की धारणा होती ही नहीं। कितने ही जन सुनते हैं, धारणा नहीं कर सकते।

''शरीर धारण करने पर ज्ञानियों को भी शोक-दु:ख विचलित करते हैं। ठाकुर ने कहा था, कृष्णकिशोर है इतना बड़ा ज्ञानी। किन्तु प्रथम सम्भाल नहीं सका। उनके दो बड़े-बड़े लड़के मर गए। कॉलिज में पढ़ते थे। अभिमन्यु के शोक में, अर्जुन पागल— श्री कृष्ण संग में हैं, तब भी।''

श्री म भी हैं पुत्र-शोक में ग्रस्त। उनकी धर्मपत्नी सारा जीवन उसी शोक में प्राय: उन्मादिनी रहीं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— शोक-दु:ख ज्ञान को धक्का मारकर फेंक देता है। जभी ठाकुर कहते हैं यह बात। नरेन्द्र इतने बड़े ज्ञानी। पिता की मृत्यु से दु:ख में पड़े हैं। कहते हैं, ''ईश्वर-टीश्वर नहीं है''। वैसा कहेंगे नहीं? शरीर धारण करके शोक-ताप होता ही है। तब ज्ञान को धक्के से फेंक देता है। इतना वेग!

''*(सहास्य)* नरेन्द्र कहते हैं, उन्होंने (ठाकुर ने) मुझसे कहा था, ''कोई-कोई मुझको ईश्वर बोलता है।'' मैंने कहा, ''हजार ईश्वर कहें, मुझको जब तक सत्य जानकर बोध नहीं होता, मैं तब तक नहीं कहूँगा''।

''बड़ा फूल, खिलने में देरी होती है। नरेन्द्र कमलों में शतदल कमल है। खिलने में देरी होती है किन्तु रहता है अनेक दिन। अन्य फूल आज खिलता है, कल झड़ता है। शतदल जब खिला उसकी सौरभ कितनी, देखो! उनकी रचित आरती, स्तोत्र, यही सब हैं सौरभ।

''कितना बड़ा धक्का! अति बड़ा संसार कन्धों पर। हठात् पिताजी मर गए। घर में आहार नहीं। रहें कैसे? आय की अपेक्षा खर्चा अधिक। उनके पिता का खूब खुला हाथ था कि ना! बहु अर्थ उपार्जन करते थे; किन्तु दान-वान और घर के खर्च में सब शेष हो जाता। जभी तो हठात् जब मर गए, घर शून्य। उस अवस्था में कितना अनाहार गया है। अनेक चेष्टा करके विद्यासागर महाशय को कहकर एक कर्म मिला— उनके बौबाजार के स्कूल के हैडमास्टर का कार्य। वह भी गया। कैसा सर्वनाश! विद्यासागर महाशय बोले, ''महेन्द्र, तुम नरेन्द्र से कहना और न आए।'' भक्त के सिर पर जैसे बज्र पड़ा। नरेन्द्र को यह बात कैसे कहूँगा? इतने कष्ट से कह-कहलवा कर काम मिला और हठात् कह दिया, नरेन्द्र की आवश्यकता नहीं। छाती में साहस लाकर के नरेन्द्र से कहा। किन्तु नरेन्द्र ने कोई भी प्रतिवाद नहीं किया। केवल बोले, ''क्यों लड़कों ने यह बात कही! मैं तो खूब परिश्रम करके पढ़ाता था।'' बस अन्य बात नहीं। उस समय का यह निर्द्वन्द्व-भाव देखकर मन में हुआ था, नरेन्द्र सत्य ही महापुरुष हैं।

''उस स्कूल के सैक्रेटरी विद्यासागर महाशय के जमाई थे। वे नरेन्द्र के ऊपर favourable (प्रसन्न) नहीं थे। जभी फर्स्ट और सेकेण्ड क्लास (दसवीं और नौंवी क्लास) के छात्रों द्वारा कहलवा दिया, ''पढ़ा नहीं सकते।'' कैसी विपद! जिन्होंने समस्त जगत को सिखाया है, वे लड़कों को पढ़ा नहीं सकते! नरेन्द्र को पक्का माँझी जो बनाएँगे। जभी दारुण शोक-दु:ख दिए। ठाकुर सामने हैं, तब भी नरेन्द्र को दु:ख। श्री कृष्ण संग-संग तब भी अर्जुन को बनवास; पुत्रशोक में जर्जरित। यह प्रहेलिका कौन बूझेगा?''

सतीश, विपिन सब चले गए। भक्तों में से भी कोई-कोई चले गए। अब रात्रि साढ़े नौ। श्री म ने निज कमरे में प्रवेश किया, नैश भोजन करने

के लिए। दस के पश्चात् लौट आए। मादुर पर बैठे हैं। खूब जँभाई ले रहे हैं, शरीर वृद्ध और क्लान्त। श्री म के पास मादुर पर बैठे हैं, बड़े जितेन, शुकलाल, मनोरञ्जन, छोटे जितेन, विनय, बलाइ और जगबन्धु। शुकलालबाबू की भक्तों का मिष्टिमुख करवाने की इच्छा है। श्री म इसी विषय पर रूलिंग देते हैं।

श्री म *(शुकलाल के प्रति)*— माँ काली या ठाकुर को निवेदन करके प्रसाद पाया जा सकता है।

बड़े जितेन— ठाकुरबाड़ी में देकर फिर पाने से भी होता है।

श्री म— नहीं, वह नहीं होता। वैसा हो तो एक रुपये का 'सन्देश' खरीद कर प्रसाद करने से होता है।

बड़े जितेन— शुकलालबाबू की अधिक इच्छा है।

श्री म— नहीं, वैसा तो अब फिर इस समय नहीं हो सकता— जब suggest (प्रस्ताव) किया है। Suggest (प्रस्ताव) बिना किए शुकलालबाबू की जो इच्छा सो होता। अब तो फिर नहीं उचित।

"राधाकान्त के गहने चोरी के पश्चात् मथुरबाबू ने कहा, "क्यों ठाकुर, तुम अपने गहने रख नहीं सके?" ठाकुर सुनकर तुरन्त गर्जन कर उठे। बोले, "छि:, सेजोबाबू, तुम्हारी यह कैसी हीनबुद्धि की बात है! जो इस समस्त विश्व की निमेष में सृष्टि करते हैं उन्हें धन का अभाव! उनके पास तो ये सब मिट्टी के ढेले हैं"।"

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ईश्वर क्या धन से तुष्ट? वे तुष्ट होते हैं ज्ञान-भक्ति से, विवेक-वैराग्य से!

"एक बार माँ-ठाकुरण कालीघाट पर गईं— एक भक्त के घर निमन्त्रण पर। गरीब भक्त, दो खपरैलों का घर मात्र सम्बल। हम लोग भी संग में थे। मात्र दाल-भात, तरकारी। माँ ने केवल दाल-भात बार-बार माँग कर इतना खाया कि भक्त तो देखकर अवाक्। माँ का ऐसा खाना किसी ने भी कभी देखा नहीं! खाली कहतीं, "और दो, और दो"। धनी भक्तों के घर कितने प्रकार का खाने को देते। उँगली से चाख कर खाती हैं वहाँ। और यहाँ पर

ढेर दाल-भात खाया। भक्ति का अन्न है ना, तभी शुद्ध।

"बाहर के आडम्बर से भक्ति कम हो जाती है। मनुष्य का मन तो सर्वदा उसी ओर gravitate (आकर्षित) होता है। फैशन हो गया है ठाकुरबाड़ी बनाकर, खूब बनाकर भोग दो। यह जैसे दिखावा करके डॉक्टर बुलाकर चिकित्सा है। देखा नहीं पंक्ति बनाए मोटरें खड़ी रहती हैं। उससे भक्ति की कमी होती है। एकत्रित मन बिखर जाता है।

"ठाकुर डॉक्टर का अन्न खा नहीं सकते थे। कहते, "वे लोगों के मन को कष्ट देकर रुपया कमाते हैं।" एक बाबू ऑफिस में काम करके ठाकुर के पास जाया करते थे। एक दिन बोले, "कौन लाया है यह मिष्टि— गू की गन्ध आ रही है। शीघ्र बाहर कर दे।" कहा था, "यह व्यक्ति बिल डबल करके लिखता है। चोरी करके कमाई करता है। तभी उसकी वस्तु खा नहीं सकता हूँ।" उहः, कैसी अन्तर्भेदी दृष्टि!

"आजकल नाना तरह से उनका उत्सव होता है। जिस उपाय से subscription (चन्दा) जमा किया जाता है, ठाकुर के समय में ऐसा होने का उपाय नहीं था। पास के भक्तलोग भीतर ही भीतर सब चन्दा जमा करके उत्सव करते थे। अन्य लोग तो शायद ठाकुर को जानते भी नहीं हैं, प्यार भी नहीं है। उनके पास जाकर चन्दा लेना वे पसन्द नहीं करते थे। कह दिया था, 'किसी के पास माँगा नहीं जाएगा। जिसकी जो इच्छा हो, दे।' भगवान बाहर के आडम्बर से तुष्ट नहीं। वे तुष्ट होते हैं भक्ति-प्रेम से।"

●●

(2)

ग्रीष्म का प्रभात। अब पाँच। आज गुड् फ्राइडे। श्री म चारतल की छत पर बैठे ध्यान कर रहे थे पूर्वदक्षिण कोण में। उनके पास विनय, छोटे जितेन, जगबन्धु प्रभृति बैठे हैं। सब ही मादुर पर बैठे हैं। श्री म अब उपनिषद्-पाठ करते हैं सुर-संयोग से।

श्री म को देखकर मन में हो रहा है, जैसे एक ऋषि हैं। उनकी केशरात्रि शुभ्र, शुभ्र श्मश्रु आवक्ष विलम्बित। अन्तर्मुखीन सम्मुख बढ़े उज्ज्वल वृहत् नयनयुगल। उन्नत ललाट, सुप्रशस्त वक्ष। पद्मासन पर सीधे बैठकर मधुर गम्भीर कण्ठ से पढ़ते हैं। मुख-मण्डल पर प्रगाढ़ प्रशान्ति। दर्शक का चित्त अपने-आप ही शान्तिरस से पूर्ण हो जाता है। श्री म पढ़ते हैं और बीच-बीच में व्याख्या करते हैं। 'ब्राह्म-धर्म' से नवम अध्याय के अठत्तरवें मन्त्र से लेकर द्वादश अध्याय के शेष पर्यन्त पढ़ा।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— देखिए, हम जो समस्त बातें कहते रहते हैं, ऋषिगण भी वही कहते हैं। इसी रक्तमांस के शरीर में ही ईश्वर का दर्शन होता है— इसी मनुष्य शरीर में।

''ऋषिगण कहते हैं, 'तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्'— उसी पूर्ण पुरुष के द्वारा समस्त ब्रह्माण्ड परिपूर्ण है। ठाकुर ने भी कहा था, ''मैं देख रहा हूँ माँ ही सब होकर रह रही हैं। सब चैतन्यमय देख रहा हूँ।'' इसीलिए (छत पर मादुर के ऊपर आघात करके) इसको जड़ तो कहना ही नहीं। (अपने शरीर पर आघात करके) इसको भी जड़ कहना चलेगा नहीं। Outwardly (बाह्यदृष्टि) से न हो तो भी potentially (तत्त्वदृष्टि) से सब चैतन्यमय हैं। रक्तमांस द्वारा कैसी अद्‌भुत वस्तु बनाई है! इसके भीतर किस प्रकार प्रवेश कर गए मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार। और फिर ज्ञान-भक्ति-विवेक-वैराग्य। इस ओर क्या लोग नज़र करते हैं? इस तरफ दृष्टि रहने पर कैसे कहा जाए कि creation automatic, अथवा chance creation (जगत अपने आप हुआ है, या हठात् हुआ है)।

''ऐसा कहकर तो explain (व्याख्या) करना नहीं हुआ। Confuse (विभ्रान्त) करना हुआ बुद्धि को। इस प्लैन की ओर दृष्टि डालते ही प्लैनर की बात स्वत: मन में आती है। Law of Probability अथवा Law of Finality (सम्भावनावाद अथवा अन्तिमवाद) को कहाँ explain (व्याख्या) कर सके हैं? आज तक भी इसका उत्तर क्या कोई दे सका है कि life (जीवन) आया कैसे?

''यही जो विपरीत बुद्धि है इसको भी उन्होंने ही दिया है। Thesis

and antithesis (वादानुवाद, द्वन्द्व, पूर्वपक्ष, उत्तरपक्ष) की बाधाएँ न हों तो (अनुमान के) महत्त्व का विकास नहीं होता। जभी contrast (विरोध) चाहिए।

"यह प्लैनर ही इसी शरीर के भीतर रहता है और समग्र universe (विश्व) के भीतर भी अन्तर्यामी रूप में है। ऋषियों ने स्पष्ट करके कह दिया था, "हमने उसको देखा है इसी शरीर में— इहैव सन्तोऽथ विद्मस्तद्वयम्"[1]।

"कैसी स्पष्ट उक्ति! और फिर warn (सावधान) करते हैं— "न चेदिहावेदीर्महती विनष्टिः"। इस शरीर के रहते हुए उनको न जान सकने पर दुःख अनिवार्य है— "अथेतरे दुःखमेवापियन्ति"।"[2]

"उनको जान लेने पर क्या होता है, वह भी कहते हैं,— "ये एतद्विदुरमृतान्ते भवन्ति"। मृत्युञ्जय हो जाता है। 'मैं आत्मा', यह विश्वास सुदृढ़ हो जाता है।

"शरीर नहीं रहेगा। मृत्यु को जय करना माने 'शरीर नहीं रहेगा', यही समझना। ऐसा होने पर जो चिरकाल रहेगा उसमें मन जाएगा— आत्मा में, भगवान में। तब मन में होगा— 'येनाहं नामृता स्याम् किमहं तेन कुर्याम्'। 'मृत' शरीर में अमृत आत्मा का दर्शन, यही है शेष बात।"

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— यदि कोई प्रश्न करे— क्यों ईश्वर की शरण लूँ, क्यों उन्हें पकड़ूँ? उसका उत्तर है कि उन्होंने यह समग्र पकड़ा हुआ है। इसलिए हमारे लिए उचित है उन्हें पकड़ना। 'सर्वे एते आत्मानः समर्पिताः।' जैसे चक्र की नाभि और नेमि में सारी spokes (सलाइयाँ) लगी रहती हैं, वैसे ही समस्त विश्व ईश्वर से सम्बद्ध है। किंवा जैसे सब पक्षी वृक्ष पर वास करते हैं वैसे ही समस्त जीव ईश्वर में अवस्थित हैं— 'सर्वं परमात्मनि संप्रतिष्ठते।' जभी उनकी पूजा करना।

"और एक कारण है, क्यों उनकी पूजा लोग करेंगे? शोक-दुःख, जरा-मृत्यु के हाथ से मुक्तिलाभ के लिए उनकी शरण आवश्यक है। शरीर धारण करने पर यह समस्त अनिवार्य है। इससे ही लोग भीत होते हैं। जभी

1 ब्राह्मधर्म 9.85

2 ब्राह्मधर्म 9.85

अमृत के पकड़े रहने पर, सुख–स्वरूप को पकड़े रहने पर स्वयं भी सुखमय हो जाता है— अमृत हो जाता है।

''उनकी शरण लेने की, उनकी पूजा का minimum (सामान्यतम) आयोजन क्या है— वह भी ऋषि बताते हैं। केवल नमस्कार मात्र कर लेने पर भी उनकी पूजा होती है। 'युजे वां ब्रह्म पूर्व्यं नमोभिः।' गीता में है 'नमस्यन्ते च माम्।' भागवत में भी है नमस्कार द्वारा पूजा होती है। नमस्कार माने शरणागत। उनको तो कोई भी अभाव नहीं। वे कुछ चाहते भी नहीं। हम चाहते हैं शोक–दुःख से मुक्त होना। वही पथ ही दिखा दिया है। कहते हैं, वैसा यदि होना चाहते हो तो नित्यमुक्त, चिरशान्त 'मुझे पकड़ो'। मुझे पकड़ कर संसार में रहो तो फिर भय नहीं।

''ईश्वर ही जीव की आत्मा है। उनको जान लेने पर अमृतत्व–लाभ होता है, परमशान्ति–लाभ होता है। यह तो हुआ। अब उसी आत्मा का ज्ञानलाभ करने के लिए किस के पास जाएगा, वही बात कहते हैं। ऋषि कहते हैं, जिन्होंने आत्मज्ञान–लाभ किया है, जिनको आत्मदर्शन हुआ है, उनसे उपदेश लो। ऋषि सबको ही यह अमृत दान कर गए हैं। निद्रा से पुकार कर खींचकर जैसे उठाया है और कहते हैं, ''उठो, जागो''। जाओ, जिन्होंने उनको जान लिया है, उनके पास जाकर आत्मज्ञान–लाभ करो, अमर हो जाओ। जीव का एकमात्र काम्य यही है। कहते हैं, ''उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत''। 'वरान्' माने ब्रह्मज्ञान। ठाकुर भी वैसा ही कहते हैं— 'जो काशी गया है, जिसने काशी देखा है, उसके पास से काशी की खबर सुनो'।''

•

अब प्रभात सात। विनय काशीपुर के वासे पर चले गए। छोटे जितेन और जगबन्धु श्री म के पास ही बैठे हैं। आज 'गुड फ्राइडे'। श्री म जभी बाइबल पढ़ते हैं। सेंट मैथ्यू के द्वादश अध्याय से आरम्भ करके बीच–बीच से पढ़ते हैं। और ठाकुर के जीवन और बातों के संग मिलाते हैं। फिर छब्बीस अध्याय के शेष से लेकर अट्ठाइस तक क्राइस्ट के शरीर–

त्याग विषयक समग्र अंश पाठ किया। पीछे सेन्ट मार्क, सेन्ट लूक और सेन्ट जॉन से 'शरीर-त्याग और पुनरुत्थान' का समग्र विवरण-पाठ किया।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— कितनी प्रकार से अपना परिचय दिया है उन्होंने। किन्तु लोग पहचान नहीं पाते। कहते हैं, 'in this place is one greater than the temple', (इस स्थान पर ऐसे एक जन हैं, जो मन्दिर की अपेक्षा बड़े हैं)। अन्तरंग जन ही क्या सर्वदा पहचान सकते हैं? एक बार विश्वास होता है और फिर ढक जाता है। उनकी इच्छा बिना हुए विश्वास स्थायी नहीं होता। आलोक— अन्धेरे की भाँति उठना-गिरना करता है। एक बार विश्वास और फिर अविश्वास। जैसे अभी सूर्य, अभी मेघ। वे भुला देते हैं अपनी महामाया में। जभी तो प्रार्थना करते हैं— "lead us not into temptation" (भुवन मोहिनी माया में भुलाना ना)। ठाकुर भी उसकी ही प्रतिध्वनि करते हैं, "अपनी भुवन मोहिनी माया से मुग्ध ना करो"। ऋषियों ने भी प्रार्थना की है, "तमसो मा ज्योतिर्गमय"। ऐसा काण्ड है शरीर धारण करने पर। "पञ्चभूत के बन्धन ब्रह्म करे क्रन्दन"— यह भी है ठाकुर की ही बात।

"उनको पकड़ने से पूर्व क्राइस्ट ने अन्तरंगों को तिरस्कार करके कहा था, "एक घण्टा जाग नहीं सकते हो तुम लोग? देखो, मैं क्या करता हूँ। और सुनो, क्या कहता हूँ।" किन्तु वे सब सोने लगे।

"क्राइस्ट अन्तरंगों को लेकर प्राय: ही निर्जन में एक बाग में जाया करते थे। बाग मन्दिर से कुछ दूर था— चेड्रन (Cedron) नदी के तीर पर। ग्राम का नाम था जेथसेमान (Gethsemane)। आज ही है शेष मिलन। थोड़ी देर पश्चात् ही उनको पकड़ कर ले जाएँगे।

"भक्तों से कहते हैं, "सुनो, क्या कहता हूँ, देखो, क्या करता हूँ।" फिर पीटर और जॉन (Peter, John) को लेकर थोड़ा और आगे गए। कहते हैं, "यहाँ पर आओ। सुनो।" क्राइस्ट खेद से कहते हैं, "My soul is exceedingly sorrowful even unto death": (मृत्यु सामने आ गई है, मैं अतिशय दुखित हूँ।) यही बात ही ठाकुर ने बंगला में कही थी, "देह और भी कुछ दिन रहती तो कुछ जनों को चैतन्य होता। किन्तु माँ रखेंगीं नहीं।"

फिर क्राइस्ट और थोड़ा आगे जाकर प्रार्थना करते हैं, "O my Father, if it be possible, let this cup pass from me" कहते हैं, "यह विपद— आसन्न मृत्यु हटा लो।" आह, ठीक जैसे मनुष्य की उक्ति— मृत्युभय से भीत। थोड़ा पीछे फिर और rally (शक्तिसंचय) कर लिया। कहते हैं, 'nevertheless nor as I will, but as thou wilt.' (मेरी इच्छा नहीं, तुम्हारी ही इच्छा पूर्ण हो।)

"क्रॉस के ऊपर से चीत्कार करके कहते हैं, 'Eli Eli lama Sabachthani?.... My God, my God, why hast thou forsaken me!' (हे ईश्वर, तुमने क्यों मेरा त्याग कर दिया है?) बिल्कुल मनुष्य का व्यवहार।

"नाइन्टीनाइन-पॉयेन्ट-नाइन (99.9) ईश्वर का, अवतार का भाव। पॉयेन्ट वन (.1) में ये समस्त लोक-व्यवहार। एकदम ठीक-ठीक मनुष्य जैसा सब व्यवहार। क्यों यह अभिनय? क्योंकि दिखाना है— देहबुद्धि जाना कितना कठिन है। राम सीता के शोक में रोते हैं, क्राइस्ट देहत्याग से भीत। साधारण मनुष्य सर्वदा इसी भूल के भीतर वास करता है। जिन्हें कुछ ज्ञान होता है, वे इनके इन सब व्यवहारों से साहस पाएँगे। भरोसा होगा— इनका ही यदि ऐसा है तो हमारा तो होगा ही। इसमें फिर आश्चर्य क्या! तब भी उन्हें ही पकड़े रहूँगा। जन-समाज को यह शिक्षा मिलेगी। देखो, कैसे करते, कहते हैं, 'The spirit indeed is willing, but the flesh is weak' (मन जाना चाहता है, किन्तु देह चलती नहीं)। क्या प्रहेलिका!"

श्री म *(जगबन्धु के प्रति)*— यह देखो, इधर फिर और कहते हैं— "I have known thee (God) and these have known that thou hast sent me." (मैं तुम्हें जान गया हूँ, ये शिष्य लोग जान गए हैं कि तुमने मुझे भेजा है)। और फिर कहते हैं, "I came forth from the Father... again I leave the world and go to the Father." (मैं पिता के पास से आया हूँ, जगत छोड़कर फिर उनके पास जा रहा हूँ)। ठाकुर ने भी कहा, "माँ ने मुझे सब दिखा दिया है— उनका साकार-निराकार सब ऐश्वर्य, सब रूप।" फिर और कहते हैं, "सच्चिदानन्द इसके भीतर से बाहर निकल कर एक दिन

बोले— मैं ही युग-युग में अवतीर्ण होता हूँ।" कहा था, "मैंने देखा, सत्त्व गुण का पूर्ण आविर्भाव और फिर शरीर-त्याग से पूर्व बोले थे, 'आमि मूख्खू बामुन, मायेर सब ऐश्वर्य विलिये दिच्छि सकलके। ताइ मा निये जाच्छेन।" (मैं मूर्ख ब्राह्मण हूँ, माँ का सब ऐश्वर्य बाँट रहा हूँ सबको। जभी माँ लिए जा रही हैं)। माँ के पास से आए थे, माँ के पास जा रहे हैं। माँ ही मनुष्य हुईं और फिर चली गईं।

"कैसा आश्चर्य! इतना करके कहते क्राइस्ट, तब भी जब उनको अचानक पकड़ लिया तब सब भाग गए। वह यह बात पहले से ही जानते थे, जभी पूर्व ही कहा था, "And ye shall leave me alone and yet I am not alone, because the Father is with me" (तुम मुझे छोड़कर भाग जाओगे, मैं जानता हूँ। किन्तु मैं कभी भी नि:संग नहीं हूँ। कारण, परमपिता सदा मेरे संग रहता है)।

"क्राइस्ट को पकड़कर ले जा रहे हैं। पीटर और जॉन संग-संग चलने लगे। किन्तु पीटर को जब क्राइस्ट का संगी जानकर पकड़ लिया, तब उन्होंने अस्वीकार कर दिया। बोले, I know not this man, (मैं इसको नहीं जानता)। तीन बार इस प्रकार अस्वीकार किया। अथच यह पीटर ही क्राइस्ट के धर्मप्रचार का मूल स्तम्भ है। क्राइस्ट स्वयं ही बोले थे, 'upon this rock I will build my Church' (इसी विश्वास के पहाड़ के ऊपर मैं धर्मचक्र स्थापित करूँगा)।

"पकड़े जाने के कुछ समय पूर्व भक्तों की परीक्षा के बहाने से बोले थे, "तुम लोग मेरे लिए विपद में पड़ोगे।" पीटर ने कहा था, "तुम्हारे लिए देह-प्राण विसर्जन तक करूँगा। तब भी तुम्हें नहीं छोड़ूँगा।" क्यों? क्योंकि, "thou hast the words of eternal life" (आपने अमृतत्व वितरण किया है तभी)! क्राइस्ट तुरन्त हँसकर बोले, "before the cock crow, thou shall deny me thrice." अर्थात् 'भोर होने के पूर्व ही तीन बार मुझे अस्वीकार करोगे तुम।' पीटर ने अस्वीकार तो चाहे किया, किन्तु ज्योंहि यह महावाणी स्मरण हुई त्योंहि रोने लगे— आकुल होकर अपनी दुर्बलता देखकर।

"ठाकुर का हाथ टूट गया; यन्त्रणा में रोते हैं। और फिर ईश्वर की

कथा होते ही समाधि। इस जगत में नहीं हैं। तब कितना नाच-गान, कितनी ईश्वरीय-कथा! तब जैसे सम्पूर्ण भिन्न लोग।

"ठाकुर ने कहा था, काही जल को ढक देती है। थोड़ा साफ करने पर फिर झट नाचते-नाचते काही ढक डालती है। इसी का नाम है महामाया का खेल। ज्ञान-अज्ञान का उठना, पड़ना चलता है सदा। किसकी सामर्थ्य है उनकी शक्ति के बिना ये सब तत्त्व समझना। जो जन इस आलोक-अन्धेरे के भीतर से जान-सुनकर चले जाते हैं, वे ही हैं मनुष्य। ठाकुर जैसे साततले से एकतले पर उतर आते। और फिर साततले पर चले जाते।"

बड़े जितेन के ज्येष्ठ पुत्र सतीश ने प्रवेश किया। सतीश एम०ए० पास हैं।

श्री म *(सतीश के प्रति)*— यही सुनो, क्राइस्ट कहते हैं ईश्वरीय भाव में भक्तों को देखता हूँ, "ये लोग ही मेरी माँ, ये ही मेरे भाई-बहन।" अपने माँ-भाई को अस्वीकार कर दिया— माया का सम्पर्क है कि ना! जॉन सर्वदा संग में रहते थे, और थे प्रेमिक भक्त। जॉन और जेम्स ये दोनों थे उनके मौसरे भाई। क्राइस्ट के अनेक भाई-बहन थे। दोनों मेरी भी मौसी थीं। जॉर्ज पॉन्टियस पायलेट बुरा आदमी नहीं था किन्तु सुनाम की आकांक्षा से साहस करके सत्य-रक्षा नहीं कर सका। क्राइस्ट को निर्दोष जानकर भी उनको मुक्ति दे नहीं सके। नौकरी का भय, वैसा होने पर तो पुरोहितगण विपक्ष में चले जाएँगे। उनकी स्त्री ने विचार के दिन स्वप्न में क्राइस्ट का दर्शन किया था। स्वामी से कहा था, 'वे महापुरुष हैं। किन्तु तब भी जान-सुनकर, भय-भय में उनको क्रॉस पर दे दिया। गवर्नर थे, डर लगा नौकरी जाती है।'

"सब गवर्नरों की एक ही अवस्था है। किसी प्रदेश में कुछ होने से ऐसा ही हल्ला-गुल्ला मच जाता है। पुरोहितों ने कहा था, "इसको न मारने से, हम कहेंगे तुम सीजर के शत्रु हो।" सीजर थे सम्राट। जेरूसलम तब रोमनों के अधीन था।

"अन्तरंग जुडास (Judas) ने betray (धोखा) किया था। जब ज्ञान लौट आया तब रो-रोकर अनुशोचना से आत्महत्या कर ली। महामाया का ऐसा खेल है। हरिदास चैतन्यदेव के पार्षद थे। उनकी बात को न मानने

पर निकाल दिए गए। फिर पश्चाताप से त्रिवेणी में आत्महत्या कर ली। ये भले जन थे। जगत की शिक्षा के लिए ईश्वर ने ही इनके द्वारा ऐसा करवाया। तभी तो लोग अपना अहंकार छोड़कर उनके संग में युक्त होंगे। हरिदास की आत्महत्या का संवाद जब एकजन ने बताया, चैतन्यदेव तब ईश्वरीय-कथा कह रहे थे। सुनकर बोले, "स्वकर्मभुक्" (अपने कर्मों का भोग)। यही मात्र एक ही बात कहकर जैसे ईश्वरीय प्रसंग कर रहे थे, वैसे ही करने लगे।"

श्री म *(अन्तेवासी के प्रति)*— उत्तररामचरित में है, 'वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।' यही लक्षण है महापुरुष-चरित्र का। नैतिक व्यापार में वज्र की अपेक्षा भी कठोर। अन्य समय दया का सागर। मेरी कैरोलिना में क्राइस्ट का सुन्दर description (वर्णन) है।

•

अब प्रात: के साढ़े आठ। श्री म ने उठकर सीढ़ी के कमरे में प्रवेश किया।

वहाँ पर एक युवक डेढ़ घण्टे से बैठे थे। श्री म ने सविस्मय उससे कहा,

"कैसा आश्चर्य! इतनी सारी बातें हुईं— तुम गए क्यों नहीं? नदी की धार के इतना निकट होते हुए भी जल-तृष्णा"!

(3)

अपराह्न एक। श्री म सीढ़ी के कमरे में बैठे हैं हाथ में 'कथामृत'-प्रूफ और कलम। अन्तेवासी कापी पढ़ते हैं। सारी दोपहर दोनों जने बैठे प्रूफ देखते रहे। आज दोपहर के लिए बात हुई थी कि श्री म दक्षिणेश्वर जाएँगे। इसीलिए विनय, छोटे जितेन और मनोरञ्जन पहले ही दक्षिणेश्वर चले गए थे। श्री म को न पाकर लौट आए हैं। श्री म ने सब बातें सुनकर कहा,

"हाँ, जाने का तो निश्चय था। किन्तु इतने सारे प्रूफ आ गए। प्रारब्ध में न

हो तो होता नहीं। 'सत् काजे शत बाधा'। आप लोगों ने ठीक किया है, दर्शन करके आ गए। वहाँ पर 'दाउ-दाउ' करके (अध्यात्म) आग जल रही है। जो प्रवेश करता है, वह शुद्ध हो जाता है। वहाँ देह नहीं जलती, मन का मैल भस्मीभूत हो जाता है। अमृतत्व-लाभ हो जाता है। भगवान सशरीर तीस वर्ष थे। एक दिन रहने से ही रक्षा नहीं, उस पर तीस वर्ष! ठोस धर्म हैं वहाँ पर।''

एकतल से चारतल तक छत पर चढ़ने के लिए एक लोहे की चक्करदार सीढ़ी— (spiral staircase) है। उसका ऊपर का कुछ अंश टूटकर अलग हो गया है। प्रूफ देखते-देखते वह बात स्मरण हो आने पर अन्तेवासी को लेकर वहाँ गए। ऊपर खड़े देखते हैं। अन्तेवासी ने एक रस्सी से उसे बाँध दिया। पुनः श्री म आकर देखते हैं। वह तो विपद्जनक टूट थी। तभी हाथ का काज छोड़कर उसको पहले ठीक करवाया।

अब चार। बेलुड़ मठ से एक ब्रह्मचारी आए हैं, मनु। उन्हें श्री म पास बिठाकर कहते हैं,

''सुनिए, ठाकुर कहते हैं ईश्वरीय कथा छोड़ मुझे और कुछ अच्छा नहीं लगता। सुन भी नहीं सकते थे अन्य बात। कह भी नहीं सकते थे। ऐसी अवस्था— सर्वदा मुखे, 'माँ, माँ।''

ब्रह्मचारी ने मिष्टिमुख करके विदा ली।

सन्ध्या होने का कुछ बाकी है। अति प्रबल झड़-तूफान आया है। सीढ़ी के घर में भी जल आ रहा है (शीशे की खिड़की) की दरारों से। श्री म हाथ का काम छोड़कर खड़े हो गए। पैर से स्लीपर हट गया। हाथ जोड़कर खड़े होकर शीशे के बीच से तूफान का दर्शन कर रहे हैं— माँ की प्रलयंकरी मूर्ति।

फिर प्रूफ देखते हैं; अन्तेवासी के हाथ में कापी है। सन्ध्या का आलोक आते ही सब काम बन्द कर दिया। भक्तगण अनेक आकर पहले से ही बैठे हैं। इतने दुर्योग में भी बड़े जितेन, अमृत, बलाइ, शान्ति, छोटे जितेन, विनय, मनोरञ्जन, जगबन्धु प्रभृति आए हैं। लगता है नशे की खींच इतने दुर्योग की भी परवाह नहीं करती। डॉक्टर बक्शी किसी

भी विपद को नहीं मानते, नित्य आना ही चाहिए, कैसे वीर! वे भी आकर मिल गए। सब ने श्री म के संग कुछ देर ध्यान किया।

अब 'कथामृत'-पाठ। श्री म अतिशय क्लान्त हैं। जभी बातें न करके 'कथामृत' द्वितीय भाग ऊनविंश खण्ड निकाल दिया। (11 अक्तूबर, 1884)। एक भक्त पढ़ते हैं। दक्षिणेश्वर-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण ईशान मुखर्जी को शिक्षा देते हैं। कहते हैं,

"कुछ दिन उनके नाम में पागल हो जाओ। पञ्चपन, मुखियापन छोड़ दो। 'कोशाकुशी' (अर्घ्यपात्र) छोड़कर 'माँ, माँ' कहकर रोओ।"

पाठक *(पढ़ते हैं, ठाकुर कह रहे हैं)*— साधक अवस्था में खूब सावधान होना चाहिए। तब स्त्रियों से खूब अन्तर से रहना चाहिए। भगवान के दर्शन हो जाने पर अधिक भय नहीं रहता, बहुत-सा निर्भय।

एकजन भक्त *(श्री म के प्रति)*— सिद्धावस्था में भी पतन का भय रहता है।

श्री म— ठाकुर ने कहा था, माँ जिसको पकड़े रहती हैं, उसको नहीं रहता। भय तो है ही, कम है।

"तब साक्षात् भगवती देखकर स्त्री को मातृज्ञान में पूजा करता है। ठाकुर कहते हैं जभी, 'तब और उतना भय नहीं'। तब तो समझ में आता है कि भय रहता है। इसमें फिर आश्चर्य भी क्या! कहा था, 'युवती स्त्री के संग परमहंस का भी पतन होता है'। लोकशिक्षा के लिए जभी ठाकुर सारा जीवन सावधान होकर रहे थे। 'कोई आई— अधिक देर से है' समझते ही झट उठ कर खड़े हो जाते। कहते, 'अच्छा मैं बाहर से होकर आता हूँ।' शायद मन्दिर में चले गए। कहते, "बात तो है यह, धाई छूकर जो इच्छा हो करो।" पहले तो सावधान होकर साधन करके उनका दर्शन करो। उससे जन्ममरण के पार हो गया। मनुष्य-जीवन का उद्देश्य पूर्ण हो गया। उतने दिन सावधान रहना चाहिए ही। फिर उसकी जो इच्छा।"

श्री म *(सहास्य, भक्तों के प्रति)*— 'इंग्लिशमैन' (अंग्रेजी शिक्षित लोग) संस्कार नहीं मानते। जभी उनसे कहते "संस्कार मानना चाहिए।" धीरे-धीरे lead (परिचालन) करते हैं। ये तो फिर युक्तिवादी भी। जभी लालाबाबू की कथा सुनाते। कोई तो फूस का घर भी छोड़ नहीं सकता। और लालाबाबू

ने सात लाख रुपए की आय की जमींदारी यौवन में छोड़ दी। पूर्वजन्म में बहुत आगे बढ़ गए थे। तभी ऐसा हुआ। ठाकुर कहते हैं, अन्तिम जन्म में सत्त्वगुण रहता है, भगवान में मन होता है।

पाठ चलता है। दयानन्द सरस्वती, थिओसोफी आदि की बातें आईं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज की स्थापना की है। कलकत्ता आए थे। एटीन-सैवन्टी-टू (1872) दिसम्बर से लेकर एटीन-सैवन्टी-थ्री (1873) मार्च तक थे। वे ठाकुरों* के नैनान बाग में थे। केशवबाबू तब दयानन्द सरस्वती को मिलने गए थे। ठाकुर (श्रीरामकृष्ण) का भी उस दिन वहाँ निमन्त्रण था। ठाकुर हँस-हँस कर बातें किया करते। दयानन्द ने कहा था, 'राम-राम न कहकर सन्देश-सन्देश बोलो'। कप्तान भी वहाँ पर थे। वे बीच-बीच में 'राम-राम' कह रहे थे। जभी तो वह बात कही। वे निराकारवादी हैं कि ना! लगता है, कप्तान ने उसी समय ही ठाकुर का प्रथम दर्शन किया था। ठाकुर की समाधि हो गई थी। एकजन, कप्तान ही ने लगता है, ठाकुर को दिखाकर दयानन्द से पूछा था, 'आपकी ऐसी अवस्था हुई है?' उन्होंने उत्तर दिया था, 'नहीं, पाण्डित्य-अभिमान है। शास्त्र में जो पढ़ा है, आज वही दर्शन किया।' इससे मन में लगता है 'महत् लोग' है। महापुरुष को छोड़ इस प्रकार स्पष्ट कथा सबके सामने कह नहीं सकता।

श्री म कुछ देर चुपचाप बैठे रहे। पाठ होता रहा। फिर बातें करने लगे।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— सींती के पण्डित ने ठाकुर से पूछा, थिओसोफी के सम्बन्ध में उनकी क्या धारणा है? ठाकुर बोले, यदि उस पथ से भगवान-लाभ हो तो अच्छा है। बोले, 'भक्ति ही है एकमात्र सार— ईश्वर में भक्ति।' कैसी उदार दृष्टि! यह मापने का एक गज दे दिया। चाहे जो कोई भी मत हो यदि उसका उद्देश्य होता है ईश्वर-दर्शन, तब तो वही मत ठीक है। ईश्वर-दर्शन उद्देश्य न हो तो वह धर्म ही नहीं है। फिर और एक टेस्ट हुआ, उस मत का अनुसरण करके किसी ने ईश्वर-दर्शन, किया है कि नहीं? ईश्वर-दर्शन

* टैगोर रवीन्द्रनाथ, देवेन्द्रनाथ— 'ठाकुरों' के परिवार।

बिना किए मत चलाने जाओ तो वह अधिक दिन नहीं चलता। अन्त में पकड़ा जाता है। जो मतप्रवर्तक होगा उसको पहले ईश्वर-दर्शन करना चाहिए। तभी दूसरे लेंगे। ठाकुर कहते हैं, ''साधन चाहिए''। उनके लिए व्याकुलता चाहिए। कहते हैं, शास्त्र बोलो, दर्शन बोलो, वेदान्त बोलो, किसी में भी कुछ नहीं है। तपस्या चाहिए।

''लोग कहते हैं कि ना, अमुक बड़ा ज्ञानी है। जभी ठाकुर ज्ञानी का लक्षण कहते हैं, ईश्वर के लिए उसका प्राण छट्-पट् करेगा, इतना अनुराग उनमें। और एक लक्षण— कुण्डलिनी जागृत होती है। तब ईश्वर में अचला भक्ति होती है। पुस्तक पढ़कर अथवा वक्तृता देने से ही ज्ञान नहीं हुआ। विषयी का विषय में जो प्यार, वही भगवान में जाने पर तब ज्ञान होता है। इतना बड़ा व्यक्ति केशवसेन— कितना प्यार करते ठाकुर, उन्हें ही कहा, तुम लोकमान्य, विद्या आदि समस्त लेकर रहते हो, तभी होता नहीं। केशवबाबू ने पूछा था कि ना, ईश्वर-दर्शन क्यों नहीं होता? जभी वह बात इतना स्पष्ट करके कह दी। नहीं तो व्यक्ति समझेगा कैसे?''

एकजन भक्त *(विनीत भाव से)*— ठाकुर कहते हैं, गृहस्थी लोग तीन जन के दास होते हैं— स्त्री के, रुपये के और मालिक के। 'पदार्थहीन' जैसे 'गोबरगणेश'। उनके लिए उठने का उपाय क्या है?

श्री म— ठाकुर की बात सुनना। वे जो कहते हैं, वैसा करना। उनकी शरण लेना। उनका प्रत्यक्ष रूप है साधु। उनका संग करना, उनकी सेवा करना। इस अवस्था से जो ऊपर उठे हैं, उनकी बात सुनना आवश्यक। जो व्यक्ति अपनी अवस्था समझ गया है, उसके लिए सब योगायोग हो जाएगा। वे ही उसकी समस्त व्यवस्था कर देते हैं। विपद तो यही है कि कोई इसको समझना नहीं चाहता— अपनी अवस्था को। अन्य का दोष देखता है, अन्य को केवल उपदेश देता है— उद्धार करता है। अपनी अवस्था कहाँ समझना चाहते हैं? समझ ले तो तत्क्षण ही हो जाता है। तब फिर और बक-बक नहीं करता।

पाठ शेष हो गया। बड़े जितेन प्रश्न करते हैं।

बड़े जितेन— *ईशानबाबू को पञ्चपन*— मुखियापन छोड़कर, कोशाकुशी (अर्घ्यपात्र) छोड़कर, ईश्वर-नाम में पागल होने के लिए कह रहे हैं ठाकुर। वे छोड़ नहीं सक रहे हैं। कहते हैं, प्रकृति करवाती है। अब इस प्रकृति— इस संस्कार का कैसे नाश हो?

श्री म— ठाकुर जो कहते हैं, वह करने पर। महामाया की शरण लेना। और कुछ काल यह सब छोड़कर दूर हट जाना। दिन-रात इसके भीतर रहने से होता नहीं। जो कहा है, दूर हट कर उसका पालन करने की चेष्टा करनी चाहिए। चेष्टा और प्रार्थना यही पथ है। बाकी की तो उनकी इच्छा। ईशानबाबू की प्रकृति के नाश का उपाय तो ठाकुर ने साथ-साथ अपने-आप ही करवा लिया है। ईशानबाबू ने उसी समय ही तो चरण पकड़ कर शरण जो ले ली। और बाकी क्या रह गया? जिन्होंने बाँधा था, उन्होंने ही मुक्त कर दिया। धन्य ईशानबाबू!

एकजन भक्त— स्त्री पुरुषसाधक का विघ्न है, ठाकुर कहते हैं। वैसे ही पुरुष भी क्या स्त्री साधक का विघ्न है?

श्री म— इसीलिए तो। दोनों का एक साथ मेल होने पर ही तो संसार। किसी ओर से भी मेल हो। जभी साधक की अवस्था में दोनों को ही सावधानता चाहिए। ठाकुर की स्त्री-भक्त पुरुषों के संग नहीं मिलती थीं। माँ को ही देखो। हम लोग उनको जान भी नहीं पाए थे बहुत दिनों तक। कहते, 'रामलाल की चाची' नहबत में है। माँ कहतीं, बालविधवा अपने बाप-भाई का भी विश्वास नहीं करेगी। माँ ठाकुरण का मुख क्या कोई देख पाता था? सर्वदा घूँघट, खोला नहीं। माँ का आचरण है, स्त्री-साधक का आदर्श।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ठाकुर क्या फिर किसी की निन्दा करते हैं? वह नहीं। उनमें निन्दा नहीं थी। लोककल्याण-जन्य जो सत्य है, वही कहते हैं। आग में हाथ देने से हाथ जलेगा! अब तुम इच्छा करके हाथ दो, किंवा तुम्हारे हाथ पर कोई आग डाल दे, किन्तु हाथ तो जलेगा ही। जभी सावधान। ठाकुर ने बताया था, मधुर-भाव के साधन के समय वे प्राय: दो वर्ष स्त्री-वेश में थे। कहा था, पत्नी ने पूछा, मैं तुम्हारी कौन? मैंने कहा, आनन्दमयी।

बताते, मैं अपने आपको तब 'पु' (पुरुष) कह नहीं सका। साधक की अवस्था में दोनों ही दोनों को छोड़ देंगे।

''राणी भवानी की कितनी प्रशंसा की। स्त्री होते हुए भी इतनी ज्ञानभक्ति!

''ठाकुर की सब बातें, सब आचरण, जगत की शिक्षा के लिए हैं। जगदम्बा ने ये समस्त करवाया है हाथ पकड़कर। कण्ठ में बैठकर सब बुलवा लिया। एक-एक बार कहते, यह देखो! माँ बोलने नहीं दे रही हैं। मुख बन्द हो गया। प्रार्थना करते हैं, मैं यन्त्र, तुम यन्त्री। मैं घर, तुम घरणी। मैं रथ, तुम रथी। माँ, जैसे चलाती हो वैसे ही चलता हूँ, जैसे बुलवाती हो वैसे ही बोलता हूँ। माँ, शरणागत, शरणागत।''

रात्रि दस।

मॉर्टन स्कूल, कलकत्ता।
18 अप्रैल, 1924 ईसवी; 5वाँ वैशाख, 1331 (बंगला) साल, गुड फ्राइडे।

पञ्चदश अध्याय

उपनिषद्-गीता-बाइबल

(1)

प्रात:काल पाँच। श्री म दो तल की छत पर बैठे हुए आज भी उपनिषद्-पाठ कर रहे हैं। 'ब्राह्मधर्म', प्रथम से बयालीस मन्त्र, वैदिक सुर से पाठ कर रहे हैं। छोटे जितेन, विनय और जगबन्धु निकट बैठे हैं। अब व्याख्या करते हैं।

आज 19 अप्रैल, 1924 ईसवी; 5वाँ वैशाख, 1331 (बंगला) साल, शनिवार।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ऋषियों ने देख लिया था, ईश्वर जगत की सृष्टि, स्थिति, प्रलय करते हैं। और फिर सब कुछ ही आनन्द में करते हैं। मनुष्य जब कुछ करता है तब उसके मन में आनन्द रहता है, और उपभोग में भी आनन्द रहता है। किन्तु उसका विनाश करके आनन्द-लाभ नहीं कर सकता। यह व्यवस्था साधारण मनुष्य के काम में है। भगवान की जगत-लीला की तीनों अवस्थाओं में ही आनन्द। बात तो यही है कि इन तीनों को छोड़ और तो कुछ है ही नहीं। जभी आदि-मध्य-अन्त— सर्वावस्था में ही आनन्द है। आनन्द ही तो उसका स्वरूप है— 'आनन्दरूपं अमृतं यद्विभाति।'

''ठाकुर ने देखी थी, यह अवस्था। बताया था, माँ ने निराकार दिखाया— सच्चिदानन्द सागर अपार, असीम। और फिर दिखाया, सब 'मोम का'— बाग, बाड़ी, पेड़-पौधा, फल-फूल, समस्त आनन्द में लिपटा हुआ। इस अवस्था में नाम-रूप है किन्तु विनाश नहीं। जभी तो कहा था— लीला ही सत्य। क्यों सत्य? क्योंकि लीला जो नित्य है, जभी। यह एक मत है।

''अन्य मत है नित्य सत्य, लीला मिथ्या— ब्रह्म सत्य, जगत मिथ्या। ठाकुर ने कहा था, इस नित्य के पश्चात् लीला में रहना। छत भी ईंट, चूना, सुरखी से बनी है, और फिर सीढ़ी भी ईंट, चूना, सुरखी से तैयार हुई है। छत पर चढ़ना हो तो पहले सीढ़ियों को छोड़-छोड़ कर चढ़ना होगा।

''प्रथम त्याग चाहिए। फिर ईश्वर ही सब कुछ हैं— यह बुद्धि हो जाती है। इसको ठाकुर विज्ञानी की अवस्था कहते। दोनों ही वेदान्त हैं। ठाकुर एक-एक experience (अनुभव) को अवस्था कहते। अब एक अवस्था है, फिर और बदल गई तो और एक हो गई। सब ही ज्ञान। कोई भी एक ईश्वरीय-भाव जान लेने पर ही काम हो गया। बाकी जरूरत होने पर वे जनवा देते हैं। मुक्ति क्या एक तरह? भागवत में पाँच प्रकार की मुक्ति की बात है— सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, साष्ठि और सायुज्य। सब ही एक ईश्वर को लेकर हैं। सब ही अतीन्द्रिय वस्तु। एक के ही पाँच भेद। सब ही ज्ञान।''

श्री म *(छोटे जितेन के प्रति)*— इस आनन्द स्वरूप भगवान के एक कण आनन्द में है समस्त जगत के आनन्द। जीव-जन्तु के विषयानन्द के source (मूल) वे हैं। इस एक क्षण आनन्द में ही संसारी जीव डूबे हुए हैं। मूल की खोज नहीं। शेष आनन्द का ठोस रूप वे स्वयं हैं। यह एक कण विषय में देकर वे क्या कम हो गए? नहीं तो। वे पूर्ण हैं, जितना दें, जितना लें। वे एकरस हैं— सदा सम्पूर्ण। जभी ऋषिगण उनका स्तव करते हैं, 'पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।' और कहते हैं, 'एतस्यैवानन्दस्यान्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्ति।' (इसी आनन्द की मात्रा-भर से सभी प्राणी जीवित रहते हैं।)

श्री म *(सब के प्रति)*— इसी आनन्दस्वरूप को और फिर 'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म' कहते हैं। अनन्त माने जिस ओर से भी देखो, उनका शेष नहीं— ज्ञान, कर्म, शक्ति, कल्याण, देश, कालादि। इसी परमपुरुष को लाभ करना ही मनुष्य-जीवन का उद्देश्य है। उनको ही ठाकुर 'माँ' कहते हैं। सर्वदा वही माँ संग-संग रहतीं। जैसे शिशु के संग में माँ रहती है। और फिर ठाकुर ने अपने मुख से आप ही कहा है— वे स्वयं ही वही माँ हैं, आप ही ब्रह्म हैं। और फिर

भक्त होकर रोग-भोग करते हैं।

''ऋषियों ने कहा है, इस परमपुरुष की प्राप्ति ही जीव का शेष गन्तव्यस्थल है, 'एषास्य परमा गतिरेषास्य परमा सम्पदेषोऽस्य परमालोक एषोऽस्य परमानन्दः।' धन और आनन्द लोग माँगते रहते हैं। कहते हैं, इसको पा लेने पर अन्य धन नहीं चाहता। जभी यही है परमधन। आनन्द अर्थात् विषयानन्द, वह भी नहीं चाहता। 'मिछरी पाना पेले के ओलागुड चाय?' (मिश्री का शरबत मिलने पर कौन गुड़ का लड्डू माँगेगा)? 'स अश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चिता।' (ब्रह्मज्ञान होने पर पूर्णकाम हो जाता है।)

''उनको पाना हो तो तपस्या चाहिए। तपस्या माने समग्र मन देकर उन्हें चाहना। मन तो अब जड़ित है विषय-भोग में। इसको उठाकर उल्टी तरफ, भगवान में, लगाना होगा। इस निरन्तर चेष्टा का नाम ही तपस्या है। सत्संग और निर्जनवास इसके सहायक हैं। सत्संग में आना-जाना करने से विवेकज्ञान अर्थात् 'ईश्वर सत्य, जगत अनित्य', यह बोध होता है। फिर विषय को छोड़कर निर्विषय भगवान में मन लग्न करना निर्जन में।

''ब्रह्म, शक्ति, जीवजगत, तपस्या, जीव के कर्त्तव्य— ये समस्त समझाने, ये सब दिखाने के लिए ब्रह्म ही युग-युग में मनुष्य होकर आते हैं। ठाकुर वही ब्रह्म हैं, अपने निज के मुख की बात है। मनुष्य ने उन्हें नहीं बनाया। कहा था, सच्चिदानन्द इसके भीतर से बाहर होकर कहता है, युग-युग में मैं अवतीर्ण होता हूँ।

''मनुष्य का कैसा अज्ञान! इस उक्ति के सामने, स्पष्ट वाणी के उपरान्त भी कैसे जीव बोलता है कि जीव, जगत समस्त अपने-आप ही हुए हैं— 'chance creation?' यह भी उनकी अविद्यामाया का कार्य है। नहीं तो खेल चलेगा नहीं। ईश्वर के संग योग करके अपने को चलाना। ऋषियों को, अवतारों को, ये सब बातें प्रत्यक्ष ज्ञान से मिली हैं, आँखों से देखकर कही हैं। इनमें 'किन्तु' नहीं है, अनुमान नहीं है। परन्तु वैज्ञानिकों की जीव के स्वरूप के सम्बन्ध में उक्ति अनुमान मात्र है। उनकी बात में जोर नहीं है। मनुष्य के विषय में वे बोल नहीं सकते, मैंने स्वयं देखा है, निज प्रत्यक्ष किया

है मनुष्य का स्वरूप। स्व 'स्वरूप' को जानना ही परमसुख, परमशान्ति और परमानन्द है। यह अविनश्वर सुख-शान्ति वे स्वयं भी नहीं पाए हैं, अन्य को भी दे नहीं सकते। किन्तु ऋषिगण तो सब ही कहते हैं— हमने यह परमानन्द, परमसुख eternal bliss and happiness प्राप्त किया है। तुम लोग भी कर सकते हो। प्रत्येक जीव का यह तो birth-right (जन्मगत अधिकार) है।''

श्री म कुछ क्षण नीरव रहे— ध्यान के भाव में। फिर पाठ करते हैं— अब बाइबल। ईस्टर चल रहा है, तभी। 'सेन्ट ल्यूक' के बारहवें अध्याय की इक्कीसवीं वाणी से चौबीसवें अध्याय अर्थात् पुस्तक के अन्त तक पढ़ा। किसी-किसी वाणी को दो बार पढ़ा। जैसे—

''I tell thee, Peter, the cock shall not crow this day, before that thou shalt thrice deny that thou knowest me!''

''Father, forgive them; for they know not what they do.''

''Verily I say unto thee, Today shall thou be with me in paradise,''

''O fools, and slow of heart to believe all that the prophets have spoken.''

(''पीटर, तुम्हें मैं कहे देता हूँ कि आज मुर्गे की आवाज के पहले ही तुम तीन बार मुझे अस्वीकार करोगे।''

''पिता, इन्हें क्षमा करो। कारण, ये लोग जानते नहीं हैं कि ये क्या (महापाप) कर रहे हैं।''

''प्रतिज्ञा करके कहता हूँ, आज ही तुम मेरे साथ स्वर्ग में निवास करोगे।''

''तुम लोग ऐसे हीनबुद्धि और दुबर्लचित्त हो, जो महापुरुषों की वाणी को भी सत्य मानकर विश्वास नहीं कर सकते हो।'')

पाठ शेष हुआ। अब श्री म भक्तों के संग बातें करते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ठाकुर ने तीन प्रकार के विश्वास की बात कही है। दूध का दृष्टान्त देकर बताया— दूध की बात सुनना, दूध देखना और दूध पीकर हृष्ट-पुष्ट होना— इनमें अन्तर है। क्राइस्ट का विश्वास— पक्का विश्वास। दूध पीकर हृष्ट-पुष्ट होने वाला विश्वास। अर्थात् भगवान के दर्शन करके, बातें करने वाला विश्वास। एक-आध बार नहीं, बार-बार। यह विश्वास था, इसी कारण क्राइस्ट जान-बूझकर क्रॉस पर बिद्ध हो गए। ईश्वर ने कहा है जगत के कल्याण के लिए अपना शरीर दान करना होगा। यह विश्वास अवतार आदि का ही होता है, जीव का नहीं होता। 'ईश्वर सत्य, अवतार सत्य'— यह विश्वास होना बड़ा ही कठिन व्यापार है। एक-एक बार कितना कुछ होता है, और फिर जाता है। कितना बड़ा भक्त पीटर, अन्तरंग श्रेष्ठ! उनको ही कहा था, 'Get thee behind me, Satan : ...for thou savourest not the things that be of God, but those that be of men.' (दूर हो शैतान, भगवान का आदेश सुनूँगा या तुम्हारा आदेश सुनूँगा!)

"पहले दर्शन देकर भगवान ने कहा था, देह की बलि देनी होगी। अब पीटर अन्य प्रकार का परामर्श देते हैं। जभी कही थी यह बात। लोग जैसे कहा करते हैं, 'बला से, आपका शरीर-त्याग क्यों होगा'? ऐसे ही कहा था।

"इतना विश्वास, ज्वलन्त विश्वास! किन्तु इसके भीतर भी शरीर-त्याग में भय आ गया। ऐसी ही देहबुद्धि। भय से— दारुण भय से, प्रार्थना करते हैं, पिता इस विपद से रक्षा करो। उत्कण्ठा से पसीना-पसीना हो गए। एक देवता ने शायद उनको सान्त्वना दी। पकड़े जाने के कुछ क्षण पहले हुई थी यह अवस्था। क्यों ऐसा हुआ? लोकशिक्षा के लिए। दिखाया, शरीर लेने पर सर्वावस्था में विश्वास अटूट रखना कितना अधिक कठिन व्यापार है। देह-रक्षा की यह जो चेष्टा है, इसका ही नाम अविद्या है। जितने दिन देह है, उतने दिन उसका इलाका है। और फिर पीटर के द्वारा लोकशिक्षा दिलवाई। उन्होंने गर्व करके कहा था कि ना, प्रभो, आपके संग मैं सर्वदा रहूँगा— 'राजद्वारे श्मशाने च' (राजद्वार और श्मशान में), उनका गर्व तोड़ दिया। एक प्रहर के मध्य तीन बार प्राण-भय से क्राइस्ट को अस्वीकार किया— 'I know

not the man.' (मैं इसको नहीं पहचानता) कह कर। फिर अपनी दुर्बलता समझने पर रोने लगे।

''इस घटना के दोनों पक्ष ही देखिए। इधर इस प्रकार। और फिर इसके पीछे ही अन्यायकारियों के मंगल के लिए प्रार्थना करते हैं। पितः, क्षमा करो, ये जानते नहीं कि कैसा भीषण पाप कर रहे हैं। वे अपने को जानते हैं पर वे लोग उनको नहीं जानते। इतना भय शरीर-त्याग में और फिर इतनी करुणा— समदर्शन। क्रॉस पर बिद्ध— असहाय अवस्था में भी एक जन को मुक्ति-दान किया। इन समस्त विरुद्ध भावों की मिलनभूमि है अवतार। उनके संग और दो व्यक्ति क्रॉस पर बिद्ध हुए थे। उनमें से एकजन को उस अवस्था में इस बात पर विश्वास हो गया था कि क्राइस्ट अवतार हैं। शरणागत हो गया था। क्राइस्ट उसी समय बोले थे, 'आज ही तुम मेरे संग में भगवान के पास स्वर्ग में जाओगे।'

''एक अवतार का जीवन और कार्य देखने से समझ में आ जाता है कि शास्त्रों की ये सब कथा सत्य है। नहीं तो मनुष्य मन में सोचता रहता है कि ये सब बनाई हुई बातें हैं। ठाकुर के भीतर भी इन दोनों विरुद्ध भावों का खेल चलता था— भक्त और भगवान का। कभी-कभी भगवान-भाव में कहते, 'मेरा ध्यान करने से ही होगा।' और फिर संग-संग ही कहते, 'माँ क्या मैंने अन्याय किया है उसको यह बात कह कर? मैं तो देख रहा हूँ तुम ही सब हो— मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार सब ही तुम हो!' और फिर शरीर-त्याग से पहले कहते हैं, 'अब अधिक और 'दो' देख नहीं सक रहा हूँ, एक भक्त और एक भगवान। अब देख रहा हूँ— सब ही हो तुम, सब माँ।'

''मृत्यु के समय, उनकी शरण लेने से होता है। यही कैदी का हुआ था। 'स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति'।''

अब प्रातः नौ। श्री म और अन्तेवासी प्रूफ देखते हैं। कथामृत छप रहा है।

अपराह्न पाँच। श्री म ठाकुरबाड़ी गए हैं। भक्तगण आ-आ कर छत पर एकत्रित हो रहे हैं। श्री म लौटे आठ बजे। बड़े जितेन, अमूल्य, विनय,

शान्ति, बलाइ, मनोरंजन, छोटे रमेश, डॉक्टर, योगेन, उनका पुत्र, दुर्गापद, जगबन्धु प्रभृति आए हैं। श्री म परिश्रान्त, मादुर पर छत पर बैठे हैं। थोड़ा पीछे कथाप्रसंग होने लगा। संन्यास आश्रम की बातें होती हैं। बहुत कठिन आश्रम है। दुर्गापद कहते हैं, ठाकुर संन्यास का जो आदर्श दे गए हैं वैसा संन्यासी प्राय: दिखाई नहीं देता। आजकल का संन्यास आश्रम नीचे गिर गया है।

श्री म *(रोक कर)*— संन्यास कितना बड़ा आश्रम है! कहने से ही हो गया कि कुछ नहीं है। देखिए, जहाँ से मनुष्य भागता है, वहाँ पर संन्यासी लोग जाते हैं। प्राणों का भय नहीं। लाहौर में प्लेग हुई। रोज पचास जन मरते हैं। मठ के संन्यासी वहाँ पर गए सेवा करने। मुख से बोलने से क्या होता है? उनका कार्य देखो। गुजिया बाहर से देखने में सब समान हैं। किन्तु किसी के भीतर खोये का पूर है, किसी के भीतर उड़द की दाल का।

"कौन-सा वीर केवल पाँच हजार सैनिक लेकर कतलुखाँ की सुवर्णरेखा पार कर सकता है? जगतसिंह का कर्म। वे कृतकार्य हुए। मुख से तो कितने लोग वीरत्व करते हैं, किन्तु इस कार्य में कोई निकला नहीं। अकेला जगतसिंह आगे गया।

"संन्यास माने यही नहीं है कि सब ही शुकदेव हो जाएँगे। संन्यास माने है, गृहस्थ के बाहर चले जाना— बाप, माँ, स्त्री, परिवार के बन्धन से बाहर जाना। वहाँ से चेष्टा करना। मार्ग पर चला है। वहाँ से ईश्वर की ओर बढ़ते हुए विघ्न कम हैं। Vantage ground (अनुकूल स्थान) पर खड़ा है। मुड़ि मिछरीर एक दर करले चलबे केनो? (मुर-मुरा और मिश्री की एक दर करने पर चलेगा क्योंकर?)"

दुर्गापद— ठाकुर के संन्यास का आदर्श क्या वह था?

श्री म— नहीं, वह नहीं। फिर भी संन्यासियों का उसी प्रकार का है। ठाकुर ने किसी को भी formal— आनुष्ठानिक संन्यास नहीं दिया। फिर भी organisation (संघ) रखना हो तो एक Institution (अनुष्ठान, प्रथा) चाहिए ही। जभी मठ में संन्यास-संस्कार दिया जाता है। वे भीतर फाँक (खोखला, खाली) कर देते थे। देखने में ही सब साधारण मनुष्य; किन्तु

उनका भीतर खाली— भीतर संन्यास। वे देखते, कैसे ईश्वर-लाभ हो। वह है अलग ही वस्तु। फर्स्ट क्लास। फर्स्ट क्लास संन्यास नहीं हुआ तो इस कारण 'संन्यास कुछ भी नहीं है' कहा नहीं जाता। सेकण्ड क्लास, थर्ड क्लास है। तब भी तो संन्यासी। उनके लिए ये लोग प्रणम्य हैं जो लोग घर में हैं। संन्यासी और गृहस्थ का difference (अन्तर) है जैसे सुमेरु पर्वत और सरसों का कण, अथवा महासागर और गोष्पद का जल।

रात्रि ग्यारह।

(2)

प्रात: पाँच। मॉर्टन की छत पर श्री म उपनिषद्-पाठ करते हैं, 'ब्राह्मधर्म'। श्रोता छोटे जितेन, विनय, जगबन्धु प्रभृति। फिर आ गए योगेन और उसका पुत्र, खोका। पन्द्रहवाँ और सोलहवाँ अध्याय पाठ समाप्त हो गया— केवल साधन की बात।

आज 20 अप्रैल, 1924 ईसवी। छठी वैशाख, 1331 (बंगला) साल, रविवार।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— यही जो पढ़ा गया है, इसकी सार बात है— साधन चाहिए। 'तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व।' (तपस्या से ब्रह्म को जानो)। ठाकुर ने भी कहा, साधन चाहिए। सींती के पण्डित से कही थी यही बात खूब जोर देकर। अपने जीवन में पालन की चेष्टा चाहिए। ईश्वर-दर्शन करना ही मनुष्य का श्रेष्ठ कर्त्तव्य है। उसके लिए चाहिए सत्संग और गुरुसेवा। क्रमश: उससे बुद्धि स्थिर होगी। ठाकुर उपमा देते, दाँत का दर्द। सब करता है किन्तु मन पड़ा है उसी वेदना में। वैसे ही संसार का सब करो किन्तु बुद्धि को ही उनमें रखना चाहिए। 'विज्ञान सारथि' होना होगा। इन्द्रियाँ दुष्ट घोड़ा है, मन लगाम और बुद्धि सारथि। रास खींचकर सारथि घोड़े को दमन करता है।

" 'बुद्धि' माने पक्की बुद्धि, सानी (चक्का) दही जैसी बुद्धि। 'चिड़ा

भेजा' (चिउड़ा भिगोने के लिए जलमय दही) बुद्धि नहीं जिसके द्वारा जगत की भोग्य वस्तुएँ लाभ होती हैं— राज्य, नाम, यश, धन। किन्तु निश्चयात्मिका बुद्धि। 'मैं ईश्वर की सन्तान', 'उनका दास'— इस प्रकार की बुद्धि। किंवा 'अहं ब्रह्मास्मि' बुद्धि। ठाकुर कहते, पात्र उलटा कर पकड़ो— 'सानी' (चक्का) दही हिलेगी नहीं, गिरेगी नहीं। इसी प्रकार की स्थिर बुद्धि। हजार चञ्चलता का कारण होने पर भी मन भगवान में। सुदृढ़ विश्वास-बुद्धि! कूटस्थ बुद्धि भी कहा जाता है। निहाई[1] के ऊपर हथौड़े की इतनी चोटें पड़ती हैं, निहाई अविचलित। जैसे कम्पास का काँटा। खींच कर पकड़ो, दूसरी ओर जाएगा। छोड़ दो तब फिर उसी उत्तर की दिशा में। जैसे विद्रोही (rebel), मारो, पकड़ो, चाहे फाँसी पर दो, अपना मत बदलेगा नहीं— स्वाधीनता चाहिए, ऐसी मरणप्रण-बुद्धि। यही लौहबुद्धि ही है प्रयोजनीय।

''स्त्री, पुत्र, कन्या, देहसुख, धन-ऐश्वर्य, सुनाम जिस बुद्धि को हिला नहीं सकते, वही बुद्धि दरकार। नचिकेता की बुद्धि। अनन्तकाल का बन्धु भगवान, और जगत का सब दुःखमय, सुख-शान्ति का एकमात्र आश्रय ईश्वर है, यह बात जिसने समझी है, उसी की है ठीक-ठीक बुद्धि। पहले शास्त्र और गुरुमुख से सुनकर पीछे मनन करके जो निश्चय करता है— ईश्वर सत्य, जगत अनित्य— ऐसा बुद्धिमान व्यक्ति भगवान-लाभ कर सकता है। ऐसा व्यक्ति ही शान्त, दान्त, उपरत, तितिक्षु[2] होता है। उनके शुद्ध चित्त में भगवान दर्शन देते हैं। ढीली बुद्धि, चिड़वा भिगोने वाली (पतली) बुद्धि, 'अट्ठारह मास का वर्ष' वाली बुद्धि, लेदारू बुद्धि (गोबरगणेश बुद्धि) का कर्म नहीं है। चातक की बुद्धि, विद्रोही की बुद्धि, सत्यग्राही की बुद्धि, नचिकेता की बुद्धि का प्रयोजन है।''

श्री म आधा घण्टा नीरव रहे। भक्तों ने इस आध घण्टे ध्यान किया— श्री म के आदेश से अभी-अभी जो सुना है, उसी विषय पर। फिर श्री म ने गीता खोली, चतुर्थ अध्याय अपने आप पढ़ा मन ही मन। अब

---

1 निहाई— जिस लोहे पर धातु कूटते हैं।

2 शिष्ट-विनयी; दानी; विरक्त, निवृत्त; सहनशील।

उच्चस्वर में तीन श्लोक पढ़कर भक्तों को सुनाते हैं। फिर व्याख्या—

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम्॥

यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते॥

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते॥ (गीता 4 : 21—23)

[भावार्थ— जिसने अन्तःकरण और शरीर जीत लिया है तथा त्याग दी है सम्पूर्ण भोगों की सामग्री, ऐसा आशारहित पुरुष केवल शरीर सम्बन्धी कर्म को करता हुआ भी पाप को नहीं प्राप्त होता।

अपने आप जो कुछ आ प्राप्त हो उसमें ही सन्तुष्ट रहने वाला और हर्षशोकादि द्वन्द्वों से अतीत हुआ तथा मत्सरता अर्थात् ईर्ष्या रहित, सिद्धि और असिद्धि में समत्व भाव वाला पुरुष कर्मों को करके भी नहीं बन्धता।

आसक्ति से रहित, ज्ञान में स्थित हुए चित्त वाले, यज्ञ के लिए आचरण करते हुए युक्तपुरुष के सम्पूर्ण कर्म नष्ट हो जाते हैं।]

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— कर्मयोग की तो दो stages— अवस्थाएँ हैं। एक तो साधक अवस्था और एक सिद्धावस्था। यहाँ पर श्रीकृष्ण सिद्धावस्था की बात कहते हैं। सिद्धावस्था में भी दो प्रकार के कर्म रहते हैं। एक तो शरीर धारणजन्य कर्म— अन्नपानादि, दूसरे अप्रत्यादिष्ट कर्म अथवा प्रारब्ध-क्षय के लिए कर्म। इन दोनों कर्मों की ही बन्धनशक्ति नहीं है। ईश्वर के साथ युक्त होकर यन्त्रवत् कर्म करता है, जभी स्वतन्त्र; अहंकार के न रहने से अपना दायित्व नहीं। तभी बन्धन नहीं। 'मेरा कर्म मैं करता हूँ' साधक की अवस्था में हजार विचार करो, यह बुद्धि आ ही जाएगी। सिद्धावस्था में भगवान को सामने देख पाता है। समझ पाता है उनकी इच्छा से ही सब होता है, समझ पाता है स्पष्ट— पहले के 'मैं, मेरा' के अभिमान का मूल शक्ति केन्द्र है 'ईश्वर-इच्छा'। ब्रह्म, माया, जीव, जगत, कर्म, चौबीस तत्त्व— ये सब ही एक वस्तु से आए हैं। एक के ही नाना अवस्थाओं में, नाना नाम हैं। एक अवस्था में देख लेता है, उन्हें छोड़ कुछ नहीं है— सब सच्चिदानन्द। और एक अवस्था में यह नानारूप और नाम हैं। यह समझ

लेने पर फिर बन्धन नहीं।

''ठाकुर का जीवन इन सब आध्यात्मिक तत्त्वों की प्रदर्शन-भूमि है। इनके जीवन में यह सब हुआ है, सब देखा गया है। हमने देखा है मन, बुद्धि— सब भगवान में समर्पित। सर्वदा 'माँ, माँ' मुख में— 'त्यक्त सर्व परिग्रह' पूर्ण भाव से प्रकाशित है। मैं तीन कुरते ले गया था— किन्तु दो लौटा दिए। केवल एक ही रखा। शरीर-धारण के लिए जो निहायत आवश्यक, वही रखा। संचय कर सकते नहीं। यह भी जब बिन्दुमात्र मनुष्य बुद्धि आई तब दरकार हुआ। 'माँ का पुत्र' इस बुद्धि से ही यह आचरण, यह प्रयोजन-बोध भी। इससे ऊपर चढ़ गए तब कौन तुम्हारे कुरते के सम्बन्ध में धारणा करे! देहबुद्धि का बिन्दुमात्र भी नहीं, तब कौन देह को कुरता पहनाए? कौन तब धोती को देखे? धोती भी कमर पर नहीं, तब— दिगम्बर। यहाँ का गीता का विवरण और ठाकुर का यह आचरण मध्यपन्था का विवरण है। 'सिद्धावस्था में लोक-व्यवहार किस प्रकार करता है', उसका वर्णन है यहाँ पर। असिद्ध, सिद्ध, सिद्धों का सिद्ध व नित्य सिद्ध। ठाकुर की अवस्था सिद्धों के सिद्ध की अवस्था है। असिद्ध अवस्था में कामना, वासना रहती है। लाभ में आनन्द, अलाभ में दु:ख, इर्ष्याद्वेष, भला-मन्दा विचार रहता है। भगवान-दर्शन के पश्चात् सिद्धावस्था के भीतर खोखला (फाँक) हो जाता है। भीतर के मन में यह सब कुछ नहीं, सब भगवानमय। बाहर शरीर में, निम्नमन में यह सब रहे भी तो इसके द्वारा कार्य नहीं होता। तभी बन्धन नहीं होता। 'जली रस्सीवत्' रहता है, ठाकुर कहते। फूँक द्वारा उड़ जाती है। आकार मात्र रहता है। किन्तु बन्धन शक्तिहीन। इस अवस्था की बात ही यहाँ पर गीता में कही गई है। ठाकुर कहते, केरानी (मुन्शी) जेल से वापिस आकर भी 'केरानीगिरी (मुन्शीगिरी, क्लर्की) ही करता है। सिद्धावस्था के कर्म का बन्धन नहीं है।

''हँसी-तमाशा, क्षुद्र-क्षुद्र भोग की इच्छा— बैंगन का झोल खाना, (बैंगन की रसेदार तरकारी खाना), शाल पहनना— यह सब ठाकुर के जीवन में देखे गए हैं। इन सब में आसक्ति नहीं है। निम्नमन, उच्चमन, सर्वोच्चमन—

मनुष्य, सिद्धपुरुष, ईश्वर— ये तीनों अवस्थाएँ ही उनमें देखी गई हैं। गीता का इस अवस्था का वर्णन श्रीकृष्ण की अपनी अवस्था का वर्णन है। लोकव्यवहार में सिद्धावस्था का प्रयोजन होता है, इसीलिए उसका वर्णन है। ईश्वर-भाव इसके ऊपर है।''

श्री म चक्षु बन्द किए हुए हैं। भाव में विभोर होकर सुरसंयोग से बारम्बार गा रहे हैं—

ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक्।
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः॥ (गीता 13 : 4)

[ऋषियों द्वारा बहुत प्रकार से कहा गया है अर्थात् समझाया गया है। और नाना प्रकार के वेदमन्त्रों से विभागपूर्वक कहा गया है। तथा अच्छी प्रकार निश्चय किए हुए युक्तियुक्त ब्रह्मसूत्र के पदों द्वारा भी वैसे ही कहा गया है।]

बहुत देर तक श्री म स्थिर होकर बैठे रहे— चक्षु बन्द। फिर बातें होने लगीं। तेरहवें अध्याय की व्याख्या।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— 'अमानित्वं अदम्भित्वं' (7 : 13)— यह सब भी ठाकुर के जीवन में देखा है। ये सब ही ज्ञान के साधन हैं। इनका ठीक-ठीक पालन कर लेने पर चित्त शुद्ध हो जाता है। उससे ज्ञान-प्राप्ति होती है, उनका दर्शन होता है। और फिर यह भी है कि जिनको ईश्वर-दर्शन हुआ है, उनके लिए ये सब अपने आप ही आ जाते हैं।

''राणी रासमणि, मथुरबाबू इतनी मान्यता देते किन्तु लड़के वैसा नहीं मानते थे। तो भी समान भाव। लड़कों पर उल्टा स्नेह करते। आप सर्वगुण आधार होकर भी दूसरों के सामान्य गुण का आदर करते। तिल जितने गुण का ताड़ बना देते। 'मैं गुणी हूँ', ऐसा कोई भी अभिमान-दम्भ नहीं। 'मैं जगदम्बा का पुत्र', सर्वदा यही मात्र अभिमान रखा था। एक निमिष भर के लिए भी भूलते नहीं। रात को इधर तो निद्रित, किन्तु संग-संग 'माँ, माँ' कहके उठते हैं— जैसे शिशु करता है। शरीर-मन-वाणी से (काय मनो वाक्ये) कभी भी किसी को पीड़ा नहीं दी। दूसरे का अनिष्ट हो, ऐसी एक भी बात कभी भी मुख से नहीं निकली। यद्यपि कभी-कभी 'हक-कथा'—

ठीक बात कहते, वह भी कल्याण-जन्य। माँ जैसे बेटे को कहती है। वही है अहिंसा। एक मुहूर्त के लिए भी असहिष्णुता दिखाई नहीं दी। मथुरबाबू के पुरोहित ने जानबाजार के घर में लात मारी थी ठाकुर को ईर्ष्या से— यह कहकर, ''बोल तूने बाबू के ऊपर क्या टोना किया है, किसके द्वारा बस में किया है?'' उससे भी उनका मन विक्षुब्ध नहीं हुआ। कैसे क्षमाशील! मथुरबाबू जान लेते तो रक्षा नहीं थी— पुरोहित को टुकड़ा-टुकड़ा करके काट फेंकते।

'' 'आर्जवम्' माने सरलता, अवक्रभाव। ठाकुर मान-अपमान का विचार बिना किए अकपट भाव में सब कहते। राखाल टूटे हुए हाथ को ढक कर रखते। ठाकुर हाथ बाहर निकालकर डॉक्टर से कहते हैं— यह देखो, बड़ी ही यन्त्रणा हो रही है। बताया था, एक दिन काम भी हुआ था। कौन अपने शिष्य-सन्तानों को यह बात बता सकता है? गुरुसेवा, वह भी की थी। तोतापुरी, ब्राह्मणी— इनकी सेवा की। *(सहास्य)* एक वैष्णव बाबाजी की भी तीन दिन सेवा की थी। 'शौचम्'— अन्तर्बहि शुद्धि, वह भी थी। खूब साफ, स्वच्छ रहना पसन्द करते। सामान्य कुछ चीजें थीं, वे भी खूब साफ सुथरी रखते। हम देखते हाथ में जूता लग गया, तो झट धो डाला। बत्ती बढ़ा दी, हम देखते झट प्रदीप की शिखा पर उँगली जरा स्पर्श करके शुद्ध कर ली। अन्तर्शुचि होती है भगवान के नाम में। ठाकुर के हृदय में माँ हैं सदा जाग्रत। मुख में सर्वदा 'माँ-माँ'-वाणी। संसार-ज्वाला से अस्थिर भक्तों का मन एक मिनट उनके पास बैठने से ही स्थिर हो जाता। कैसा अद्‌भुत 'स्थैर्यम्'!

''आत्मविनिग्रह अर्थात् शरीर और इन्द्रिय आदि का संयम। मनुष्य का मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार संसारमुखी होता है। उनके ये स्वाभाविक ही हैं ईश्वरमुखी। स्वप्न में भी कभी भी स्त्री-दर्शन नहीं हुआ। विषय में तीव्र वैराग्य— कोई भी धातु की वस्तु हाथ में लगते ही हाथ मुड़ जाता। ऐसा deep-seated aversion— (गम्भीर वैराग्य) कामिनी-काञ्चन में। यही तो है 'इन्द्रियार्थेषु वैराग्यम्'। और 'अनहंकार'— 'माँ का पुत्र', यही तनिक-सा अहंकार। और कोई भी अहंकार नहीं। मनुष्य का शरीर जो इतना प्रिय होता है, उसके ऊपर भी मन नहीं।'जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम्'—

'मनुष्य के जन्म से मृत्यु तक सब ही दु:खमय है', यह ज्ञान सर्वदा जाग्रत था। कहा था, ''माँ ने दिखा दिया है सब पर मृत्यु की छाप लगी हुई है। संसार एक महाश्मशान है।'' असक्ति अर्थात् आसक्तिहीनता। संसार में कोई भी आसक्ति नहीं थी। मनुष्य सर्वदा मेरी बाड़ी, मेरा घर, मेरा अमुक करके पागल है। ठाकुर 'मेरा', 'मैं' मुख पर ला नहीं सकते थे। कहते थे 'यहाँ का'। सब माँ का। हस्ताक्षर करके (वेतन) महीना ले नहीं सकते। वे लोग वैसे ही माँ के पास भेज दिया करते महीने-महीने। सम्पत्ति, रुपया भक्तों ने सेवा के लिए देना चाहा, मना कर दिया। केवल क्या वही किया? सुनकर एकदम मूर्छित हो पड़े! जैसे कुल्हाड़ी से सिर काटता है ऐसी यन्त्रणा हुई सुनकर। स्त्री को— हमारी माता ठाकुराणी को कहते, 'माँ आनन्दमयी'। भाई के पुत्र अक्षय को प्यार करते। उसकी मृत्यु होने पर रोए थे, किन्तु वही एक बार मात्र। फिर तो नाम भी नहीं लेते थे। मनुष्य रोता है सारा जीवन। रामलाल आदि भाई के पुत्र हो गए पराये और बाबूराम आदि भक्तगण हो गए अपने।

''सुख-दु:ख में समान भाव, यह भी उनमें देखा है। मथुरबाबू की इतनी सेवा में भी मन की वही अवस्था, केवल 'माँ, माँ' मुख में। मथुरबाबू के शरीर-त्याग होने पर जब सेवा में बड़ी त्रुटि होती थी, उनकी खबर लेने वाला कोई नहीं था, सारे दिन में दोपहर को 2-3 के समय सूखा प्रसादी भात खाने को मिलता, इतने कष्ट में भी मन का वही स्थैर्य्य सर्वदा; 'माँ-माँ' तब भी मुख में। उसी अवस्था में लक्ष्मीनारायण मारवाड़ी दस हजार रुपये देना चाहते थे सेवा के लिए, ले नहीं सके, मूर्च्छित हो गए सुनकर। बोले, ''माँ, मुझे अन्त में रुपये के द्वारा बाँधना चाहती हो?''

''कैसी अव्यभिचारिणी भक्ति! जागते-सोते माँ चाहिए! पल भर का भी बिछोड़ा नहीं। सारा जीवन उसी बाग में पड़े हैं और 'माँ-माँ' करते हैं। बहुत तरह के लोगों की भीड़ पसन्द नहीं करते थे। किन्तु आ जाने पर अवहेलना नाममात्र भी नहीं थी। 'माँ' को सर्वदा हृदय में रख कर उसी कालीबाड़ी में पड़े रहते। दूसरे जन, जिनका हृदय कुछ शुद्ध होता, वहाँ जाने पर प्रभावित होते। वे देखते, कैसा आश्चर्य, चौबीस घण्टे लगातार एक

भाव— 'माँ माँ'। वे सोचते कैसे होता है ऐसा भाव। औरों का तो भाव का ज्वार-भाटा बहता है किन्तु ठाकुर का सदा स्थिर, सदा एकमुखी प्रवाह। इसे देखकर ही तो शुद्धचित्त भक्तगण समझ सकते थे— मनुष्य-जीवन का उद्देश्य है भगवान-दर्शन, उनमें हो ऐसी अव्यभिचारिणी भक्ति!! इसका ही नाम— मोक्ष, नित्यमोक्ष।''

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— श्री कृष्ण के जीवन में भी ये ही सब भाव प्रकाशित हुए थे। अपनी बात ही गीता में कहते हैं। जब ठाकुर समाधिस्थ रहते थे तब भीतर क्या होता है, उसे कौन बूझेगा? भक्तलोग केवल देखते रहते, यदि कोई कुछ समझ सके। व्युत्थित होकर जब साधारण अवस्था में रहते मनुष्य की भाँति, तब यही सब जो गीता में कहा गया है, वह देखा जाता। आत्मदर्शन के पश्चात् महापुरुषों के मध्य यह सब दिखाई देता है। आत्मदर्शन के तभी तो ये सब साधन हैं। ज्ञानलाभ का साधन होने के कारण इन्हें भी ज्ञान कहा जाता है।

भक्तों में से कोई-कोई उठकर चले गए हैं। श्री म बैठे ही हैं। अब प्रात: के आठ। 'ईस्टर' चल रहा है। बाइबल खोलकर सेंट मार्क का चतुर्थ अध्याय पढ़ते हैं। फिर प्रथम बीस वाणियों की व्याख्या करते हैं— Behold, there went out a sower to sow....

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— अवतारगण सब बातें सबको नहीं कहते। सब समस्त बातों का अर्थ समझ नहीं सकते। कई श्रेणियों के लोग उनके पास जाते हैं। एक क्लास अन्तरंगण, पार्षदगण। और एक श्रेणी बहिरंगगण। एक क्लास सकाम भक्तों की। और एक श्रेणी दर्शक भक्तों की।

''क्राइस्ट के पास नाना प्रकार के लोग ही जाते थे। एक दिन नदी-तीर पर बहुलोग जमा हुए हैं, देखकर नौका पर चढ़कर उपदेश करने लगे— 'Sermon on the Boat.' कई मेल के लोग होने पर कहानी बनाकर बोलते।

''एक दिन एक कृषक की गल्प सुनाई—

किसान खेती करके बीज बोता है (हाथ से छिटकाने का अभिनय

करके) ऐसे-ऐसे करके। कितने ही बीज जाकर सड़क पर गिर गए। तुरन्त पक्षियों ने सब खा डाले। कुछ पथरीली मिट्टी पर गिरे। पौधे तो चाहे हुए किन्तु उपयुक्त रस न पाकर मर गए। कुछ जाकर पड़े कँटीली झाड़ियों में। अंकुरित होकर दुष्ट पौधों (कँटीली झाड़ियों) के दबाव से वे भी गए। और कुछ पड़े थे अच्छी जमीन पर। वे केवल सुफल हुए। तीन भाग ही नष्ट हो गए। एक भाग पर जो फसल हुई उससे ही सब काम हो गया।

''उन्होंने जो कहा है उसका अर्थ अन्तरंग भी भली प्रकार समझ नहीं सके। अन्य लोगों के चले जाने पर तब उन्हें समझाकर बोले। रास्ते पर जो कुछ बीज गिरे थे, इसका अर्थ है शोर-गुल में धर्मभाव जागरित नहीं होता। पक्षियों ने खा डाले अर्थात् इस कान द्वारा प्रवेश हुआ, उस कान द्वारा बाहर निकल गया। महामाया ऐसे करके भुला देती है। 'पथरीली मिट्टी' पर गिरना माने, कुछ लोग ईश्वरीय-कथा सुनते हैं, कुछ समझते भी हैं किन्तु पालन करने के समय जब देखते हैं भोग-त्याग करना होगा, तब छोड़ देते हैं। तीसरे 'कँटीली झाड़ी' अर्थात् संसार के शोक, ताप, अभाव आदि में गुरुवाक्य भूल जाता है। भली जगह पर बीज अर्थात् अन्तरंग भक्तों की बात। वे ही अवतार के जीवन्त साक्षी हैं। नाना प्रकार के कष्ट, अत्याचार, दु:ख-गरीबी के भीतर से जाकर भी उनकी वाणी को पकड़े रहते हैं। वे ही हैं जगद्गुरु। उनके जीवन द्वारा ही जगत ऊपर उठता है— ईश्वरीय-भाव पाता है। उनके सम्बन्ध में क्राइस्ट कहते हैं, ''Unto you it is given to know the mystery of the kingdom of Heaven.'' वे ही हैं गुह्य तत्त्व, मोक्ष के अधिकारी।

''ठाकुर को देखा है— सुन्दर ईश्वरीय-कथा हो रही है। अन्य प्रकार का व्यक्ति आ गया, तुरन्त कथा पलट गई। कोई फिर बातें सुनते हैं, किन्तु अच्छी न लगने पर उठकर जाकर नौका में बैठ गए। कभी-कभी ठाकुर अपने-आप ही कहते, जाओ ना एक बार बाग, मन्दिर देख आओ। अन्तरंगगण उनकी बात सुनकर जगत भूल जाते। वे फिर उनके उठने का समय भी बता देते। इतने आनन्द में विभोर हो गए हैं कि अन्य कोई भी होश नहीं। कभी-

कभी अन्तरंगों की बातें भी फिर बोलते, ''सब को देखता हूँ उड़द (माष) की दाल के खरीदार हैं, किसको कहूँ, कौन फिर सुनता है।'' वे goal (लक्ष्य) पर ही रहकर बातें करते थे कि ना! ऐसा कठिन व्यापार!

''आजकल क्राइस्ट की बात कौन सुनता है? जो समझेंगे वे तो भोग में डूबे हुए हैं। इसके भीतर ही देखा जाता है दो-चार जन कुछ-कुछ समझते हैं।''

अब नौ प्रातः। श्री म अपने कमरे में गए।

(3)

आज रविवार। जभी सारा दिन भक्तगण आते-जाते रहे। लगातार कथामृत-वर्षण होता रहा। दोपहर को श्री म ठाकुरबाड़ी गए। वहाँ पर श्रीरामकृष्णदेव की नित्यसेवा है। श्री श्रीमाँ ने अपने हाथों से ठाकुर को बिठाया है। 'सेवा में त्रुटि न हो', इसीलिए श्री म सर्वदा यातायात करते हैं। सन्ध्या के समय स्कूलबाड़ी में लौट आए। चारतल की सीढ़ी के कमरे में बैठे हैं। भक्तों के संग कुछ ध्यान होता है। फिर 'कथामृत' तृतीय भाग सत्रहवाँ खण्ड-पाठ होता है। पाठक शुकलाल। श्री म स्थान-स्थान पर व्याख्या करते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— योगमाया और श्री राधा एक नहीं हैं, ठाकुर कहते हैं, योगमाया में यह समस्त जगत रहता है। वे जादू कर देती हैं। इसमें सत्त्व, रज, तम तीनों गुण ही हैं। किन्तु श्री राधा शुद्ध सत्त्वमयी हैं— एकदम विशुद्धसत्त्व।

''सच्चिदानन्द कृष्ण आधार हैं, आधेय श्री राधा। लीला के लिए यह सृष्टि।

''कोई-कोई राधा की जीवात्मा के संग में तुलना करते हैं। और श्री कृष्ण परमात्मा। राधाकृष्ण युगल माने जीवात्मा-परमात्मा का मिलन। क्या करने से

भगवान को प्यार करना होता है, सर्वस्व देकर— जीवन-यौवन, रूपसौन्दर्य, कुलमान सब देकर— वही दिखाने के लिए भगवान की यह लीला है।''

शुकलाल— ठाकुर कहते हैं, कामिनीकाञ्चन-त्याग बिना होगा नहीं। घर में जो रहते हैं, वे किस प्रकार सब त्याग करें?

श्री म— ठाकुर कहते हैं, भक्ति-लाभ करके, ज्ञान-लाभ करके संसार में रहो। गृहस्थ बनाने के पूर्व कुछ चाहिए साधन। निर्जन में, गोपन में व्याकुल होकर रो-रो कर उन्हें पुकारे कुछ दिन, फिर संसार करने पर इतना दोष नहीं है। तब समझ सकता है कौन-सा नित्य है, कौन-सा अनित्य है। प्रथम साधुसंग चाहिए। साधुसंग करके फिर साधन। फिर संसार में रहना।

''आप लोग जो कुछ कर रहे हैं, वही करना। मठ में जाना, साधुसंग, साधुसेवा, कभी-कभी दो चार दिन निर्जन में चले जाना— जो सब भक्तलोग करते हैं। ये करने से ही होगा। क्रमशः मन से त्याग होगा। अर्थात् 'ईश्वर सत्य सब अनित्य' यह बोध आएगा। फिर उनकी इच्छा होने पर सम्पूर्ण त्याग भी करवा सकते हैं। और यदि घर में रखें तो वह जैसे शीशे के घर में रहना। भीतर-बाहर दिखाई देता है। 'भीतर' अर्थात् ईश्वर— वे ही सत्य, वे परम बन्धु, अनन्त सुखशान्तिरूप, यह होता है। और संसार— स्त्री-पुत्र- कन्या, धन-दौलत, मान-यश— 'ये सब अनित्य हैं' यह बोध 'बाहर' देखना। तब संसार (गृहस्थ) 'आश्रम' हो जाता है। स्नेह के संग श्रद्धा का मिलन होता है। पुत्र-कन्या आदि को देखता है— भगवान इस रूप में आए हैं। जभी श्रद्धा। जितनी श्रद्धा बढ़ेगी, स्नेह उतना ही कम होगा। अब जैसे स्नेहज्ञान पूर्ण है तब होगा श्रद्धाज्ञान पूर्ण। इससे ही फिर गृहस्थ आश्रम हो गया। घर-बाहर वह एक ही सूर्य-किरण।

''जिनका साधुसंग नहीं हुआ, 'कौन-सा नित्य है कौन सा अनित्य है' यह ज्ञान नहीं हुआ है उनका कहते हैं, 'माटी के घर में वास'। साधारण मनुष्य की बात है। वे ईश्वर को देख नहीं सकते, बुद्धि मलिन— पशुवत् जीवन धारण उनका। इनमें से जो भले हैं उनको हद्द छप्पर की दरार से— धागे की भाँति प्रकाश-रश्मि कभी-कभी शायद आ गई। साधुगण एकदम मुक्त प्रकाश में खड़े हैं— प्रकाश की बाढ़ में। ज्ञानीभक्त घर में रहकर प्रकाश पाते हैं— काँच

व्यवधान मात्र। किन्तु बद्धजीव का वास है 'माटी के घर' में।''

डॉक्टर कार्तिक बक्शी गृह में वास करते हैं— ईश्वर के लिए बड़े व्याकुल हैं।

डॉक्टर बक्शी— बिल्कुल त्याग करना ही अच्छा है। दो आकर्षणों में तो 'प्राण जाय जाय' हो रहा है।

श्री म (सस्नेह)— उनकी इच्छा बिना वैसा कहाँ होता है? भोग-वासना रहने से सम्पूर्ण त्याग नहीं होता। तो भी यदि एकान्त व्याकुल हो तो फिर होता है। ठाकुर कहते, ''मने प्राणे बोलने से वे सुनेंगे ही सुनेंगे।'' इतना जोर देकर कहते हैं। ऐसी तीव्र व्याकुलता तो भोगान्त बिना हुए होती नहीं। भोग के लिए संसार का काज करना पड़ता है।

''नित्य साधुसंग, साधुसेवा, नित्य जप, ध्यान, प्रार्थना और बीच-बीच में निर्जनवास— ये सब करते-करते उनकी कृपा होती है।

''कर्म बाकी रहने से साधुलोग भी निश्चिन्त होकर नहीं बैठ सकते। तीर्थों-तीर्थों घूमते हैं— 'बहूदक'। 'कुटीचक' नहीं हो पाते। बहुत घूमने-घामने के पश्चात् 'क्षोभ-वासना' मिटने पर तब मन स्थिर होता है। तब एक स्थान पर बैठता है और ईश्वर-चिन्तन करता है। उस समय मन का यही भाव, सब ईश्वर की इच्छा से होता है। चेष्टाशून्य होने पर ही तब उनमें मनोनिवेश करता है।

''संसार में रहने से मन-आकाश में मेघ उठेगा ही। यही मेघ सूर्य को— भगवान को ढक देता है। उसी अन्धकार में, उसी विपद में ईश्वर को तब व्याकुल होकर प्राण भर कर पुकारना चाहिए— 'रक्षा करो प्रभु, सुमति दो कहकर'।

''वर्षाकाल में आकाश जैसे हुआ करता है। अभी मेघ आया; सूर्य को ढक डाला, सब अन्धकार, थोड़ी हवा चली उड़ाकर ले गई; और फिर प्रखर धूप। बीच-बीच में और फिर 'कालवैशाखी'* भी चढ़ती है— अन्धकार,

---

* कालवैशाखी = चैत्र-वैशाख की सन्ध्या का आँधी-पानी-तूफान।

झड़, गर्जन, वृष्टि। जिस देश में मेघ, बादल कम होता है, वहाँ पर वास करना। वहाँ पर सारा वर्ष सूर्य किरण देता है। ईश्वर के संग में युक्त होकर, योगी होकर रहना। 'तस्मात् योगी भवार्जुन'।

''ठाकुर आए ही हैं भक्तों का मेघ काटने के लिए। अब वर्षा कट गई है, उज्ज्वल सूर्यकिरण है। जितना कर सको, उपभोग करो। उनका आगमन ही भक्तों को उठाने के लिए है। जो गृहस्थ में रहते हैं, वे खूब अटक जाते हैं कि ना! उनके लिए ही अधिक चिन्ता है। जिन्हें घर से बाहर ले जाते हैं, उनका तो मुक्त शरीर। उनके लिए इतना चिन्तन नहीं करना पड़ता। बाप-माँ का चिन्तन लड़के के लिए अधिक होता रहता है— उस पर नाबालिग, पंगु (लाचार), असमर्थों के लिए (और अधिक) चिन्तन है। भय क्या? ठाकुर हैं, माँ पीछे हैं।''

पाठ शेष हुआ। कुछ देर सब चुप करके बैठे रहे। पुनराय श्री म बातें करते हैं।

श्री म *(सहास्य)*— द्विज को घर में मारते हैं, बुरा-भला कहते हैं— ''क्यों ठाकुर के पास जाता है''? जभी उसको ठाकुर सिखाते हैं। कहते हैं, जिसको ज्ञान हो गया है उसे निन्दा का क्या भय? कूटस्थ बुद्धि है उसकी— जैसे लुहार की निहाई। कितनी चोटें पड़ी हैं, तब भी निर्विकार। ये सब भक्तों के जीवन के mile stones, practical Vedanta (दिशादर्शन, सच्चे जीवन का वेदान्त)।

''और भी एक शिक्षा है। स्त्री, पुत्र, कन्या— जल के बुलबुले हैं। एक बड़े बुलबुले के संग छोटे-छोटे बहुत सारे रहते हैं। जल ही सत्य है अर्थात् ईश्वर ही सत्य है। बुलबुले अर्थात् संसार अनित्य, दो दिन के लिए।

''और भी एक। जितने पुरुष सब राम के अंश से राम; और स्त्रियाँ सीता के अंश से सीता हैं। ईर्ष्या, द्वेष, काम, क्रोध इत्यादि जब मन में आएँ, उसके लिए यही है महामन्त्र— ब्रह्मास्त्र।

''ठाकुर अपने जीवन द्वारा शिक्षा देते हैं। तभी भक्तलोग ग्रहण करेंगे। कहा था, 'अब हठात् भूल हो जाती है'। ''किन्तु जेने शुने होबार जो नाई।''

अर्थात् जानबूझ कर सत्य छोड़ना नहीं। कहते हैं, माँ को सब दे दिया है, किन्तु सत्य-असत्य दे नहीं सका। ऐसी अवस्था अवतार की एक-आध बार होती है। और साधारण मनुष्य सर्वदा भूला हुआ है। ऐसा क्यों कहा? क्योंकि शरीर धारण करने पर ये सब झोंके, आँधी-तूफाान-बवण्डर होंगे ही। किन्तु जानबूझ कर कभी भी सत्य नहीं छोड़ेगा। 'सत्य ब्रह्म'।"

रात्रि दस।

(4)

मॉर्टन स्कूल। चारतल पर श्री म का कक्ष। अभी-अभी वे ठाकुरबाड़ी से लौटे हैं। अब अपराह्न साढ़े चार। ग्रीष्मकाल। सूर्य का तेज प्रखर। दस के समय वे श्री ठाकुरबाड़ी में गए थे। दोपहर का स्नान-आहार वहाँ पर ही किया। विश्राम के पश्चात् सूर्य का तेज कम होने पर लौट आए हैं।

ठाकुरबाड़ी गुरुप्रसाद चौधरी लेन में है। यह श्री म का है पैत्रिक भवन। बड़ा परिवार है। उनके अपने हिस्से में श्री श्रीरामकृष्ण देव की नित्यसेवा रही है। श्री श्रीमाँ ने अपने हाथ से उसी बाड़ी में ठाकुर को स्थापन किया है। तब से वह ठाकुरबाड़ी नाम से परिचित है।

अब परिवार सब उसी बाड़ी में है। बीच-बीच में उनकी खबर लेने और श्री श्रीठाकुर-सेवा का पर्यवेक्षण करने श्री म वहाँ जाते रहते हैं। अन्तेवासी स्कूलबाड़ी पर प्रहरी थे। श्री म के आने पर वे बाहर चले गए।

सन्ध्या का एक घण्टा बाकी है। बहु भक्त चारतल की छत पर बैठे हैं। मनोरञ्जन, माखन, गदाधर, विनय, डॉक्टर, बलाइ, शुकलाल, शान्ति, जगबन्धु प्रभृति श्री म की प्रतीक्षा कर रहे हैं। सन्ध्या हुई-कि-हुई। श्री म अपने कमरे से बाहर होकर छत पर आए। हरिकेन (लालटेन) का आलोक आने के संग-संग ही कुछ क्षण ईश्वर-चिन्तन करते हैं। फिर ईश्वरीय कथा। अब आठ।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— जो जिसकी सेवा करता है, वह उसी की सत्ता पाता है। *(शान्ति के प्रति)* तुम यदि विद्यासागर महाशय की सेवा करो तो फिर दान,

दया, परोपकार आदि लेकर रहना पसन्द करोगे। और फिर यदि सुरेन बनर्जी महाशय की सेवा करो तब तो फिर पॉलिटिक्स खूब अच्छी लगेगी। सी०आर० दास महाशय की सेवा करने से स्वराज–लाभ में रुचि होगी। और गुरु–सेवा से ईश्वर–लाभ होगा। जो जिसको पूजता है, वह उसकी सत्ता पाता है।

श्री म *(सब के प्रति)*— गुरु–सेवा करना अर्थात् higher man (उच्चतर मानव) की पूजा करना। अर्थात् higest ideal (सर्वोच्च आदर्श) की उपासना करना। ईश्वर ही हैं गुरु–रूप में प्रकाशित।

श्री म *(शुकलाल के प्रति)*— ठाकुर थे उत्तम वैद्य— अवतार, गुरु। वे जोर करके सेवा करवा लिया करते। "यहाँ के लिए एक सतरंजी (दरी) लाना। स्वयं जाकर खरीद कर लाओगे, दूसरे के द्वारा नहीं," यह बात एकजन से कही थी। जानते हैं दूसरे के हाथ से खरीदवाएगा। जभी पहले से ही कह दिया, आप खरीद कर लाने के लिए। क्यों करवाते इस प्रकार सेवा? भक्तगण ये सब बातें पीछे स्मरण करके शान्ति पाएँगे।

"एकजन से कहा, "तुम एक बाटी (कटोरा) लाना"। अन्य एक ने कहा, "आपने तो अमुक से कहा है बाटी लाने के लिए।" ठाकुर ने उत्तर दिया, "हाँ, उसे लाने दो। वह भी लाएगा।" दो बाटियों का क्या प्रयोजन उन्हें? उसका अर्थ है सेवा करवा ले रहे हैं भक्तों के अपने ही मंगलजन्य।

"किसी से शायद कह दिया, "पैर पर कुछ काट गया, थोड़ा हाथ फेर दो तो।" भक्त पाँव पर हाथ फेरना आरम्भ करता है। तब कहते हैं, "देखो, (अपनी छाती पर हाथ रखकर) यहाँ पर यदि कोई रहते हैं तो फिर हाथ फेरना भला है।" अर्थात् फील्ड में नीचे उतारकर तब कहा युक्ति दिखाकर। भक्तलोग युक्तिवादी हैं कि ना *(हास्य)*।"

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— वेद में हैं ये सब बातें। 'यस्य देवे पराभक्ति यथा देवे तथा गुरौ।' गीता में श्री कृष्ण इसी की प्रतिध्वनि करते हैं। 'तद्विद्धि प्रणिपातेन, परिप्रश्नेन सेवया।' (गीता 4:34— भली प्रकार दण्डवत् प्रणाम तथा सेवा और निष्कपट भाव से किए हुए प्रश्न द्वारा उस ज्ञान को जान)। गुरु–सेवा बिना ज्ञान–लाभ नहीं होता, भगवान में भक्ति नहीं होती।

(कार्तिक के प्रति) और एक क्या है डॉक्टर बाबू?

डॉक्टर— इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन।
न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति॥ (गीता 18:67)

[अर्थ— तेरे हित के लिए कहे हुए इस गीता रूप परम रहस्य को किसी काल में भी न तो तपरहित मनुष्य के लिए कहना चाहिए, और न भक्तिरहित के प्रति, तथा न बिना सुनने की इच्छा वाले के ही प्रति कहना चाहिए, एवं जो मेरी निन्दा करता है, उसके प्रति भी नहीं कहना चाहिए।]

श्री म *(सब भक्तों के प्रति)*— देखो, कहते हैं 'न चाशुश्रूषवे वाच्यं' जिसने गुरुसेवा नहीं की है उसको यह गुह्य बात नहीं कहना— आत्मज्ञान की बात। इसमें क्या कोई पक्षपातपन है? वह नहीं। शत्रु-मित्र में वे समान हैं— जिनके मुख से यह बात निकली है। सूर्य जैसे अच्छे-बुरे सब को किरणें देते हैं, वैसे ही श्री कृष्ण की दृष्टि सबके ऊपर समान है। कैसे भिन्न दृष्टि होगी? वे स्वयं ही तो ये सब होकर रह रहे हैं। उनको छोड़ तो कुछ भी नहीं है। तब फिर विषमभाव कैसे हो! क्राइस्ट ने तभी तो कहा था, "...for he maketh his sun to rise on the evil and on the good:" (सूर्यकिरण अच्छे-बुरे सबके ऊपर समभाव से वर्षित होती है)। तब भी ऐसी विषम अवस्था? इसका अर्थ है कि सब की तो फिर एक stage (अवस्था) नहीं है— spiritual evolution (आध्यात्मिक विकास) के पथ में। इसीलिए ये सब भिन्न-भिन्न व्यवस्थाएँ हैं। जो केवल उनको, ईश्वर को ही चाहते हैं— संसार की कोई भी वस्तु नहीं— केवल उनके लिए ही दूसरी व्यवस्था है।

"मोक्षशास्त्र सबके लिए नहीं है। गुरुसेवा करने से पता लगता है कि एकान्त मन से ईश्वर में मन आ रहा है। केवल उनको चाहता है, अन्य कुछ नहीं। तब भक्त भगवान में प्रीति के लिए गुरु की शरण लेकर तपस्या करता है। गुरु के प्रति प्यार धीरे-धीरे भगवान में संचारित होता है। अन्त में देख लेता है कि गुरु और भगवान अभेद।

"धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष— ये चार मनुष्य-जीवन के objectives (उद्देश्य) हैं। इनमें से गीता में केवल मोक्ष शास्त्र की बात है। गीता की व्यवस्था केवल मोक्षकामी के लिए है। वे ही इसका अर्थ समझ सकेंगे, अन्य

नहीं समझ सकेंगे। इन्हें preliminary requirement (प्राथमिक साधन) पता हैं। वे पार होने पर तब उनका दर्शन। जभी वे झट से पकड़ सकते हैं next step (अगला साधन) क्या है? सोचो एम०ए० क्लास का पाठ पञ्चम श्रेणी के छात्र को बताने पर क्या वह समझ सकेगा? नहीं, उसके कार्य में कुछ नहीं लगेगा। उसी प्रकार यहाँ पर भी श्री कृष्ण ने वही कहा है— जिनमें पालन करने की शक्ति है, उन्हें ही बताने को कहते हैं। 'अधिकारीवाद' जगत में सर्व विषयों में ही कार्यकरी है।''

श्री म *(जनैक युवक भक्त के प्रति)*— जो केवल ईश्वर को चाहता है, वह 'अखण्डेर घरेर लोक' ठाकुर कहा करते। अखण्ड के घर के लोगों का लक्षण, वह भी बतलाते हैं। उसका प्रथम चिह्न हुआ वे लोकमान्य नहीं चाहते, देहसुख नहीं चाहते। केवल शुद्धाभक्ति, ज्ञान चाहते हैं। तभी तो ठाकुर लोकशिक्षा जन्य स्वयं माँ से इन्हीं की प्रार्थना किया करते थे। और एक लक्षण है, वे निरहंकार होंगे। 'मैं उनका हूँ' मात्र यही अहंकार रहता है। जागतिक कोई भी पदार्थ के संग निजको identify (अंगीभूत) नहीं करता। कहते, ये लोग जैसे मूली का पौधा, खींचने से जड़ समेत उखड़ आता है। और जिन भक्तों के मन कुछ ईश्वर में, कुछ संसार में हैं उनके लिए कहते, 'खण्डेर घरेर लोक।' उनका अहंकार नहीं जाता। वे जैसे अश्वत्थ (पीपल) का पेड़। हजार काटो, कोंपलें निकलेंगी ही। कैसा आश्चर्य, ठाकुर एक मुहूर्त के लिए भी भूले नहीं, 'ईश्वर ही सब— माँ ही सब होकर रह रही हैं, माँ ही सब करती हैं'।

''दो contradictory points (विपरीत भावों) पर ठाकुर move (आना-जाना) करते थे। एक माँ, अन्य बेटा। जो अखण्ड सच्चिदानन्द हैं, वे ही ब्रह्म, वे ही माँ। स्वरूप में रहते समय ब्रह्म। और सृष्टि-स्थिति-प्रलय करते हैं, तब माँ! और एक 'बेटा' माने भक्त; प्रचार का, प्रकाश का यन्त्र जगत में। जीव और भक्त इसका अवलम्बन लेकर माँ जगत का good and evil (भला, मन्दा) समस्त प्रदर्शन करती हैं— जैसे यह हो exhibition ground (प्रदर्शनी) क्षेत्र। 'यह जीवत्व किस प्रकार perfectly, saturated with (सम्पूर्णरूप से ओतप्रोत होवे) शिवत्व से', वही ठाकुर जीवन में दिखा

गए हैं। भेद न रहे तो लीला नहीं होती। तभी माँ और पुत्र। और फिर माँ ही पुत्र, किंवा पुत्र ही माँ— सम्पूर्ण रूप से ठाकुर को यह ज्ञान था। ये inconceivable points (अभावनीय दो भाव) जिसमें meet (मिलते) हैं, उसको ही अवतार कहते हैं। इधर से जाने पर अचिन्त्य भेद-अभेद दिखता है। और केवल ऊपर से देखने पर 'एकमेवाद्वितीयम्'— ब्रह्म सत्य, जगत मिथ्या— यही अद्वैत-भाव है।

"अखण्ड abstract term (अति सूक्ष्म तत्त्व) है कि ना! तभी इसी को समझाने के लिए वे बार-बार अवतार होकर आते हैं। अवतार concrete— सारवान (वास्तविक) हुए। अवतार के बिना मनुष्य ईश्वर को पकड़ नहीं सकता, समझ नहीं सकता। मनुष्य के मन की गठन ही ऐसी है, concrete (ठोस वस्तु) के बिना कुछ समझ नहीं सकता। अवतार के जीवन और कार्य को देखकर ही धारणा होती है कि 'अखण्ड' क्या है। इत्र को जैसे खाली नहीं लिया जाता— रूई पर लेना पड़ता है, वैसे ही अवतार को देखने से अखण्ड का ज्ञान होता है। अवतार आदि ईश्वरकोटिगण अखण्ड के घर के लोग हैं।"

श्री म अब तक श्रीरामकृष्ण कथामृत-सागर में निमग्न थे। तभी देह का ज्ञान नहीं था। ग्रीष्मकाल, दारुण गरम। वृद्ध शरीर में इसका बोध और भी अधिक होता है। कुछ देर तभी चुप करके बैठे रहे— क्लान्ति का भाव दिखाई देता है। तब भी मन ईश्वरीय विषय में लगा हुआ है। कहते हैं, "आहा, यह स्थान (छत) कैसा सुन्दर है, तपस्या का स्थान है। चारों ओर का कुछ भी दिखाई नहीं देता।"

शुकलाल ने भक्तों में प्रसाद वितरण किया। फिर 'कथामृत'-पाठ होने लगा, द्वितीय भाग, चतुर्दश खण्ड— श्रीरामकृष्ण का चैतन्यलीला-दर्शन। शान्ति पढ़ते हैं। बीच-बीच में बातें भी होती हैं।

एक भक्त *(श्री म के प्रति)*— हाजरा महाशय को ठाकुर ने एक दिन 'पाजी' क्यों कहा था?

श्री म— क्योंकि नरेन्द्र को उल्टा मत सिखाया था। हाजरा महाशय शक्ति नहीं मानते थे; कहते 'शक्ति मिथ्या है'। आज भी पढ़ा गया है, हाजरा महाशय कहते हैं— "चैतन्यलीला, यह सब शक्ति की लीला है— विभु

इसमें नहीं हैं''। ठाकुर कहते हैं विभु के बिना कहीं भी शक्ति नहीं। ''ब्रह्म और शक्ति अभेद'' जैसे जल और जल की हिमशक्ति, अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति। ब्रह्म विभु रूप में सर्वभूतों में हैं। तो भी शक्ति के प्रकाश का तारतम्य है— कहीं अधिक, कहीं पर कम।

''शंकराचार्य भी शक्ति मानते थे। कितने स्तव-स्तुति उन्होंने लिखे हैं। कहते हैं, 'कुपुत्रो जायते कच्चिदपि कुमाता न भवति।' ब्रह्म बिना शक्ति नहीं होती। और शक्ति बिना लीला नहीं होती। चैतन्यदेव ने भी शक्ति की आराधना की थी। श्री राम और श्री कृष्ण ने शक्ति की पूजा की थी।

''ठाकुर नरेन्द्र को जगत-गुरु बनाएँगे। जभी शक्ति सत्य है, यही शिक्षा देते हैं। हाजरा कहते हैं, शक्ति मिथ्या है। जभी कहा था, 'तुम तो बड़े पाजी'। शक्ति की सहायता बिना लोकशिक्षा नहीं होती। नरेन्द्र पहले शक्ति को मानते नहीं थे। पीछे मान गए थे। जभी तो उनके द्वारा जगत को शिक्षा हुई।

''ठाकुर कहते, जब तक देहबुद्धि है तब तक शक्ति के इलाके में हो। उनके वेदान्त-साधन के गुरु तोतापुरी भी शक्ति को मान गए थे अन्त में, ठाकुर के संस्पर्श में रहकर। रोग-भोग भोगकर अन्त में मानना पड़ा।

''हाजरा महाशय को क्या गाली, जैसे मनुष्य को देता है, दी है ? नहीं, वैसे नहीं। उसमें विष नहीं। केवल शासन किया था, जैसे पिता पुत्र को डाँटता है। उनमें द्वेष, ईर्ष्या नहीं था। वे सबके पिता। हाजरा महाशय को तो उन्होंने ही वहाँ पर रखा था। और फिर अपने दूध का भाग उनको देते थे।''

बड़े जितेन— इतना जलाते थे तब भी क्यों पास रखा— जैसे एक standing criticism (स्थायी निन्दक)।

श्री म *(सहास्य)*— उसका उत्तर ठाकुर स्वयं ही दे गए हैं। कहा था, जटिला-कुटिला के बिना लीला की पुष्टि नहीं होती। राधाकृष्ण-लीला की उज्ज्वलता जटिला और कुटिला की बाधा से वर्धित हुई है। ये श्री राधा की सास और ननद थीं। श्रीकृष्ण के साथ श्रीराधा के मिलन में वे सर्वदा बाधा

देती थीं। उससे ही श्रीराधा की व्याकुलता-वृद्धि होती थी। हाजरा महाशय की उल्टी बातों से ठाकुर के सिद्धान्तों का सुप्रकाश हुआ है। जैसे काली मखमल पर डायमण्ड— हीरे की उज्ज्वलता-वृद्धि होती है, वैसे ही हाजरा महाशय कहते हैं— ईश्वर-लाभ होने से ईश्वर की भाँति षड् ऐश्वर्यशाली होता है। ठाकुर ने protest (आपत्ति) की इस बात पर। ठाकुर जैसा शुद्धभक्त कभी भी ऐश्वर्य नहीं चाहता। ठाकुर कहते हैं, ''जिसने कभी भी ऐश्वर्य-भोग नहीं किया है, वही अधीर होकर ऐश्वर्य-ऐश्वर्य करता है''।''

'कथामृत'-पाठ होता है। श्रीरामकृष्ण स्टार थियेटर में चैतन्य-लीला-दर्शन करते हैं। बीच-बीच में भावसमाधि में निमग्न— संग में श्री म और बाबूराम।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— यही जो 'थियेटर देखने जाना' यह क्या हठात् कुछ हुआ? नहीं तो। पहले से ही निश्चय था वहाँ पर जाना होगा। यही है अवतार-लीला का एक श्रेष्ठ अध्याय। भगवान का नाम है पतितपावन। यहाँ पर यही भाव ही प्रकट हुआ। भक्त जहाँ पर ही क्यों न रहे, भगवान उनके पास जाएँगे। सूई चुम्बक को आकर्षित करती है। और कभी-कभी चुम्बक भी सूई को आकर्षित करता है। भगवान अन्तर्यामी हैं। वे भक्तों के हृदय की पुकार सुन सकते हैं। स्वयं जाकर पकड़कर अपने जन को ले आते हैं जैसे बाप-माँ जाकर अपनी सन्तान को पकड़कर ले आते हैं।

''तब अनेक लोग थियेटर से घृणा करते थे क्योंकि लड़कियाँ उसमें पार्ट लेती हैं। ब्राह्मसमाज के एकजन ने कहा था, ''जब परमहंस महाशय के पास थियेटर के लोगों ने आना-जाना आरम्भ कर दिया तब हमने वहाँ पर आना-जाना बन्द कर दिया।'' वे good boy (भले लड़के) बन गए और क्या! किन्तु भगवान हृदय देखते हैं भक्त का, बाहर का तो नहीं। बात भी नहीं, बाहर का काज भी नहीं— केवल भीतर ही। भक्तलोग जब खूब अटक जाते हैं तभी प्राणपन से उन्हें पुकारते हैं। गिरीशबाबू के अन्तर की डाक (पुकार) उनके कान में पहुँची थी। जभी गए थे उन्हें खींच कर अंक

में उठाकर लाने। जाएँगे नहीं ? पुत्र को कौन छोड़ सकता है ? अपना जन जो !

" 'चैतन्यलीला' ही तो गिरीशबाबू की पूजा का नैवेद्य। इस नैवेद्य द्वारा उन्होंने भगवान-लाभ किया। इसमें कितनी भक्ति की बातें हैं। जिस-तिस का कार्य नहीं ऐसी रचना। नाटक खेलने वालों का अभाव नहीं; किन्तु ईश्वर पर ऐसी आन्तरिक भक्ति कितने जनों की होती है ? गिरीशबाबू में ये दो शक्तियाँ रहती हैं— काव्यशक्ति और ऊर्जिता भक्ति। पढ़ो ना शेक्सपियर, ऐसे उच्च-भाव वहाँ पर कहाँ हैं ? किन्तु कालिदास पढ़ो, उसमें पाओगे।

"कितने बड़े भक्तवीर गिरीशबाबू। सुना जाता है प्रथम जीवन में बहु तपस्या की है। नित्य गंगा स्नान करके हविष्यि* खाकर सर्वदा शिवनाम जप किया करते। केश, दाढ़ी रखते, नंगे पाँव चलते— जैसा तपस्वी लोग करते हैं। सोचते थे इससे ही ईश्वर-दर्शन होगा, केवल तपस्या से। किन्तु इतना करने पर भी नहीं हुआ। उनकी कृपा बिना क्या होता है ? कृपा-लाभ उनके जीवन का अन्तिम अध्याय है।

"तपस्या द्वारा उनकी प्राप्ति नहीं हुई। केवल पुरुषार्थ से उन्होंने दर्शन नहीं दिया। तब ही उल्टा रास्ता पकड़ लिया। थियेटर में उतरे। नाटक लिखने आरम्भ किए।

"थियेटर के आनुषंगिक (साथी) सब व्यसन एक-एक करके दिखाई दिए। ऐसा भी सुना जाता है कि कहा था, 'यदि ईश्वर अपने आप गुरुरूप में आकर खींचेंगे, तब ही लौटूँगा; नचेत् गिरीश चल दिया उल्टे पथ पर।' वीरभक्त हैं कि ना ! कुछ भी गोपन नहीं उनमें। प्रकट सब कुछ करने लगे। कौन क्या कहेगा, उस पर भ्रूक्षेप भी नहीं। यह भी पुरुषार्थ है चाहे; किन्तु उल्टा पुरुषार्थ। कौन कर सकता है इस प्रकार ?

"चल तो दिए उल्टे पथ पर, किन्तु भक्त तो छिपा रहा उनके भीतर। बाहर चाहे कुछ भी करें, भीतर का भक्त तो है अमर, शुद्ध, बुद्ध। नाट्यसम्राट

---

* घृतयुक्त अन्न, निरामिष भोजन।

गिरीश, और भक्तशिरोमणि गिरीश इन दोनों में लड़ाई लग गई। भक्त की ही जय हुई अन्त में। अभिमानी पुत्र को स्नेहमय पिता गोद में उठा कर ले आए। इसी महाकार्य के साधन के लिए ही हुआ ठाकुर का थियेटर-गमन। यही तो है उनके पतितपावन नाम का नूतन संस्करण। गिरीशबाबू के संग में और भी कितने लोगों का उद्धार हो गया। भक्त की मानरक्षा हुई।

''अन्त में फिर थियेटर करना नहीं चाहते हैं। ठाकुर बोले, ''ना, जैसे कर रहे हो, करो। इससे भी माँ का नाम प्रचार होता है, लोक-शिक्षा होती है।'' जिस विष से प्राण जाता है, कुशल चिकित्सक के हाथ में पड़ने से उससे ही प्राण-रक्षा होती है। बुद्ध, यीशु, चैतन्य— इन सबके जीवनों में भी ऐसी लीला का अभिनय दिखाई देता है।

''गिरीशबाबू अन्य के निकट सिंह। किन्तु भक्तों के पास एकदम शिशु। अन्तर तो इतना महत् था। हम जाते, तब कार्य छोड़कर उनकी बातें बताना आरम्भ कर देते— क्या दीन-भाव, क्या आर्ति (दुःख पूर्ण स्वर)! तभी तो ठाकुर ने कहा था, ''गिरीशेर पाँचसिके पाँच आना विश्वास''। (गिरीश का है पाँच चवन्नी पाँच आना विश्वास)। उन्होंने ही तो पकड़ लिया था अवतार कहकर, और जभी औरों को भी बताने लगे।''

श्री म *(शुकलाल के प्रति)*— ''...he maketh his sun to rise on the evil, and on the good''— समदर्शी भगवान। सूर्य की न्यायीं उनका प्रेम सर्वभूतों में है समान। गिरीश-उद्धार देखकर औरों को भी भरोसा हुआ। क्रमशः सब सुधरने लगे। बाजारू औरतें तक ऊपर उठने लगीं। क्राइस्ट की एक भक्त मेरी, खूब बड़े घर की स्त्री थी। पिता-माता की मृत्यु के पश्चात् अन्य प्रकार की हो गई थी। किन्तु भीतर शक्ति थी। जभी खूब अनुशोचना हुई। तब क्राइस्ट ने जाकर उद्धार किया। उन्हें ही क्राइस्ट ने मृत्यु के पश्चात् प्रथम दर्शन दिया था। जानते हो, कितना प्यार किया था! उनका निवास स्थान था मैगडाला (Magdala) प्रासाद।

''अम्बपाली का उद्धार किया था बुद्ध ने। और चैतन्यदेव ने प्रव्रज्या (विदेश गमन, संन्यास) के समय और एक धनवन्ती पतिता को उठा दिया

था। उन लोगों का कार्य ही यही है। वे लोग आते ही हैं इसीलिए— भक्तों को उठाने। इतना नीचे गिर गए हैं कि उन्हें आना पड़ता है उन्हें उठाने के लिए, अवतार होकर। अवतारगण भीतर देखते हैं। भीतर में भक्ति देखकर, साफ देखकर, एक बहाने से जाकर पकड़कर ले आते हैं। साधारण मनुष्य इस लीला को क्या समझेगा ? 'कहत कबीर सुनो भाई साधो— सब सन्तन के साथ मैं।'

''प्रासाद के ऊपर से क्राइस्ट को मेरी ने एक दिन देखा था। उसके पश्चात् से ही अनुशोचना आरम्भ हो गई। तब फिर उद्धार।''

मॉर्टन इंस्टिट्यूशन, कलकत्ता, 21 अप्रैल, 1924 ईसवी;
8वाँ वैशाख, 1331 (बंगला) साल, सोमवार, कृष्णा तृतीया तिथि।

षोडश अध्याय

कलि का निदान : व्याकुल क्रन्दन

(1)

कलकत्ता, मॉर्टन स्कूल। चारतल की छत। अपराह्न पाँच। श्री म पश्चिमास्य चेयर पर बैठे हैं। सम्मुख भक्तगण— डॉक्टर बक्शी, छोटे नलिनी, विनय, 'भवराणी' (भोलानाथ मुखर्जी), बड़े जितेन, भाटपाड़ा के ललित, गदाधर, बसन्त, 'भीम', जगबन्धु प्रभृति उपस्थित। तनिक पश्चात् भाई भूपति महाराज के एकजन भक्त आ गए— संग में एक बन्धु।

आज अमावस्या है— 55 दण्ड 41 पल; 3 मई 1924 ईसवी, 20वाँ वैशाख, 1331 (बंगला) साल। शनिवार के कारण अनेक जन ही ऑफिस से लौटते हुए आए हैं। शास्त्रादि पाठ की बातें भक्तों के मध्य में परस्पर होती हैं।

श्री म *(भाटपाड़ा के ललित के प्रति)*— शास्त्र केवल पढ़ने से क्या होगा? शास्त्र केवल पढ़ने के संग धर्म का कोई भी सम्पर्क नहीं है। संग-संग विवेक-वैराग्य रहे— शास्त्र-वाणी पालन की चेष्टा रहे, तब ही तो शास्त्र पढ़ना सार्थक होता है। ठाकुर तभी तो कहते, केवल पुस्तक पढ़ना! शास्त्र पढ़ने से क्या होता है? धारणा करने की चेष्टा करनी चाहिए। नहीं तो जैसे बाजे के बोल मुखस्थ करना है। हाथ में लाना चाहिए। तब ही तो अपना और अन्य का उपकार होता है। तभी ठाकुर कहते, "चील, गिद्ध खूब ऊँचाई पर उड़ते तो हैं किन्तु दृष्टि रहती है मरघट पर— कामिनी-काञ्चन पर"। केवल पाण्डित्य में कुछ भी नहीं है। तपस्या करनी चाहिए, शास्त्र की वाणी का साधन करना चाहिए, तब ही तो शास्त्र का अर्थ समझ में आने वाला होता है, धारणा होती है।

''शास्त्र में फिर एक और विपद प्रवेश कर गई थी— Interpreters (भाष्यकारों) ने अपने-अपने opinion (अभिमत) डालने आरम्भ कर दिए थे। ऐसा करके ही इतनी interpolation (प्रक्षिप्त अंश) की सृष्टि हो गई है। ठाकुर इसीलिए तो कहते हैं, शास्त्र गुरुमुख से, अवतार के मुख से सुनना चाहिए। शास्त्र में रेत और चीनी मिली रहती है। केवल गुरु रेत हटाकर चीनी ही उठाकर मुख में डाल सकता है। गुरु मुख के बिना पढ़ने से विपद-समूह में पड़ना पड़ता है— अधिकतर संशय में पड़ना पड़ता है। ''रोगी यदि बैठा था, वैद्य ने आकर लिटा दिया''— यह अवस्था होती है, ठाकुर कहते।

''वर्तमान समय बड़ा संकटजनक है— नाना मतवादों के संघर्ष का समय है। एक ओर भारतीय नाना धर्ममतों का संघर्ष है, उस पर फिर ईसाई, मुसलमान धर्ममतों का विकास हुआ है। ये समस्त मत ही चिरसुखशान्ति-प्राप्ति को आदर्श रूप में मान्य करते हैं। मतभेद रहने पर भी उस मत में सब एक हैं। इन सबके साथ एक नूतन महाविपद का संघर्ष उपस्थित हुआ है, पाश्चात्य जड़वाद (materialism) का। यही तो हुआ है प्रधान प्रतिपक्ष। चिरकाल से ही यह मतवाद चल रहा है। किन्तु अब 'साईंस' के प्रभाव में इसका विकट रूप प्रकट हुआ है। आहार, विहार, मैथुन, भय— इस मतवाद का सार यही है। इससे ऊपर उठ नहीं सकते। सोचता है good life lead (अच्छा जीवन व्यतीत) करूँगा, किन्तु कार्यक्षेत्र में वैसा होता नहीं। स्वाभाविक काम-क्रोध शत्रु होकर मनुष्य को पशुवत् आचरण में प्रवृत्त करवा देते हैं। इस देश के ऋषियों को मनुष्य के इन स्वाभाविक पशुवत् आचरण का संवाद विशेष रूप से पता था, तभी उन्होंने इसी भाव को transform (बदलने) के लिए उपाय खोज लिया था। उसी को समाज में सिखा दिया था। उसके ही प्रभाव से भारत धर्मक्षेत्र हुआ था। वही तो है मनुष्य के देवत्व का आविष्कार। मनुष्य 'अमृतस्य पुत्राः'— इसी सत्य का ही उन्होंने दर्शन किया था। इसी को ही समाज के सब स्तरों पर अछेद्य (inseparable) रूप में fit in (अनुप्रवेश) करवा दिया था। इसी देवत्व की प्रतिष्ठा के लिए उन्होंने प्रधान चार पथ आविष्कार किए थे— ज्ञानयोग, राजयोग, भक्तियोग, कर्मयोग।

ठाकुर कहते, कलिकाल में मनुष्य का मन दुर्बल, आयु कम है। एक समय

ही न खाने से प्राण 'जाय-जाय' होता है। तभी इसी कालजन्य वे भक्तियोग की व्यवस्था दे गए हैं। यही तो है युगधर्म। इस भक्तियोग का भी एक विशेष नूतन संस्करण उन्होंने स्वयं आविष्कार किया है। इसी पथ से ही उन्होंने ब्रह्मदर्शन किया है। वैसे ही करने का उपदेश लोगों को दिया है। कहा, निर्जने गोपने व्याकुल होकर रो-रो कर उन्हें पुकारो। बोलो, हे प्रभु! दर्शन दो, दर्शन दो। निजगुणे दर्शन दो। मैं साधनहीन, भजनहीन, विवेक-वैराग्यहीन हूँ— कृपा करके दर्शन दो। और फिर सच्ची प्रतिज्ञा करके कहा, आन्तरिक भाव से उन्हें कहने पर दर्शन देंगे ही देंगे। यह बात ईश्वर को छोड़ और कौन कह सकता है? ईश्वर स्वतन्त्र, वे दर्शन देंगे ही, निश्चय करके यह बात केवल ईश्वर ही कह सकते हैं। उन्होंने जब प्रतिज्ञा करके कहा है तब तो कहना ही पड़ेगा— वे ईश्वर हैं, मनुष्य रूप में आए हैं, सीधा पथ दिखा देने के लिए।

"ये समस्त हैं उनके महावाक्य। ये जैसे कसौटी है, इस पर घिस कर मिला कर लो— जैसे सुनार लेता है। जड़वाद के संघर्ष से पीड़ित मानव-मन के लिए वर्तमान संशय-सागर रूप महावर्त में ये सब महावाक्य जैसे 'life belt' (जीवन-तरी) हैं।

श्री म के ऊपर से एक चील उड़ती जा रही है। इसे देखकर श्री म कुछ भाव रहे हैं। बोले—

आहा, इसे देखिए कैसा विचित्र जीव उन्होंने रचा है। जहाँ पर जिसका प्रयोजन है, सब एकदम ठीक है। हमारे हाथ जुड़े रहते तो हम भी उड़ सकते थे। 'एन्जलों' (देवदूतों) के ऐसे पंख होते हैं, सुना जाता है। मनुष्य अपने को बड़ा स्याना— बड़ा बुद्धिमान समझता है। एक बार इधर दृष्टि करने पर वही अहंकार टूट जाता है। मनुष्य, जीव-जन्तु आदि का देह-निर्माण, जन्म और जीवन-परिचालन की ओर गम्भीर मनोयोग देने से अन्त में मन विश्वस्रष्टा के चरणों में जाकर उपस्थित होता है। एक निमेष में इस विश्व की सृष्टि होती है। उनके संग compare (तुलना) करने पर अपनी क्षुद्रता पकड़ी जाती है। संग-संग हताश भाव आता है और उसी के संग में जीव के स्वरूप का

ज्ञान–लाभ होता है— जीव ईश्वर की सन्तान, अमृत की सन्तान है। वैसा होने पर ही तो कार्य बन गया। अब यही भाव ही लिए रहो संसार में— वैसा होने पर फिर शोक, मोह, दुःख में पथभ्रान्त नहीं होना पड़ेगा। दुःख, कष्ट सहन करने की शक्ति आएगी— ईश्वर पर विश्वास, भक्ति बढ़ेगी। मन में होगा, मेरा अपना जन है ईश्वर— पिता, माता, बन्धु। बस, वैसा होने पर ही अनेक शान्ति! बाकी साक्षात् दर्शन, वह तो उनकी इच्छा। इस अवस्था को ही तो लक्ष्य करके ठाकुर कहते हैं, थोड़ा परिश्रम करके साधुसंग, तपस्या करके खैंच–खाँच कर इसी नौका को ही बीच गंगा में ले जाओ। तब पाल से नौका अपने आप चलेगी। केवल डाँड पकड़े रहो। और गाना गाओ, तम्बाकू पीओ अर्थात् निश्चिन्त आनन्द में रहो। 'डाँड' पकड़े रहना अर्थात् 'ईश्वर मंगलमय— मेरे मंगल के लिए सब हो रहा है', यही विश्वास।

''ईश्वर के सम्बन्ध में लैक्चर देगा, वह कौन सुनेगा? किन्तु उनकी इच्छा से यदि कोई उनकी बातें कहे तो लोग सुनेंगे। उससे कार्य भी होगा। ईश्वर के सम्बन्ध में सब बातें, मोक्ष तत्त्व जिस किसी को नहीं बताते। पात्र छोटा होने के कारण सब धारणा नहीं कर सकते— तभी तो गीता में भगवान ने सावधान कर दिया है— 'न बुद्धिभेदं जनेयदज्ञानां कर्मसंगीनाम्'। (गीता 3:26— ज्ञानी पुरुष को चाहिए कि कर्मों में आसक्ति वाले अज्ञानियों की बुद्धि में भ्रम अर्थात् कर्मों में अश्रद्धा उत्पन्न न करे।)

''और फिर पात्र बड़ा हो तो भी कूड़े–करकट (आवर्जना) से पूर्ण। थोड़ा–सा कुछ रखने से ही गिरने लगता है। यही जो अवतार पुरुषगण आकर बातें कहते हैं, उन्हें ही कितने जन लेते हैं? और तुम्हारे कहने से लेंगे?

''बाइबल में लेजारस और अब्राहीम की कथा है—

> लेजारस भिक्षुक था। एक धनी व्यक्ति के घर भिक्षा माँगने लगा। धनी ने भिक्षा नहीं दी, अन्न के अभाव में लेजारस की मृत्यु हो गई। कुछ दिनों में ही धनी की भी मृत्यु हो गई। धनी तो गया नरक में और लेजारस अब्राहीम के पास स्वर्ग में गया। अब्राहीम ने उसको गोद में उठा लिया, लेजारस भक्त था ना, तभी! स्वर्ग से नरक दिखाई देता

है। धनी ने नरक से लेजारस का मुख देखकर पहचान लिया। नरक में उसे कठोर यातना हो रही थी। तभी उससे सहायता की प्रार्थना की। भक्त का हृदय कोमल होता है। लेजारस उसी समय कपड़े पहनकर सहायता के लिए चल पड़ा। अब्राहीम ने कहा, तुम इतनी जल्दी-जल्दी कहाँ जा रहे हो? लेजारस ने उत्तर दिया— नरक में— उसी धनी की सहायता करने के लिए। वह बड़े कष्ट में आर्तनाद कर रहा है। अब्राहीम ने कहा— लेजारस, तुम क्या पागल हुए हो? यहाँ से कोई नरक में नहीं जा सकता, दिखाई देने पर भी। There is an impassable gulf between heaven and hell. (स्वर्ग और नरक के बीच में एक अनतिक्रमणीय खाड़ी है।) अतिशय दुखित होकर यही बात लेजारस ने धनी से कह दी। धनी तब बोला, अच्छा तो फिर मेरा एक और उपकार ही तुम कर दो। मेरे घर जाकर मेरे परिवारवर्ग को कह आओ— ''स्वर्ग-नरक दोनों ही हैं, दोनों ही सत्य हैं। शुभ कर्म से स्वर्ग-लाभ होता है, दुष्कर्म से नरकवास।'' लेजारस फिर कपड़े-लत्ते लेकर चल पड़े। अब्राहीम ने देखकर फिर पूछा, कहाँ पर जा रहे हो? लेजारस ने उत्तर दिया, अब की बार उसी धनी के घर में उनके आत्मीयवर्ग को कहने कि स्वर्ग-नरक दोनों ही हैं। तुम लोग शुभ कार्य करो, दान-व्रत-दया-धर्म-अनुष्ठान करो— ईश्वर की भक्ति करो। अब्राहीम ने सस्नेह हँसकर कहा, बच्चे, तुम बड़े ही पागल हो। तुम जाकर उन्हें ये सब बातें कहोगे, वे क्यों विश्वास करेंगे? वे सोचेंगे तुम तो एक imposter (प्रतारक, ठग) हो।

''कहने से ही क्या लोग सुनते हैं? समय बिना हुए कोई सुनता नहीं। अवतारगण आकर कितना कह गए हैं, उसको ही कितने जन सुनते हैं? फिर तुम्हारा लैक्चर सुनेंगे? सुन भी सकते हैं, किन्तु विश्वास करके पालन करना— यह बिना समय के हुए तो होगा नहीं।

''तभी तो ठाकुर भक्तों से कहते, ''किस से ही वा कहूँ? सुने ही वा कौन?'' (काकेइ वा बोलि, केइ वा सुने?)

'' ''सब देखछि कड़ार डालेर खद्देर'' (सब को देखता हूँ माष की

दाल के खरीददार हैं)। देखो, अपने अन्तरंगों के सम्बन्ध में ही यदि यही बात है। तब साधारण लोगों की क्या बात?

"ठाकुर ने जो करने के लिए कहा है; वह करता कौन है? *(बड़े जितेन को लक्ष्य करके)*— खाली बोलते हैं, कुछ भी हुआ नहीं।"

(एक अल्पवयस्क ब्रह्मचारी डॉक्टर की बाड़ी में रहते हैं, उनको लक्ष्य करके कहते हैं)—

देखो ना, ठाकुर कहते हैं— साधु गृहस्थ के घर आएगा नहीं। गृहस्थबाड़ी माने भोग का अड्डा। कौन सुनता है उनकी यह बात? कहीं कुछ भी नहीं, तनिक आँख बन्द करने से ही हो गया सब धर्म? इतना सीधा नहीं है— प्रथम, प्रथम बात सुननी चाहिए, पालन करने की चेष्टा करनी चाहिए। वृक्ष मोटा हो जाने पर हाथी बाँध दो, अनिष्ट नहीं होगा।

" *(अन्य एक भक्त को लक्ष्य करके)*— ठाकुर ने एक दिन कहा एक जन से— बच्चा, 'मैं' को अनेक खोजा था किन्तु मिला नहीं। खोजते–खोजते अन्त में देखा वे, माँ, ईश्वर! और देखा, अचेतन नश्वर। उसी दिन से ठाकुर ने प्रार्थना आरम्भ कर दी, "माँ, मैं यन्त्र तुम यन्त्री, मैं घर तुम घरणी— जैसे चलाओ वैसे ही चलता हूँ, जैसे कराओ वैसे ही करता हूँ"।

"जिनको देखते कि ईश्वरीय–कथा धारण कर सकते हैं, उनके लिए ही सोचते। क्यों? कारण, वे उपयुक्त पात्र हैं। बहिरंग भक्तों के पास भी जाते ईश्वरीय बात सुनने— जैसे यदुमल्लिक।

"कोई, कोई है जो केवल इधर–उधर दौड़ते–फिरते हैं। आज यहाँ, कल वहाँ। समझना होगा इनका आधार छोटा है। बड़ा आधार हो तो अल्प दौड़–धूप के पश्चात् एक ही भाव आश्रय करके पड़ा रहता है।

"धर्म–साधन में धृतियुक्त बुद्धि प्रयोजनीय है। तब ही progress (उन्नति) कर सकता है। कुआँ खोदना है। एक स्थान पर खोदने पर सख्त मिट्टी देखकर छोड़ देने से फिर कुआँ खुदेगा नहीं। वह जल भी पाएगा नहीं— सारा जीवन छट्पट् करेगा। जो एक स्थान पर धैर्य सहित खोदता है,

वह ही जल पाता है अर्थात् वस्तु-लाभ करता है। भगवान का ज्ञान, भक्ति-लाभ करता है— उनका दर्शन होता है।

●●

(2)

अब सन्ध्या साढ़े सात। श्री म बोले, 'ललितबाबू, उठिये अब आप लोग, बहुत दूर जाना होगा।' ललित, 'भीम', 'भवराणी', बसन्त उठ कर चले गए— रेल पकड़नी होगी।

श्री म रात्रि-भोजन के लिए तीनतल पर उतर गए। विनय और जगबन्धु श्री म के लिए 'चटिजूता' (स्लीपर) खरीदने बाजार गए।

रात्रि साढ़े आठ। श्री म भोजन के पश्चात् ऊपर आ गए। विनय और जगबन्धु लौट आए। बड़े जितेन प्रभृति भक्तगण छत पर यही कोई एक घण्टा बैठे रहे।

श्री म आसन से उठकर उत्तर की ओर की छत पर जाकर जितेन मुखर्जी के साथ कुछ बातें करते हैं। थोड़ी देर में आकर पुनः आसन पर बैठ गए। भौमिक महाशय ने श्री म के हाथ में बेलुड़मठ का प्रसाद दिया। श्री म जूता छोड़कर उसको ग्रहण करके मस्तक पर लगाते हैं और फिर दर्शन करते हैं। एक कणिका ग्रहण करके एकजन के हाथ में दे दिया भक्तों में वितरण करने के लिए।

अमृतगुप्त का प्रवेश। कुछ दूर खड़े होकर हाथ जोड़ कर वे श्री म को प्रणाम करते हैं। ये सब-रजिस्ट्रार हैं, कर्मस्थल चाकदा है। वहाँ से आए हैं।

श्री म *(सहास्य, जनान्तिक को)*— जगबन्धुबाबू, आपका मिशन successful (सफल) हो गया है, देख रहा हूँ। *(श्री म और सब का उच्च हास्य। अमृत तो अप्रस्तुत— हक्काबक्का)*।

श्री म भक्तों को पाँव में हाथ लगाकर प्रणाम करने से मना करते हैं, कहते हैं इससे उन्हें (श्री म को) कष्ट होता है। भक्तगण वह जानते हैं। फिर

भी कोई, कोई पाँव में हाथ लगाने जाते हैं और श्री म चञ्चल हो पड़ते हैं। आज उन्होंने जगबन्धु से कहा था, तीनतल से चढ़ने वाली सीढ़ी के मुख पर खड़े होकर, सबसे कहें कि अब फिर पाँव में हाथ न लगाएँ। आज सबने उसका पालन किया है। अमृत सब के अन्त में आए हैं। वे बड़े भक्तिमान व्यक्ति हैं। 'वे हाथ जोड़कर प्रणाम कर रहे हैं', देखकर ही श्री म ने वही बात कही, 'मिशन' सिद्ध हुआ है। अमृत सब हाल जानकर हँसने लगे, संग-संग भक्तलोग भी हँसे। श्री म भी मुस्कराए। कुछ क्षण सब ही नीरव— हँसी-मजाक के पश्चात्। फिर और ईश्वरीय-कथा आरम्भ हुई।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— आप लोग इतनी देर क्या करते रहे?

बड़े जितेन— आप जैसे कहते हैं— 'मायेर माई' (माँ का स्तन) पान कर रहे थे।

श्री म— हाँ, 'मायेर माई' ही पान करता हूँ— यही जो निःश्वास ही ले रहा हूँ यह ही तो है माँ का स्तन। इसी के न होने से— हवा के न रहने से इसी क्षण प्राण निकल जाएगा। ये समस्त ही 'मायेर माई'— हवा, जल, खाद्य— सब अर्थात् जिससे शरीर-रक्षा होती है। उसके भी ऊपर हैं उनके महावाक्य। उनके द्वारा हम उनका चिन्तन कर सकते हैं। उससे त्रिताप ज्वाला दूर होती है, spiritual life (धर्म-जीवन) बचा रहता है।

बड़े जितेन— और परस्पर बातें कर रहे थे।

श्री म— हाँ, किन्तु इसमें भी विपद है। भगवान की बातें सब धारण नहीं कर सकते। तब उल्टी गड़बड़ी होती है, कुतर्क आ जाता है। उससे अपना अनिष्ट होता है। उपयुक्त पात्र के संग बातें करने से दोनों का ही कल्याण होता है। इसीलिए तो गीता में भगवान ने सावधान किया है—

इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन।
न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति॥

''तपस्याहीन, ईश्वर में विश्वासरहित, गुरुसेवाहीन, अभक्त को ब्रह्मविद्या की बातें बताने के लिए मना किया है। इसमें क्या फिर कोई पक्षपात है? कहने का फल नहीं होगा, वरं वक्ता का अकल्याण होगा— हो सकता है अश्रद्धा

बढ़ जाए; जभी मना करते हैं। गीता में निवृत्ति का उपदेश करते हैं कि ना, मोक्ष का उपदेश। अधिकारी कौन है? जिसको संसार-भोग की प्रवृत्ति में असन्तोष आ गया है, विरक्ति आ गई है। अत एव शास्त्र, गुरुवचन और ईश्वर में विश्वास होना आरम्भ हुआ है, ऐसे व्यक्ति को कहना फलदायक होगा। अब एम०ए० क्लास का पाठ्य यदि फोर्थ क्लास के लड़के को कहा जाए तो कोई भी फल नहीं होगा। इसी प्रकार minimum qualifications (सर्वनिम्न अधिकार) जिसने प्राप्त किया है, उससे कहने पर सुफल होगा। वह है गुरुसेवा, कुछ ध्यानजप की चेष्टा— ये समस्त।

"और उपयुक्त पात्र से कहने पर दोनों का ही कल्याण होगा। उसे भी भगवान ने गीता के मुख से व्यक्त किया है।

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च॥　　(गीता 10:9)

[अर्थ— निरन्तर मेरे में मन लगाने वाले और मेरे में ही प्राणों को अर्पण करने वाले भक्तजन सदा ही मेरी भक्ति की चर्चा के द्वारा आपस में मेरे प्रभाव को जानते हुए तथा गुण और प्रभाव सहित मेरा कथन करते हुए ही सन्तुष्ट होते हैं और मुझ में ही निरन्तर रमण करते हैं।]

"भगवान में जिसका विश्वास सुदृढ़ हो गया है, उनकी वाणी के बिना जिसका प्राण छट्पट् करता है जैसे जल बिना मछली 'मर-मर' होती है— ऐसे भक्तों के बीच उनकी बातें होने से दोनों को ही आनन्द-लाभ होता है, उपकार होता है।

"ठाकुर इसीलिए ही तो केशवसेन के लिए इतने चिन्तित हो गए थे— उनके असुख का संवाद सुनकर। रो-रो कर माँ से कहा था, "माँ, केशव को असुख हुआ है, यदि कुछ हो जाएगा तो कलकत्ता जाकर किसके संग तुम्हारी कथा कहूँगा?" तभी रोग की मुक्ति के लिए, माँ के निकट 'डाब चीनी' की मन्नत की थी। कितना प्यार होने पर ऐसा उद्वेग होता है! केशवसेन ने ठाकुर को पहचान लिया था कि ना।

"एक दिन एक व्यक्ति ठाकुर के पास गए। वे (ठाकुर) इधर की (जगत की) सब बातें कहने लगे, कैसे सांसारिक अभ्युदय (उन्नति) होती है,

जागतिक कर्त्तव्य आदि। वह व्यक्ति सुनकर बोला, ऐसी तो सब जगह पर ही सुनता हूँ। आप कुछ ईश्वरीय बातें बताइए। ठाकुर ने उत्तर दिया— बाबा, अब मैं यही बोलता हूँ। तुम्हें अच्छा न लगे तो उठकर चले जा सकते हो। वे जानते हैं किसके भीतर क्या है। क्या कहते हैं, 'काना गरु थेके शून्य गोयाल भालो' (अन्धी गाय से तो शून्य गोशाला भली)। भक्तों ने फिर संवाद लिया तो पता चला उस व्यक्ति की नौकरी नहीं है, घर में खाने के लिए नहीं है; विवाह योग्य कन्या घर में है। अब जिसकी ऐसी अवस्था है, उसे ईश्वरीय बात कहने से क्या कार्य होगा? जभी उसको कर्म का उपदेश, संसार के कर्त्तव्य आदि की बातें कहीं।

''और एक दिन हुई एक घटना। कीर्तन से उठकर चले गए थे— कभी भी ऐसा देखा नहीं। जो गाना गा रहा था, पीछे सुना गया था कि उसकी पचास या सौ रांड हैं। कहा था, इसका गाना अच्छा नहीं लगता। अन्य एक जन को दिखाकर बोले, यह गाता तो सुन्दर होता। किन्तु वह तो होना नहीं था। जो गा रहा था, वह दलपति था। उसको हटाकर कोई गाने का साहस नहीं कर सका! तभी तो ईश्वरीय बातें जिस किसी के पास कहते भी नहीं और जहाँ-तहाँ सुनते भी नहीं।

''और एक ढंग के लोग हैं, वे केवल कहते हैं 'उपाय क्या है'? मणिमल्लिक थे वैसे एक भक्त। प्राचीन ब्राह्मभक्त— प्राय: बीस वर्ष ठाकुर के पास आना-जाना किया। तब भी जिसको मिलते, उससे ही कहते, महाशय, उपाय क्या है?

''ठाकुर एक दिन अधरसेन के घर भक्तों के संग गए। एक व्यक्ति ठाकुर के सामने बैठा माला जपता है। वह व्यक्ति ठाकुर को प्यार करता था। ठाकुर ने उसको लक्ष्य करके स्वयं ही भक्तों से प्रश्न किया, ''अच्छा, ये लोग तीस वर्ष से ही माला-जप कर रहे हैं, तब भी इनका क्यों नहीं होता?'' निज ही फिर उत्तर भी देते हैं। कहते हैं, ''कैसे होगा— इनमें व्याकुलता जो नहीं है। हो रहा है, होगा; हो रहा है, होगा— इनका है अट्ठारह मास का वर्ष। आंट नेइ, भेद-भेदे लोक सब।'' (जोर नहीं, सब ढीले लोग)। माला को तो हाथ में घुमाते हैं, मुख हिलता है, मन विदेश में चला गया है— विषय में,

अथवा स्तब्ध (जड़) हो गया है। इस मन को तेज करना होगा। तपस्या करने से मन तीक्ष्ण होता है। तब व्याकुलता आती है। तब समझ सकता है यह मानव-देह क्षणस्थायी है। शीघ्र-शीघ्र समाप्त कर लेने की प्रबल इच्छा होती है। 'इस बार देह व्यर्थ चली जाए तो पुनः कब मनुष्य (देह) होगी', उसका तो निश्चय नहीं— तभी उठ-पड़ लगता है। आहार-निद्रा छोड़कर चेष्टा करता है। 'सोना गल जाने पर ही उठूँगा', यही दृढ़ संकल्प। 'जमीन पर जल लाकर ही तब स्नान-आहार करूँगा', यही प्रतिज्ञा।

"ठाकुर अपनी व्याकुलता की बात बताया करते। कहते, पञ्चवटी में पड़ा रहता था। दिन, रात— होश नहीं। कभी-कभी ऊपर से साँप चला जाया करता, लक्ष्य नहीं।"

बड़े जितेन— रामप्रसाद ने कहा था स्वाँग रचने की बात।

श्री म— स्वाँग रचने की बात कहते ही अपने अहंकार की बात आ जाती है। किन्तु ठाकुर खोज करके भी अपने अहंकार को देख नहीं पाए— देखा था, वहाँ पर भी माँ बैठी हुई हैं, जगदम्बा। सब ही वे, माँ। उसी अवस्था में ही कहते, "माँ! मैं यन्त्र तुम यन्त्री, जैसे चलाती हो वैसे ही चलता हूँ।" यही है शेष बात, यही तो है आदर्श, यह ही तो है प्राप्तव्य। ब्रह्मज्ञान के पश्चात्, निर्विकल्प समाधि के बाद यह अवस्था होती है— 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'।

●●

(3)

आज 5 मई, शुक्रवार। अब अपराह्न पाँच। श्री म मॉर्टन स्कूल के दोतल के बराण्डे के पूर्व की ओर के ऑफिस के कमरे के पास बैठे हैं उत्तरास्य, पीठ वाले बेंच पर। श्री म के संग हैडमास्टर मुकुन्द और शचीनन्दन भी बैठे हैं। विनय और जगबन्धु भीगते-भीगते आकर उपस्थित हुए। जगबन्धु आज दस बजे श्री म का धोती-कुरता आदि लेकर काशीपुर डॉक्टर की बाड़ी में गए थे। कपड़े धोकर विनय के संग लौटे हैं।

थोड़ा पीछे स्वामी सद्भावानन्द आ उपस्थित हुए। श्री म ने सस्नेह

उनको अपने सामने चेयर पर पश्चिमास्य बिठाया। श्री म के सम्मुख बेंच पर शान्ति और उसका संगी, विनय और जगबन्धु।

स्वामी सद्भावानन्द श्रीरामकृष्ण मिशन विद्यापीठ के प्रतिष्ठाता हैं। दो वर्ष पूर्व अति सामान्य-भाव से भग्नगृह में विद्यापीठ, मिहिजाम में आरम्भ हुआ है। श्री म तब साधुओं के निमन्त्रण पर वहाँ जाकर रहे थे। फिर अन्य घर में भक्तों के संग आठ मास वास किया। जामताड़ा आश्रम में भी सात-आठ दिन थे स्वामी रामेश्वरानन्द के अनुरोध से। इन्होंने ही इस आश्रम को बनाया है।

स्वामी सद्भावानन्द विद्यापीठ के परिचालन के सम्बन्ध में श्री म के साथ परामर्श करते हैं। शुरु से ही उनके परामर्श के अनुसार कार्य चल रहा है। श्री म कहते हैं—

याद रखो वहाँ पर एकसंग में सेवकों की अनेक duties (कर्त्तव्य) हैं। ये (साधु) ही father, mother, teacher, friend (पिता, माता, शिक्षक, बन्धु) हैं और फिर और भी एक कहा जाता है spiritual guide (गुरु)। उन सब कार्यों में खूब responsible man (दायित्व-ज्ञान सम्पन्न व्यक्ति) का प्रयोजन है। खूब strenuous (परिश्रम का कार्य) है।

और भी कुछ देर कथावार्त्ता करके स्वामी सद्भावानन्द मिष्टिमुख करके चले गए। श्री म भक्तों के संग चारतल के सीढ़ी के गृह में जाकर बैठे। वर्षा होने के कारण आज छत पर बैठ नहीं सके। सन्ध्या का आलोक आते ही श्री म ध्यान करने बैठे। भक्तगण भी ध्यान करते हैं। कुछ क्षण परे श्री म ने 'कथामृत' चतुर्थ भाग पञ्चदश खण्ड-पाठ करने के लिए शान्ति को दिया— उल्टा रथ।

ठाकुर बलराम-मन्दिर में निमन्त्रित होकर आए हैं। आज 3 जुलाई, 1884 ईसवी। बलराम के पिता श्रीवृन्दावनवासी। वहाँ से श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आए हैं। पण्डित शशधर तर्कचूड़ामणि परम भागवत, साहित्यिक भक्त रामदयाल और डॉक्टर प्रताप मजुमदार प्रभृति आए हुए हैं।

ठाकुर बलराम के पिता से कहते हैं कट्टर— एकरस होना ठीक

नहीं। बलराम के पिता वैष्णव हैं; वृन्दावन में अपने कुञ्ज में वास करके श्यामसुन्दर की सेवा, पूजा की देखरेख करते हैं और साधन-भजन करते हैं। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, 'जे समन्वय करेछे सेइ लोक, (जिसने समन्वय कर लिया है वही व्यक्ति है)।' एक सच्चिदानन्द ही जगत का आधार हैं। उनका ही वेद, पुराण, तन्त्र में नाना भाव से वर्णन किया है। सच्चिदानन्द ब्रह्म, सच्चिदानन्द कृष्ण, सच्चिदानन्द शिव। सब मतों के लोग ही अपने मत को ही बड़ा कर गए हैं। किन्तु जो सब मतों के भीतर एक ही उपास्य के दर्शन कर सका है, वह ही व्यक्ति, वह ही धन्य।

परमहंस का नाम करके अपनी अवस्था बताते हैं। परमहंस और चार पाँच वर्ष के बालक की बाहरी अवस्था एक है। बोले, परमहंस बालक की न्यायीं है, गतिविधि का हिसाब नहीं। आत्म-पर भेद नहीं। जागतिक सम्बन्ध का जोर नहीं। सब ब्रह्ममय देखता है। कहाँ पर जाता है, कहाँ चलता है, हिसाब नहीं। कहते हैं, कभी उन्मादवत् अवस्था होती थी। तब शिवलिंग-ज्ञान में अपने लिंग की पूजा किया करता था।

कथामृत-पाठ चलता है। अब श्री म बातें करते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— यही सुन तो लिया कि ठाकुर कह रहे हैं, तपस्या आवश्यक है— केवल पुस्तक पढ़कर पण्डित होने से होगा नहीं। गौरी पण्डित और नारायण शास्त्री की बात पर ठाकुर ने बताया, ये उच्चकोटि के साधक भी थे। गौरी पण्डित का स्तवपाठ सुनकर और (अन्य) पण्डितगण केंचवा बन जाया करते। और नारायण शास्त्री को 'हर-हर' बोलते-बोलते भाव हो जाता, ठाकुर ने कहा था। नारायण शास्त्री कहते थे, केशवसेन जप में सिद्ध और भाग्यवान व्यक्ति है। बेलघर के बाग में केशवसेन के संग मिलने के पूर्व ठाकुर ने नारायण शास्त्री को भेज दिया था। नारायण शास्त्री ने मिलकर आकर वही बात कही थी।

''बलराम के घर आज पण्डित शशधर के ऊपर भी ठाकुर ने कृपा की

है। प्यार करते हैं, इसीलिए बलराम ने निमन्त्रण करके उन्हें बुला लिया था। उनसे एक दिन कहा था, बाबा तपस्या करके और थोड़ा बल बढ़ाओ। विवेक-वैराग्य, साधन-भजन बिना केवल लैक्चर कोई सुनेगा नहीं, काज होगा नहीं। आज शशधर ने प्रश्न किया, कैसी भक्ति से भगवान-दर्शन होता है। ठाकुर ने उत्तर दिया, शुद्धाभक्ति से वे लभ्य हैं। ज्वलन्त विश्वास चाहिए— ऐसे विचार करना कि मैंने एक बार ईश्वर का नाम लिया है, मैं शुद्ध हो गया हूँ, मैं निष्पाप हूँ। ईश्वर के लिए प्राण आटुपाटु (छटपटाये)— जल में डुबा कर पकड़े रहने से जैसे होता है, वैसी व्याकुलता होने से उनका दर्शन होता है।

श्री म का नैश भोजन आया है। अन्तेवासी कमरे में जाकर आसन ठीक करते हैं। पाठ समाप्त होने पर श्री म ने अपने कक्ष में प्रवेश किया। बोले, 'सुबह से सोच रहा हूँ, कहाँ गया सारा दिन! कपड़े धोने की बात स्मरण ही नहीं थी।' श्री म भोजन शेष करके फिर आकर भक्तसभा में बैठ गए। अपने आप ही बोल रहे हैं—

''ठाकुर केशवसेन को क्यों इतना प्यार करते? ईश्वर के लिए वे व्याकुल जो थे। 'दैवी लोक' ठाकुर कहते। केशवबाबू आने-जाने से ठाकुर को बूझ पाए थे। कहा था, 'यही जो हैं (ठाकुर), ये आजकल world (जगत) में हैं greatest man (सर्वश्रेष्ठ मानव)'। वे तो अवतार मानते नहीं थे, तभी कहा greatest man (सर्वश्रेष्ठ मानव)। उसी से ही हुआ। देखो जो 'Hero of a hundred platforms' (वक्ताओं के वीराग्रणी), 'Observed of all observers' (दर्शकों के नयनमणि) वे ही यह बात कहते हैं। फिर तो क्रमशः 'अवतार' कहकर पहचान लिया था। किन्तु दल के भय से प्रकट रूप से कह नहीं सके।''

●●

(4)

मॉर्टन स्कूल। सकाल सवा सात। चारतल का श्री म का कक्ष। श्री म बिछौने पर बैठे हैं। जगबन्धु और विनय को उन्होंने भेजा था पता करने के लिए कि हिन्दु स्कूल और हेयर स्कूल में ग्रीष्म की छुट्टियाँ कब से होंगी। वे वापस आ गए हैं। श्री म ने उनके संग कुछ देर मॉर्टन स्कूल की ग्रीष्म की छुट्टियों के विषय में आलोचना की।

अब श्री म सुरसहित गीता-पाठ करते हैं, सोलहवाँ अध्याय। छोटे जितेन, जगबन्धु, विनय और गदाधर बेंच पर बैठे हैं। श्री म अब अर्थ बतलाते हैं।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— दैवी सम्पद और आसुरी सम्पद की बात कहते हैं। दैवी सम्पद अर्थात् भगवान-लाभ के अनुकूल स्वभाव। और आसुरी ठीक उसके विपरीत। मनुष्य के भीतर तीनों भाव ही होते हैं— पशु, मनुष्य और देव। आसुरिकभाव और पशुभाव एक ही बात है। अर्थात् extremely selfish (अत्यन्त स्वार्थपर) भाव। दैवभाव इसके विपरीत selfless (स्वार्थरहित) भाव। पशु से देवता सब को ही एक दिन होना होगा। जभी भगवान दोनों के लक्षणसमूह बता रहे हैं। यह पता हो तो अपनी अथवा अन्य की अवस्था समझ में आ जाती है। ये सब धर्मजीवन के milestones (दूरत्व निर्देशक) हैं। सबको ही मुखस्थ रखना उचित। कोई-कोई कट्-कट् करके बात करता है— जैसे माथे के ऊपर पत्थर तोड़ता है। यहाँ पर कहते हैं, यह सब ठीक नहीं। इसको पारुष्य कहते हैं। और फिर अनेक ही सर्वदा बक्-बक् करते रहते हैं, यह भी ठीक नहीं। चुप करके बैठे रहना अच्छा है। सन्ध्या के समय अनेक जन ही आकर व्यर्थ बातें बोलते हैं। जिह्वा का संयम करना अच्छा है। शम, दम ये दैवी गुण हैं। बराहनगर मठ में वे लोग इसको false talk (व्यर्थ बात, ग्राम्य कथा) बोलते। किसी के अन्य बात करते ही दूसरे साधु बोलते, देखो फिर वही— ये लोग false talk (वैषयिक आलोचना) करते हैं। ठाकुर ऐसी बात सुन ही नहीं सकते थे। चैतन्यदेव ने रघुनाथदास को लीला-उद्धार-जन्य सनातन की सहायता करने के लिए वृन्दावन भेजा। कह दिया था, ''ग्राम्य कथा ना कहिबे (आर) ग्राम्य

कथा ना शुनिबे''। ग्राम्य कथा अर्थात् विषय की बातें, संसार की बातें, ईश्वरीय बातों के विपरीत बातें। जभी बहुत लोग संयम-अभ्यासजन्य मौनव्रत धारण करते हैं। ब्रह्मचारियों के लिए यह अवश्य कर्त्तव्य। यहाँ पर कोई व्यर्थ बात कहे तो तत्क्षण ही बन्द कर देना उचित।

''और सरल और सत्यवादी होना उचित। अवसर पाते ही ध्यान करना चाहिए। अति यत्न के साथ उसका पालन करना चाहिए। तभी काज होता है। सरलता, सत्य, मौनव्रत और मधुरभाषण— ये सब ब्रह्मचारियों को पालन करना चाहिए।

''*(सहास्य, एकजन को लक्ष्य करके)* और फिर कार्य से बचने के लिए भी अनेक जन ही ध्यान करते हैं। यही कार्य की अवहेलना एक न एक दिन पकड़ी जाएगी।

''*(एकजन को लक्ष्य करके, भक्तों के प्रति)*— अमुक प्रदेश के लोगों में कई-एक दोष हैं। आँधी, तूफान, वर्षा हो रही है— कोई आश्रय चाहता है, उसको बरामदे में खड़ा नहीं होने देंगे। पुकारो, द्वार खोलकर देखेंगे भी नहीं कि किसलिए पुकार रहा है। पथिक चल रहा है, रास्ता अन्धकारमय। सामने कुएँ में ही शायद गिर जाएगा, उसको सावधान नहीं करेगा। और फिर suppressio veri verai है— truth (सत्य) को गोपन करेगा। कोई जन लड़के का असुख-टेलिग्राम पाकर विदेश से घर को दौड़ा जा रहा है। सामने एक ब्रिज (पुल) है, वह बीच में से टूट गया है। जो जानता है, उसके लिए पथिक को बता कर सावधान करना उचित है। यदि न बताए तो दो पाप होंगे— एक तो जीवहत्या, दूसरा सत्यगोपन। *(एकजन के प्रति)* तुम कितने गुणों का नाम करते हो! उस देश के लोगों का फिर चोरी का अभ्यास है। सामान खरीदने गए, दाम बढ़ाकर कहेगा और पैसे चोरी करेगा। और फिर अशुचि है— टट्टी के कपड़ों से ही चाहे ठाकुर-सेवा, गुरु-सेवा करेगा। ठाकुर तो आकर देखते नहीं।

श्री म *(विनय के प्रति)*— आज से तुम रोज दो-दो श्लोक करके गीता के श्लोक मुखस्थ करोगे। *(जगबन्धु के प्रति)*— आप तारीख लिखकर रखें आज से। तब फिर एक दिन हिसाब करके पाठ लिया जाएगा। ठाकुर ने मुझे

कहा था, ''परीक्षा पास की जाती है, फिर गीता के श्लोक मुखस्थ नहीं किए जाते?'' *(गदाधर के प्रति)*— तुम भी करोगे रोज दो श्लोक मुखस्थ। *(जगबन्धु के प्रति)*— इसकी बात भी लिखकर रखिए। रोज दो-दो करके मुखस्थ करना चाहिए ही।''

सेवक रामलाल के दसेक वर्षीय पोते ने श्री म के हाथ में दैनिक 'Forward' (फोरवार्ड) संवादपत्र दिया। श्री म सहास्य बोले, 'थैंक यू'। बालक हँसते-हँसते चला गया। श्री म ने गदाधर से कहा, ''देखो, मीठी बात से क्या होता है!''

अपराह्ण साढ़े पाँच। श्री म अपने कमरे में बिछौने पर बैठे हैं। गदाधर आश्रम के महन्त स्वामी कमलेश्वरानन्द आए हैं। थोड़ा पीछे ब्रह्मचारी सूर्य (नीलबड़ि) और स्टूडेन्टस होम के एक विद्यार्थी भी आ गए। गदाधर आश्रम में कार्य करने वालों का अभाव है। श्री म के साथ आश्रम-परिचालन का परामर्श करते हैं। जगबन्धु और गदाधर हैं। स्वामी कमलेश्वरानन्द का मीठा मुख करवाने के लिए श्री म ने जगबन्धु से कहा। मिष्टिमुख करके आश्रम-सेवा का मासिक अर्थ लेकर स्वामी कमलेश्वरानन्द चले गए।

फरिदपुर के रमेश को श्री म के आदेश से जगबन्धु ने एक पत्र का उत्तर लिखा एवं पढ़कर सुनाया।

श्री म बोले, ''उनके (नौकरों के) हाथ में देकर कह देना, बक्से में डाल के आकर खबर दें।''

जगबन्धु ने कहा, ''आज तो चिट्ठी जाएगी नहीं।''

श्री म बोले, ''हो जाए, सड़क वाले बक्से में डालने से ही हुआ।''

सब भक्तों ने विदा ली। अब साढ़े छ:। श्री म और अन्तेवासी बैठे हैं।

श्री म *(अन्तेवासी के प्रति)*— मेरी इतने दिनों से धारणा थी कि मैं मनुष्य पहचानता हूँ। किन्तु आज वह धारणा उलट गई है। गदाधर आश्रम में सेवक का अभाव है— ठाकुर की पूजा प्राय: अचल (बन्द) है। एकजन को सेवाजन्य ललित महाराज ने कहा था। मैंने अमुक से कहा, वह नहीं गया।

कहा असुख— क्या-क्या कहा! साधु के आश्रम में खाने को अच्छा मिलेगा, ठहर सकेगा। थोड़ी सेवा करेगा— वह भी ठाकुर की सेवा। वहाँ का जो कोई भी कार्य करे, सब ही ठाकुर की सेवा है। ठाकुर की सेवा तो करता नहीं, फिर ऐसे ही आँख मूँदे बैठा रहा— इस से क्या होगा? 'किस प्रकार आँखें मूँदे रहता है', यही सोचता हूँ।

''*(सहास्य)* एक बार आलमबाजार के निकट एक मछुवी— सिर पर मछली की टोकरी। कह रही थी, 'जोर करे पिरित?' नूतन बाजार बना। अब मछुवी वहाँ पर न जाकर पुराने बाजार में जाना चाहती है। दरबान जोर करके पकड़ कर ले जाना चाहता है नूतन बाजार में। तभी मछुवी क्रोध से यही बात कहती है— जोर करके प्रीत? *(हास्य)*।''

''ठाकुर की सेवा बिना किए आँखें मूँदने से क्या होगा? मेरी इतने दिनों की धारणा उलट गई— धिक्कार आ रहा है अपने ऊपर। सूर्य भी तो नहीं गया।''

सन्ध्या समागता। श्री म चारतल की छत पर बैठे ध्यान करते हैं— चेयर पर दक्षिणास्य। भक्तगण— बड़े जितेन, छोटे जितेन, डॉक्टर, बलाइ, छोटे रमेश, गदाधर, मणि, जगबन्धु प्रभृति भी श्री म के सम्मुख बेंचों पर बैठे ध्यान करते हैं।

स्वामी सद्भावानन्द और सुरेन गांगुली इसी बीच आकर कुछ क्षण बैठ कर चले गए। सुरेन गांगुली जब भी आते हैं एक पैकेट धूप ठाकुर की सेवाजन्य लाते हैं। वह धूप एकजन के हाथ में देकर, प्रणाम करके चले गए।

एक घण्टा ध्यान के पश्चात् श्री म उठकर छत के उत्तर की ओर एकाकी पाचयारी करते हैं,— तालू को दायें हाथ से बार-बार दबा रहे हैं। गम्भीर ध्यान के पश्चात् प्राय: ही ऐसा करते हैं। कुछ देर पश्चात् आकर अपने आसन पर बैठ गए एवं भक्तों के साथ बातें करने लगे।

श्री म *(बड़े जितेन को लक्ष्य करके, भक्तों के प्रति)*— ठाकुर ने निरञ्जन से कहा था, तू माँ के लिए चाकरी करता है। यदि स्त्री-पुत्र के लिए करता तब तो फिर कहता धिक्! स्त्री-पुत्र के लिए नौकरी करने पर बद्ध होता है।

ठाकुर सेवा करने से, ईश्वरबुद्धि से सेवा करने पर, मुक्ति-लाभ होती है— साधुओं की सेवा करने से भी मुक्ति होती है।

सन्ध्या के पूर्व अन्तेवासी से जो कहा था, वही बात पुनराय बोले— मुझे अपने ऊपर घृणा आ रही है कि मैं व्यक्ति पहचानता हूँ, मेरी यह धारणा थी। आज वह उलट गई। इत्यादि!

''साधु की सेवा, ईश्वर की सेवा बिना किए कभी भी भक्ति नहीं होगी। आँखें मूँद कर ही यदि भक्ति होती तब तो फिर रक्षा नहीं थी। संस्कार चाहिएँ। वे न रहें तो सेवा में मन नहीं जाता।''

श्री म क्या भाव रहे हैं— पुनः बोलने लगे।

''संस्कार बड़े प्रबल। आज एक स्वप्न देखा। तब कॉलिज में पढ़ता हूँ। साटलिप साहेब पढ़ा रहे हैं। वही बात याद आ गई। देखो, संस्कार कैसे हैं! वे क्या जाना चाहते हैं? ठाकुर की बातों से इतने दिन दबे पड़े थे। आजकल देख रहा हूँ, पूर्व की बातें कुछ-कुछ स्मरण हो आती हैं।

''जभी पूर्व का किया हुआ हो तो ठाकुरसेवा में मन जाता है।''

कलकत्ता, 8 मई, 1924 ईसवी; 25वाँ वैशाख, 1331 (बंगला) साल।
बृहस्पतिवार, शुक्ला चतुर्थी, 15 दण्ड/14 पल।

सप्तदश अध्याय

मधुकर श्री म—
गिर्जा, गुरुद्वारा, आश्रम

(1)

सत्प्रसंग सभा। मॉर्टन स्कूल के नीचे के तल का पूर्व की ओर का हॉलघर। छात्र और शिक्षकगण एकत्रित हुए हैं। पश्चिम के आँगन में भी बेंच रखे गए हैं। वहाँ अनेक जन बैठे हैं।

अब सुबह के साढ़े सात। आज 4 जनवरी, 1925 ईसवी; 10वाँ पौष, 1331 (बंगला) साल। शुक्ला दशमी, 41 दण्ड/2 पल।

श्री म आकर कमरे में बैठ गए उत्तर के द्वार के दायीं ओर पूर्वास्य, चेयर पर। गदाधर, बुद्धिराम, छोटे नलिनी, विनय— ये लोग भी आकर बाहर के बेंचों पर बैठ गए। कुछ बाद बड़े जितेन आ गए। जगबन्धु भी कमरे में बैठ गए। वे शिक्षक हैं, श्री म रैक्टर।

आज का आलोच्य विषय है, 'क्राइस्ट'। प्रथम जगत्तारण ने गीता पढ़ी। फिर वामनदास मुखर्जी ने पढ़ा भागवत। अब वक्तृता होगी। श्री म कुछ काल से ही एक भक्त शिक्षक को सत्प्रसंग सभा में वक्तृता देने के लिए उत्साहित कर रहे हैं। वह भक्त वक्तृता देने में संकोच करते हैं। कहते हैं, ''स्वयं पालन नहीं कर सकता, औरों से कहना!'' श्री म ने उनको उपदेश दिया है, ''सेवाभाव में कहने पर दोष नहीं है। उसमें अपने को include (अन्तर्भुक्त, शामिल) करना होता है।'' आज इसी भक्त शिक्षक के द्वारा वक्तृता दिलवाएँगे, श्री म का यही संकल्प है। ये शिक्षक उनके पास रहते हैं। श्री म केवल उपदेश देकर ही शान्त नहीं होते। छाती पर घुटने गड़ा कर औषध खिलाते हैं— उत्तम वैद्य।

श्री म ने सभापति को लक्ष्य करके कहा, 'ये (वह भक्त शिक्षक) तो क्राइस्ट की बातें बहुत जानते हैं। वे ही बोलें तो।' भक्त लाचार होकर क्राइस्ट का जन्म–वृत्तान्त सेंट लूक की गोस्पल से कहने लगे।

शिक्षक— भगवान की लीला विचित्र है। उन्होंने एक दरिद्र बढ़ई के घर में कुमारी के गर्भ से जन्म लिया। बालिका मेरी, लज्जा से म्रियमाणा। तब एक देवदूत रात्रि में आकर उनका स्तव करने लगा, तुम धन्य हो, नारी! तुम्हारे गर्भ में भगवान आए हैं। मा भैः। (डरो मत)। समस्त जगत तुम्हारी और उनकी पूजा करेगा। भगवान ने अन्य एक अंश में मेरी की बड़ी बहन के गर्भ में छः मास पूर्व प्रवेश किया है। एलिजाबेथ और पुरोहित जाकेरिया के पुत्र के रूप में— सेंट जॉन दी बैपटिस्ट के नाम से। यह जैसे एशिया माइनर में कृष्ण–बलराम की नूतन जन्मलीला आ गई।

''जो जगत के एक तिहाई लोगों के शान्ति और सुख के रूप हैं, उनका जन्म एक घुड़शाला में हुआ। और स्थानाभाव से उन्हें एक चरनी (नाँद) में रखा गया। इस रहस्य को मनुष्य कैसे बूझेगा?

''जन्म होते ही देवतागण दिव्य ज्योतिर्मय शरीरों में उसी अश्वशाला में आकर उनकी स्तव–स्तुति करने लगे। जाते समय सरल और सत्यवादी गडरियों से उसी गम्भीर रात्रि में मैदान में कहते गए— भगवान ने उस स्थान पर अश्वशाला में जन्म लिया है। जाओ, दर्शन करके सब धन्य हो जाओ।

''पिता–माता तो दैवलीला देखकर अवाक्। आठवें दिन, यहूदियों की रीति के अनुसार शिशु को जेहोबा के मन्दिर में ले जाया गया— श्री भगवान के पादपद्मों में समर्पित करने के लिए। तब महात्मा सीमीयन आकर उनको गोद में लेकर भावसमाधि में निमग्न हो गए। समाधि भंग होने पर बोले, ''अब मुझे शान्ति से जाने दो। तुम आ रहे हो इसी प्रत्यादेश से इतने दिन प्रतीक्षा करता रहा। अब इस वृद्ध शरीर का त्याग करूँगा।''

''अन्य और एक भक्त महिला भी आकर उसी प्रकार स्तव करने लगी। ये थीं एनी। अस्सी के ऊपर वयस। बाल्यकाल में विधवा हो जाने से ही किसी प्रकार मन्दिर में वास करती हुई श्री भगवान के ध्यान, चिन्तन और मन्दिर-सेवा में नियुक्त है। उन्होंने भी शिशु को पहचान लिया। उनको भी आकाशवाणी प्राप्त हुई थी।

''निरक्षर दरिद्र पिता-माता इन सब बातों से विस्मित और भयभीत हुए। कौन सा पिता-माता अपनी शिशु सन्तान को अन्य द्वारा इस प्रकार पूजित होता देखकर आनन्दित होगा? सम्भवत: वह सोचने लगे, किसी अपदेवता का आवेश तो नहीं हुआ है! और फिर देवदूतगणों की अभयवाणी और स्तव और सूत्रधार (बढ़ई) दम्पति के ऊपर श्रद्धाँजलि निवेदन देखकर भी विस्मित हुए। आशा-निराशा के द्वन्द्व के बीच पिता-माता के दिन जाने लगे।

''शिशु क्राइस्ट अब बारह वर्षीय किशोर हैं। हम उन्हें अब कहाँ देखते हैं! यहूदियों के श्रेष्ठ तीर्थ जेरुसलम में, आभा के मन्दिर में शास्त्रज्ञ प्रवीण पण्डितों के साथ शास्त्रार्थ कर रहे हैं। एक ओर अज्ञात किशोर, दूसरी ओर यहूदी जाति के धर्म-विषय में गणमान्य विशेषज्ञगण। बालक की शास्त्र-व्याख्या से विमोहित हुए ये पण्डितगण समस्वर में श्रद्धा और विस्मय से कहने लगे, ''कौन है यह देवशिशु! कौन कहेगा कि ये हैं सूत्रधर जोसेफ और मेरी के पुत्र! इस बालक की शास्त्र-व्याख्या कैसी हृदयग्राही, कैसी सुगम्भीर! कैसी उनकी मोहिनी शक्ति! मन को जैसे अन्तर के अन्तरतम प्रदेश में ले जा रही है। मन जैसे ईश्वर के पादपद्मों में विलीन हो रहा है। ऐसी उनकी शास्त्र-व्याख्या। कौन है यह अद्‌भुत बालक! उनकी बातों का यह तेज कहाँ से आया है! ये क्या स्वयंसिद्ध! ईश्वर-प्रेरित, किंवा ईश्वर''!

''पिता-माता के संग वार्षिक-उत्सव में जेहोवा भगवान के दर्शनजन्य यीशु मन्दिर में गए थे। तब उनकी मात्र बारह वर्ष वयस! इस स्थान पर यही देवलीला प्रकट की थी। पिता-माता प्रवीण

धर्माचार्यों के संग अपने पुत्र को विचाररत देखकर और भी विस्मय-सागर में निमग्न हो गए।

''तब फिर अट्ठारह वर्ष उनकी और कोई खबर नहीं मिली। सम्भवत: पिता के कार्य में सहायता करते रहे। एक मत है, उसी समय भारत भ्रमण के लिए आए थे।

''तीस वर्ष की वयस में विद्रोही होकर बाहर निकले। इस विद्रोही में धृष्टता नहीं, औद्धत्य नहीं, वागाडम्बर नहीं, दल बाँधने का प्रयास नहीं। वे थे शान्त, सरल, सत्यवादी, सहानुभूतिशील, दुखी-दरिद्र के चिरसुहृद्; अन्धे, आतुर, अनाथ, निराश्रय के मातृवत् स्नेहमय सेवक; निर्विवादी, स्वार्थगन्धहीन, ईश्वरपरायण। किन्तु अन्याय के शान्त प्रतिवाद में सुमेरुवत् अचञ्चल, वज्रसम कठोर। सहनशीलता में धरतीवत् स्थिर और धीर।

''उन्होंने अति सुदृढ़ शान्त भाषा में यहूदियों की दुर्नीति का प्रतिवाद किया। धर्म का नाम करके, ईश्वर का नाम करके, धर्मरक्षकगण सरलमति जनसाधारण को धोखा देते थे। धर्मध्वजी पुरोहितों ने सत्य, पवित्रता, संयम, परोपकार और ईश्वर-प्रीति को जलांजलि दे दी थी। वज्रस्वर में बोले, ''धोखेबाजो (प्रतारकगण)! सावधान हो जाओ। पापपंक में और कितने दिन डूबे रहकर समाज का अकल्याण करोगे? कुछ तो सोचकर देखिए, क्या कर रहे हो और क्या करना उचित है! एकजन हैं; वे सब जानते हैं। उनको ठग नहीं सकोगे। तुम लोगों को अपने इस दुष्कर्म के लिए अनन्त नरक-यातना भोग करनी होगी। रुक जाओ। उनकी शरण लो। वे क्षमा करेंगे''।

''पुरोहितगण हो गए उनके शत्रु।

''अपने भक्तों से कहा, तुम निश्चय ही जानो, तुम लोग भगवान का अंश हो। तुम लोग उनकी सन्तान हो। तुम केवल मनुष्य नहीं, तुम देवता हो। यदि भोगवासना में डूबकर पशु की पंक्ति में शामिल हो गए हो तो अनुशोचना करो, क्रन्दन करो। रो-रो कर कहो— ''हे पिता,

हम लोगों को क्षमा करो।'' सरल अन्तर से यह बात कहने पर वे निश्चय ही क्षमा करेंगे। उनकी शरण लो, सत्य का आश्रय करो। रोओ, रोओ, रो-रो कर उनसे कहो। वे सन्तान कहकर अवश्य ग्रहण करेंगे।

''और मुझे पकड़ो। तभी शोकताप, दुःखदारिद्रय, जरामृत्युमय इस संसार में आनन्द में रहोगे। क्योंकि मैंने परमपिता के प्रसाद से यह सब जय कर लिया है। मैं उनका पुत्र हूँ, वे मेरे पिता हैं। पिता-पुत्र एक।

''मेरा विधान अति सहज है। मनप्राण से परमपिता को अपना कहकर प्यार करने की चेष्ट करो और सर्वभूतों में वही प्रेममय पिता हैं, यह जानकर सेवा करो, उनको प्यार करो। जैसे अपने को अपने-आप प्यार करते हो, जैसे अपनी सेवा, अपने कल्याणजन्य चेष्टा करते हो, वैसे ही अन्य के लिए करो। कारण, वे भी परमपिता का रूप हैं, वे तो उनका मन्दिर हैं।

''वही यीशु अब हैं, श्रीरामकृष्ण।''

श्री म की कृपा से आज भक्त के मुख से जैसे भगवान बातें कर रहे हैं। सब निर्वाक्! आनन्द से सबने सुना। श्री म चेयर पर भावाविष्ट— चक्षु अर्धनिमीलित; स्पन्दनहीन बैठे हैं। उपसंहार-संगीत के संग-संग सभा भंग हुई नौ बजे।

भगवान यीशु के जन्मोत्सव का आनन्दलेश अब भी चल रहा है। ईसाई भक्तलोग प्रत्येक गिरजे में उनकी अमरवाणी की आलोचना करते हैं। उसी प्रभाव से दुःख-शोक कुछ काल के लिए तिरोहित हो गया।

अमहर्स्ट स्ट्रीट में पास ही सेंट पाल कैथेड्रल है— मॉर्टन स्कूल के निकट। श्री म के भीतर लग रहा है कि आज की सत्प्रसंग सभा का यीशुलीलामृत का उल्लासानन्द जीवन्त है। क्षिप्रवेग से श्री म ने गिरजे में प्रवेश किया। अब नौ बज कर दस मिनट हुए हैं। रास्ते में प्रवेश करके

पश्चिम की ओर की छठी लाइन में बायें प्रान्त में बैठ गए। बड़े जितेन, जगबन्धु, गदाधर, बुद्धिराम प्रभृति श्री म के पास बैठे हैं।

अभी–अभी Mass वा समवेत प्रार्थना शेष हुई है। पुरोहित के हाथ से नतजानु होकर स्त्री–पुरुष भक्तगण प्रसाद और चरणामृत ले रहे हैं। यहाँ पर जैसे धर्म ने आज मूर्ति धारण की है। कैसी श्रद्धा से, कितने ही प्रेम से विश्वासी भक्तगण श्री भगवान का चरणामृत धारण कर रहे हैं। देहसुख में, विषयसुख में सब भूलकर सर्वदा तो रहा भी कहाँ जा सकता है? बीच–बीच में अन्तर से पुकार आती है, ''मन चलो निज निकेतने।'' तभी भागकर भक्तगण आए हैं उनके साथ युक्त होने के लिए। संसार, और उनके साथ संयोग; भक्तगण इन्हीं दोनों केन्द्रों में विचरण करते हैं।

प्रशान्त, गम्भीर भावमय श्री म, उन्नत विस्फारित नयनों से प्रेमभक्ति का यह प्राणवन्त अभिनय–दर्शन करते हैं। देख रहे हैं जैसे धर्म मूर्तिमान होकर सम्मुख दण्डायमान है। श्री म का निर्वाक्–आचरण नीरव में मानो 'कथामृत' वर्षण कर रहा है।

•

मध्याह्न साढ़े बारह। श्री म राजा रामसिंह के गुरुद्वारे में बैठे हैं। पहले पश्चिम के द्वार पर खड़े हुए थे। सफेद कन्नी की धोती पहनी हुई, शरीर पर वारफ्लानेल का कुरता (पंजाबी), सिर पर पशमी सफेद चादर। एक वृद्ध निर्मला सन्त ने आकर श्री म को 'ॐ नमो नारायणाय' कह कर अभिवादन किया, एवं आसन ग्रहण करने का अनुरोध किया।

भक्तगण इससे पहले ही ग्यारह बजे से आकर बैठे हैं। जगबन्धु, छोटे नलिनी, विजय प्रभृति। पीछे गदाधर और बुद्धिराम भी आ गए। डॉक्टर बक्शी भी 'झाँकी–दर्शन' (शीघ्र–दर्शन) करके अपने काम पर चले गए।

रामचन्द्रसिंह एण्ड ब्रदर्स के मालिक राजा रामसिंह धनी–मानी और भक्तिमान व्यक्ति हैं। उनका महल जैसा घर हेरिसनरोड पर अवस्थित

है। ये भगवान श्री गुरु नानक के भक्त हैं। अतिशय श्रद्धाभक्ति के साथ बहुत धन खर्च करके यह उत्सव करते हैं— गुरु गोबिन्दसिंहजी का जन्मोत्सव। श्री गुरु गोबिन्दसिंह ही अन्तिम गुरु हैं। इन्होंने भक्ति विश्वास की भित्ति पर सिखों का एक महाशक्तिशाली सम्प्रदाय संगठित किया है। श्री गुरु गोबिन्दसिंह की जीवनी एक सच्चे नाटक की तरह है। कैसा शक्तिशाली पुरुष, कैसा त्याग! सिंह का शिशु सिंह ही होता है। उनका किशोर पुत्र फतेहसिंह पन्द्रह वर्ष का बालक, अपने नौ वर्षीय भाई के साथ शहीद हुआ था। मुसलमान गवर्नर के प्रलोभन को ठोकर मार कर दोनों बालकों ने अपने धर्म की रक्षा की। किन्तु उसका परिणाम, उनके सिर काट दिए गए जल्लाद की कृपाण से। दोनों बालकों पर दीवार चिनकर सिर काटे गए। प्रसन्नमुख से धर्म का जयगान करते-करते दोनों भाइयों ने शैशव में देहत्याग किया, तब भी धर्म नहीं छोड़ा। उनका विजय-मन्दिर आज गुरुद्वारा फतेहपुरसाहब नाम से परिचित है।

गुरु अर्जुनदेव ही इस नरसिंह परिवार के आदिगुरु हैं। उनके पौत्र महायोगी गुरु तेगबहादुर का मस्तक बादशाह के आदेश से तलवार द्वारा दिल्ली में चाँदनीचौक में दो टुकड़े कर दिया गया था। आज वहाँ पर शीशमहल में गुरुद्वारा है। जहाँगीर के आदेश से कश्मीर के हिन्दुओं को निर्मम भाव से मुसलमान बनाया जा रहा था। उसी स्रोत को बन्द करने के लिए कश्मीरी पण्डित गुरु तेगबहादुर के शरणापन्न हुए। सतलुज नदी के तीर पर हिमालय के चरणों में स्थित आनन्दपुरसाहब में सिख किला बनाकर आत्मरक्षा कर रहे थे।

दरबार लगा। कश्मीरी हिन्दू गुरु तेगबहादुर के शरणापन्न हुए। गुरुजी ने कहा, ''इस बलपूर्वक धर्मान्तर-रोध करने का और दूसरा कोई उपाय नहीं दिखाई देता— यदि कोई महापुरुष अपना जीवन दान करें, तब ही यह उत्पीड़न बन्द हो सकता है''।

क्रीड़ारत गोबिन्द की वयस तब दस वर्ष की थी; पिता की यह वाणी सुनकर दृप्त सिंहशिशु की भाँति तेजवान होकर उठे। हाथ जोड़कर सविनय अपने पिता से कहा, ''पिता, आपसे बढ़कर महापुरुष अब यहाँ पर कौन है!'' पिता को होश आया, उनकी महायोगशक्ति की स्मृति सम्पूर्ण जागरूक हो गई। उन्होंने तभी सस्नेह वज्रगम्भीर स्वर में

कहा, ''हाँ बेटा, ठीक कहा है। श्री अर्जुनदेव का परिवार सत्य ही नरसिंह-परिवार है।''

अब इसी वीर योगी तेगबहादुर की वाणी पाठ हो रही है। नवम महला। ग्रन्थी पाठ करते हैं और बीच-बीच में यन्त्र सहयोग से कीर्तन होता है। पखावज, हारमोनियम और एक छोटा ऑरगन बज रहा है। कई-एक सिख साधु बैठे हैं। भक्तों से गृह परिपूर्ण है। एक रामायत साधु भी बैठे हैं। उनका गला और हाथ बहुत मालाओं से विभूषित है। एक श्रद्धालुजन ग्रन्थ साहिब के ऊपर चँवर डुला रहे हैं।

ग्रन्थी ज्ञानी के लक्षण पढ़ रहे हैं, गुरु तेग बहादुर कहते हैं—

गुन गोविन्द गायो नहीं, जन्म अकारथ कीन।
कहु नानक हरि भजु मना जिहि बिधि जल कौ मीन॥...

धनु दारा सम्पति सगल जिनि अपुनी करि मानि।
इनमै कछु संगी नहीं नानक साची जानि॥...

सुखु-दुखु जिह परसै नहीं, लोभु मोहु अभिमानु।
कहु नानक सुनु रे मना सो मूरति भगवान॥

उसतुति निंदिआ नाहि जिहि काञ्चन लोह समानि।
कहु नानक सुनि रे मना, मुकति ताहि तै जानि॥

हरखु सोगु जाकै नही, बैरी मीत समान।
कहु नानक सुनि रे मना, मुकति ताहि तै जानि॥

भै काहु कउ देत नहि, नहि भै मानत आनि।
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि॥

जिहि बिखिया सगली तजी, लीयो भैरव बैराग।
कहु नानक सुनु रे मना, तिह नर माथै भाग॥

जिहि माया ममता तजी, सभ ते भइओ उदासु।
कहु नानक सुन रे मना जिह घटि ब्रह्म निवासु...

नामु रहिओ, साधु रहिओ, रहिओ गुरु गोबिन्दु।
कहु नानक इह जगत मै किन जपियो गुर मंतु॥

श्री म चक्षु मुद्रित करके सुनते-सुनते एकदम स्थिर हैं। आरती

समाप्त हुई डेढ़ बजे। काशीमल्लिक टोल के निकट आकर श्री म ट्राम में चढ़कर बैठ गए।

•

अपराह्न साढ़े चार। श्री म मोटरकार में गौरी माँ के आश्रम के लिए रवाना हुए। संग में जगबन्धु और रमणी। आज नूतन आश्रम-प्रतिष्ठा— 'सारदेश्वरी आश्रम'। छोटे नलिनी स्कूलबाड़ी के प्रहरी रहे।

श्री म शामियाने के नीचे चेयर पर बैठे हैं। पूर्व की ओर से मैदान में शामियाना लगाया गया है। वहाँ पर ही सभा स्थान है। पत्र-पुष्पों से सब सज्जित। पूजनीया गौरी माँ इसी सारदेश्वरी बालिका विद्यालय की प्रतिष्ठात्री हैं। श्री म को सादर आह्वान करके बिठाया। बहुजन— सुखेन्दु, बड़े अमूल्य, डॉक्टर, विनय, वीरेन प्रभृति भी आए हैं। बेलुड़मठ के साधुओं में से भी कोई-कोई हैं।

'निमाई-संन्यास' कीर्तन हो रहा है। शिवपुर का दल है। गायकों ने संन्यासियों का वेश धारण किया है— शरीर पर आलखाल्ला, सिर पर पगड़ी, गले में माला, कन्धे पर नामावली। कीर्तन सुन्दर जमा है।

श्री म के आदेश से अन्तेवासी ने एक रुपया देकर ठाकुर को प्रणाम किया। असमय में श्री म ने प्रसाद नहीं पाया। सबके बदले का बड़े अमूल्य और जगबन्धु ने प्रसाद ग्रहण किया।

लौटते हुए रात्रि के सवा नौ हो गए।

श्री म ने मॉर्टन स्कूल के आँगन में प्रवेश किया। उसी समय एक साधुवेशी— 22-23 वर्ष वयस, शरीर पर गेरुआ कपड़ा, गले में माला— युवक ने आकर श्री म को अभिवादन किया। श्री म चलते-चलते फाटक के पास फुटपाथ पर खड़े हो गए।

श्री म के आदेश से साधु एक गाना गाते हैं— 'गुरु तोमार पाये रेखो मोरे।' इत्यादि।

साधु अभिलाषापूर्वक मिनति करते हैं। भाव के अतिशय से फुटपाथ पर श्री म के पाँव के पास बैठ कर प्रार्थना करते हैं, ''रैक्टर महाशय,

मैं आपका छात्र हूँ। तब पहचान नहीं पाया, पढ़ने के समय। भगवान की कृपा से अब पहचाना है। मुझ पर कृपा करनी ही होगी। नहीं तो मेरा और उपाय नहीं है।'' श्री म ने मिष्टवचन से आश्वस्त किया। साधु ने प्रणाम करके विदा ली।

गौरी माँ के आश्रम में जाते समय श्री म ने गाड़ी में एक भक्त शिक्षक के साथ स्कूल के विषय में आलोचना की।

श्री म *(शिक्षक के प्रति)*— प्रभासबाबू का तो निश्चय नहीं है कब लौटेंगे। अब की बार आकर भी, कहते हैं, join (योगदान) नहीं करेंगे। जभी श्यामलधन बाबू को बुलवाया है। उन्होंने तो अवकाश ले लिया है। किन्तु फिर अनुरोध करना पड़ा कि कुछ दिन काज करें। प्रभासबाबू सुपरिन्टेन्डेन्ट हैं। और फिर हैडमास्टर का भी अनेक काज करते हैं। श्यामलधन बाबू से कहा, ''जैसा कर रहे थे, वैसा ही करें।'' जिसको मैंने सीनियर किया था, अब देखता हूँ वे उसके उपयुक्त नहीं हैं— खूब irresponsible (दायित्वहीन) हैं। अनेक दिन कार्य करते-करते authority (कर्त्ताओं) को मानने का अभ्यास होता है। *(सहास्य)* स्वराज के दिन हैं ना। अब नॉनकोऑपरेशन (असहयोग) भी फिर चल रहा है। व्यक्ति किसी को मानना नहीं चाहता। जभी पुराने जनों का प्रयोजन है।

''कहा जाता है— An obedient wife commands the husband (सती की बातों पर पति चलता है)। भक्त टीचर मिलता तो खूब अच्छा होता।''

शिक्षक *(संकेत से, रमणी को दिखला कर)*— ये!
रमणी एम०ए० पास हैं।

श्री म— ट्रेनिंग चाहिए। इन दो विषयों पर लक्ष्य रखकर आदमी चाहिए— Formation of character and Passing of university examination (चरित्र निर्माण और विश्वविद्यालय की परीक्षा पास)।

''कितने व्यक्ति कितने बड़े काम करते हैं! कैसी है कर्त्तव्यबुद्धि उनकी! कर्त्तव्य-पालन करते हुए शायद जीवन ही चला गया। वे खूब

स्थिर–धीर हैं।

''ईश्वरभक्त उससे भी ऊपर है। उन्हीं गुणी के संग भक्ति, ठीक भक्ति रहे तब ही तो वे जगत का आदर्श बन जाते हैं। वे खूब बड़े–बड़े काज कर सकते हैं। और उनका ही सुनाम चिरकाल रहता है।

''इनकी दोनों ओर ही दृष्टि होती है कि ना— ईश्वर और जगत। वे जानते हैं ईश्वर आगे, परे जगत। अन्य बड़े आदमी केवल जानते हैं कि जगत ही सब है। बहुत हद्द हुई तो नाम–यश उनका आदर्श है।

''ईश्वर–भक्त का आदर्श है ईश्वर। वे ही हैं, 'salt of the earth' जगत का श्रेष्ठ–मानव, क्राइस्ट की बात में।

''भारत का प्राचीन इतिहास देखिए। जिनके नाम इतिहास बहा कर लेता हुआ चला आ रहा है, वे सब ही ईश्वर के भक्त हैं। और फिर वे हैं संसार के काम में अति दक्ष।

''ईश्वरभक्त ही ठीक–ठीक बड़ा काम करते हैं।''

मॉर्टन स्कूल कलकत्ता, 4 जनवरी, 1925 ईसवी;
20वीं पौष, 1331 (बंगला) साल, रविवार।

अष्टादश अध्याय

कर्म— उद्देश्य नहीं, उपाय

(1)

मॉर्टन इन्स्टिच्यूट। चारतल की छत। अब अपराह्न साढ़े पाँच हैं। श्री म अपने कक्ष से छत पर आए। थोड़ी ठण्डी हवा देते हैं। जभी शरीर पर लौंग क्लॉथ का पंजाबी-कुरता और लालपाड़ की धोती पहने हुए हैं। चेयर पर उत्तरास्य बैठे हैं। और सम्मुख दोनों ओर बैंचों पर सुखेन्दु, शुकलाल, रजनी प्रभृति भक्तगण बैठे हैं। भवानीपुर के सूर्य ऐच आए हैं। वे भी बैठ गए।

आज 20 अक्तूबर, 1929 ईसवी; रविवार, कृष्णा द्वितीया। गत कल 'लक्ष्मी-पूजा' गई है।

अन्तेवासी अब मठ में रहते हैं। कर्म के लिए कई वर्ष मद्रास-मठ में थे। अब लौटकर मठ में ही हैं। आज महापुरुष महाराज की औषध लेने कलकत्ता आए हैं— 3 बजकर 36 मिनट पर कुमारटूली उतर कर, अमरमुखर्जी के पास से होकर होमिओपैथिक औषध लेकर, श्री म के दर्शन करने आए हैं। उनके साथ महापुरुष महाराज के स्वास्थ्य की बातें होने लगीं।

अन्तेवासी—कल रात को थोड़ा दूध पीया था। आज दोपहर को झोल और साग। थोड़ा ज्वर होता है।

श्री म—उसी से ही तो भय होता है।

अन्तेवासी— आपका शरीर कैसा चल रहा है?

श्री म— भालो। तो भी बूढ़ा शरीर है, weakness (दुर्बलता) नहीं

जाती। सब ही होता है।

''इस समय-उस समय एक सेर (चार पाव), पाँच पाव दूध पीया जाता है। थोड़ा भात। तब भी दुर्बलता नहीं जाती।''

सूर्य ऐच— कौन बड़ा है? आप या महापुरुष?

श्री म— एक ही वयस है। एक-आध वर्ष का छोटा बड़ा। तो भी वे बड़ा कहकर claim (दावा) करते हैं *(हास्य)*। मेरा पिचहत्तर वर्ष तीन मास चल रहा है।

श्री म ने निज कक्ष में प्रवेश किया। हाथ में एक डिब्बा लेकर पुनः बाहर आ गए। डिब्बा खोलकर दो सन्देश अन्तेवासी के हाथ में दिए और दो सूर्यबाबू के एवं दो सिलहट के ब्रह्मचारी देवेन के हाथ में दिए। सूर्यबाबू के दो भाई मनु और सनत् मठ में साधु हुए हैं। उनका समाचार लेते हैं।

सन्ध्या हुई कि हुई। अच्छी ठण्डी हो गई है। श्री म उठकर सीढ़ी वाले कमरे में जाकर बैठ गए— चेयर पर उत्तरास्य। सामने के बेंच पर अन्तेवासी, ब्रह्मचारी देवेन, सूर्य, बलाइ, हिमांशु, गुह, पूर्णेन्दु, कमल, शुकलाल, सुखेन्दु, रजनी प्रभृति अनेक भक्त बैठे हैं। बातें हो रही हैं।

सूर्य— अच्छा, ठाकुर भवानीपुर गए थे क्या?

श्री म— हाँ, किसी वकील के घर गए थे, सुना है। हम उस स्थान को identify (खोज) कर नहीं पाए। फिर कालीघाट पर तो अनेक बार गए हैं।

''उनकी कैसी अद्‌भुत vision (दृष्टि) है, कौन समझेगा? बताया था, ''एक दिन माँ काली को कालीघाट के पुकुरपाड़े में घूमते देखा था''।

''और फिर बोले, ''कालीघाट और दक्षिणेश्वर एक ही तो क्षेत्र है।'' 'किसेर' (कछवे का) आकार। देवीपीठ इतनी प्रशस्त है। हम उसको क्या समझेंगे!

''एक दिन कहा, ''जो माँ-मन्दिर में हैं, वे ही गर्भधारिणी हैं, और जो हमारी माँ ठाकुरण हैं— वे तीनों ही एक हैं।''

''हम उनका काण्ड क्या समझेंगे! मुहुर्मुहुः समाधि होती है उनकी।

कैसी अद्‌भुत समस्त perception (अनुभूति) है!

''उनकी ये समस्त बातें सुनकर केशवबाबू ने एक sermon (वक्तृता) दी थी वहीं पर (नवविधान ब्राह्मसमाज में)— 'मृण्मय आधारे चिन्मयीदेवी'। 'मृण्मय आधार' होने से ही तो मूर्तिपूजा मानना हो गया।''

सूर्य— चेलों ने आपत्ति नहीं की?

श्री म— वे ऐसा करके बोलते थे कि वे पकड़ ही नहीं पाते थे।

एकजन भक्त— केशवबाबू कितने दिनों से ठाकुर के पास आना-जाना करते थे?

श्री म— एटीन सेवन्टी फाइव से एटीन एटी फोर तक (1875—1884 खृ०)— यही दस वर्ष आना-जाना करते रहे। ठाकुर भी जाया करते थे उनकी बाड़ी पर। खूब strenuous life (क्रियाशील जीवन) था कि ना! केवल मात्र forty two (बयालीस वर्ष) रहे थे।

एकजन भक्त— ठाकुर के ऊपर उनका कैसा भाव था?

श्री म— कहा था, उनके जैसा मनुष्य जगत में नहीं देखा। अँगूरों को जैसे रूई के ऊपर रखते हैं वैसे उनको (ठाकुर को) रखना उचित। अथवा काँच की अलमारी में रखना उचित। केशवबाबू खूब प्यार करते थे।

श्री म *(सहास्य)*— ठाकुर ने विजयकृष्ण गोस्वामी से कहा था, 'देखो विजय, एक दिन (केशव) ने मुझ से कहा, आप कृपा करके हमारा पूजा-गृह पवित्र कर जाइए। गृह में जाने पर द्वार बन्द कर दिया, और फूल-चन्दन द्वारा मेरे पैरों की पूजा की थी। कहा था, किसी से मत कहना। मैंने उत्तर दिया, 'तुम्हारा भी द्वार बन्द रहा।' भय है, पता लगने पर फिर और schism (विभेद) हो जाएगा। वैसे ही तो दो दल हैं। नवगोपाल विश्वास भी थे गोस्वामी के साथ जब ठाकुर ने यह बात बताई थी। हम भी थे उपस्थित।

सन्ध्या का आलोक आ गया है। श्री म सर्वकर्म छोड़कर ध्यान करने बैठ गए। भक्तगण भी ध्यान करते हैं। ध्यान शेष होने पर भजन गाने के लिए कहा। किन्तु भजन नहीं हुआ। प्रसंगान्तर आरम्भ कर लिया।

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— ठाकुर का greatest message (श्रेष्ठ सन्देश) है— भगवान का दर्शन किया जाता है। और फिर बातें भी की जाती हैं। यदि कहो hallucination (मन का भ्रम), तो वह कैसे होगा? जलवत् तरल; मिलता जो जा रहा है। वे सब बातें वेद बन गई हैं।

''जो संस्कारवान् हैं, किंवा जिन्होंने उनकी कृपा लाभ की है, वे ही उनको देख पाएँगे। चाबी तो उनके हाथ में है। उनकी इच्छा हो तो कितनी देर उनके पाने में!

''जिनको उनके लिए व्याकुलता हो गई है, उनको तो सम्भवत: इसी जन्म में ही उनका लाभ हो जाएगा। ठाकुर के जिन्होंने दर्शन किए हैं, उनमें से किसी-किसी ने इसी जन्म में ही लाभ किया है।

''और फिर जिनकी ऐसी व्याकुलता नहीं हुई है वे अनेक जन्मों में लाभ करेंगे। 'अनेक जन्म संसिद्धस्ततो याति परां गतिम्' (गीता 6:45)।

''जभी तो वैसी व्याकुलता न होने पर वे कहते हैं, मेरे लिए कार्य करो। 'नियतं कुरु कर्म त्वं' (गीता 3:8)। और फिर कैसा कार्य, वह भी कहा है— निष्काम कर्म करो। उससे मन स्थिर होगा। इस प्रकार कार्य करो जिससे कर्म में बन्धन न हो। कर्म— not the end of life but means (कर्म जीवन का उद्देश्य नहीं, उपाय है)।

''वे क्या जानते नहीं कि निष्काम कर्म कितना कठिन है! तभी फिर भरोसा दिया है— 'स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् (गीता 2:40)।' यही जो stupendously difficult (दारुण कठिन) निष्काम कर्म, उसका तनिक-सा भी कर सकने पर उनको पाया जाएगा। वे क्या जानते नहीं मनुष्य की weakness (दुर्बलता)!

''यदि कहो, 'कर्म से यदि उनकी प्राप्ति नहीं होती तो फिर कर्म क्यों करूँ?' नहीं, वैसी बात नहीं है। गीता में है, 'मय्यैव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय'— मुझ में मन समाधिस्थ करो। यदि न कर सको तो फिर, 'अभ्यास-योगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय' (गीता 12:9)। अभ्यास करो। अभ्यास भी यदि न कर सको, तब 'मत्कर्मपरमो भव' (गीता 12:10)।— मेरी प्रीति

के लिए अथवा मुझ में भक्ति उत्पादक कर्म करो।

''वे मनुष्य की weakness (दुर्बलता) को जानकर ही सब कुछ बतला गए हैं। कुछ भी छोड़ नहीं गए हैं। मन समाधिस्थ नहीं होता है इसी कारण से तो कर्म करना है। तभी मन स्थिर होगा। और फिर कहते हैं, 'यस्तु आत्मरतिरेव स्यात् आत्मतृप्तश्च मानव:,... तस्य कार्यं न विद्यते (गीता 3:17)।'

''अनेक contradictory statements (विरुद्ध उक्तियाँ) हैं। सब ही सत्य हैं। Different states (विभिन्न अवस्थाओं) के लिए ये सब हैं।

''कर्म not the end of life but means (कर्म जीवन का उद्देश्य नहीं, उपाय।) End of life (जीवन का उद्देश्य) है भगवान-दर्शन; और (उनके संग में) बातें करना। यही बात ठाकुर कह गए हैं। और फिर अपने जीवन में दिखा गए हैं। एक-आध बार नहीं— सर्वदा, चौबीस घण्टे। जैसे South Pole (दक्षिण मेरु देश) में दिवानिशि आँधी-तूफान बहता रहता है।''

श्री म एकटु चुप किए रहे, फिर बातें करते हैं।

श्री म *(शुकलाल के प्रति)*— 'एकदम कामना-वासना कैसे जाए', यदि प्रश्न करो; उसका उत्तर है— भगवान-दर्शन होने पर जाती है। ठीक-ठीक निष्काम कर्म तो वे ही कर सकते हैं, जिनका ईश्वर-दर्शन हो गया है।

''तभी गुरु (अवतार) आकर बतला देते हैं, इस प्रकार चेष्टा करो। हमें चेष्टा करनी चाहिए। 'योगस्थ: कुरु कर्माणि (गीता 2:48)।' सिद्धि-असिद्धि की ओर भ्रूक्षेप न करके कार्य करना।''

श्री म *(अन्तेवासी के प्रति)*— अर्जुन ने कहा, 'न योत्स्ये'। श्री कृष्ण ने हँस कर उत्तर दिया— भाई, तुम ऐसा कर नहीं सकोगे। क्षत्रिय शरीर है; युद्ध करना ही होगा। 'प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति। (गीता 18:59)' फिर भी इस प्रकार करो— 'नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मण: (गीता 3:8)।' नियत कर्म कर, कर्मशून्यता की अपेक्षा कर्म श्रेष्ठ है।

''कर्म not the end but means; End of life is— (कर्म उद्देश्य

नहीं, उपाय है। जीवन का उद्देश्य है)— भगवान-दर्शन, उनके संग बातें करना।

"वे क्या जानते नहीं कि कर्म में रहने से मलिनता आएगी। अर्जुन फिर हैं संसारी। तभी कहा, 'मामेकं शरणं व्रज (गीता 18:66)।' भरोसा दिया 'अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि।' अर्थात् यही मलिनता मैं दूर कर दूँगा। तुम मेरे शरणागत होकर कार्य करो।

"स्मरण रखो— कर्म— not the end of life but means— (जीवन का उद्देश्य नहीं, किन्तु उपाय मात्र) है।"

श्री म *(सूर्य के प्रति)*— 'किं कर्म किं अकर्मेति कवय: अपि अत्र मोहिता:।' (गीता 4:16) 'कवय:' अर्थात् ऋषिगण। वे भी समझ नहीं सके— कर्म और अकर्म का भेद। जभी कहा, 'कर्मणि अकर्म य: पश्येत अकर्मणि च कर्म।' (गीता 4:18)

"कर्म क्या एक प्रकार के हैं, कर्म नाना प्रकार के हैं।

"जभी तो कर्म— is not the end but means (उद्देश्य नहीं, उपाय मात्र) है।

श्री म *(बड़े जितेन के प्रति)*— एकजन ने ठाकुर से पूछा, "महाशय, कामना कैसे जाए?" ठाकुर ने उत्तर दिया, "उनका दर्शन करने पर।" उनके लिए व्याकुलता होने पर ही उनकी कृपा से उनका दर्शन होता है। व्याकुलता होती है— उनके नाम-गुणकीर्तन से, प्रार्थना और साधुसंग से।

" 'सद्गुरु पावे भेद बतावे'। यही जो nice distinction (सूक्ष्म प्रभेद) है, उसे तो सद्गुरु बता देते हैं।"

श्री म *(सब के प्रति)*— उन्होंने अज्ञान द्वारा सब ढक कर रखा हुआ है, जानने नहीं देते। वे ही फिर मनुष्य बनकर आकर बोलते हैं— इसके ऊपर भी एक हैं।

"जिन्होंने अज्ञान दिया है, उन्होंने ही फिर और पथ भी बोल दिया है। जिन्होंने बद्ध किया है, वे ही मुक्त करते हैं।

''अवतार जब आते हैं तो वे क्या दो-चार जनों के लिए आते हैं? वे आते हैं whole humanity (विश्व मानव) जन्य। सबका ही उपाय वे बता गए हैं।

''देखो ना, एक दल उन्होंने किया है। वे ईश्वर के बिना कुछ भी नहीं जानते। जैसे मधुमक्खी फूल बिना कुछ नहीं जानती। और फिर किसी-किसी को संसार में रखा है।

''वे क्या केवल साधु के लिए आते हैं— सबके लिए उनका आगमन है। एक भक्त से कहा था, वे विवाह करके संसारी बने थे— 'तेरे लिए ही अधिक चिन्ता है।' जानते हैं कि बन्ध गया है।

''कर्म— not the end of life but means. कर्म जीवन का उद्देश्य नहीं, उपाय है। End of life (उद्देश्य) है भगवान-दर्शन।

''और फिर सोचो, जिन्होंने पूर्वजन्म के संस्कारों से नूतन गृहस्थ दोबारा नहीं किया है इस जन्म में, जो सर्वदा उन्हें लेकर रहते हैं, वे क्या फिर इच्छा करके संसार बनाने जाएँगे? जब वे सब देख रहे हैं, इसीलिए क्या फिर अपने को बाँधने जाएगा?

''बाइबल में है, क्या कहते हैं, 'Do not tempt thy Lord' (ईश्वर की परीक्षा करने मत जाना)। 'टेम्प्ट' अर्थात् examine (परीक्षा) करना। *(सूर्य के प्रति)*— ये आपके भाई क्या फिर विवाह करने जाएँगे?''

श्री म *(भक्तों के प्रति)*— देखो ना, उन्होंने साधु क्यों बनाए हैं? तभी तो गृह में जो हैं, वे लोग उनकी पूजा करेंगे। तभी तो उनका मंगल होगा। मछली के तेल में मछली तलना। एक के द्वारा अन्य और एकजन को भला बनवा रहे हैं।

''The end of life is (जीवन का उद्देश्य) है— भगवान-दर्शन। कर्म है— means (उपाय)।

''यही देखो, हम इतने जन यहाँ पर हैं। सब ही सोच रहे हैं 'मैं कर्त्ता हूँ'। किन्तु कर्त्ता कहाँ है? जब माँ के पेट में थे तब वे कहाँ थे? देखो ना,

कैसी helpless state (निरुपाय अवस्था)! और फिर दस महीने से अधिक रहने का उपाय नहीं है। उनकी ऐसी सब अवस्था है। क्रमशः हाथ-पैर होने लगे प्रायः अदृश्य एक स्पारमेटोजा (वीर्याणु) से। बाहर आ गया। यहाँ पर ऐसा environment (वातावरण) कर रखा है, उससे क्रमशः sensation, perception (इन्द्रिय क्रिया, वस्तुज्ञान) होने लगा। और फिर उनको localise (अनुभव) करने के लिए एक centre (केन्द्र) हुआ। उसका नाम है मन। मन से बुद्धि। उससे personal identity (वैयक्तिक, अपना-अपना ज्ञान), अहंकार— जिससे 'मैं' 'मैं' करता हूँ। कैसा अद्‌भुत व्यापार— nervous system (स्नायु मण्डली)! ये सब उन्होंने बनाई हैं। अब मनुष्य कैसे अपने को कर्त्ता सोचता है?''

श्री म *(सब के प्रति)*— जिन्होंने इतना सब काण्ड किया है, वे ही फिर पीछे जो होगा, करेंगे। मुझे इतना सोचने का क्या प्रयोजन? उन पर छोड़कर निश्चिन्त।

एक नूतन भक्त आए हैं। वे चेयर पर श्री म के बायीं ओर बैठे हैं। वे बातें करते हैं।

नूतन भक्त *(श्री म के प्रति)*— उनको प्राप्त करना ही यदि जीवन का उद्देश्य है— यह समझ में भी आता है कि अवश्य है, तो फिर उनमें मन क्यों नहीं जाता?

श्री म— ठाकुर ने कहा था, ''साधु-दर्शन, साधु-सेवा करो। और उनसे प्रार्थना करो।'' यही तो है direct (सहज) पथ।

''साधु फिर तीन प्रकार के बता गए हैं— निर्जला, फलमूलाहारी और लुचिछक्काभोजी। लुचिछक्काभोजी अर्थात् जो भोग करते हैं। देहसुख, लोकमान्य, रुपया-पैसा, प्रतिष्ठा शूकरी विष्ठा— यही सब चाहते हैं वे। तुम यदि उनका संग करो तो फिर तुम भी वैसे ही हो जाओगे।

''जो भगवान के लिए व्याकुल हैं, वैसे साधु देखने से तुम्हें भी व्याकुलता होगी।

''थियेटर में भी साधु हैं— केवल भेष है। उनका संग करने से क्या होगा?''

हठात् एक 'हुड़-हुड़' शब्द से बात का प्रवाह रुद्ध हो गया। सब स्तम्भित होकर देखते हैं। कमरे के उत्तर-पूर्व कोण में हाईबैंच के ऊपर से एक देवदारु काठ का बक्स नीचे गिर गया है।

अब रात्रि साढ़े सात। कथामृत-पाठ हो रहा है। हिमांशु तृतीय भाग, चतुर्थ खण्ड पढ़ते हैं— (21वीं जुलाई, 1883)— मणि चार आम लेकर आए हैं, ठाकुर के दर्शन करने दक्षिणेश्वर। तीन परिच्छेद पाठ हुए।

अन्तेवासी और ब्रह्मचारी (देवेन) प्रणाम करके विदा लेते हैं। वे बेलुड़मठ लौटेंगे। श्री म ने खड़े होकर विदा दी। कहते हैं,

''जो अखण्ड सच्चिदानन्द, जो वाक्य मन के अतीत, जो मनुष्य होकर आए हैं, आप लोगों को उन्होंने अपने पदप्रान्त में स्थान दिया है, उनकी सन्तान हैं आप लोग, अपना जन, जैसे पिता-पुत्र। इसी महासत्य का ही चिन्तन करते-करते मठ में जाएँ।''

सुखेन्दु ने एच० बोस के फाटक तक आकर विदा ली।

बेलुड़मठ।
20 अक्तूबर, 1929 ईसवी, रविवार।

ऊनविंश अध्याय

आग से खेलना

(1)

श्री म अपने कक्ष के द्वार पर खड़े होकर कहते हैं,
'नमस्कार,–नमस्कार। वा: वा:! आइए, बैठिए।'
बेलुड़मठ के चार संन्यासी आकर श्री म की अपेक्षा करते हैं। साधुओं ने खड़े होकर श्री म की अभ्यर्थना की और प्रणाम किया। श्री म चेयर पर बैठे उत्तरास्य। साधुगण बैठे जोड़ा-बेंच पर, सम्मुख सतरंजी (दरी) के ऊपर।

मॉर्टन स्कूल का चारतल का सीढ़ी का कमरा। अब सबेरे के साढ़े आठ। श्री म गृह में बैठे पढ़ रहे थे। उनके दौहित्र ने जाकर संवाद दिया, वे बाहर आ गए। साधुगण इस समय वैलिंगटन लेन अद्वैतआश्रम से मोटर-बस में मछुआबाजार के मोड़ पर उतरकर श्री म का दर्शन करने आए हैं।

ज्येष्ठ मास। इस गर्मी में भी श्री म के शरीर पर लाल इमली का सफेद स्वैटर है। गला वारफ्लेनल की पंजाबी कढ़ाई से विजड़ित है। लाल किनारे की धोती पहनी हुई है। शरीर अस्वस्थ है। तथापि कथामृत-वर्षण का विराम नहीं है।

श्री म के कथामृत-वर्षण से जगत भूल जाता है। स्वामी शान्तानन्द ने गत कल अन्तेवासी से कहा था, 'चलो भाई, एक बार जगत भूल आएँ।' अर्थात् श्री म के दर्शन कर आएँ। तभी आज स्वामी नित्यात्मानन्द स्वामी शान्तानन्द को लेकर आ रहे थे— इसी सुयोग से स्वामी सत्प्रकाशानन्द और स्वामी सम्बुद्धानन्द भी दर्शन करने आ गए हैं।

श्री म *(स्वामी सत्प्रकाशानन्द के प्रति)*— आप कहाँ पर रहते हैं?

स्वामी सत्प्रकाशानन्द— दिल्ली में।

श्री म— नहीं, अब कहाँ पर हैं, मठ में?

स्वामी सत्प्रकाशानन्द— जी हाँ, मठ में।

श्री म— हम दिल्ली गए थे, अट्ठारह वर्ष पूर्व। कुछ देर के लिए— passing— ऋषिकेश से लौटते हुए। वायस्कोप में पचास हजार लोग नमाज पढ़ रहे हैं, देखा था। तब तक भी वहाँ पर राजधानी नहीं बनी थी।

स्वामी शान्तानन्द— नाइनटीन हंडरेड ट्वैल्व (1912)। माँ जब काशी में थीं तब आप गए थे।

श्री म— हाँ, तब ही। नमाज की छवि तो थी बहुत सुन्दर। खूब उद्दीपन होता है।

स्वामी सम्बुद्धानन्द— Actual (सच्ची) नमाज से बायस्कोप में अच्छा दिखता है। वहाँ पर सब कुछ दिखाई देता है।

श्री म क्या भाव रहे हैं? पुन: कथामृत-वर्षण।

श्री म *(साधुओं के प्रति)*— कैसा सुन्दर दृश्य— सर्वदा ही ईश्वर के संग में एक हुए रहते हैं। एक छतरी खुली हुई थी। एकजन उसको बन्द करता है। देखते ही झट समाधि। योग की बात का उद्दीपन हुआ है— बिखरा हुआ मन सिमट गया। सब निरोध हो गया। 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:।' सर्वदा ही उनके (ईश्वर के) संग में एक हुए रहते हैं।

''एक बार गए थे, बड़ेबाजार में एक मारवाड़ी भक्त के घर। तब किसी ने उनसे पूछा, ''कलि में तो अब अवतार नहीं?'' ठाकुर ने उत्तर दिया, ''तुम्हें कैसे पता लग गया?'' अर्थात् वे स्वयं ही जो अवतार हैं। यह बात सबसे नहीं कहते थे। अन्तरंगों से कहते थे, ''मेरा ध्यान करने से ही होगा। तुम्हें और कुछ भी करना नहीं होगा।'' बहिरंगों से नहीं कहते थे यह बात। उन्हें, जैसे ब्राह्मलोगों से कहते, 'हाँ, जो कर रहे हो, करो।'

''वे 'निराकार' मानते हैं कि ना। उन लोगों से कहते, ''मिश्री की

रोटी जिस प्रकार भी खाओ, मीठी लगेगी— आड़ी करके खाओ या सीधी करके खाओ''।

एक दिन कहा,
''एक दिन देखा था इसके (ठाकुर के) भीतर से सच्चिदान्द बाहर निकल कर दो बन कर कहते हैं— मैं ही युग-युग में अवतार होता हूँ। देखा, सत्त्वगुण का आविर्भाव, एकदम पूर्ण आविर्भाव''!

''अन्तरंगों से कहते, अपनी ये बातें।''

पुन: कुछ काल चुप रहकर फिर बातें करते हैं।

श्री म *(साधुओं के प्रति)*— यही कल मेमें आई थीं, अमेरिका की दो और जर्मनी की भी थीं।

उनके नाम बताते हैं।

एक साधु श्री म की दोनों आँखों को एक दृष्टि से देखते हैं। वे सोच रहे हैं, 'इतनी वयस' किन्तु बुद्धि है कैसी स्थिर! ऐसे कठिन नाम एक बार सुनकर ही स्मरण रखे हैं। यही ये हैं 'स्थितप्रज्ञ'।

श्री म— जर्मन वाली तो नर्सिंग अच्छी जानती है। जिमनास्टिक भी अच्छी जानती है। रंगून जाएगी। मैंने एक remark (पर्यवेक्षण) किया— Once a nurse, always a nurse (जीवन भर ही नर्स रहना पड़ेगा)! सुनकर खूब हँसी। बोला, क्यों?
''आगे बढ़ो ना! ठाकुर की जैसे कहानी है। आगे चन्दन की लकड़ी, चाँदी की खान, सोना, हीरे की खान है। आगे जाओ।

''देखा वे मेमें 'वेदान्त-वेदान्त' करती हैं। अच्छी स्त्रियाँ। मैंने कहा, Who is to interpret the Vedanta? An avatara is required. (वेदान्त-व्याख्या कौन करेगा? एक अवतार का प्रयोजन है।) अवतार न हो तो शास्त्र का अर्थ कहेगा कौन? Sutras are all right. But who is to interpret them? (सूत्र तो सब ठीक हैं। किन्तु उनकी व्याख्या कौन करेगा?) वे आकर ही तब शास्त्र की व्याख्या करते हैं।

"The dispensary is filled with bottles with magnificent labels on. Swallow the contents. (दवाखाना तो चमकदार लेबलों वाली दवाओं की बोतलों से परिपूर्ण है। इच्छानुसार खाओ ना औषध!) तुम्हारी (अपनी) इच्छा से लेने पर असुख करेगी। जभी डॉक्टर की आवश्यकता है। और फिर मात्रा भी कही है। 'डॉक्टर' अर्थात् अवतार।

"नहीं तो फिर, 'रोगी यदि बैठा था, तो 'वैद्य' ने आकर लिटा दिया,' हो जाता है। Blind leading the blind (जैसे अन्धे द्वारा अन्धे को पथ दिखलाना) है। कहते थे, बाजे के बोल मुखस्थ करना तो सहज है, हाथ में लाना कितना कठिन है।"

एक साधु *(स्वगत)*— शास्त्र को ठाकुर की बातों के संग मिलाकर पढ़ना उचित। जहाँ पर न मिले, वहाँ से छोड़ देना।

श्री म *(उत्तेजित भाव से)*— It is no joke, a very serious matter— playing with fire (यह बालकों का खेल नहीं है, अति गुरुतर व्यापार है— आग से खेलना)।

"God should be seen, talked to and communed with (ईश्वर-दर्शन करना होगा। उनके संग बातें करनी होंगी। और फिर मुक्त होकर रहना होगा।)"

> जनैक संन्यासी *(स्वगत)*— कैसी आश्चर्यजनक जोर की बातें हैं! बातों के साथ-साथ मन को भी तो क्रमशः ऊपर से ऊपर ले जा रहे हैं, अन्त में एकदम आदर्श में। बाहर का जगत जैसे भूल गया है।

श्री म— अवतार आकर शास्त्र का गूढ़ अर्थ प्रकाश करते हैं। नहीं फिर blind leading the blind, both fall into the ditch (अन्धे को जैसे अन्धा ले जाता है, वैसे ही हो जाता है। दोनों ही गर्त में गिर कर प्राण खो बैठते हैं)।

"आजकल देखते हैं— नए जिन्होंने ब्रह्मचर्य, संन्यास लिया है, वे आश्रम के लिए चन्दा लेने जाते हैं। यह तो बहुत dangerous (विपद्जनक) है। Sight and scenes (बाहरी प्रतिकूल दृश्यादि) का infleuence (प्रभाव)

होता है। हो सकता है युवती स्त्री सामने आ गई।

"तना मोटा हो जाने पर तब हाथी बाँधने से भी कुछ नहीं होता। पहले बहुयत्न से 'तना' मोटा करना चाहिए। तब फिर करने ही हों तो ये सब कार्य करो।

"मठ तो Buddhistic movement (बौद्ध युग) में कितने हुए! उनका चिह्न भी तो नहीं रहा। मलिनता आ जाने से सब गया। रोमन कैथोलिक्स के कितने सारे आश्रम हुए थे। कहाँ सब गए? मिडल एज (Middle Age)— मध्ययुग में कितना सब Inquisition* (लोगों का जलाना आदि) हुआ।

"Organisation (संघ) में क्रमशः सब hollowness and rottenness (खोखलापन और कीचड़) घुस जाती है। ऑथोरिटी (कर्त्तापक्ष) को सर्वदा ही guard (सुरक्षा) करना उचित।

"क्राइस्ट ने कहा था, The sabbath was made for man, and not man for the sabbath (बाहरी आचार मनुष्य को ईश्वरमुखी बनाने के लिए बनाए गए थे; मात्र आचार पालन के लिए मनुष्य की सृष्टि नहीं हुई)। ठाकुर का भी यही भाव है। मनुष्य को sacrifice (विसर्जन) करने की उनकी इच्छा नहीं। मनुष्य को जहाँ तक हो सके ठीक रखकर— playing with fire (आग से खेलना)।"

संन्यासीगण निर्वाक्— यह गुरुगम्भीर सावधान वाणी सुनते हैं।

श्री म *(साधुओं के प्रति)*— ठाकुर 'नन्दनबागान' में गए थे। ब्राह्मलोगों का उत्सव था। स्त्रियों ने पैरों में जूते पहने हुए। ठाकुर बोले, 'ओ माँ, मैं सोचता था अब ये नाचेंगी'। Caricature (हास्यरस) का अभिनय करते थे कि ना! *(हास्य)*। 'ब्राह्मसंगीत' हाथ में है। किसी ने कहा, 'अब, गाना गाएगा।' झट ठाकुर ने उत्तर दिया, 'अच्छा, स्त्रियाँ निकट बैठी हैं। ध्यान कैसे होगा?' वे भोगी हैं, भोग की वस्तु निकट रखते हैं।

* Inquisition— रोमन कैथोलिक गिरजे का अपराधी को दण्ड देने वाला धार्मिक न्यायालय।

स्वामी सत्यप्रकाशानन्द और स्वामी सम्बुद्धानन्द *(समस्वर में)*— आजकल थियोरी है, उनके संग में रहने से sex idea (काम-भाव) कम होता है। गान्धी जी ने भी वैसा ही किया था। किन्तु आश्रम में कई खराब incidents (घटनाएँ) हुई हैं।

श्री म *(सविस्मय)*— वह तो होगा ही। वह भी (स्त्री-पुरुष का एक संग में रहकर पवित्र रहना) क्या कभी होता है! भोगी और भोग की वस्तु निकट रहने पर ऐसा होगा ही।

"तो भी त्यागियों का नहीं। त्यागियों में भी जो प्रवर्तक हैं, उन्हें सावधान होने के लिए कहते थे। प्रथम अवस्था में तो स्त्रियों की छाया तक पड़ने के लिए मना करते।

"ये सब hard, unpalatable truth (कठोर अप्रीतिकर सत्य) वे कह गए हैं। सर्जन जब सर्जिकल लेन्सेट (छुरी) चलाता है तब कष्ट तो निश्चय ही होता है। किन्तु पीछे खूब कहते हैं, 'रोगी को बहुत आराम से निद्रा हुई'— (The patient had a good rest. His nerves were soothed).

"Unpalatable (अप्रीतिकर) होने पर भी in the long run (अन्त में) भला होता है। क्या कहते हो? Nothing succeeds like success (साफल्य-लाभ ही सफलता का जनक है)।"

प्रशान्त गम्भीर श्री म में कुछ थोड़ा-सा चांचल्य दिखाई दिया। निकट ही द्वार के साथ अन्तेवासी बैठे हैं।

श्री म *(अन्तेवासी के प्रति)*— मिश्री लाएँ नहीं! घर में है।

'साधु लोग आए हैं, किसके द्वारा सेवा करेंगे', यही चिन्ता है। और फिर अपना शरीर है अस्वस्थ। आँखों से बीच-बीच में जल गिर रहा है। अन्तेवासी ने कमरे में प्रवेश किया। वे भी पीछे-पीछे गए। टेबल पर काँच के अमृतबान में मिश्री है। टेबल उत्तरपश्चिम कोण में, उत्तरदक्षिण में लम्बमान। पास ही पूर्वपश्चिम लम्बमान खाट पर बिछौना। टेबल पुस्तकों से पूर्ण। श्री म ने स्वयं ही एक एल्युमीनियम के पात्र में

कुछ मिश्री के टुकड़े लिए। अन्तेवासी जल डाल रहे हैं। तीन बार श्री म ने मिश्री धोई। कहते हैं, 'ठाकुर को देना होगा कि ना! तत्पश्चात् साधुओं को प्रसाद देना।' मिश्री का पात्र हाथ में लेकर चक्षु 'अन्तर्मुखीन' करके, 'चटीजूता' (स्लीपर) छोड़ कर ठाकुर को निवेदन किया। बाहर आकर, पुनः चटीजूता उतार कर साधुओं के हाथों में मिश्री प्रसाद दिया। अस्वस्थ शरीर। भीतर यन्त्रणा। तब भी साधुसेवा छोड़ेंगे नहीं। स्वयं साधुओं के स्थूल, सूक्ष्म, कारण शरीर की सेवा कर रहे हैं अकातर-भाव से।

युवक सतीनाथ का प्रवेश। संग में किशोर वयस्क भाई। उसके हाथ में एक लिफाफा, उसमें मिठाई। सतीनाथ कभी-कभी आते हैं। उनका भाई गौर वर्ण। चक्षु, मुख का भाव स्थिर, भक्तिमान। दोनों भाई भूमिष्ठ होकर साधुओं को प्रणाम करते हैं।

श्री म *(स्वगत)*— सुराही में तो जल नहीं है।

सतीनाथ जल लेने के लिए एक तल पर जाते हैं।

श्री म *(सतीनाथ के प्रति)*— पञ्जु से जल मँगवा लो यदि वह दिखाई दे।

सतीनाथ अपने-आप ही जल ले आए।

अन्तेवासी *(सतीनाथ के प्रति)*— बड़ा ही कष्ट हुआ!— एकतल से सुराही लेकर चारतल पर चढ़ना।

श्री म *(सहास्य, प्रतिवाद करते हुए)*— जल लाने में ही इतना कष्ट! मनुष्य ईश्वर के लिए कितना कष्ट करता है।

"स्वामीजी (विवेकानन्द) तीन दिन के अनाहार से मूर्च्छित हुए। साधुओं के लिए जल लाने में फिर कितना कष्ट!"

स्वामी सम्बुद्धानन्द— यहाँ पर आकर पाँच मिनट बैठने से ही सब कष्ट दूर हो जाता है।

श्री म— हाँ। जहाँ पर अच्युत की कथा होती है, वहाँ पर सर्वतीर्थ— गंगा, यमुना, गोदावरी— सारे तीर्थों का समागम होता है। भागवत में शुरु में ही ये

सब बातें हैं। और फिर सब ठाकुर की ही बातें हैं।

श्री म *(सब के प्रति)*— 'उपनिषदं भो ब्रूहि, उपनिषदं' *(हास्य)*। आचार्य ने उत्तर दिया, यही जो बोला है, वही उपनिषद्। ईश्वरीय कथा ही उपनिषद्।

सतीनाथ आम और 'सन्देश' लाए हैं। श्री म ने थोड़ा-सा सन्देश देकर कहा, ''दो, साधुओं को थोड़ा-थोड़ा भाग करके सबको दो।'' साधु पुनः प्रसाद खाते हैं।

श्री म *(साधुओं के प्रति, बालक भक्त को दिखलाकर)*— ये सब हैं new generation (नूतन पीढ़ी के भक्त)।

स्वामी सत्प्रकाशानन्द— अच्छा, आजकल young men में (युवकों में) परिवर्तन देखते हैं?

श्री म— हाँ। बहुत। केवल क्या यही? और फिर वह भी तो कहो ना— लड़कियों की बात। क्या हो रहा है, देखते नहीं! वह सब देखकर वैस्ट भी एकदम अवाक् हो रहा है। जो अभावनीय, अचिन्तनीय, स्वप्न में अगोचर है, वही हो रहा है। उनकी (वेस्ट वालों की) धारणा है कि जब लड़कियाँ वही सब (नोन कोओपरेशन) कर रही हैं, तब देश में खूब उन्नति होती है।

स्वामी सत्प्रकाशानन्द और सम्बुद्धानन्द— सरोजिनी नायडू ने अमेरिका में वक्तृता दी है। सुनकर वे स्तम्भित हुए हैं।

श्री म— वे क्या अकेली? अब तो कितनी ही सब बाहर आ रही हैं। उस देश में भी इतना नहीं हुआ है। जेल के भीतर सब क्या करती हैं। नृत्य करती हैं— किसी तरह भी रुकती नहीं हैं।

श्री म *(साधुओं के प्रति)*— अच्छा, तो फिर ठाकुर ने जो कहा था— 'लज्जा ही स्त्रियों का भूषण' उसका क्या हुआ?

''हाँ, यह तो स्वराज-लाभ के लिए है। तरंग का *(हाथ से दिखला कर)* hollow and crest (उतार-चढ़ाव) होता है। यही तो hollow (हीनावस्था) और फिर crest (उच्चावस्था) होगी— जब स्वराज-लाभ हो

जाएगा। लज्जा लौट आएगी।

किशोर बालक तो धन्य। क्योंकि देखता हूँ श्री म उसके प्रति सुप्रसन्न हैं। इसी प्रकार कितने ही बालकों को श्री म ने भगवान श्रीरामकृष्ण की कृपा-लाभ से धन्य किया है। श्री म बालक के साथ आनन्द से बातें करते हैं।

श्री म *(बालक के प्रति)*— (बेलूड़) मठ में गया था?

बालक— तीन-चार बार गया हूँ।

श्री म— इन्हें देखा है?

बालक— ना।

श्री म— किसी को भी नहीं? सब एक जैसे हैं, लाल कपड़े। और वस्तुतः भी एक ही (नारायण)। बचपन में सभी साहबों को हम एक समझते थे। सब (पोशाक में) ढके हुए।

''कलकत्ता में एक साधु आए हैं *(दोनों हाथों से दिखलाकर— मोटा)*। अनेक जन जाते हैं। *(बालक के प्रति)* तुम नहीं गए? तुम्हारे पिता शायद गए थे? औषध देते हैं।''

श्री म *(साधुओं के प्रति)*— ठाकुर किन्तु एक माँ को छोड़ कुछ भी नहीं जानते थे। 'माँ अपने पादपद्मों में शुद्धाभक्ति दो'— यही उनकी एक ही प्रार्थना।

'रोग हटाना', 'लड़का होना', 'रुपया-पैसा होना'— इन सब की व्यवस्था अन्य साधुगण करते हैं। ठाकुर की माँ के अतिरिक्त और कोई भी बात नहीं।

''जितने उपदेश दिए हैं— जो संसार में हैं किंवा जिन्होंने गृहस्थ-त्याग किया है— सबको ही त्याग का उपदेश किया है। संन्यास— आदि से अन्त तक।

''रुपया-पैसा वे माँग ही नहीं सकते थे। यही है हमारे लिए अनुकरणीय। जिस किसी के पास रुपये के लिए हाथ फैलाना अच्छा नहीं।''

श्री म क्या सोच रहे हैं? पुनः रामकृष्ण की वाणी सुधा का वर्षण होता है।

श्री म *(साधुओं के प्रति)*— ठाकुर का शरीर रहते समय उनका जन्मोत्सव

हुआ था। उन्होंने कह दिया था, ''जो अपने आप देंगे, उनका रुपया लोगे। माँगोगे नहीं''।

''हम जब गए थे एटीन-एटी-टू (1882) में, तब याद पड़ता है तभी उनका जन्मोत्सव हो चुका था। तत्पश्चात् दो देखे हैं, ऐसा स्मरण है। इसके पश्चात् ही असुख हो गया। काशीपुर में हुआ था एक तो।

''कह दिया था, रुपया-पैसा माँगा नहीं जाएगा। इच्छा हो, दें।''

स्वामी सत्प्रकाशानन्द— तब कितने लोग होते थे? बीस-पच्चीस जन?

श्री म— हाँ, वैसे ही। पीछे क्रमशः अधिक हुए।

स्वामी सम्बुद्धानन्द— माँ ठाकुरण की समाधि आपने देखी है?

श्री म— भक्तों में से किसी-किसी ने देखी है, जो खूब fortunate (सौभाग्यवान) हैं। स्थिर, चक्षु का निमेष नहीं। खूब लज्जा थी कि ना! तभी तो जो पास रहते थे, वे पुकारते थे उन भक्तों को जिनको वे प्यार करती थीं। आहा, कैसा दुर्लभ वह दृश्य!

स्वामी शान्तानन्द— माँ ने स्वयं ही नहबत में रहने की बात बताई थी। बतातीं, यही इतनी-सी जगह, उसमें दो-तीन जन रहते। कभी-कभी तो और भी अधिक। और फिर इतना सारा सामान आदि। यहाँ तक कि जीवन्त सिंगी मछली— टीन में हिलती।

श्री म— बेड़ा (घेरा) दिया हुआ था। और उसमें ही फिर रसोई होती। हम जब दक्षिणेश्वर गए थे, माँ तभी ही देश चली गई थीं।

स्वामी सम्बुद्धानन्द— जहाँ पर मठ है, ठाकुर शायद एक बार उतरे थे।

श्री म— हाँ, तो भी निश्चित नहीं है कि ठीक उसी जगह पर ही। कप्तान का लकड़ी का कारखाना था, उस तरफ। नेपाल से लकड़ी का चालान आता था। वहाँ पर एक बार उतरे थे।

स्वामी शान्तानन्द— नौ बज गए हैं। आपका स्नान का समय तो नहीं हुआ?

श्री म— नहीं, दस के भीतर होने से ही होता है।

स्वामी शान्तानन्द— इसी जल से ही होता है?

श्री म— हाँ, उस छत पर बाल्टी में जल गर्म हो रहा है, धूप में।

साधुगण प्रसादी हाथ धोते हैं। सतीनाथ हाथों पर जल डाल रहे हैं।

श्री म *(साधुओं के प्रति)*— आप लोग सकल ही वैलिंगटन (अद्वैत आश्रम में) जाओगे?

स्वामी शान्तानन्द— ये दो जन जाएँगे। मैं और ये (स्वामी नित्यात्मानन्द) पूर्णेन्दु के यहाँ जाएँगे।

श्री म— पूर्णेन्दु के गेस्ट।

अब भाई भूपति की बातें होने लगीं।

एकजन साधु *(श्री म के प्रति)*— उन्होंने ठाकुर की कृपा प्राप्त की थी?

श्री म— हाँ, ठाकुर ने कृपा की थी। शरीर पर पाँव देने से समाधि हो गई थी।

सिविल डिस-ओबिडिएन्स (कानून न मानना) आन्दोलन अभी-अभी बन्द हुआ है। 'गान्धी-इरविन ट्रूस' (Gandhi-Irvin Truce) हुआ है। गान्धी जी की विजय-वार्ता सर्वत्र विघोषित है। उसकी बात चल रही है।

श्री म— गान्धी महात्मा केवल खद्दर ही नहीं बनाते। राम-नाम का भी प्रचार करते हैं। उनके आश्रम में रोज राम-नाम होता है।

"वह होने से ही तो हुआ— ठाकुर जो कहते थे। भक्ति का प्रचार करो। उससे ही problem of untouchability solve— अस्पृश्यता समस्या दूर हो जाएगी।

"महात्मा गान्धी जी वही तो कर रहे हैं। केवल intellectual movement— बुद्धि के आन्दोलन द्वारा यह solve— समाधान नहीं होता। बहुत दिनों से यह एक knotty problem (जटिल समस्या) थी। अब solve (समाधान) हो रही है।"

श्री म— ठाकुर ने कहा था, सबके संग खाकर और सबको पत्तल में खाने से ही यदि ब्रह्मज्ञान होता, तब तो कुत्ता ब्रह्मज्ञानी है। सब की पत्तलों में

खाता है *(सब का हास्य)*।

''ठाकुर ने भक्ति-प्रचार करने के लिए कहा था। उससे होगा। महात्मा गान्धी जी वही कर रहे हैं। In so many words (कितनी ही बातें) चाहे न भी कहें। उससे क्या फिर प्रचार होता नहीं! वे मुख से नहीं बोलते कि धर्म-प्रचार करता हूँ। किन्तु यह होता जा रहा है संग-संग।''

स्वामी सम्बुद्धानन्द— आज (कर्मभार लेकर) ढाका जाऊँगा। आशीर्वाद कीजिए।

श्री म— उनका आशीर्वाद है।

स्वामी सम्बुद्धानन्द— हाँ, नहीं तो फिर बचा हुआ कैसे हूँ!

साधुओं ने प्रणाम करके विदा ली। सीढ़ी से उतर रहे हैं। श्री म सीढ़ी के मूल में खड़े हैं।

श्री म— हाँ, वही तो saving clause— भरोसे की वाणी है। और भी है, 'अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्?' एक जन्म में नहीं होता तो अन्य जन्म में होगा। यह भी और एक saving clause (भरोसे की वाणी) है।

साधुगण धीरे-धीरे उतर रहे हैं और श्री म की अभयवाणी सुनते हैं। एक-एक बार ऊपर देख-देख कर श्री म के दर्शन करते हैं। पुनराय साधुओं ने सुना, श्री म कहते हैं,

'' 'न हि कल्याणकृत् कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति।' (गीता 6:40) घर का लड़का घर में जाएगा, चिन्ता क्या?''

अद्वैत आश्रम। वैलिंगटन लेन, कलकत्ता।
30 मई, 1931 ईसवी; शनिवार। ज्येष्ठ, शुक्ला चतुर्दशी।

श्री 'म' ट्रस्ट

श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत के प्रणेता श्री महेन्द्रनाथ गुप्त पीछे मास्टर महाशय वा श्री म (M.) के नाम से विख्यात हुए।

इन्हीं श्री म के अन्तरंग शिष्य थे स्वामी नित्यात्मानन्द जो श्री म दर्शन ग्रन्थमाला के प्रणेता हैं। और वे ही हैं श्रीरामकृष्ण श्री म प्रकाशन ट्रस्ट (श्री म ट्रस्ट) के संस्थापक।

अपने जीवन में ठाकुर–वाणी का अक्षरश: पालन करने वाले श्री म के पास दीर्घकाल तक रहकर स्वामी नित्यात्मानन्द जी को विश्वास हो गया था कि जगत् के सकल काम–काज करते हुए भी मन से ईश्वर के साथ रहा जा सकता है और यही है शाश्वत शान्ति तथा परमानन्द का सहज, सरल उपाय। परमानन्द की प्राप्ति ही है मनुष्य–जीवन का एकमात्र उद्देश्य। इसी परमानन्द की प्राप्ति जन–जन को हो, इस उद्देश्य से स्वामी नित्यात्मानन्द जी महाराज ने अपने प्रथम गुरु श्री म की स्मृति में 12 दिसम्बर सन् 1967 को श्री म ट्रस्ट (श्रीरामकृष्ण श्री म प्रकाशन ट्रस्ट) को रोहतक में रजिस्टर करा दिया था जो बाद में चण्डीगढ़ ले आया गया। तब से लेकर आज तक ठाकुर–कृपा से ठाकुर–वाणी के प्रचार–प्रसार का कार्य निरन्तर चल रहा है और आगे बढ़ रहा है।

श्री म ट्रस्ट से जुड़े ठाकुर–भक्तों/सेवकों पर ठाकुर इसी तरह अपना शुद्ध प्यार बनाए रखें, यही उनके श्री चरणों में प्रार्थना है।

—प्रेसिडेंट, श्री म ट्रस्ट

स्वामी नित्यात्मानन्द :
संस्मरणात्मक परिचय

— स्वामी श्रद्धानन्द

1982 में अंग्रेज़ी में प्रकाशित 'श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत सैंटिनरी मैमोरियल' में श्री म की सेवक-सन्तान और 'श्री म दर्शन' ग्रन्थमाला के लेखक स्वामी नित्यात्मानन्द जी के सम्बन्ध में वेदान्त सोसायटी ऑफ सैक्रामेण्टो, यू०एस०ए० के स्वामी श्रद्धानन्द जी के संस्मरण 'Shree Ma Darshan and Its Recorder Swami Nityatmanand' शीर्षक के अन्तर्गत छपे थे। डॉ० निर्मल मित्तल द्वारा उन्हीं संस्मरणों का हिन्दी अनुवाद :

श्री म ट्रस्ट के संस्थापक स्वामी नित्यात्मानन्द को श्रीरामकृष्ण के हज़ार-हज़ार भक्त उनके महान कार्य 'श्री म दर्शन' (बंगला), 16 भागों के लिए याद करते रहेंगे। इनमें से कुछ भागों (खण्डों) का अंग्रेज़ी व हिन्दी में अनुवाद हो चुका है।* भगवान करें शेष सभी भाग भी इसी तरह समय पर अनूदित हो जाएँ।

इन खण्डों को पढ़ते समय ऐसा लगता है मानो यह 'श्रीरामकृष्ण कथामृत' ही है। बस श्रीरामकृष्ण-अवतार के महान व्यास यहाँ प्रचारक के भाव से बे-रोकटोक गतिशील हैं। कथामृत में श्री म प्राय: सम्पूर्णत: गुप्त हैं।

* हिन्दी में सभी 16 भाग और अंग्रेज़ी में 11 भाग छप चुके हैं।

इसमें पृष्ठ-दर-पृष्ठ ठाकुर ही बोल रहे हैं। परन्तु श्री म दर्शन में देवदूत (evangelisth) (श्री म) ही वक्ता हैं। और फिर वक्ता भी कैसे? वे ऐसे बोलते हैं मानो श्रीरामकृष्ण सदेह विद्यमान हैं। वर्तमान अतीत पर सहजता से ही छा गया है।

श्री म दर्शन में लगभग 10 वर्ष (सन् 1923 से 1932) के संवाद हैं। तब तक श्री म काफी वृद्ध हो चुके थे। उनके अपने आध्यात्मिक अनुभवों ने श्री म दर्शन की विषय-वस्तु को अत्यधिक समृद्ध किया है। विगत स्मृतियाँ अत्युत्तम रूप से (खूब) मधुर और घनीभूत हो चुकी थीं। श्री म दर्शन में श्री म के दर्शन व श्रवण से यह सब स्पष्ट हो जाता है। दक्षिणेश्वर, बेलुड़मठ, काशीपुर बागान तथा अन्य स्थानों पर अनेक धार्मिक उत्सवों में श्री म की भक्तों के संग यात्रा का विवरण एकदम आकर्षक है। धार्मिक स्थलों के समक्ष उनका खड़े होना और वहाँ प्रणाम करना, पुराने पवित्र सम्बन्धों के साथ उनका पुनः सम्पर्क, चलते समय उनका शानदार मौन व बीच-बीच में उनकी कुछ टिप्पणियाँ— ये सब बातें पाठक के मन में उस आध्यात्मिक नाटक को देखने की प्रेरणा प्रदान करती हैं। 'श्री म दर्शन' में श्री म श्रीरामकृष्ण और स्वामी विवेकानन्द के उपदेशों के दर्शन की ऐसी व्याख्या करते हैं जो पाठक को मन्त्रमुग्ध कर देती है। श्री म प्राचीन भारत के ऋषियों एवं आधुनिक भारत के इन दो पैगम्बरों के मध्य सेतु का कार्य करते हैं।

हमारे समय के इन व्यासदेव (श्री म) के दिन-प्रतिदिन के संवादों के लेखन और फिर ('श्री म दर्शन'-रूप में) उनके विकास— स्वामी नित्यात्मानन्द के इस उत्कृष्ट कार्य— को देखकर उनकी असाधारण क्षमता पर आश्चर्य होता है। इसे देखकर आसानी से समझ में आता है कि उन्हें स्वयं श्री म से इस दिशा में प्रशिक्षण मिला था जब वे श्री म के स्कूल में अध्यापन-कार्य कर रहे थे और वर्षों तक उनके साथ रहे थे।

मेरा परम सौभाग्य है कि मैं स्वामी नित्यात्मानन्द को तभी से जानता हूँ जब वे जगबन्धु बाबू थे। ओह, कैसे वे इन श्रद्धेय ऋषि (श्री म) की नित्यप्रति सेवा किया करते थे! ऐसे लगता था जैसे वे श्री म के साथ छायावत् रह रहे हैं।

बेलुड़मठ में प्रवेश के समय उनके हृदय की वेदना की हम भलीभाँति परिकल्पना कर सकते हैं, उन्हें अपने प्यारे वृद्ध (savant) से पृथक् जो रहना पड़ा। परन्तु क्या उन दोनों में सचमुच में कोई अलगाव था? क्या प्रख्यात evangelist श्री म और उनके विनम्र सेवक जगबन्धु श्रीरामकृष्ण को लेकर भीतर से एक नहीं हो गए थे? एक बार मैंने श्री म के मुख पर वह असाधारण आह्लाद देखा है जब स्वामी नित्यात्मानन्द बेलुड़मठ से श्री म से मिलने आए थे। मैंने देखा है कैसे श्री म उनसे मिले थे और कैसे उन्होंने उनके साथ बातें की थीं। श्री म सचमुच प्रसन्न थे कि जगबन्धु बाबू साधु बन गए हैं। प्राय: ही संन्यस्त जीवन की धन्यता पर श्री म को बोलते सुना जा सकता था।

एक बार स्वामी नित्यात्मानन्द मुझे ऐसे अनेक स्थानों पर ले गए थे जिन्हें श्रीरामकृष्ण ने अपने चरण-कमलों से पवित्र किया था। वह सर्वाधिक आनन्द का दिन था। मुझे भली-भाँति याद है जब उन्होंने श्री म दर्शन का लेखन-कार्य आरम्भ किया था। तब वे देहरादून में थे और अपने एक पंजाबी भक्त के साथ रह रहे थे। उस समय रामकृष्ण मठ और मिशन के अध्यक्ष स्वामी विरजानन्द जी भी देहरादून में ही थे। मैं उनका एक सेवक था। स्वामी नित्यात्मानन्द अध्यक्ष महाराज को प्रणाम करने कभी-कभी आया करते थे। एक दिन उन्होंने मुझे श्री म के संवादों की अपनी डायरी के विषय में बताया था और अपने लेखन की एक अभ्यास-पुस्तिका (कापी) भी दिखाई थी। उन्होंने अध्यक्ष महाराज को वह दिखाने के लिए मुझसे कहा था। स्वामी विरजानन्द ने हस्तलिपि के इस नमूने को बड़े चाव से पढ़ा क्योंकि श्री म के प्रति उनकी अपार श्रद्धा थी। सन् 1891 में युवा कालीकृष्ण (स्वामी विरजानन्द का संन्यास से पहले का नाम) को इन्हीं से (श्री म से) तो बराहनगर मठ में रह रहे ठाकुर के अन्तरंग शिष्यों के बारे में पता चला था। रिपन कॉलिज, कलकत्ता में जब कालीकृष्ण पढ़ रहे थे तब श्री म वहाँ अंग्रेज़ी के प्राध्यापक थे। हस्तलिपि के विषय में स्वामी विरजानन्द जी के प्रोत्साहन भरे शब्दों से स्वामी नित्यात्मानन्द बहुत प्रसन्न हुए और वे इसके प्रकाशन के लिए गम्भीरता से प्रयत्न करने लगे। नि:सन्देह अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्हें वर्षों कठिन संघर्ष करना पड़ा परन्तु अन्तत: श्रीरामकृष्ण की कृपा से वे

सफल हुए। जिन भक्तों और मित्रों ने इस महान कार्य में उन्हें सहयोग दिया, श्रीरामकृष्ण के सभी अनुयायी उनके प्रति कृतज्ञ हैं।

स्वामी नित्यात्मानन्द से अन्तिम बार मैं चण्डीगढ़ में मिला था जब मैं 15 वर्षों के बाद अमेरिका से सन् 1971 में भारत आया था। इतने दीर्घकाल के पश्चात् एक–दूसरे से मिलकर हम दोनों अति प्रसन्न थे। स्वामी जी मेरे साथ पहले की भाँति ही सहृदयता व प्रेम से मिले। हमने शहर के कुछेक प्रसिद्ध मन्दिरों के दर्शन किए। उन्होंने 'श्री म ट्रस्ट' की अपनी कार्य–योजना से भी मुझे अवगत कराया। (सेक्टर 18–बी में प्रो० धर्मपाल गुप्ता और श्रीमती ईश्वरदेवी के) जिस घर में वे रह रहे थे, वहाँ बने मन्दिर को देखकर मैं बहुत प्रभावित हुआ। ट्रस्ट–कार्य में लगे कुछेक भक्तों से उन्होंने मेरा परिचय कराया। मेरा यह अनुभव आनन्ददायी था।

मुझे आशा है कि श्रीरामकृष्ण की कृपा से श्री म ट्रस्ट को और अधिक बल प्राप्त होगा, यह और अधिक स्थिर होगा तथा जिस हेतु इसकी स्थापना की गई थी, उस लक्ष्य की भलीभाँति पूर्ति करेगा। ऐसी ही मेरी प्रार्थना भी है।

— नूपुर–2010 से

श्री म

— स्वामी नित्यात्मानन्द

श्री 'म' के साथ हुए अपने प्रथम दर्शन को प्रकाशित करते हुए स्वामी नित्यात्मानन्द कहते हैं :

श्री म का साहचर्य-लाभ— यह भी है एक दैवी घटना। अति अल्पवयस में कथामृत का प्रथम भाग हाथ में पड़ा, किन्तु विशेष कुछ समझ नहीं सका उस समय। उस समय श्री म के प्रति आकर्षण भी नहीं था। श्री म ने पुस्तक लिखी है इतना ही जानता था। हमारा आकर्षण था जगतगुरु आचार्य श्रीमत् विवेकानन्द जी के ऊपर। स्वदेशी आन्दोलन के आरम्भ से ही उनका नाम सुना था। उनकी शिकागो-वक्तृता की छवि देखी थी। ये ही वीर केसरी विवेकानन्द जी थे हमारे उपास्य। हम मन में सोचा करते, वे भारत की मुक्ति के लिए आए हैं। उन पर उस समय जो श्रद्धा और प्रेम था, वह भक्त के भाव से नहीं था— admirer, प्रशंसक के भाव से था। उस समय से ही हम स्वामीजी को आश्रय करके यथाशक्ति पवित्र जीवन-यापन और सेवाव्रत का अनुष्ठान करने की चेष्टा किया करते थे। गीता, चण्डी प्रभृति पढ़कर भली प्रकार न समझने पर भी अनाडम्बर सरल जीवन हुआ था हमारा आदर्श। किन्तु 'ईश्वरलाभ मनुष्य-जीवन का सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य है', उसकी खबर तब तक भी हृदय में पहुँची नहीं थी। इसी प्रकार दिन जा रहे थे।

कॉलिज में पढ़ते समय एक दिन एक बन्धु के साथ श्रीरामकृष्ण के साक्षात् शिष्यगण के सम्बन्ध में बातचीत हुई। बीच–बीच में ऐसी चर्चा हुआ ही करती थी। बन्धु थे बेलुड़मठ में दीक्षित श्री श्रीमाँ के मन्त्र–शिष्य। उन्होंने कहा, ''श्री म ठाकुर की बात छोड़कर अन्य बात बोलते ही नहीं।''

तर्क के लिए मैंने कहा,
'वे स्वामीजी की बातें क्यों नहीं बोलते? स्वामीजी ने भारत को बचा दिया है। मुक्ति का सन्धान दिया है। उनके आगमन और प्रचार से ही तो स्वाधीनता–संग्राम का नूतन रूप से सूत्रपात हुआ है। हम तो उनकी बातों से ही पवित्र जीवन–यापन करने की चेष्टा कर रहे हैं। उनकी बातें क्यों नहीं बोलते?'

तर्क क्रमशः प्रखर हो उठा। भक्त बन्धु निरुपाय होकर बोले,
''जाकर एक दिन उन्हें यह बात बतला आइए ना, यदि यही आपका मत है।'' यही निश्चय हुआ।

श्री म को उत्तम उपदेश देने जाकर उनके ही उपदेश–जाल में चिरकाल के लिए बन्ध गया। श्रावण, अपराह्न। वर्षा हो चुकी थी। मॉर्टन स्कूल की चारतल की छत पर श्री म के संग बैठा। प्रथम दो–चार बातें पूछने पर हमारे मुख के ऊपर दैवी अन्तर्भेदी चक्षु युगल एक मिनट स्थापन करके वे स्वामीजी की बातें करने लगे। वह एक उद्भुत व्यापार! क्रमागत तीन घण्टे बोले केवल स्वामीजी की महिमा। मुझे बोध होने लगा : चित्त में शान्ति और अमृत की वर्षा हो रही है। हृदय के पुंजीभूत संशय, अशान्ति दूर होकर जैसे प्रार्थित विषय अनजाने ही प्रकट होने लगे। ऐसा मधुर वर्षण पहले कभी हृदय में नहीं हुआ। बहुत दिन की वांछित वस्तु का लाभ होने के कारण हृदय आनन्दपूर्ण हुआ। और श्री म की इन बातों से समालोचक की दृष्टि से परीक्षा की जो प्रवृत्ति थी वह भी दूर होने लगी।

...कहने लगे भारत के युवक यदि स्वामीजी को पकड़कर चलें तो उनका अपना भी कल्याण है और देश के और भी दसों का है कल्याण। शुकदेव नवकलेवर में नरेन्द्रनाथ के रूप में आए। उनका अपना कुछ भी

प्रयोजन नहीं, वे थे नित्यसिद्ध, ईश्वरकोटि, सप्तर्षियों में से एक ऋषि। भारत के और जगत के कल्याण के लिए था उनका आगमन— चारतल से एकतल पर उतरे थे जीवशिव की सेवा सिखाने, श्रीरामकृष्णदेव की 'माथार मणि' नरेन्द्र। अठारह गुण थे उनके— केशव में था केवल मात्र एक। सीजर, सिकन्दर, नैपोलियन की विजयों से बड़ी थी उनकी विजय— धर्मक्षेत्र इत्यादि में।

पहले जो स्वामीजी के ऊपर हमारी प्रीति थी वह मानो थी fanatic, उन्मादी की प्रीति। अनारवत्— फश्-फश् करके उठती है और गिर पड़ती है— sentimental admirer— शून्य-गर्भ स्तावक की प्रीति। राजनीति के रंग में रंगकर देखा करता था तब स्वामीजी को। श्री म की बातों से वह रंग धुलकर और भी उच्च भाव से देखने का प्रकाश मिला। 'अवतार के प्रधान पार्षद नित्यमुक्त ब्रह्मज्ञ पुरुष हैं विवेकानन्द', यह संधान हृदय में प्रवेश किया। ...अल्पदृष्टि मनुष्य कैसे उन्हें समझेगा! इसलिए वह अपने चश्मे के रंग में रंगकर ही उन्हें देखता है।

हमारा अपना प्रधान लाभ हुआ श्री म। इस दर्शन के कुछ दिन पहले से ही मेरे हृदय के भीतर से एक आकांक्षा हो रही थी, और निशिदिन नीरव प्रार्थना— हे ईश्वर, मुझे एक ऐसा जन मिला दो जिनकी बुद्धि स्थिर और अविचलित हो। जिस बुद्धि का आश्रय लेकर चलने से जीवन का उठना-गिरना बन्द हो जाए। ईश्वर-लाभ-जन्य नहीं था उस व्यक्ति की सहायता का प्रयोजन, किन्तु था, मनुष्य के दैनन्दिन जीवन पथ में जिसकी बुद्धि से चलूँ।

इस प्रकार के एकजन 'स्थितप्रज्ञ' के संधान का कारण था अपनी बुद्धि की दुर्बलता और अस्थिरता का अनुभव। कॉलिज पढ़ने के दिनों में किसी एक घटना में निजी बुद्धि के दोष को देख लिया— मन में हुआ, इसे लेकर गर्व करना वृथा। ऐसी हल्की चञ्चल बुद्धि को मैं इतने दिन तक बड़ा मानता रहा था, इसका और विश्वास नहीं किया जा सकता। बुद्धिमान नाम से जो अभिमान था, वह भंग हो गया। यह बड़ा दु:सह व्यापार है मनुष्य के जीवन में। अपनी बुद्धि का आश्रय लेकर ही सब करते हैं छोटे-बड़े काज,

किन्तु जब अपनी बुद्धि पर हो जाता है अविश्वास, तब हो जाती है मनुष्य की जीवन्मृत की अवस्था। यही अशान्ति का अनल हृदय में सर्वदा जल रहा था। निरुपाय होकर साथ ही साथ व्याकुल प्रार्थना भी चल रही थी— ऐसे किसी जन को मिला दो जिसकी वाणी slave, दास की तरह मानकर चलूँ। मैं और चल सकता नहीं इस बुद्धि को लेकर। बाहर का सब कुछ किया जा रहा था किन्तु भीतर सदा यही ज्वाला और प्रार्थना। ऐसी ही मनोवृत्ति की अराजकता के समय दर्शन और लाभ हुआ श्री म का नूतन भाव में। जिस दिन इस भाव को लेकर श्री म को देखा उस दिन से ही समझ लिया, भगवान ने मेरी प्रार्थना सुनकर ही श्री म को दिया है— श्री म कर्णधार।

और एक अभिलाषा भी पूर्ण हुई इसके संग। बाल्यकाल से ही आरुणि, उपमन्यु और वेदों की बातें पढ़कर गुरुगृह में वास की इच्छा थी ऋषि-संग में। श्री म को पाकर और उनके संग वास करके यह अभिलाषा भी पूर्ण हो गई पूर्ण रूप से।

इस मिलन के पूर्व ही ठाकुर और स्वामीजी की पुस्तकें पढ़ता, बेलुड़मठ और दक्षिणेश्वर जाया करता। मार्टन स्कूल में श्री म हैं, यह बात भी जानता था, उन्हें देखा भी था। किन्तु सब ही मूलतः स्वामीजी के सन्दर्भ से ही था। तब तक यह नूतन दृष्टि खुली नहीं थी। इस घटना के दिन से नित्य श्री म के पास जाने लग गया। उनकी बातें एकाग्रमन से सुनता और लिखता घर लौटकर। मन में होता इन बातों ने मेरे प्राण शीतल किए हैं, लिख कर रख लूँ; जब श्री म को नहीं पाऊँगा, तब पढ़कर शान्तिलाभ करूँगा।

—श्री म दर्शन भाग-I की
भूमिका में से

‘श्री म दर्शन’ :
अनुवाद-प्रेरणा और पद्धति

श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता ने बंगला ‘श्री म दर्शन’ का हिन्दी-अनुवाद क्यों किया और अनुवाद की पद्धति कैसी रखी— इसका उल्लेख वे सन् 1965 में प्रकाशित अपने हिन्दी ‘श्री म दर्शन’ भाग-1 के निवेदन में करती हैं :

तीस पैंतीस वर्षों से मन में यह भाव उठ रहा था कि आज के युग में प्राचीन काल के ऋषियों की भाँति गृहस्थाश्रम में किस प्रकार परमानन्द में रहा जा सकता है। शास्त्रों में पढ़ा था, नारी ही गृहस्थ को आनन्दधाम बना सकती है। किन्तु इसका भेद पता नहीं लगा और ना ही चित्त में इसे जानने की तीव्र चाह ही उत्पन्न हुई।

दैव-क्रम से युगावतार श्रीरामकृष्णदेव जी के एक संन्यासी सेवक का प्रवचन सुनने का सुयोग प्राप्त हुआ। इसी प्रवचन के प्रसंग में श्री ‘म’ जी (श्री महेन्द्रनाथ गुप्त) का नाम सुना। आप हैं, ‘Gospel of Sri Ramakrishna’ हिन्दी में ‘श्री श्रीरामकृष्ण वचनामृत’* और बंगला भाषा में ‘श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत’ के विख्यात लेखक।

श्री म हैं, श्री श्रीरामकृष्ण परमहंसदेव के अन्तरंग भक्त गृहस्थाश्रम में।

---

* श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता ने ही बंगला कथामृत का शब्दश: हिन्दी अनुवाद श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत के नाम से ही किया था जो श्री म ट्रस्ट ने प्रकाशित किया।

कलकत्ता विश्वविद्यालय के कृतिस्नातक एवं जीवन-शिक्षा-व्रती। श्रीरामकृष्ण के आदेश से आदर्श गृही बनकर आजीवन गृहस्थ-आश्रम में जीवन व्यतीत किया, इन्होंने।

'मनुष्य-जीवन का सर्वश्रेष्ठ-आदर्श है ईश्वर-दर्शन', यह वाणी भी मेरे हृदय में श्री म का जीवन-चरित सुनकर ही प्रवेश की।

कुछ दिन पश्चात् उन्हीं स्वामी जी से सुना, श्री म के वचन और जीवनी 'श्री म दर्शन' नाम ग्रन्थ में पन्द्रह-सोलह भागों में बंगला भाषा में लिखे गए हैं। स्वामीजी ने प्रथम भाग का कुछ अंश हिन्दी अनुवाद करके सुनाया भी। इसी पाठ को सुनकर मन में धारणा हुई, श्री म गृहस्थाश्रम में रहकर सांसारिक सकल कार्य सम्पन्न करके भी प्राचीन ऋषि भृगु, वसिष्ठ आदि की भाँति थे, आत्मज्ञ और विदेही।

उसी समय श्री म के देव-जीवन के विषय में अधिकतर जानने की आकांक्षा तीव्र हुई। इसी आकांक्षा ने ही मुझे बंगला भाषा सीखने में व्रती किया। भाषा सीखकर 'श्री म दर्शन' के प्रकाशित दो भाग पढ़े और पाण्डुलिपि भी कियदंश देखी। श्री म की जीवनी और वाणी के साथ और भी घनिष्ठ परिचय करने के लिए मैंने हिन्दी भाषा में अनुवाद-रूप मनन-व्रत ग्रहण किया। इस विषय में कई साधु महात्माओं और भक्तों ने उत्साहित किया।

फिर मेरी एक और इच्छा भीतर से झाँकने लगी। भारत के वर्तमान परिवार-जीवन का दुर्योग देखकर हिन्दी भाषा-भाषी भाई-बहनों को यह ग्रन्थ किसी प्रकार प्रदान करूँ। इससे व्यक्ति, समाज और देश का लौकिक एवं पारमार्थिक कल्याण साधित हो सकता है। यह भावना भी अन्यतम कारण है, अनुवाद की प्रेरणा में।

एक भाषा से अन्य भाषा में अनुरूप छवि प्रस्तुत करना है खूब ही सुकठिन, तथापि भक्तों और साधुओं का आशीर्वाद सिर पर धारण करके असीम साहस लेकर यह अनुवाद किया गया। चेष्टा की गई अनुवाद सरल, आक्षरिक, प्राञ्जल, सावलील, भाव्यंजक और मूल बंगला के अनुरूप हो। मूल भाषा बंगला की श्री म मुख-विनि:सृत वाणी की यथासम्भव अनुवाद में रक्षा करने की चेष्टा की गई। यह करने में अनेक स्थानों पर हिन्दी भाषा की दृष्टि से सम्भवत:

कुछ अविचार हो गया हो। भाव रखने के लिए भाषा की मर्यादा सर्वदा रक्षा करने से चलता नहीं। महापुरुष के मुख-विनि:सृत शब्दों के अभ्यन्तर में एक शक्ति रहती है— इसी विश्वास से भाषा कहीं-कहीं नूतन हो गई है।

और एक बात, यह मूल बंगला-ग्रन्थ एक नवीन नाटकीय भाषा में लिखा गया है। अनुवाद में भी वही रीति रखने की चेष्टा की गई है।

'श्री म दर्शन' के ग्रन्थकार द्वारा कृपा करके इस हिन्दी अनुवाद का आद्योपान्त प्रत्येक शब्द मूल बंगला ग्रन्थ के साथ मिलाने के कारण और सम्पादन करने के कारण इस ग्रन्थ की प्रामाणिकता और समृद्धि वर्धित हुई है, इसमें सन्देह नहीं।

अन्त में इस ग्रन्थ की रचना और प्रकाशन में जिन्होंने जिस प्रकार की भी सहायता प्रदान की है, उन सबके लिए मैं कृतज्ञता प्रकट करती हूँ।

इस ग्रन्थ का पाठ करके हिन्दी भाषा-भाषी भ्राता-भगिनियों को भगवान में भक्ति-लाभ हो एवं संसार में परमानन्द, श्रीभगवान के श्रीचरणों में इस दीन अनुवादिका की एकान्त प्रार्थना है।

विनीता,
ईश्वरदेवी गुप्ता

श्रीरामकृष्ण-श्री म प्रकाशन,
सिविल रोड, रोहतक (पंजाब)
विजयादशमी, 1965।

शुभाशीर्वाद

परमकल्याणीया श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता,

देवि, देवार्चना के अर्घ्यस्वरूप आपका 'श्री म दर्शन' का हिन्दी अनुवाद हुआ है अति सुन्दर, सरल औ' सावलील। वैसा ही वह हुआ प्राञ्जल, भावव्यंजक औ' मूल की छवि।

अनुवाद कार्य ही नीरस। किन्तु ग्रन्थ के मूल विषय-वस्तु के साथ

आपकी एकात्मता-जन्य ही यह अनुवाद हुआ है अति सरस और सुरुचि सम्पन्न।

भग्नस्वास्थ्य होते हुए भी बंगला भाषा की शिक्षा लेकर दैनन्दिन जीवन में आचरणीय वैदान्तिक ग्रन्थ हिन्दी में अनुवाद करना है सुकठिन कार्य।

'श्री म दर्शन' का मूलविषय ही यह— सुखदुःखमय इस संसार में रहकर किस प्रकार से वेदवर्णित देवजीवन-लाभ सम्भव, इसी का पथ निर्देश है इसमें।

वेदमूर्ति युगावतार श्रीरामकृष्ण की शिक्षा से वर्तमान जड़ सभ्यता के युग में आचार्य श्री म ने वन के वेदान्त को घर में लाकर मूर्त्त किया अपने जीवन में इसी ऊनविंश-विंश शताब्दी में, ठीक जैसा मूर्त्त हुआ वैदिक युग में तपोवन में ऋषियों के जीवन में।

श्री म दर्शन है महर्षि श्री म के जीवन का एक जीवन्त आलेख्य। और फिर है श्रीरामकृष्ण-लीला प्रकाशक वर्तमान विज्ञान सम्मत श्री म कथित प्रामाणिक महाग्रन्थ 'श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत' का मनोमुग्धकर सजीव और सटीक वार्त्तिक वा भाष्य।

आपने यह परम उपादेय ग्रन्थ हिन्दी भाषा-भाषी भक्तों के करकमलों में सप्रेम परिवेशन करके एक सुमहत् ज्ञानयज्ञ का अनुष्ठान किया है।

देवि, आपकी यह महती प्रचेष्टा देखकर स्वतः ही मन में उदय हो रहा है— भगवान श्री श्रीरामकृष्ण आपके हृदय मन पर अधिकार कर बैठे हुए हैं।

उनके श्रीचरणों में है आन्तरिक विनीत प्रार्थना, वे प्रेरणा देकर आपके द्वारा 'श्री म दर्शन' के अवशिष्ट चतुर्दश खण्डों का भी इसी प्रकार सरल, सुमिष्ट हृदयग्राही अनुवाद करवा लें।

इससे आपका जीवन होगा अधिकतर धन्य औ' मधुमय, और समाज-जीवन होगा निश्चय उन्नत औ' देवभाव-मण्डित। इति

शुभानुध्यायी,
स्वामी नित्यात्मानन्द

श्रीरामकृष्ण मठ,
ऋषिकेश, हिमालय।
दुर्गा नवरात्रि, 1965 ईसवी।

श्री 'म' ट्रस्ट के प्रकाशन

1. श्री म दर्शन

बंगला संस्करण— भाग 1 से 16— स्वामी नित्यात्मानन्द

श्री म दर्शन महाकाव्य में ठाकुर, माँ सारदा, स्वामी विवेकानन्द तथा अन्यान्य संन्यासी एवं गृही भक्तों के विषय में नूतन वार्ताएँ हैं। और इसमें है कथामृतकार श्री 'म' द्वारा 'कथामृत' के भाष्य के साथ-साथ उपनिषद्, गीता, चण्डी, पुराण, तन्त्र, बाइबल, कुरान आदि की अभिनव सरल व्याख्या।

2. श्री म दर्शन

हिन्दी संस्करण— भाग 1 से 16

श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता द्वारा बंगला से यथावत् हिन्दी-अनुवाद।

3. **श्री म दर्शन**

अंग्रेज़ी संस्करण— ('M'— The Apostle and the Evangelist)

श्री 'म' दर्शन ग्रन्थमाला का अंग्रेज़ी अनुवाद प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता ने 'M.'— The Apostle and the Evangelist नाम से किया है। ट्रस्ट के पास प्रथम ग्यारह भाग तो उपलब्ध भी हैं। शेष पाँच भाग अभी मुद्रण-प्रकाशन-प्रक्रिया में हैं।

4. Sri Sri Ramakrishna Kathamrita Centenary Memorial

प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता और पद्मश्री डी०के० सेनगुप्ता द्वारा अंग्रेज़ी में सम्पादित वृहद् ग्रन्थ, जिसमें ठाकुर श्रीरामकृष्ण, 'कथामृत', श्री 'म' और 'श्री म दर्शन' पर श्रीरामकृष्ण मिशन के संन्यासियों समेत अनेक गणमान्य विद्वानों के शोधपूर्ण लेख हैं।

5. A Short Life of Sri 'M'

स्वामी नित्यात्मानन्द जी महाराज के मन्त्र-शिष्य और श्री म ट्रस्ट के फाऊँडर सैक्रेट्री प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता द्वारा अंग्रेज़ी में लिखी गई श्री म की संक्षिप्त जीवनी।

6. **Life of M. and Sri Sri Ramakrishna Kathamrita**

प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता द्वारा लिखित श्री म के जीवन तथा 'कथामृत' पर शोध प्रबन्ध

7. श्री श्री रामकृष्ण कथामृत

हिन्दी संस्करण— भाग 1 से 5

श्री महेन्द्रनाथ गुप्त ने ठाकुर रामकृष्ण परमहंस के श्रीमुख-कथित चरितामृत को अवलम्बन करके ठाकुरबाड़ी (कथामृत भवन), कोलकता-700 006 से 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' का (बंगला में) पाँच भागों में प्रणयन एवं प्रकाशन किया था।

इनका बंगला से यथावत् हिन्दी अनुवाद करने में श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता ने भाषा-भाव-शैली— सभी को ऐसे सरल और सहज रूप में संजोया है कि अनुवाद होते हुए भी यह ग्रन्थमाला मूल बंगला का रसास्वादन कराती है।

8. Sri Sri Ramakrishna Kathamrita

English Edition

श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता के हिन्दी-अनुवाद से प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता द्वारा कथामृत का अंग्रेज़ी-अनुवाद। चार भाग प्रकाश में आ चुके हैं। पाँचवाँ भाग प्रकाशनाधीन है।

9. नूपुर

वार्षिक स्मारिका

श्री म ट्रस्ट के संस्थापक और हम सब के पूजनीय गुरु महाराज स्वामी नित्यात्मानन्द जी के 101वें जन्मदिन पर उनकी स्मृति में 'नूपुर' नाम से सन् 1994 ईसवी में एक स्मारिका का प्रकाशन हुआ था। उसी स्मारिका ने अब वार्षिक पत्रिका का रूप ले लिया है, जिसमें

अन्य बातों के अतिरिक्त ठाकुर रामकृष्ण परमहंस, माँ सारदा, श्री म, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी नित्यात्मानन्द, 'श्री म दर्शन' आदि के बारे में प्रचुर सामग्री रहती है। साथ ही कथामृतकार श्री म के द्वारा 'श्री म दर्शन' में कही उन बातों को भी प्रकाश में लाया जाता है, जो 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' में नहीं हैं।

❖